अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01
02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07
03. निर्णायक मण्डल 08
04. प्रवक्ता साथी 10/11

(Science / विज्ञान)

05. Effect of Selenium on germination and early seedling growth of Triticum aestivum L. 12
(Dr. Priyanka Madhwani)
06. Ethnomedicinal Plant, Rubia cordifolia Linn., and its use as 'Anti psoriasis', in Amarkantak 19
Biosphere Region, (M.P.) India (Dr. Radhe Shyam Napit)
07. Benefit of Yoga And Traditional Exercise (Dr. Rajesh Masatkar) 22
08. Impact Of Long Term Use Of Pesticides On Soil Properties (Dr. Rashmi Ahuja) 25
09. Solid Waste Management The Technological Approach (Dr. Sadhna Goyal) 27
10. Particle Physics (Dr. Neeraj Dubey) 29

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

11. WLB Policies and Morale and Motivation of employees of call centers 31
(Dr. N. S. Rao, Pawan Pant)
12. Profitability Analysis of Public Sector Banks of Ratlam district Special Reference to 35
SBI, BOI and CBI (Dr. Suresh Katariya, Vivek Sharma)
13. Silicosis at a glance: prevalence of disease in Mandsaur district and abatement 38
provisions (Dr. Antimbala Jain)
14. Green Banking : An Endeavour Towards Sustainable Development (Dr. Sarita Mundra) 41
15. Challenges Faced By Women Entrepreneurs (Pooja Chouhan, Dr. Himanshu Mehta, ... 44
Dr. Tabassum Patel)
16. Liquidity Crunch : It's Impact on Indian market (Dr. Deepali Behere) 47
17. उपभोक्ताओं के लिये न्याय प्राप्ति की प्रक्रिया (डॉ. केशव मणि शर्मा) 49
18. ग्रामीण गतिशीलता में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की भूमिका (डॉ. आशीष कुमार जैन, डॉ. दिनेश कुमार परेता) 52
19. पन्ना जिले में खनिज आधारित उद्योगों की सम्भावनाओं का अध्ययन (डॉ. विनोद कुमार शुक्ला, प्रदीप कुमार रावत) 55
20. भारत में कृषि विकास के कार्यक्रम एवं योजनाएं (डॉ. निर्मला वास्केल) 58

21. कृषि विपणन पुरस्कार योजना का अध्ययन (डॉ. राजू रैदास) 61
22. लिंग संरचना का विश्लेषण- मध्यप्रदेश के बड़वानी जिले के संदर्भ में (डॉ. एन.एल.गुप्ता, लक्ष्मीकांत गुप्ता) 63
23. रीवा जिले की लधु एवं कुटीर औद्योगिक इकाईयों का स्थानीय राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में भूमिका 65
(डॉ. ज्योति जायसवाल)
24. वाणिज्य शिक्षा के माध्यम से छात्राओं में बढ़ती रोजगार प्राप्ति की संभावनाएँ (उज्जैन जिले के महाविद्यालयों 67
की पूर्व छात्राओं के विशेष सन्दर्भ में) (डॉ. परमसिंह पटेल, माधुरी यादव)
25. म.प्र. में कृषि विपणन के विकास हेतु संचालित विभिन्न शासकीय नीतियाँ एवं योजनाएँ (एक विश्लेषणात्मक अध्ययन) 69
(डॉ. आभा सिंह, कविता खत्री)
26. मध्य प्रदेश में पर्यटन उद्यमिता की संभावना (डॉ. छाया मिश्रा, अंतरा किरकिरे) 71
27. कृषि विपणन की कार्यप्रणाली, वैधानिकता एवं प्रबंधन (छिन्दवाड़ा जिले के संदर्भ में) (डॉ. नोखेलाल साहू) 73
28. म.प्र. सरकार के लोक-ऋणों की प्रवृत्ति का अध्ययन व विश्लेषण(डॉ. चन्द्रप्रकाश पंवार) 75
29. म.प्र. सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में लोक लेखों का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. एल. एन. शर्मा) 81

(Economics / अर्थशास्त्र)

30. इलाहाबाद शहर के वृद्धों की सामाजिक स्थिति (डॉ. प्रीति श्रीवास्तव) 84
31. कृषि में तकनीकी परिवर्तन एवं आर्थिक विकास (भारत के संदर्भ में) (प्रो. उर्मिला वर्मा, डॉ. आशा साखी गुप्ता)..... 87
32. खेतिहर जनजाति महिला श्रमिकों की आर्थिक स्थिति का विश्लेषणात्मक अध्ययन (गोरेलाल डावर) 90
33. अनुसूचित जन जाति की आर्थिक समृद्धि (सुदृता) में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के योगदान 93
(बिलासपुर जिले के विकास खण्ड कोटा के विशेष संदर्भ में) (रूकमणी गेंदले, डॉ. प्रतिमा बैस)
34. प्राचीन जल स्त्रोतों का पुर्न:संभरण वॉटर हार्वेस्टिंग द्वारा संभव (ग्वालियर जिले के विशेष संदर्भ में)..... 96
(डॉ. वसुधा अग्रवाल)
35. जनजातीय विकास में आधुनिक कृषि पद्धतियों का योगदान (खरगोन जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. नाहारसिंह बर्डे) 98
36. वर्तमान परिप्रेक्ष में बदलते सामाजीकरण में बच्चों पर इंटरनेट का प्रभाव (डॉ. सबलसिंह ओहरिया) 101
37. नीमच जिले की जनसंख्या की प्रजनन दर की प्रवृत्ति का विश्लेषण (डॉ. ज्ञानचन्द्र खिमेसरा, बाला शर्मा) 103
38. भारत में बैंकिंग संस्थाओं की बदलती भूमिका (छगन वसुनिया, डॉ. मनोहर जैन) 105
39. ग्रामीण विकास में कृषि का महत्व अलिराजपुर जिले के विशेष संदर्भ में (अनिता भाटी, डॉ. ज्ञानचन्द्र खिमेसरा) 107

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

40. मध्यप्रदेश का निर्माण एवं पुनर्गठन प्रक्रिया का विश्लेषण (डॉ. चन्द्रमणि प्रसाद मिश्रा) 110
41. वर्तमान संदर्भ में - अम्बेडकर (डॉ. अनिल कुमार जैन) 113

42. जनजातीय आंदोलन एवं विकास (डॉ. महेन्द्र सिंह चौहान) 115

43. विन्ध्य प्रदेश के राजनीतिक नेतृत्व की प्रकृति एवं उसके निर्धारक कारक (सतना जिले के विशेष सन्दर्भ में) 117
(मनोज कुमार रवि)

44. भारतीय राष्ट्रवाद के आध्यात्मिक पैगम्बर स्वामी दयानन्द सरस्वती (डॉ. अनिल कुमार जैन) 119

45. प्राकृतिक व्यवस्थागत सिद्धांत और मानव जीवन (प्रो. जी. एस. वास्कले) 121

(History / इतिहास)

46. देश की वर्तमान परिस्थिति में जरूरी है विकास - पथ का पुनर्मूल्यांकन (डॉ. नितिन सहारिया) 123

47. महात्मा गाँधी की सिवनी यात्रा एवं उसका राजनैतिक प्रभाव 'असहयोग आंदोलन के विशेष संदर्भ में' 125
(डॉ. संकेत कुमार चौकसे)

48. प्राचीन भारत में ध्वनि तथा वाणी विज्ञान (डॉ. नितिन सहारिया) 127

49. चांदवड का ऐतिहासिक महत्व (प्रो. कैलास कारभारी खैरनार) 129

50. स्वाधीनता संग्राम की क्रीड़ास्थली नीमच (डॉ. शालिनी गुप्ता) 131

(Sociology / समाजशास्त्र)

51. ग्रामीण समाज में जनसंचार के स्वरूप एवं बदलाव लेती हुई सामाजिक संरचना (डॉ. संजय जोशी) 132

52. कुंभ - सिंहस्थ महापर्व (समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से एक विश्लेष्णात्मक अध्ययन) 136
(डॉ. सुधा सुरेश सिलावट, डॉ. मनीष कुमार कलवार)

53. उच्च शिक्षा के क्षेत्र में रिसर्च की सम्भावनाएँ (डॉ. ज्योति मेहता) 139

54. दलित एवं बौद्ध धर्म में धर्मान्तरण : एक अध्ययन (निलेश वासनिक, डॉ. अर्चना गौर) 141

55. भारत में बढ़ता नक्सलवाद (वर्तमान संदर्भ में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन) (सुमन सिंह) 143

(Geography / भूगोल)

56. Land, Water And Human Resources Management During Simhastha -2016 145
(A Geographical Case Study of Ujjain Kumbh 2016) (Mohini Jadon)

57. म.प्र. के ग्रामीण क्षेत्रों में बाजार विकास एवं संसाधन - एक भौगोलिक अध्ययन (डॉ. एस.एस. बघेल) 148

(Psychology / मनोविज्ञान)

58. Innovative Applications of Positive Psychology in the Community through 150
Lifelong Learning (Dr. Bharti Joshi)

59. A Study of Role-Conflict Among Married Working Women in Relation to Income 153
(Dr. Mamta Barman)

60. फौजी एवं गैर फौजी युवाओं में शक्ति अभिप्रेरणा का तुलनात्मक अध्ययन (ज्योत्स्ना झारिया) 155

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

61. Teaching English Language - A Challenge in Non-native Context (Dr. Manisha Dwivedi) 157

62. Arnold : An elegiac poet (Dr. Jalaj Dixit) 159

63. Use Of Epic Devices In Pope's The Rape Of The Lock (Dr. Manisha Dwivedi) 161

64. Teaching of English Poetry in Indian Classes (Vinay Dubey) 163

65. Supernaturalism in Shakespeare's Hamlet (Dr. Anamika Sharma) 164

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

66. प्रयोगवाद, अज्ञेय और असाध्य वीणा (डॉ. रत्नेश विष्वक्सेन) 165

67. भवानी प्रसाद के काव्य में राष्ट्रीय-बोध (डॉ. विजय कुमार पाण्डेय) 168

68. हिन्दी साहित्य में दलित चेतना का विकास (डॉ. प्रतिभा जोशी) 171

69. नागार्जुन का जीवन संघर्ष और काव्य के स्वर (डॉ. पूनम त्रिपाठी) 174

70. किसानों की विश्वव्यापी समस्या और प्रेमचन्द का समाधान : कर्मभूमि का संदर्भ (डॉ. रंजना मिश्रा) 177

71. राजनैतिक परिदृश्य में विष्णु प्रभाकर (डॉ. अनीता चौबे) 179

72. छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य का संक्षिप्त परिचय (डॉ.सविता वर्मा) 181

73. राजनैतिक क्षितिज पर विष्णु प्रभाकर (डॉ. अनीता चौबे) 183

(Drawing / चित्रकला)

74. भारतीय कला के प्रतिबिम्ब - बंगाल शैली और बंगाली चित्रकार (मानवाकृति अंकन के परिपेक्ष्य में) 185
(डॉ. यतीन्द्र महोबे)

75. भावों एवं विचारों में कल्पना के सूत्रों का योग : अवधेश मिश्र (डॉ. अन्नपूर्णा शुक्ला, सपना नीरज) 188

(Music / संगीत)

76. कत्थक नृत्य के घराने उनकी व शैलीगत विशेषतायें (डॉ. भावना ग्रोवर दुआ) 191

(Education / शिक्षा)

77. पूर्व प्राथमिक शिक्षा का प्राथमिक शिक्षा पर होने वाले प्रभावों का समीक्षात्मक अध्ययन..... 194
(डॉ.जयदीप महार, प्रियंका मित्तल)

(Others / अन्य)

78. पत्रकारिता के वातायन से आतंकवाद (मेघा दुबे) 197
79. गर्भवती महिलाऐं व स्वास्थ (प्रमिला वास्केल) 200
80. भारतीय महिला एवं अपराध (आकांक्षा सहगल) 203
81. राजस्थान की हिन्दी-कहानी : विकास यात्रा भाग - 4 (डॉ. राजकुमार चौधरी) 205

****

नवीन शोध संसार एवं दिव्य शोध समीक्षा की ओर से हार्दिक बधाई

मध्यप्रदेश शासन, उच्च शिक्षा विभाग द्वारा शिक्षक संवर्ग में उत्कृष्ट प्रदर्शन एवं योगदान के लिए
डॉ.आभा तिवारी, प्राध्यापक (गृहविज्ञान) शासकीय मो.ह.गृह विज्ञान एवं विज्ञान महाविद्यालय,जबलपुर
को स्व.श्री लक्ष्मण सिंह गौड़ स्मृति पुरस्कार 2012-13 से विभूषित किया गया।

(बाएं से दाएं) श्रीमती मालिनी गौड़, श्री उमाशंकर गुप्ता (उच्च शिक्षा मंत्री), श्री दीपक जोशी
(उच्च शिक्षा राज्यमंत्री) द्वारा पुरस्कार प्राप्त करते हुए डॉ.आभा तिवारी

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) डॉ. मनीषा ठाकुर ..... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(02) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(03) प्रो. डॉ. सिलव्यू बिस्यू ..... वाईस डीन (वाणिज्य एवं प्रबन्ध) कृषि एवं ग्रामीण विकास महाविद्यालय, बूचारेस्ट, रोमानिया
(04) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी ..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमौंडू, नेपाल
(05) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... पूर्व प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव ..... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(08) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(11) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम ..... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(13) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(14) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय ..... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(18) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(20) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(24) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(25) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(26) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. आर.के. गौतम ..... प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
(29) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(30) प्रो. डॉ. आर.पी. सहारिया ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय तख्तपुर जिला,बिलासपुर (छ.ग.) भारत
(31) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(32) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे ..... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(33) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा ..... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार.... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. के.एल. साहू..... प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(38) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन ..... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत
(39) प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित ..... एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव .....प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत
(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत .....निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, भोपाल (म.प्र.) भारत
(03) प्रो. डॉ. संजय जैन .....सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल, भोपाल (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी .....प्राचार्य, शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय .....प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल .....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर .....प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र .....प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट .....प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा .....संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. टी.एम. खान .....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड .....संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी.....अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल .....अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे.....संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी .....प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(17) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव .....प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, राजनीति विभाग शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला-रतलाम (म.प्र.) भारत
(18) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा .....प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ. के. के. श्रीवास्तव .....प्राध्यापक ,अर्थशास्त्र, विजया राजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(20) प्रो.डॉ. कान्ता अलावा ..... प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. एस. के. जैन .....प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

✻✻✻ विज्ञान संकाय ✻✻✻

गणित:- .... (1) **प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:-....................... (1) **प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित**, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

(2) **प्रो.डॉ. नीरज दुबे,** शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:-........................ (1) **प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

वनस्पति:- .... (1) **प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

(2) **प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची,** शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:- .... (1) **प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

(2) **प्रो. डॉ. अमृता खत्री,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:- .... (1) **प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:- .... (1) **डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. सुयश कुमार,** शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:-............ (1) **डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

सूक्ष्म जीव विज्ञान:- .... (1) **अनुराग झँवेरी,** बायो केयर रिसर्च (आई) प्रा.लि., अहमदाबाद (गुजरात)

✻✻✻ वाणिज्य संकाय ✻✻✻

वाणिज्य :- .... (1) **प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल ,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(3) **प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल,** शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

✻✻✻ प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ✻✻✻

प्रबंध :- .... (1) **प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी ,** शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:- .... (1) **प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:- .... (1) **प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा ,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

✻✻✻ विधि संकाय ✻✻✻

विधि:- .... (1) **प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन,** प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

✻✻✻ कला संकाय ✻✻✻

अर्थशास्त्र:-..................... (1) **प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा,** शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

(3) **प्रो. डॉ. अंजना जैन,** एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:- .... (1) **प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

(2) **प्रो. डॉ. अनिल जैन,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

(3) **प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा,** मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:- ..... **(1) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन , शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. उमा लवानिया , शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दी:- ..... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) प्रो. डॉ. कला जोशी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजी:- ..... **(1) प्रो. डॉ. अजय भार्गव,** शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:- ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:- ..... **(1) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:- ..... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. अर्चना भार्गव, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

मनोविज्ञान:- ..... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:- ..... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:- ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

****** गृह विज्ञान संकाय ******

आहार एवं पोषण विज्ञान:- .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:- ..... **(1) प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो. डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:- ... **(1) प्रो. डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

****** शिक्षा संकाय ******

शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** प्राचार्य, अरावली शिक्षा महाविद्यालय, फरीदाबाद (हरियाणा)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. नीना अनेजा, प्राचार्य, ए.एस. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,खन्ना (पंजाब)
(4) प्रो. डॉ. सतीश गिल, शिव कॉलेज ऑफ एजुकेशन, तिगाँव, फरीदाबाद (हरियाणा)

****** आर्किटेक्चर संकाय ******

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. किरण पी. शिंदे ,** प्राचार्य, स्कूल ऑफ आर्किटेक्चर, आई.पी.एस. एकडेमी, इंदौर (म.प्र.)

****** शारीरिक शिक्षा संकाय ******

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

****** ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ******

ग्रन्थालय विज्ञान ..... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. आर.के. गुजेटिया .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत .....ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर .....शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी .....शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. मनोज महाजन .....शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा .....कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला- नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित .....जैन कला-वाणिज्य-विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार .....शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा .....शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक .....शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान .....शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान .....शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र .....शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन .....शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान .....शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ.आभा दीक्षित .....शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी .....शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी .....स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े .....शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित .....शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता .....शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना .....शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे .....पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. भारती जोशी .....आजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी .....शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट .....शासकीय एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद .....शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर .....सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल .....शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला - झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया .....शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी .....शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल बाला सांधी .....महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा .....श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव .....शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे .....शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान .....शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर .....शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. बी. एस. सिसोदिया .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला- सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार .....शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला-सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश .....शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला-विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव .....सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा-बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी .....शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे.....शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर-मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी .....शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल.....शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल.....शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन .....शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे .....शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा.....शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव .....शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला .....शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया .....शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला-छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल.....शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला - शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल.....शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान .....शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला-शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा.....शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला- रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा .....शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा .....शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी .....शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान .....शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी .....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर .....शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा .....पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश .....शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे.....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित.....छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा .....एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री .....सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला .....शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. डॉ. आर.सी. पान्टेल.....शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.)
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई.....शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन.....वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ .....राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख .....एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा.....पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया.....हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला- प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह .....केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल .....शोध सलाहकार, नई दिल्ली

Effect of Selenium on germination and early seedling growth of *Triticum aestivum* L.

Dr. Priyanka Madhwani *

Abstract - The effect of various concentrations of di sodium selenite and di sodium selenate (0·5,1·0, 2·0,4.0,8.0,16.0 ug g^{-1}) was studied on germination & early seeding growth of *Triticum aestivum* var. Lok.1 grown in petri dishes. Seed germination in the test crop showed that lower level (0.5-1.0 ug g^{-1}) accelerate the start of germination. Se deleyed germination beyond 1.0 ug g^{-1} dose. Higher doses (beyond 2.0 ug g^{-1}) also retarded the ultimate germination percentage and early seedling growth.
Keywords - germination, early seedling growth, *Triticum aestivum* L.

Introduction - Germination may be defined as the sequential series of physiological and morphogenic events that result in the transformation of an embryo into a seedling (Berlyn,1972). Studies on seed germination is fundamental for understanding the growth and development of plants. It is an essential basis for the formulation of the most desirable means of determining the plant productivity. A number of environmental factors together with the make-up of a seed affect germination phenomenon. The subject has attracted the attention of many workers right from the dawn of scientific research. Many treatises, reviews and proceeding have produced voluminous findings of germinability of seeds of several plants.

Suggestion and Findings - The effects of Na_2SeO_3 on germination of wheat seeds, over a period of 24 hours, are shown in tables 1.1 and figure 1.1 and Plate.1. In control as well as all the applied concentrations of selenium the germination started after 10 hours. 2.0 ug g^{-1} concentration of selenium retarted germination . 100% germination could be achieved respectively after a period of 24 & 26 hours in Na_2SeO_3 and Na_2SeO_4 at 0.5 ug g^{-1} concentration. At 1.0 ug g^{-1} & 2.0 ug g^{-1} concentration of Na_2SeO_3 100% germination was attained over a period of 28 hours. In case of sodium selenate of 1.0 and 2.0 ug g^1 100% germination was achieved after a period of 24 and 26 hours, respectively. Higher doses of selenium (up to 2.0 ug g^{-1} of Na_2SeO_3 as Na_2SeO_4) retarded both the speed, as well as germinations of seeds. Pandit and prasankumar (1996) reported that the germination percentage were maximum at control and 1 ppm Se concentration. A total inhibition was observed at 50ppm concentration. In chlorophyll content a gradual decrease from lower to higher concentration of Se was observed. However growth is inhibited more by selenate than selenite in some species, such as algae (Wheeler etal., 1982;Bennett,1988), *fusarium* sp. (Gharieb et al., 1995) and wheat plants (Richter and Bergmann,1993). Usually, selenite is more toxic as, for instance, in *Cricosphaera* elongate (Boisson et al., 1995), *Mortierella* sp.(Zieve et al., 1985). All the germinated seeds in the (0.50-1.0 ug g^{-1}) concentrations of selenite as well as selenate produced well-developed seedlings but higher concentration (16.0 ug g^{-1}) showed retarded growth in both the treatments. (table 1.3, 1.4 figures 1.2-1.4) At 0.5 ug g^{-1} concentration of Na_2SeO_3, maximum enhancement in shoot-root length and shoot-root fresh and dry matter production was observed which was 5.06% and 1.10%, respectively for shoot and root length, over the control. The fresh and dry matter yield for shoot and root showed an increase of 48.50%, 91.86%, 14.84%, and 2.89% respectively over the control. Enhancement in shoot-root length and increment in shoot-root fresh and dry matter production, over the control, were also observed at 0.5 ug g^{-1} Se dose in Na_2SeO_3 treatment. The reduction and shoot and root length observed at 2-16.0 ug g^{-1} concentration ranged from 37.37%-78.07%, and 0.70%-92.67%, 38.84%-79.12% and 0.97%-96.02% for selenite and selenate, respectively. The reduction was more in selenate (Na_2SeO_4) applications as compared to selenite (Na_2SeO_3).

Wu et al. (1988) tested five forage and turf grass species in solution culture supplemented with Se salt concentration as sodium selenate & sodium chloride. It was found that the root & shoot growth of Bermuda grass (*Cynodon dactylon* L.) was severely inhibited by 1 mg/L Se, and the growth of buffalo grass [*Buchloe dactyloides* (Nutt.) Engelum.] creeping bent grass (*Agroustis stolonifera L.*) and crested wheat grass (*Agropyron desertorum* Fich) was inihibited by 2 mg/L.Se.Tall fescue (*Festuca arundinacea* Schred) displayed the greatest Se tolerance and did not reduce its growth in 2mg Se/L treatment. Roy and mukharjee (1982)

* Guest Faculty, Govt. Sitaram Jaju Girls College, Neemuch (M.P.) INDIA

found that the relative inhibition of root growth was stronger than hypocotyls growth. The recuction in fresh weight was less than the rate of elongation inhibition but greater than the rate of reduction in dry weight. Marked dehydration of seedlings was one of the effects associated with growth inhibition which may be due to an alteration of auxin level caused by an interaction of peroxidase and IAA oxidase (Paul and Mukharjee, 1972). In the present studies, both shoot & root length were retarted by higher doses of selenium. The inhibition in root elongation & root biomass of selenium treated plants was relatively more than the shoots. Martin (1936) found that the toxicity to selenium of wheat and buckwheat was proportional to the concentration added as sodium selenite to soil or solution cultures. The effect of selenium varied from a decrease in growth rate with 1, 2 and 4ppm in the growth medium to extreme chlorosis and premature death with 8, 16, 32 and 64ppm. Mason and Phillis (1937) observed that when cotton was grown in sand culture media at the rates of 5, 10, 20, and 50ppm of selenium sodium selenate no effect was observed at the 5 and 10ppm levels. Growth was slightly affected at 20ppm while 50ppm of selenium in the medium strongly depressed growth. Peng et al.(2001) studied the effect of fulvic acid on the dose effect of selenite on the growth of wheat. The antioxidative and growth promoting effect of selenium on senescing lettuce was studied by Xue et al. (2001). Wu et al. (1988) studied the influence of Se provided at different levels on the growth and Se accumulation in rice. Euliss (2004) observed that when canola was grown hydroponically in 2ppm selenium and significant reduction in seed viability occurred. Only 60% of selenium treated seeds germinated while 100% of the control seed were viable. This was correlated with high amount of selenium within the seeds and may be due, in part, to inadequate production of fully functional enzyme needed for normal germination events. Indeed, one of primary mechanism of selenium toxicity is the incorporation of selenium cysteine & selenium methionine into protein (Brown& Shift,1981). Germination enzyme such as amylase have been shown to have cysteine components (Taneyama et al., 2001, Asano et al., 1999). Lower applied concentration of selenium (0.05 ug g^{-1}) in Pertridish enhanced early seedling growth & dry matter production. Guo hong hai (2001) reported that appropriate application (<1.5mg/Kg soil) raised the activity of glutathione peroxidase, CAT (catalase) and POD peroxidase), alleviated the damage of lipid peroxidase in plant cell membrane & thus strengthened antioxidation ability of the plant. Supplementary selenium also improved photosynthesis, incearsed soluble sugars and decreased proline content.

Table 1.1, 1.2 ,1.3, 1.4 (See in last page)

Fig. 1.1,1.2, 1.3, 1.4, 1.4(B) (See in last page)

Plate -1

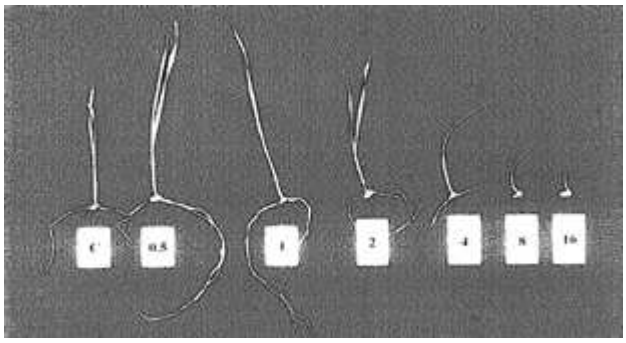

Showing the effect of different concentrations (ppm) of di sodium selenite (Na_2SeO_3) on early seedling growth of *Triticum aestivum* L.

Plate -1

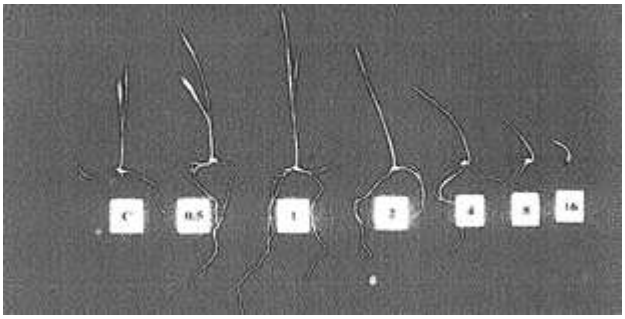

(B) Showing the effect of different concentrations of di sodium selenate (Na_2SeO_4) (ppm) on early seedling growth of *Triticum aestivum* L.

References :-

1. Asno, M. 1999. Characterization of novel cysteine protease from germinating cotyledons of soybean (Glycine max (L.) Marril.) Joural of Biochemistry (Tokyo), 12: 296-301.
2. Bennett, W.M. 1988 Assessment of selenium toxicity in algae using turbidostat culture. Water research, 22:939-942.
3. Berlyn, P.G. 1972. Seed germination and morphogenesis. In: Seed Biololgy. Vol.I,(T.T.Kozlowski ed.) Academic Press, New York:244p.
4. Boison, F., Gnassia-Barelli, M. and Remeao, M. 1995, Toxicity and accumulation of selenite & selenate in the unicelluar marine alga, Cricosphaera elongate. Arch. Environ. Conatam. Toxico,., 28: 487-493.
5. Brown, T.A. and Shrift. 1981. Exclusion of selenium from proteins in selenium-tolerant *Astragalus* species. Plant Physiol., 67:1951-1953.
6. Euliss, K.W. 2004. The effect of selenium accumulation hyderoponically grown conola (Brassica napus). Journal Young Investigators,10.
7. Gharieb, M.M., Wilkinson, S.C. and Gadd, G.M. 1995. Reduction of selenium oxyanions by unicellular polymorphic and filamentous fungi. Cellular location of reduced selenium and implication for tolerance.J.Ind Microbiol., 14:300-311.

8. Guo, H.H., Kong, L.A., Dong, X.2001. Effect of supplementary selenium on salt tolerance of *Rumex patientia* X *trainshanicus sinica* under salt stress. ACTA Pratacultural Sinica, 10 (1): 20-25.
9. Martin, A.L. 1936. Toxicity of selenium to plants and animals. Am.J.Botany., 23: 471-483.
10. Mason, T.G. and Phillis, E. 1937. A note on a new method of control for insect pests of the cotton plant.. Emp.Cotton-Growing Rev., 14:308-309.
11. Pandit, B.R. and Prasnnakumar, P.G. 1996 Effect of selenium on seedling growth, pigment content and protein of two crops. *Sorghum Bicolor* L. (Kpwar) and *Pernnisetum typhoides* Barm. (Bajra). Ecol.Env. and Cons., 2:169-172.
12. Paul, A.K. and Mukherji, S. 1972 Biol. Plant. 14:414 p.[Referred In : P.K.Das, M.Kar and D. Mishra, 1978. Nickel nutrition of plants.I. Effect of nikel on some oxidase activities during rice (*Oryza sativa* L.) seed germination.Z.. Pflanzen Physiol., 90.S:225-233].
13. Peng, A., Xu, Y. and Wang, Z.J. 2001. The effect of fulvic acid on the dose effect of selenite on the growth of wheat. Biol. Trace Elem. Res., 83:275-279.
14. Riechter, D. and Bergmann, H. 1993. Selenium uptake by wheat plants. In M. Anke (ed.), Mengen spurenelen. 13th Arbeitstag, 1993,pp.149-154.Verlag MTV Hammerschmidt, Gersdorf, Germany.
15. Roy, B.K. and Mukherji, S. 1982. Regulation of enzyme activity in mung bean (*Phaseolus aureus* L.) seedling by Cr. environmental Pollution (Series A), 28: 1-6.
16. Taneyama, M. 2001. Involvement of gibberellins in expression of a cysteine proteinase (SH-EP) in cotyledons of *Vigna mungo* seedlings. Plant And Cell Physiology, 2: 1290-1293.
17. Terry, N., Zayed, M., De Souza, M.P. and Taurn, A.S. 2000 Selenium in higher plants. Annu. Rev. Plant Physiol. Plant Mol. Biol., 51: 401-432.
18. Wheelar, A.E.E., Zingaro, A., Irgoilic. K. and Battino, N.R. 1982. The effect of selenate and selenite and sulphate on the growth of six unicellular marine algae.J.Exp. Mar.Bio.Ecol., 57: 181-194.
19. Wu, L., Hyang, Z.Z. and Burau, R.G.1988. Selenium accumulation and selenium-salt cotolerance in five grass species. Crop. Sci., 28: 517-522.
20. Wu, Y.Y. Luo, Z.M. and Peng,Z.K. 1988. Research on the influence of Se provided at different levels upon the growth of rice and its accumulation. J. Hunan Agric. Univ., 24: 176-179.
21. Zayed, A., Lytle, C.M. and Terry, N.1998. Accumulation and Volatilization of different chemical species of selenium by plants. Planta, 206: 284-292.
22. Zieve, R. and Peterson, P.J. 1984. The accumulation and assimilation of dimethyl selenide by four plant species. Planta, 160: 180-184.

Table 1.1 Effect of different concentrations of selenite (di-sodium selenite) on germination percentage of *Triticum aestivum* (L.) seeds over a period of 30 hours.

	10 hrs.	12 hrs.	14hrs.	16 hrs.	18 hrs.	20hrs.	22 hrs.	24 hrs.	26 hrs.	28 hrs.	30 hrs.
Control	8.33	11.11	27.77	58.33	69.44	77.77	94.44	94.44	94.44	97.22	100
0.5	11.11	19.44	33.33	63.88	77.77	94.44	97.22	100	100	100	100
1.0	16.66	25.0	33.33	75.00	83.33	94.44	97.22	100	100	100	100
2.0	16.66	25.00	34.50	66.66	80.55	97.22	97.22	97.22	100	100	100
4.0	13.88	22.22	30.55	58.33	75.00	88.88	94.44	94.44	97.22	100	100
8.0	11.11	19.44	27.77	55.55	69.44	86.11	91.66	94.44	97.22	100	100
16.0	2.77	13.88	27.77	55.55	63.88	77.77	86.11	91.66	94.44	97.22	100

Table 1.2 Effect of different concentrations of selenate (di-sodium selenate) on germination percentage of *Triticum aestivum* (L.) seeds over a period of 32 hours.

	10 hrs.	12 hrs.	14hrs.	16 hrs.	18 hrs.	20hrs.	22 hrs.	24 hrs.	26 hrs.	28 hrs.	30 hrs.	32 hrs
Control	2.77	8.33	22.22	38.88	66.66	75.00	91.66	94.44	97.44	100	100	100
0.5	2.77	13.88	27.77	44.44	69.44	77.77	94.44	97.22	100	100	100	100
1.0	5.55	19.44	30.55	47.22	72.22	77.77	94.44	97.22	97.22	100	100	100
2.0	16.66	30.55	30.55	52.77	61.11	77.77	94.44	97.22	97.22	100	100	100
4.0	11.11	19.44	22.22	47.22	58.33	72.22	88.88	94.44	94.44	97.22	100	100
8.0	11.11	19.44	22.22	44.44	58.33	72.22	88.88	94.44	94.44	94.44	100	100
16.0	0	0	13.88	30.55	52.79	61.11	69.44	86.11	9166	91.66	94.44	100

Table 1.3 Effect of selenite (di-sodium selenite) on shoot-root length (cm), fresh and dry matter production (mg plant^{-1}) of *Triticum aestivum* L. (percentage increase/decrease over the control also given in parenthesis).

Selenite Concentrations	Length		Fresh Weight		Dry Weight	
(μgg^{-1})	Shoot	Root	Shoot	Root	Shoot	Root
Control	10.1861±0.77	11.4127±0.54	0.0534±0.00	0.0123±0.00	0.0101±0.00	0.0069±0.00
0.5	10.7020±0.05 (+5.06)	11.5388±0.06 (+1.10)	0.0793±002 (+48.50)	0.0236±0.00 (+91.86)	0.0116±0.00 (+14.85)	0.0071±0.00 (+2.89)
1.0	10.4300±0.17 (+2.39)	11.3325±0.00 (-0.70)	0.0585±0.01 (+9.55)	0.0100±0.00 (-18.69)	0.0104±0.00 (+2.97)	0.0067±0.00 (-2.89)
2.0	6.3788±0.40 (-37.37)	5.9806±1.08 (-47.59)	0.0367±0.00 (-31.27)	0.0054±0.00 (-56.09)	0.0074±0.00 (-25.74)	0.0036±0.00 (-47.82)
4.0	6.1000±1.30 (-40.11)	4.4937±0.66 (-60.62)	0.0367±0.00 (-31.27)	0.0045±0.00 (-63.41)	0.0073±0.00 (-27.72)	0.0023±0.00 (-66.66)
8.0	3.7576±0.32 (-63.11)	2.3500±0.62 (-79.40)	0.027±0.00 (-50.00)	0.0019±0.00 (-84.55)	0.0057±0.00 (-43.56)	0.0008±0.00 (88.10)
16.0	2.2333±0.36 (-78.07)	0.8361±0.15 (-92.67)	0.0141±0.00 (-73.59)	0.0003±0.00 (-97.56)	0.0048±0.00 (-52.47)	0.0002±0.00 (-97.10)
SEm±	0.36	0.335	0.00518	0.00131	0.00418	0.000372
CD 5%	1.092	1.015	0.016	0.004	0.001	0.001
CD 1%	1.517	1.410	0.002	0.006	0.002	0.002
r	-0.8916**	-0.8631**	-0.8191**	-0.6994**	-0.8768**	-0.8624**
r^2	0.7950	0.7449	0.6709	0.4891	0.7688	0.7437
y	9.484**-0.5276*	9.931**-0.6856**	0.058**-0.0031	0.013**-0.0010**	0.010**-0.0004	0.006**-0.0004**

* Significant at 5%, ** Significant at 1%

Table 1.4 Effect of different concentrations of selenate (di-sodium selenate) on shoot-root length (cm), fresh and dry matter production (mg plant^{-1}) of *Triticum aestivum* L. (percentage increase/decrease over the control also given in parenthesis).

Selenate Concentrations	Length		Fresh Weight		Dry Weight	
($\mu g g^{-1}$)	Shoot	Root	Shoot	Root	Shoot	Root
Control	10.1816±0.77	11.4127±0.54	0.0534±0.00	0.0123±0.00	0.0101±0.00	0.0069±0.00
0.5	10.5897±0.35 (+4.00)	11.6581±2.62 (+1.27)	0.0689±0.07 (+29.02)	0.0217±0.00 (+76.42)	0.0117±0.00 (+15.84)	0.0073±0.00 (+5.79)
1.0	10.4166±0.21 (+2.30)	11.3011±1.57 (-0.97)	0.0514±0.06 (-3.74)	0.0207±0.00 (+68.29)	0.0109±0.00 (+7.92)	0.0068±0.00 (-1.44)
2.0	6.2261±0.70 (-38.84)	5.8350±0.66 (-48.87)	0.0367±0.04 (-31.27)	0.041±0.00 (-66.66)	0.0076±0.00 (-24.75)	0.0036±0.00 (-47.82)
4.0	5.9804±1.30 (-41.26)	4.1125±1.02 (-63.96)	0.0366±0.00 (-31.46)	0.0040±0.00 (-67.47)	0.0073±0.00 (-27.72)	0.0023±0.00 (-66.66)
8.0	3.0006±0.11 (-70.52)	0.9893±0.37 (-91.33)	0.0235±0.00 (-55.99)	0.0014±0.00 (-88.61)	0.0058±0.00 (-42.57)	0.0012±0.00 (-82.60)
16.0	2.1267±0.25 (-79.11)	0.4535±0.24 (-96.02)	0.0186±0.00 (-65.16)	0.0004±0.00 (-96.74)	0.0043±0.00 (-57.52)	0.0001±0.00 (-98.55)
SEm±	0.382	0.736	0.00183	0.00208	0.000544	0.000455
CD 5%	1.158	2.231	0.006	0.006	0.002	0.001
CD 1%	1.609	3.099	0.008	0.009	0.002	0.002
r	-0.8727**	-0.8536**	-0.8707**	-0.6951**	-0.8297**	-0.8514**
r^2	0.7615	0.7286	0.7581	0.4831	0.6885	0.7249
y	9.356**-0.5335**	10.001**-0.7207**	0.054**-0.0029**	0.014**-0.0011**	0.010**-0.0004	0.006**-0.0004**

* Significant at 5%, ** Significant at 1%

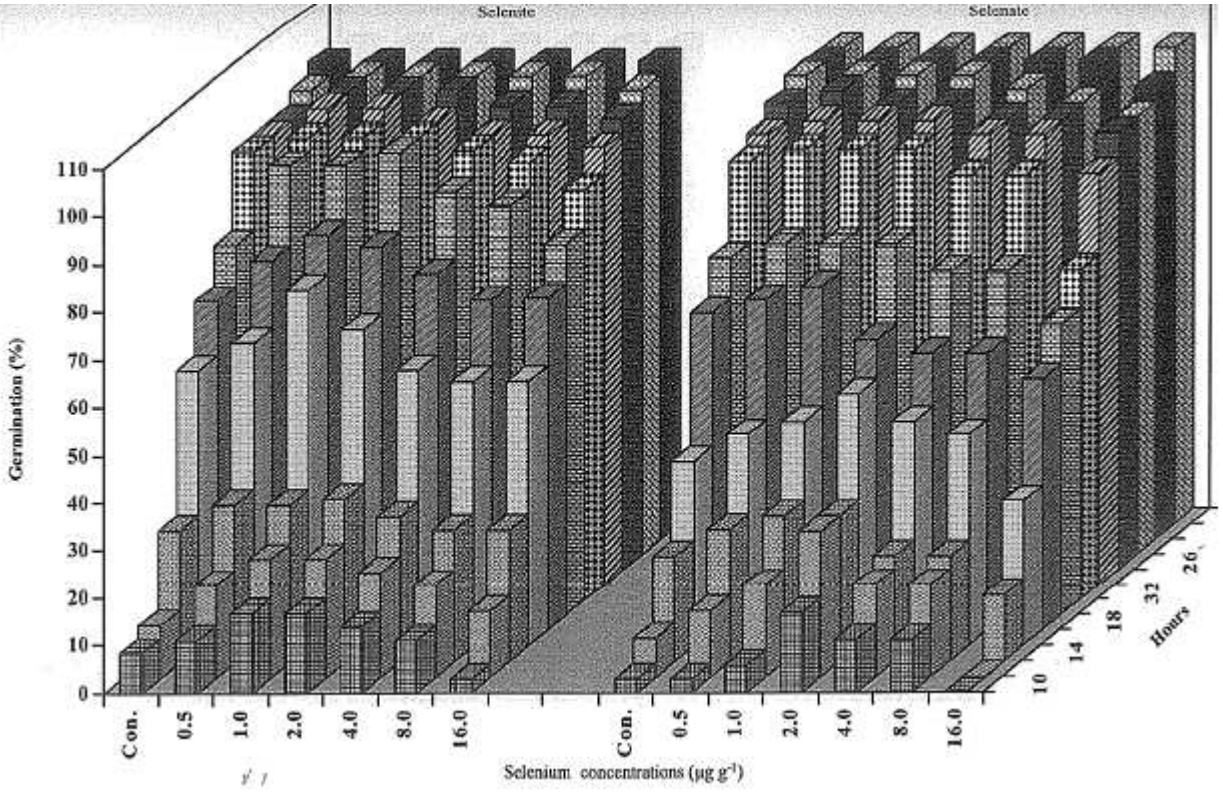

Fig. 1.1 Effect of different concentrations of selenite and selenate (di sodium selenite and selenate) on seed germination of *Triticum aestivum* L.

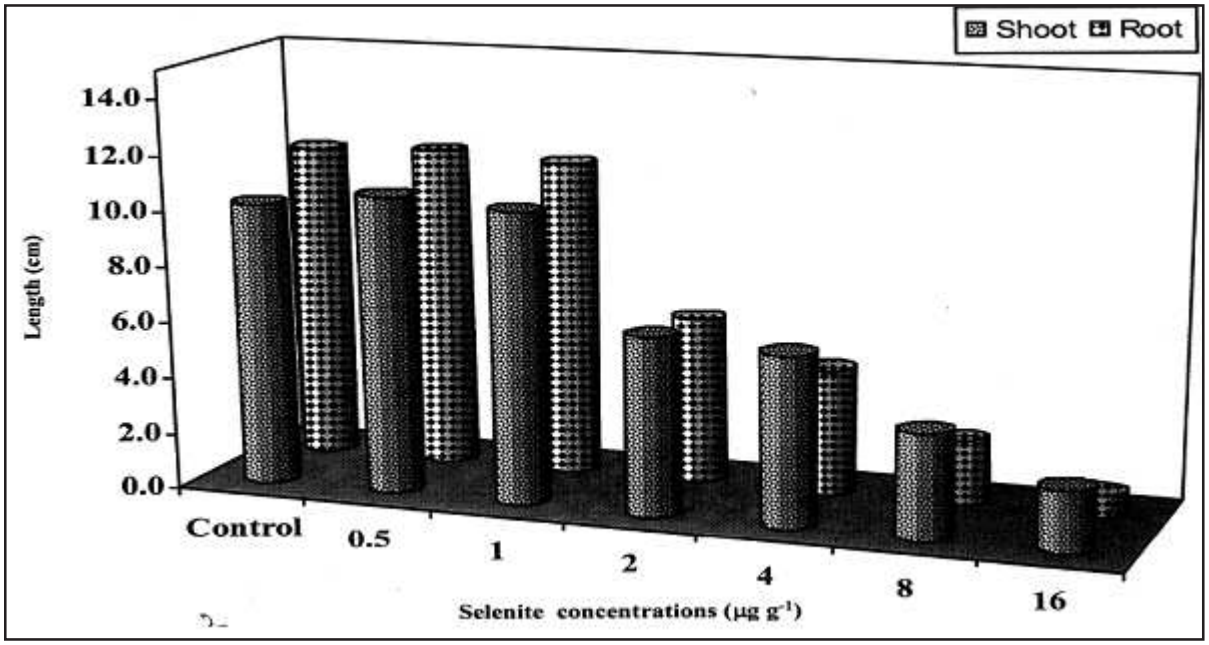

Fig.1.2 : Effect different concentrations of selenite (di-sodium selenite) on shoot-root length of *Triticum aestivum* L. during early seedling growth.

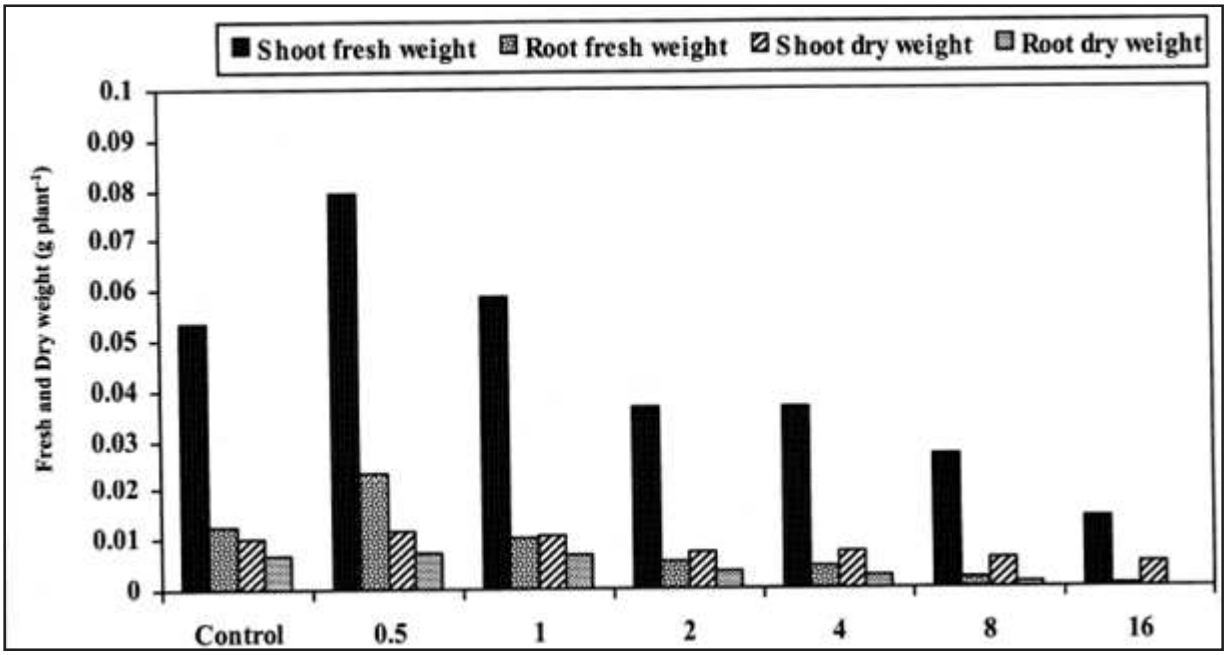

Fig.1.3 : Effect different concentrations of selenite (di-sodium selenite) on shoot-root fresh and dry weight (g plant^{-1}) of *Triticum aestivum* L. during early seedling growth.

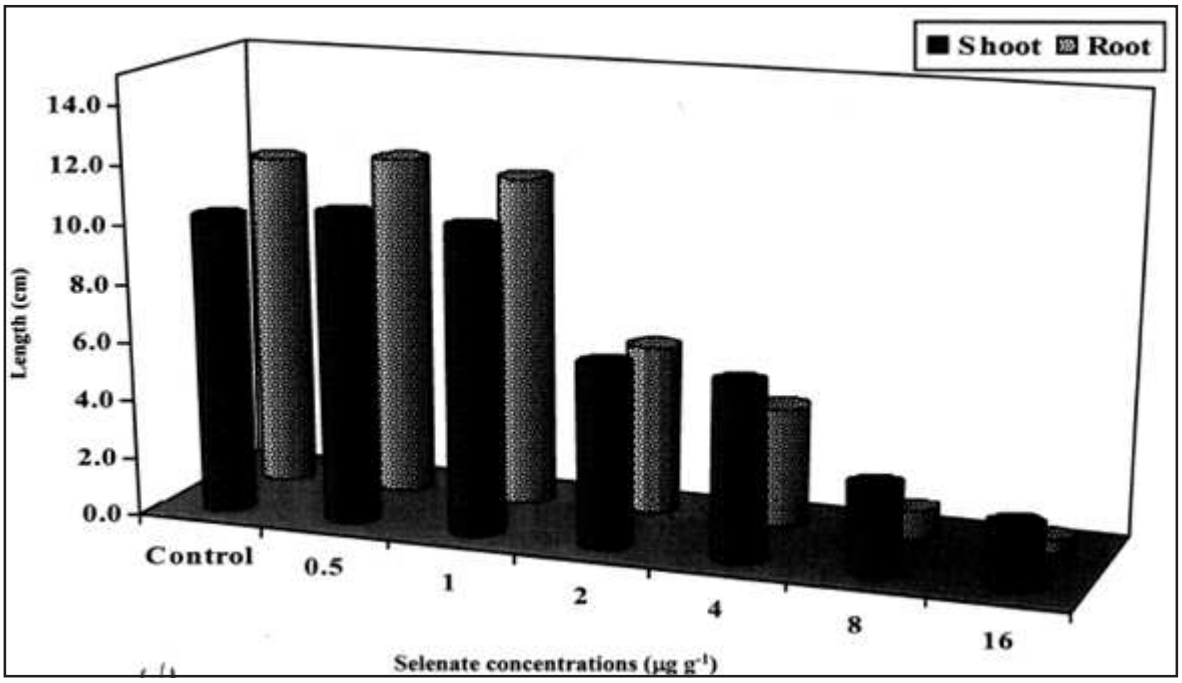

Fig.1.4 : Effect different concentrations of selenate (di-sodium selenite) on shoot-root length (cm) of *Triticum aestivum* L. during early seedling growth.

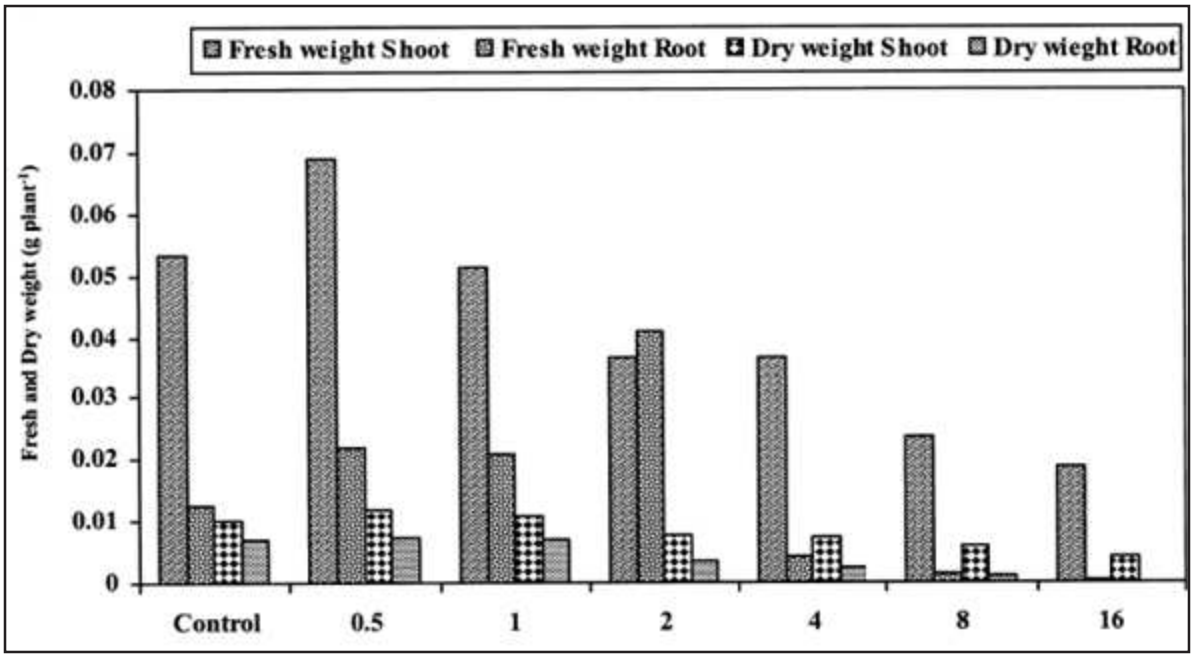

Fig.1.4(B): Effect different concentrations of selenate (di-sodium selenate) on shoot-root fresh and dry weight (g plant^{-1}) of *Triticum aestivum* L. during early seedling growth.

****

Ethnomedicinal Plant, *Rubia cordifolia* Linn., and its use as 'Anti psoriasis', in Amarkantak Biosphere Region, (M.P.) India

Dr. Radhe Shyam Napit *

Abstract - The present study has offered immense scope and opportunities for the development of new medicine (drug). Some well has known modern drugs have been developed through ethnic (folklore) and traditional system of medicine. However, out of 1000 medicinal plant, only 15-20 % have so for been used for development of ethnobotanical sources for drugs by the ethnic (tribal) people in the Amarkantak area. A report only one specie Ethnomedicinal plant of ***Rubia cordifolia*** **Linn.,** family (Rubiaceae) is present here.

Key words - Ethno medicinal plants, anti psoriasis, Amarkantak Biosphere region.

Introduction - The use of traditional medicine is widely accepted by rural people in Amarkantak biosphere. Amarkantak is rich in medicinal and aromatic plant's having a biodiversity of about 300-500 species about 80 percent of these are collected from wild. Maheshwari (1992) reported that the country has many areas where the traditional medicine culture is rich and diverse, making it an ideal site for ethnobotanical study.

Amarkantak, a beautiful hill station in Anuppur district of Madhya Pradesh, is situated in 22^0 41' N and 81^0 46' E on the eastern most extremity of Maikal range. It is a holy place of pilgrimage and origin of river Narmada, Son, Johila and Mahanadi. It lies on a plateau at an altitude of approximately 1100 meters.

The forest vegetation of the Plateau is of sub tropical type dominated by Sal trees then, soil in usually latrite. The climate is monsoonic tide with well defined summer, rainy and winter. May and June are the hottest month December and January are the coldest Month (T.1-4^0C). The average annual rain fall is 1000-1450 mm.

Anuppur, Amarkantak is the home of many ethnic groups. Within this small district, more than 12 ethnic groups and different castes live (Pranaya Verma 1994) viz., Agaria, Baiga, Kol, Gond, Pao Bheel, Bhaina, Kanvar, Bhumia, and Panika, etc. The density of Baiga & Gond Population is higher than others. They live in remote areas of the forest. They mainly depend on natural products of the forest for their livelihood and have retained their traditional cultures and folklores, due to close and constant association with the forests. They have fairly good knowledge of the medicinal and other value of their surrounding plants and mostly depend on them for the remedies of their ailments and diseases.

Study Sites - Four study sites were selected in different parts of Amarkantak as Bhundakona, Jaleshwar, Sonemuda and Narmada Kund (Mai ki bagiya) Bhundakona, Jaleshwar, Son muda, Podki, Bhejri, Bhamaria, Farrisemar, Bijauri, Lapti, Amgawa, Khati Bilaspur, Pamra, Kerha, Bhelma, Khursa, Harri, Sonhra, Vaihar, Barbaspur, Doniya, Sarhakona, Jamuna Dadar, Nonghati, Barsot, Johilatola (Podki), Masnatola Kapilasangam, Tikritola, and also surrounding of Amarkantak, Bilaspur district- Kevchi, Padmania, Devergavan, Vedrapani, Jaleshwar, GramUmania and Dindauri district- Kabeer Chbutra, Pakri, Sonda, Karanjia, and Narigwara for the collection of plant's being used by tribes traditionally (ethnobotanically). These areas were selected on the basis of varied altitude and richness of species, which also comprise rich cultural diversity.

Notable Worker - The local healers and knowledgeable villagers were consulted during the field trips covering three different seasons during Ph.D. work Sep. 2004 – Jul 2005. Ethnomedicinal information were collected following the methods described by Jain (1965) and Jain & Rao (1976), Maheshwari & Singh (1965), Jain (1968), Sikarwar, Maheshwari (1992) & Jain & Tarafder 1970, Chopra et.al; 1958, 1969, Nadkarni, 1954., Knowledgeable people and medicine men were interviewed for recording medicinal use; parts used method of drug preparation, dosage and local name. Under enumeration plant names have been arranged alphabetically. The correct botanical name is followed by family within parentheses, local names, medicinal uses name of tribe locality. All the specimens have been deposited in the Botany department Govt. P. G. College Shahdol (M.P.) Some local worker studied here like P. verma- (1994), M. P. Singh (2001) & S.L.Bondya, K. K. Khanna et al. (2005).

Methodology - The method adopted for the ethnomedicinal study was adopted by Jain 1981. During the study knowledgeable person rural areas of Amarkantak regions & Pushprajgrah block with Shahdol division survey during Sep.

* **Assistant Professor (Botany) Centre for Excellence, IGNTU, Amarkantak (M.P.) INDIA**

2004 – Jul 2005. Information was collected from tribals medicine men and vaidyas and some formers, about the interviewed therapeutic used of plants in the treatment of various diseases. Information about used and local name of plants was secured from the information. The collected plant specimens were identified by consulting Flora of British India by Benthum and Hooker (1872-1879). Voucher specimens of the species collected are deposited in the Department of Botany Govt. P.G. College Shahdol, Madhya Pradesh (M.P.).

Enumeration of plants - Correct botanical names are arranged alphabetically following Hara et.al. (1978, 1982) and Hara and Williams (1979) followed by family in brackets, vernacular name in apostrophe and collection number in brackets. Other details given are plant parts used, quantity of plant parts, details of preparation method, and mode of use.

(1) *Rubia cordifolia Linn*. Qian. Cao (Rubiaceae) LN.- Majitha; H.- Manjishtha; Eng.-Indian Madder

Plant Habit- perennial climbing herbaceous. Root- tap branched, a few to 10, purple or orange-red bark. Stem- four-vector shape, small inverted thorns surfaced. Leaf four crossing, leaf shape changes, oval, triangle-shaped oval, wide oval to narrow oval, 2-6 cm. long, 1-4 cm wide, a sharp tip, heart-shaped, below and along the veins are spiniferous petiole, the entire edge of a pulse 5. Poly cone-shaped umbrella inflorescence; spent small, yellow-white, 5; calyx not obvious; Corolla convergence with a diameter of about 4 mm, 5 bifida; stamens 5, the students corolla tube; ovary-under, two rooms, no hair., Berries spherical, 5-6 mm in diameter, red to black after. Flowering from June to September, fruit from August to October period. Occurrence-Amarkantak region,

Floral Formula- Br. ⊕, ⚥, $K_{(5)}$, $C_{(5)}$ A_5, G_2-

Fig.1 *Rubia cordifolia Linn*. Qian., Cao (Rubiaceae) Flowring and Fruiting stage.

Fig2. *Psoralea corylifolia* Linn.

Mode of Use - Decoction of plant “Majitha” **(***Rubia cordifolia* Linn., Qian Cao**)** and with “Neem” (*Azadirachta indica* A. Juss.) leaf, bark given orally half cup spoons twice a day for 3-5 weeks to cure psoriasis., and N pasted of root with “Bakuchi” (*Psoralea corylifolia* Linn.) seeds powder mixed in hony and topically use 2-3 times a day for skin disease.

Chemical Substance- Root contains:

Table 1: Phytochemical analysis of root extracts in Rubia cordifolia L. Phytochemical Test

	M E	C E	A E	P E	Aq E
ALKALOIDS					
Dragendorff’s test	-	-	-	-	-
Mayer’s test	-	-	-	-	-
Hager’s test	-	-	-	-	-
Wagner’s test	-	-	-	-	-
Tanic acid test	-	-	-	-	-
FLAVONOIDS					
Alkalie reagent test	+	+	+	+	+
Lead acetate test	+	+	+	+	-
Zn-HCl reductin test	+	+	+	+	+
Shinoda’s test	+	+	+	+	+
ANTHRAQUINONES					
Borntrager’s test	+	+	+	+	+
Modifid Borntrager’s test	+	+	+	+	+
GLYCOSIDES					
Raymond’s test	-	-	-	-	-

Root extracts - The different solvent extracts of root samples have shown more intense colour than stem and leaf extracts. The solvent extracts such as methanol, chloroform, acetone, petroleum ether and aqueous extracts of root possessed anthraqunione s, glycosides, saponins, steroids, phenols, flavonoids and were negative for alkaloids, tannins and quinones in all solvent extracts of root.

Literature Source- file:///C:/Users/Dr.%20RS%20Napit/Downloads/article_wjpps_1412081569.pdf

Result and discussion - The most frequently used traditional phytotherapies are those against gastro-intestinal problems as in other areas in Amarkantak (Pranaya Verma 1994) in old Shahdol district. The survey provides anti psoriasis plants sufficient ground to believe that traditional medicinal practice using native medicinal plants is alive and well functioning in the study area. In many communities, wild plant’s species are used as important parts of the primary healthcare system due to belief in the effectiveness, lack of modern medicines and medication and poor economic status of people. The treatment of diseases with plants and plants products also causes no side effects. It is cost effective too.

A large number of commercially important medicinal plants species are over exploited by person’s involved in the trade of medicinal plants.

The plant significance of standardized procedures for crude drug extraction (medicinal plant parts) is to attain the

therapeutically desired portions and to quit unwanted material by treatment with a selective solvent. These extracts after standardization are used as medicinal agent such as in the form of tinctures of further processed to be incorporated in any dosage form such as capsules and tablets. These products contain complex mixture of many secondary metabolites, such as alkaloids, glycosides, flavoniods, terpeniods and lignins.

Lack sustainable harvesting methods, inadequate knowledge about forest management and lack of financial resources are the main causes of over-exploitation. have been reported. These plants are collected illegally in large numbers from different areas of Amarkantak and supplied to contractors at low rates. According to local people, these activities have led to decline in the population of the medicinal plant species in the forests. If the practices were managed properly, the forest resources and medicinal plant species will provide good service in medication and subsistence needs.

The concepts of community forestry programme are developing among the user groups which can be taken as a good sine towards conservation and sustainable use of forest resource and medicinal plants.

Acknowledgements - The research scholar is also thankful to the people of Amarkantak new district Anuppur who shared with him their indigenous knowledge. R. S. Napit would like to express thankful to Dr. Smt. D. Thakur, Principal Govt. P.G. College Narsinghpur and Prof Dr. Naveen Sharma, and Prof Dr. A. K. Shukla, Head and Dean of the Botany Deptt. IGNTU Amarkantak M.P., for their kind cooperation and good support and guidance in the form of research work.

References :-

1. Anonymous, 1968 Medicinal plants of India, Vol. 1.11. CSIR New Delhi.
2. Chandra, G. 1970., Chemical composition of the flower oil of Nyctanthes arbor-tristis Linn. Indian perfume 14 (pt. I), 19.
3. Dhingra, V. K., Seshadri T. R. and Mukherjee S. K. 1976., Carotenoid glycosides of Nyctanthes arbor-tristis Linn. Indian J. Chem. 14B, 231.
4. Chopra, R.N. Chopra I.C. and Verma, B.S. 1968., Supplement to Glossary Indian medicinal plants, CSIR New Delhi.
5. Bhattacharjee, S.K. 1998, S.K. 1998., Handbook of Medicinal plants. Pointer publishers, New Delhi.
6. Brown, J.E., Rice-Evans, C.A. 1998., Luteolin rich artichoke extract protects low density lipoprotein from oxidation in vitro. Free Radical Res., 29: 247-255.
7. Devi Priya M. and E. A. Siril. Pharmacognostic Studies on Indian Madder (Rubia cordifolia L.). J. of Pharm and Phytochemistry, 2013; (1): 5.
8. Han, X., Shen, T., Lou, H. 2007., Dietry poly phenols and their biological significance. Int. J. Mol. Sci., 950-988.
9. Jain, S.K. and Tarafder, C.R. 1970., Medicinal plant lore of the Santhals (A revivals of P.O. Bodding's work). Econ., Bot. 24, 241.
10. Shah, G.L. 1984., Some economically important plants of salsette ISI and near Bombay. J. Econ. Taxon. Bot. 5 : 753-765.
11. Singh, K. K. and Maheshwari, J. K. 1992., Folk medicinal uses of some plants among the Tharush of Gorakhpur Distt. U.P. India Ethnobotany 4:L 39-43.
12. Ramesh S. Deoda, Dinesh Kumar, Prasad V. Kadam, Kavita N. Yadav, Santosh S. Bhujbal3, Manohar J. Patil., Pharmacognostic and Biological Studies of the Roots of Rubia cordifolia Linn. (Rubiaceae)., Int. Jou. of Drug Develop & Res, 2011; (3): 3.
13. Literature Source : file:///C:/Users/Dr.%20RS%20Napit/Downloads/article_wjpps_1412081569.pdf

****

Benefit of Yoga And Traditional Exercise

Dr. Rajesh Masatkar *

Abstract - Combination of yoga and traditional exercise gives several benefits to human beings. Both of these exercises cure many diseases as well as give mental peace to us. But only thing is that you have to give your own time and be continue involve in this activities. If you have to take more and rapid benefit of this, than you have to maintain your daily routine time table and food habit also.
Keywords – Asana, Breathing Exercise, Traditional Exercise.

Introduction - Today's one of the emerging problem is our health. Our health is totally depends upon our environment. As we know that our life is formed from five elements that are Air, Water, Fire, Soil and Space (Sky). If these elements are found in pure form than we can say that our health is in good form. If any one of these get polluted or impure than our life comes in dangerous zone. There are several factors which disturb our environment such as water pollution, air pollution, soil pollution, noise pollution, rise in temperature and etc. All these factors affect our health parameter. Due to above reason people may causes several diseases like Cancer, Skin disease, Heart disease and other so many diseases. All these elements get impure due to development of mankind such as establishment of factories, nuclear plants, and uses of fertilizers in farming etc. But we know that for the development of mankind. It is very necessary. In last, for the safety of our health and other living organism we have established whole things in sustainable manner on our earth. Than only we can able to maintaining both of environment and our health. But for keeping good health we have to follow our above title.

Benefit of Yoga And Traditional Exercise - There are several benefits of yoga and traditional exercise. But, according to my experience and references from other authors I have specified some of benefit in front of you.

1. **Improve Our Flexibility –** improved flexibility is one of first and most obvious benefit of yoga. Due to increase in flexibility aches and pain start to disappear.
2. **Builds Muscle Strength –** By doing yoga our muscle become strong and they also protect us from conditions like arthritis and back pain etc.
3. **Perfect Our Posture –** By doing breathing exercise, traditional exercise and asanas our body come in proper shape. On other hand side poor posture can cause back, neck, muscles and other joints problems.
4. **Betters Our Bone Health –** By doing traditional exercise and asanas bone density increased in our body. Yoga has ability to do lowers the levels of the stress hormone cortisol in our body and also help to maintains the level of calcium in the our bones.
5. **Increase Our Blood Flows –** yoga also gets more oxygen to your cells, which function better as a result. Sirsasana and Sarvangasana encourage venous blood from the legs and pelvis to flow back to the heart, where it can be pumped to the lungs to be freshly oxygenated. This can help if you have swelling in our legs from heart or kidney problems. Yoga also boosts levels of hemoglobin and red blood cells, which carry oxygen to the tissues. Due to yoga blood become thin by making platelets less sticky and by cutting the level of clot- promoting proteins in the blood. This can lead to a decrease in heart attacks and strokes since blood clots are often the cause of these killers.
6. **Drains Our Lymph And Boosts Immunity.-** when you contract and stretch muscles, move organs around and come in and out of yoga postures, you increase the drainage of lymph (a viscous fluid rich in immune cells). This helps the lymphatic system fight infection, destroy cancerous cells and dispose of the toxic waste products of cellular functioning.
7. **Regulate Our Adrenal Gland –** Yoga lowers cortisol level. Normally, the adrenal glands secrets cortisol in response to an acute crisis, they can compromise the immune system. Additionally, excessive cortisol has been linked with major depression, osteoporosis (it extracts calcium and other minerals from bones and interferes with the laying down of new bone), high blood pressure and insulin resistance.
8. **Healthy Life Style –** Move more, eat less that's the adage of many a dieter. A regular practice gets you moving and burns calories and the spiritual and emotional dimensions of your practice may encourage you to address any eating and weight problems on a deeper level. Yoga may also inspire you to become a more conscious eater.
9. **Lower Blood Sugar –** Yoga has been found to lower blood sugar in several ways by lowering cortisol and

* **Asst. Professor (Botany) Govt. Degree College, Nainpur, Distt. Mandla (M.P.) INDIA**

adrenaline levels, encouraging weight loss and improving sensitivity to the effects of insulin. Get your sugar level down and you decrease your risk of diabetic complication such as heart attack, kidney failure, and blindness.

10. Helps You Focus – An important component of yoga is focusing on the present. Studies have found that regular yoga practice improves coordination, reaction time, memory and even IQ scores.

11. Helps You Sleep Deeper – By doing pranayam and asanas you feel less tired and you will able to get deeper sleep.

12. Gives You Peace of Mind – According to Patanjali's Yoga Sutra yoga slows down the mental loops of frustration, regret, anger, fear and desire that can cause stress. And since stress is implicated in so many health problems from migraines and insomnia to lupus, eczema, high blood pressure and heart attacks if you learn to quiet your mind , you'll be likely to live longer and healthier.

13. Yoga Reduce Our Pain – According to several studies asana, meditation or a combination of both, reduced pain in people with arthritis, back pain, fibromyalgia, carpal tunnel syndrome and other chronic conditions. When you relieve your pain, your mood improves you are more inclined to be active and you do not need as much medication.

14. Better Metabolism – Yoga helps improves your metabolism, which gives effortless weight loss. Yoga increases your lean muscle and makes you more flexible. This alone is enough to get your metabolism going but it also gives you more energy making you more likely to be active through the day. Metabolize your food better so you can utilize their vitamins and minerals more effectively and lose weight more easily.

15. Better Memory - Yoga can lead to a better memory mostly because it is improving your blood flow to the brain making it work better. This is why yoga can be very helpful in staving off diseases like Alzheimers and other mental disorders.

16. Lower Sodium Level – Consuming more sodium in our diet may cause high blood pressure and stroke. Breathing and traditional exercise lower the level of sodium by sweating the body. Sweating actually has numerous health and beauty related benefits. Sweating helps our body in many ways. To maintain proper temperature and keep you from overheating. Expel toxins, which supports proper immune function and helps prevents diseases related to toxic overload. Kill viruses and bacteria that cannot survive in temperature above 98.6 degrees Fahrenheit. Clean the pores, which will help eliminate blackheads and acne.

17. Sweating May Fight Skin Infection Via Antimicrobial Properties And Reduce Kidney Stone – Dermcidin is an antimicrobial peptide with a broad spectrum of activity that is expressed in eccrine sweat glands and secreted into sweat. Sweat contains antimicrobial peptides effective against viruses, bacteria and fungi. These peptides are positively charged and attract negatively charged bacterial, enter the membranes of bacteria and break them down. In the average healthy person, research shows that sweating leads to a reduction of viable bacteria on your skin surface, which may lower your risk of skin infections. Research has also shown that people who exercise and therefore sweat more have a lower risk of kidney stones. One reason for this may be because they sweat out more salt, rather than having it go into the kidneys where it may contribute to stone formation.

18. Sweating Can Help Eliminate Phthalates – Phthalates are used in plastic toys, cooking utensils, fragrances, nail polish, cosmetics and paints. Researchers in Canada examined blood, urine and sweat concentrations of various phthalates in 20 people. They found that the concentration of these chemicals was twice as high in sweat as in urine and suggested that perspiration may help eliminate of some toxic compounds.

19. Sweating Can Help Eliminate BPA - Bisphenol A (BPA) is widely used to make clear plastics but it is also used in cash register receipts, water pipes, electronics and eyeglass lenses. This compound has been known for years to have estrogenic properties and exposure to it has been linked to obesity, early puberty, sexual dysfunction, miscarriage. The same group of Canadian researchers found BPA in the sweat of 80% subjects tested. Some of these people had no detectable levels in their blood or urine, which suggests that sweat, was the best way to excrete stored Bisphenol A.

20. Sweating Can Help Eliminate Heavy Metals – The heavy metals arsenic, cadmium, lead and mercury are confirmed or suspected carcinogens and are toxic in all sorts of ways to your body. They are known to harm the heart, brain, kidney and immunological systems. Heavy metals are present in water, food, dental amalgams, cigarettes and industrial emissions. Studies show sweat can concentrate arsenic up to 10 times more than blood, cadmium up to 25 times more than blood, lead up to 300 times more than blood and somewhat more than blood, leading to effective elimination.

21. Natural Painkiller- Exercise stimulates neurochemical pathways in the brain resulting in the production of endorphin that acts as natural painkiller. Regular exercise which keeps our sweat glands in tip top shape helps our bodies regulate its temperature more easily in these modern society environments.

Conclusion – it is old says that after character of a person next health is given preference in his life. If health is well than all things is in your hand. But being author of this paper I am not only concentrate on individual health only. It is duty of every head of every family to take care of health of his family members. My intention is that why we are dependent on medicine for our health. By doing little effort daily we become live healthy life and have more potential to do any kind of work. If head and all his family members are able to do any kind of work means our society gain more potential. In this way, our states and nation have full of potential to do any kind of hard work. If people of our country have such

potential than our country will achieve its height automatically in all fields.

References :–

1. Pt. Shri Ram Sharma (2012) Chiryouvan Avam Shashavat Soundary Akhand Jyoti Sansthan, Mathura.
2. Swami Ramdev (2005) Yoga Sadhana V Yoga Chikitasa Rahasy, Divya Prakashan, Hariduwar.
3. Swami Ramdev (2005) Pranayam Rahasy, Divya Prakashan, Hariduwar.
4. http://www.yogajournal.com/article/health/count-yoga-38-ways-yoga-keeps-fit/
5. http://bembu.com/benefits-of-yoga
6. http://dailyburn.com/life/fitness/health-benefits-yoga/
7. http://fitness.mercola.com/sites/fitness/archive/2014/01/10/sweating-benefits.aspx
8. http://www.medicaldaily.com/sweat-it-out-5-surprising-health-benefits-sweating-actually-dont-stink-309718
9. http://www.mindbodygreen.com/0-15166/why-sweating-is-the-best-way-to-get-rid-of-toxins.html

****

Impact Of Long Term Use Of Pesticides On Soil Properties

Dr. Rashmi Ahuja *

Abstract - Soil is a dynamic living system with a variety of micro and macro flora and fauna including actinomyctes, fungi, nematodes, earthworms, etc. They play a primary role in the degradation of plants and animals residue and other organic matter in the environment and the release of nutrients from soil minerals. Anything that affects their activities might affect the function of soil not only in crop production, but also in the global carbon and nitrogen cycles and in the removal of range of environmental pollutants. This requirement leads to considerable research on the impact of pesticides on soil and their fate and degradation following its long term application. The use of pesticides has proved to be the only means to protect crop on large scale. However, the effects of pesticide usage must be seen also in context of soil pollution and sustainability of the agroecosystem. Agrochemicals have very important role in agriculture production. The effect of repeated long term application of pesticides on the properties of soil as well as bound residue formation was investigated. This work evaluated some chemical parameters in soils with different pesticides as recommended for various crops. Remaining residues of applied pesticides were also determined by liquid chromatography and solvent extraction of the soil samples during the crop and between crop seasons.

Introduction - The soil is a heterogeneous environment in which the microbial population is involved in important cycles of essential elements. Pesticides reaching the soil may affect non-target organisms which are essential for soil fertility.

Some crops need heavy, repeated application of pesticides including organophosphates, carbmates, pyrethroids, organochlorines, pharmazone, arginine, deaminase, nitrophenols, monocrotophos, methomyl, craboryl and deltamethrin. To reduce damage to crops many kinds of pesticides are applied for insects, diseases and weed control. Yet most of the studies were focused on a single application for a short period and knowledge of pesticides effect on soil properties specially repeated long term application has been limited. This study tries to investigate impact of pesticide application on soil ecosystem and properties of soil.

Experimental - Soil samples were collected before and after different pesticide applications and brought to the laboratory for assessment. Some soil conditions, pH, moisture and temperature were measured in the field, other physicochemical parameters were measured in laboratory.

Table-1 (See in next page)

Result - Results for the persistence of the different applied pesticides in soil are presented in table. The amount of trifluralin varied in soil being higher some while after its application, but decreasing afterwards. Methylparathtion was only detectable in sampling near or right after its application, but endosulphane was always detected although in decreasing as time passed. Its metabolite endosuphhane sulfate was detected sometime after the application of endosulphane, indicating a time interval for its formation. As in sample 1, and its metabolite were the most detected but in higher amounts than in sample 2 indicating their higher persistence in the soil.

Conclusion - Soil is a dynamic system which is influenced by various environmental factors all of which ultimately determined the health of soil which in turn affects crop production. Repeated long term application of pesticides to the soil may cause chemical to accumulate to the point that it may have deterious effects on soil biochemical activities thereby creating unhealthy soil having a lasting impact on soil fertility. The general conclusion must be that even the heavy and frequent rates of pesticides application used in crop cultivation do not have long term effect on the soil properties majored in this program. Some pesticides inhibited while others stimulated dehydrogenase activity. The sequence of trifluralin, dimethonate, endosulphane, methylparathion, carbaryl used in crop caused substantial changes in several activities in short term.

References :-

1. Van Zwieten l, Impact of Pesticides on Soil Biota, In " Soil Biology in Agriculture" Pg. 72-79, Tamworth (2004)
2. Zaitlin B, Twikington etal, Effects of Tillage and Inorganic Fertilizers on Cultivable Soil, Applied Soil Ecology 26, Pg. 53-62 (2004)

* **Professor (Chemistry) S.V. Govt. College, Berasia (M.P.) INDIA**

3. Araujo, A.S.F., Monteria, R.T.R. "Effect of Glyphosphate on The Microabial Activity of Two Brazillian Soils, Chemosphere, 52 Pg. 799-804 (2002)
4. Bunemann, E.K. etal- Impact of Fertilizers on Soil Biota In " Soil Biology in Agriculture" Pg. 64-71 (2004)
5. Md. Wasim Aktar, "Impact of Pesticides Used in Agriculture Their Benefits and Hazards Interdisciplinary Toxicology" 2(1) Pg. 1-12 (2009)
6. Bhadebhade, B.J, S.S. Sarneik, Biomineralization of an Organophoshourous Pesticides Monocrotophos by Soil Bacteria, Journal or Applied Microbiology, 93 Pg. 224-234 (2002)

Table-1 : Pesticides residues in soil of treated pesticides(mg/kg)

Sr.	Triflualin	Formazan	Methylparathion	Dimethoate	Endosulphane	Nitrophenol	Trifluralin
1	0.059	0.193	0.008	-	1.129	0.120	1.413
2	-	0.002	-	0.173	0.039	0.04	0.984
3	0.010	-	-	0.025	0.183	-	1.169
4	-	0.014	0.392	0.384	0.495	0.276	0.834
5	-	-	0.165	0.119	-	0.043	0.621
6	0.175	-	0.042	0.038	0.253	0.684	1.045

****

Solid Waste Management The Technological Approach

Dr. Sadhna Goyal *

Introduction - Mankind has used the resources of this earth so lavishly and recklessly, that the whole life supporting system has recklessly , that the whole life supporting system has been endangered. In the process of obtaining food and energy large amount of solids, liquid and gaseous waste have been produced. These wastes accumulate as pollutant and poison out environment. Urbanization as well as industrialization have been taken place at the cost of life supporting systems and human health ignoring all ecological norms and the principles. In the process huge amounts of effluents, gases and solid wastes are discharged from the industrial units, which as not only create health hazards to men, cattle and flora of the world, but also damage the environment. Solid waste is the organic and inorganic waste material produced by household, commercial institutional and industrial activities that have no value in the eyes of the owner. Solid wastes are a nuisance in all metropolitan cities of India. More than 400 tonesof solid waste are generated daily in Delhi. Collection , transportation and final disposal of such large volume of waste require a high level of management and technical expertise. A number of diseases such as gastroen-tesities , cholera, plaque, dysentery, jaundice and uralaria are all inevitable consequences of such wastes. Analysis of more than 500 samples of wastes collected from different parts in India gave the following composition of the waste.Paper/cardboard = 5.25 percentagePlastic items= 07 percentage, glass, ceramics stones 0.7 percent, sand 40 percent, metals 1.0 percentage, vegetable matter= 65 percentage. The waste management technologies available today seem to be in their infancy. Much more attention and funding is needed to develop technologies which are cost effective and sustainable in the rapidly developing scenario.The disposal of solid wastes can be carries out by several methods such as sanitary land filling, incineration and composting.Recycling is an integral part of waste management . it also makes economic sense, municipal solid waste can be converted into fine grade methane gas and manure biotechnologically. Recycling industries can keep us save the low energy reserves. Recycling is an eco friendly technology. Use of biotechnology is another important method of reclamation of wastelands. The blue green algae, which have the ability to fix nitrogen and enduring heat and desiccation can be spread over the waste lands. In due course of time, the soil gates enriched with nitrogen. To increase the nitrogen content of the soil the bio technologies are highly preferred in comparison to the chemical technologies because they do not cause any long term harm to the soil. In addition the plantation so grown provide food, fodder, paper, medicine and several other useful products.Composting – is a technology. It involves a process of biologicaldegradation where the presence of oxygen leads to organic wastes oxygen converted into CO_2 and compost. Incineration – another processing technique in cities is that of incineration. Undoubtedly burning garbage seems to be best way of getting rid of solid waste but studies have shown that incineration do not actually reduce waste to nothing. The incinerator reduces the waste to ash in the process changing the composition and toxicity of the substances burnt. As a result, unseen but potentially hazardous gaseous emission are released into the air , posing a public health risk. A dangerous by product is the toxic chlorinated compounds called dioxious and furans which are carcino-genic & known to suppress the immune system and cause fetal and reproductive damage. Aspects of biomedical waste disposal such as autoclaves, steam sterilization and chemical disinfection are much more suitable for medical waste disposal.Earthworms farming known as vermiculture is another bio technique for converting the solid waste such as sewage sludge, domestic waste or agriculture waste into compost. Reclamation of waste lads traditionally is done through sanitary land fills and composting. The domestic and industrial wastes are embedded within the subsoil surface layers of wastelands. After few months, the compost is formed which increases the fertility of the soil and soil become prone to erosion.

Suggestions :

1. We must learn what materials are recyclable
2. We should buy goods made from recyclable materials.
3. We should reject unnecessary packaging.
4. We must reuse things instead of throwing them away and constantly replacing them.
5. Increasing greater use of renewable resources

* **Professor (Chemistry) Govt. M.V.M., Bhopal (M.P.) INDIA**

6. The use of bio-manures, biological control .
7. Use of bio-manures, biological control pests, techniques of aquaculture and pisciculture should be encouraged because they do not damage the environment.
8. Scientifically sound and environmentally clean technologies should be developed and adopted for resources regeneration from agriculture, household and other sources.
9. Reclamation of waste lands using bio-techniques should be undertaken

References :-

1. Sharma B.K. environmental chemistry 2001
2. Kaur H. Environmental chemistry 2009
3. Tyagi O.P., Mehra Environmental chemistry 2000
4. Dey A.K. Environmental chemistry 2010
5. Current science 25 april 2015

****

Particle Physics

Dr. Neeraj Dubey *

Introduction - Particle physics is a branch of physics that studies the elementary constituents of matter and radiation, and the interactions between them.

It is also called "high energy physics", because many elementary particles do not occur under normal circumstances in nature, but can be created and detected during energetic collisions of other particles, as is done in particle accelerators.

Modern particle physics research is focused on subatomic particles, which have less structure than atoms. These include atomic constituents such as electrons, protons, and neutrons (protons and neutrons are actually composite particles, made up of quarks), particles produced by radiative and scattering processes, such as photons, neutrinos, and muons, as well as a wide range of exotic particles.

Strictly speaking, the term particle is a misnomer because the dynamics of particle physics are governed by quantum mechanics.

All the particles and their interactions observed to date can be described by a quantum field theory called the Standard Model.

The Standard Model has 40 species of elementary particles (24 fermions, 12 vector bosons, and 4 scalars), which can combine to form composite particles, accounting for the hundreds of other species of particles discovered since the 1960s.

Particle physics is the branch of physics that studies the nature of the particles that constitute matter and *radiation*. Although the word "particle" can refer to various types of very small objects,"particle physics" usually investigates the irreducibly smallest detectable particles and the irreducibly fundamental force fields necessary to explain them. By our current understanding, these elementary particles are excitations of the quantum fields that also govern their interactions. The currently dominant theory explaining these fundamental particles and fields, along with their dynamics, is called the Standard Model. Thus, modern particle physics generally investigates the Standard Model and its various possible extensions, e.g. to the newest "known" particle, the Higgs boson, or even to the oldest known force field, gravity.

Modern particle physics research is focused on subatomic particles, including atomic constituents such as electrons, protons, and neutrons ,produced by radioactive and scattering processes, such as photons, neutrinos, and muons, as well as a wide range of exotic particles. Dynamics of particles is also governed by quantum mechanics; they exhibit wave–particle duality, displaying particle-like behaviour under certain experimental conditions and wave-like behaviour in others. In more technical terms, they are described by quantum state vectors in a Hilbert space, which is also treated in quantum field theory. Following the convention of particle physicists, the term elementary particles is applied to those particles that are, according to current understanding, presumed to be indivisible and not composed of other particles.

All particles and their interactions observed to date can be described almost entirely by a quantum field theory called the Standard Model. The Standard Model, as currently formulated, has 61 elementary particles. Those elementary particles can combine to form composite particles, accounting for the hundreds of other species of particles that have been discovered since the 1960s. The Standard Model has been found to agree with almost all the experimental tests conducted to date. However, most particle physicists believe that it is an incomplete description of nature and that a more fundamental theory awaits discovery. In recent years, measurements of neutrino mass have provided the first experimental deviations from the Standard Model.
The current state of the classification of all elementary particles is explained by the Standard Model. It describes the strong, weak, and electromagnetic fundamental interactions, using mediating gauge bosons. The species of gauge bosons are the gluons, W", W+ and Z bosons, and the photons. The Standard Model also contains 24 fundamental particles, (12 particles and their associated anti-particles), which are the constituents of all matter. Finally, the Standard Model also predicted the existence of a type of boson known as the Higgs boson.

Theoretical particle physics attempts to develop the models, theoretical framework, and mathematical tools to understand current experiments and make predictions for future experiments. There are several major interrelated efforts being made in theoretical particle physics today. One important branch attempts to better understand the Standard Model and its tests. By extracting the parameters of the

* Prof. & Head (Physics) Govt. Arts & Commerce P.G. College, Sagar (M.P.) INDIA

Standard Model, from experiments with less uncertainty, this work probes the limits of the Standard Model and therefore expands our understanding of nature's building blocks. Those efforts are made challenging by the difficulty of calculating quantities in quantum chromo dynamics. Some theorists working in this area refer to themselves as **phenomenologists** and they may use the tools of quantum field theory and effective field theory. Others make use of lattice field theory and call themselves *lattice theorists*.

Another major effort is in model building where model builders develop ideas for what physics may lie beyond the Standard Model .This work is often motivated by the hierarchy problem and is constrained by existing experimental data. It may involve work on supersymmetry, alternatives to the Higgs mechanism, extra spatial dimensions, Preon theory, combinations of these, or other ideas.

A third major effort in theoretical particle physics is string theory. *String theorists* attempt to construct a unified description of quantum mechanics and general relativity by building a theory based on small strings, and branes rather than particles. If the theory is successful, it may be considered a "Theory of Everything", or "TOE".

There are also other areas of work in theoretical particle physics ranging from particle cosmology to loop quantum gravity.This division of efforts in particle physics is reflected in the names of categories on the arXiv, a preprint archive: hep-th (theory), hep-ph (phenomenology), hep-ex (experiments), hep-lat (lattice gauge theory).

The primary goal, which is pursued in several distinct ways, is to find and understand what physics may lie beyond the standard model. There are several powerful experimental reasons to expect new physics, including dark matter and neutrino mass. There are also theoretical hints that this new physics should be found at accessible energy scales.Much of the efforts to find this new physics are focused on new collider experiments. The Large Hadron Collider (LHC) was completed in 2008 to help continue the search for the Higgs boson, supersymmetric particles, and other new physics. An intermediate goal is the construction of the International Linear Collider (ILC), which will complement the LHC by allowing more precise measurements of the properties of newly found particles. In August 2004, a decision for the technology of the ILC was taken but the site has still to be agreed upon.

In addition, there are important non-collider experiments that also attempt to find and understand physics beyond the Standard Model. One important non-collider effort is the determination of the neutrino masses, since these masses may arise from neutrinos mixing with very heavy particles. In addition, cosmological observations provide many useful constraints on the dark matter, although it may be impossible to determine the exact nature of the dark matter without the colliders. Finally, lower bounds on the very long lifetime of the proton put constraints on Grand Unified Theories at energy scales much higher than collider experiments will be able to probe any time soon.

The accelerator is the basic tool of particle physics. It allows us to create the particle collisions that we want to study in our own laboratories. The high-energy collisions between particles that physicists are interested in do occur naturally but the events are unpredictable and the number that can be observed (in cosmic rays) is low.

Accelerators work by accelerating charged particles using electric fields. A linear accelerator accelerates particles in a straight line: the biggest linear machine, in Stanford, California, is two miles long. Circular machines are more common. As well as accelerating the particles using an electric field, circular accelerators bend their paths using a magnetic field. In a machine like LEP at CERN, where they have opposite charges, the particles being accelerated travel in opposite directions until they are forced to collide. The drawback is that the faster a particle travels, the harder it is to keep it moving in a circle but, in the largest circles less energy is wasted when accelerating particles to high speeds. Detectors are used to examine tracks made by the new particles that are produced when accelerated particles collide. In the early days photographic film, spark chambers and bubble chambers were used. Since the late 1960s electronic detectors have taken over. There are two basic kinds - tracking detectors which reveal the trajectories of individual charged particles, and calorimeters which measure energies. A modern electronic detector is built like an onion, with layers of trackers and calorimeters to give as much information as possible about the particles produced in each collision.

Antimatter is very much like ordinary matter, but it carries the opposite charge. An anti-electron is just another way of describing a positron. Crashing matter and antimatter together is now a daily occurrence in machines like LEP. The fact that the universe seems to be full of matter and not antimatter is one of the most baffling problems in modern physics. At the time of the Big Bang, matter and antimatter are believed to have been produced in equal quantities. What seems to have happened is that, ate somewhat later time, collisions between the two types have destroyed all the antimatter but left a little of the matter behind, from which our universe is made. The reason may be due to a tiny asymmetry in the way particles of matter and antimatter decay, thereby creating an excess of matter.

References:-

1. Braibant, S.; Giacomelli, G.; Spurio, M. (2009). Particles and Fundamental Interactions: An Introduction to Particle Physics.pp. 313–314. ISBN 978-94-007-2463-1.
2. "Particle Physics and Astrophysics Research". The Henryk Niewodniczanski Institute of Nuclear Physics. Retrieved 31 May 2012.
3. Nakamura, K (1 July 2010). "Review of Particle Physics". Journal of Physics G: Nuclear and Particle Physics **37** (7A): 075021. Bibcode:2010JPhG...37g5021N. doi:10.1088/0954-3899/37/7A/075021.
4. Mann, Adam (28 March 2013). "Newly Discovered Particle Appears to Be Long-Awaited Higgs Boson - Wired Science". Wired.com. Retrieved 6 February 2014.
5. Boyarkin, Oleg (2011). Advanced Particle Physics Two-Volume Set. CRC Press. ISBN 978-1-4398-0412-4.

WLB Policies and Morale and Motivation of employees of call centers

Dr. N. S. Rao * Pawan Pant **

Abstract - In today's life the concept of Work Life Balance is crucial for both employees and for employers. The Work Life Balance Policies (WLBP) such as flexi-time, leaves, work from home, child care facilities etc. which could be mandatory or by the employer. By the help of these policies the employees can able to balance their life better and can achieve better morale where employer can motivate their employees through these policies and can get better performance and output from their employees. The employees with better Morale and Motivation can work more effectively and efficiently for the organization.

Introduction - As the BPO companies work 24*7 and having the higher turnover compared to other most industries. According to Hechanova (2008) the call centers employees has turnover intent (1 out of 2), this turnover intent is associated with the career commitment, age, burnout, job responsibilities, satisfaction with pay or boss, promotion and management of the firm. She recommended to the call centers firms and BPO industry that they should about the effective reward system by the management and help employees to find the right fit and re-thinking job design, also provide the friendly environment to employees for their well-being and this would have positive impact on the employees morale and motivation that will result in the higher performance of the employees.

Morale v/s Motivation - Morale is directly related to the feeling of the human being. In any workplace if the morale of the employee is high then it will result in the high energy, willingness and enthusiasm in the employees which will increase the performance of the employee.

According to the study of Keller and Edelstein's (1993) moral responsibility addressed the association of moral integrity to psychological well-being. Keller and Edelstein, defines the aspect of moral integrity that include issues of moral reliability, dependability, and trustworthiness. According to this, a person with moral integrity gathers moral motivation to act morally through moral emotions that will result from the cognitive component of believing in moral rules. The knowledge of moral rules through the moral self, the moral responsibility represents the bridge between them, which identifies these rules as important to whom the self is as a moral person, to moral action. Psychological well-being (particularly purpose of life) is related to the consistency one experiences with moral responsibility.

The ability to decide what is morally right from morally wrong. This requires moral reflectiveness on the meaning of good and bad as well as how that meaning applies to self and others. It also includes the ability to draw conclusions from the discernment to develop convictions.

On the other hand Motivation is the driver of getting job to be done. High motivation of an employee will result in the high production, but it is not necessary that an employee with the high Motivation also have high Morale as the employee can be motivated by the negative incentives such as fear of losing job, excess desire for rewards etc. All these tendencies may result in the high creativity or innovative output by the employees and also effect negatively on the health and morale of the employees

Morale and Motivation may work together in a cycle, it has been seen that the employees with high morale seems naturally motivated and comes with positive results. On the other hand employees with the low morale become less motivated some well inten-tioned man-agers mis-tak-enly resort to unpleas-ant, heavy-handed tac-tics (such as threatening unpleas-ant con-se-quences, nag-ging, micro-manag-ing, mak-ing more rules, etc.), which in turn lower morale even further.

Indicators of organizational effectiveness - Quinn (1988) has given a model of organizational effectiveness in which there were two quadrants vertical and horizontal. Flexibility, autonomy and Stability, Control comes in vertical quadrant where as the individualism and external forces in the horizontal quadrant. In these quadrants the indicators of the organizational effectiveness come such as satisfaction, retention, productivity morale attitude etc.

* Retired Professor, Mohan Lal Sukhadiya University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar (Commerce) Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA

Figure 1: Indicators of the organizational effectiveness

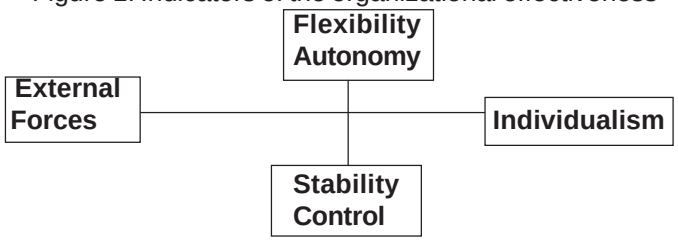

The role of the psychological factors of the employees play crucial role in organizational effectiveness. It has been seen that the factors affecting an employee also have significant direct and indirect impact on the operational effectiveness of the organization such as organizational commitment, performance, turnover intention, morale rediness (Dusand, Burrell, Stetz, Castro, 2003; Wass& McDermid, 2003).

As the higher level of the dual domain stress of the employees would be related to the lower level of morale as well as the higher level of conflict between domains i.e. work and life domain (Popoff et. al., 1986). The higher levels of work life conflict, such as role conflict, time conflict (Greenhaus & Beutell, 1985) are associated with greater amount of physical (eg. colds, backaches, headaches, nausea) and psychological symptoms (eg. Depression anxiety) and organizational outcomes (eg. Poor job satisfaction and morale, sick days due to illness).

Impact of WLB Policies on Morale and Motivation - According to Dailey (1980), the employees and the team leaders with greater internal orientation perceived greater job satisfaction, motivation, Job involvement, psychological growth satisfaction, task difficulty, and task variability compared to the employees with greater external orientation.

The work life balance policies offered by the employer to their employees, its significant impact seen on positive working environment which reduce absenteeism, turnover and increased employee morale, productivity, positive attitude and loyalty (Pitt-Catsoouphes et. al., 1995). According to Quinn (1988), there is strong relation between the human relations and the emphasized morale, positive attitude and productivity.

Figure 2 (See in last page)

Many call centers facing the problem of recruitment of suitable staff. There is a negative and damaging impact of staffing problem on customers. The employees who are not motivated or poorly motivated can't able to give to high level of customer satisfaction on which the commercial success of the organization depends.

Some of the call centers are addressing about the recruitment, to help in ensuring the right fit as well as ensuring the well being of existing staff. In other words, it should be ensure that the newly recruit staff have the right motivation and suited for the job.

These recruitment strategies are not only focusing on development of technical ability but also the development of personal characteristics of potential employees.

Adopting the flexible and appropriate Work Life Balance policies builds a positive perception for employee and employer. This leads to better relations with the employees, motivation and commitment and continued staff loyalty**.**
In addition WLC has been shown negative impact on the health. WLC has been shown to contribute to higher attrition rates and /or absenteeism, a great number of work-related compensation claims, low morale and productivity losses.

WLB Policies have significantly positive impact on the employee's morale, retain organizational knowledge and reduce absenteeism especially in the difficult economic times. In today's cut-throat global competitive market place as ITeS firms have aim to reduce the cost, it is very necessary to understand the necessary issue of WLB and to champion WLB Policies. This would result in the win-win situation for both employees and employers (Parul Agarwal, 2014). A study has been done on the employees of call centers of Rajasthan (n = 155) and it has been found that there is positive correlation between WLB Policies and Morale and Motivation.

Table 1: Correlation between WLB Policies, Morale and Motivation

		WLB Policies
WLB Policies	Pearson Correlation	1
	Sig. (2-tailed)	
	N	155
Morale	Pearson Correlation	0.189
	Sig. (2-tailed)	0
	N	155
Motivation	Pearson Correlation	0.102
	Sig. (2-tailed)	0
	N	155

The research has shown that the WLB Policies will increase the morale and motivation of the employees. According to our study the 67.8% are agree that the WLB Policies has increase their morale and 66.5% agree that the policies adopted by their organization have somehow motivated them. Findings showed that ratings of interpersonal aspects of morale and motivational aspects correlated significantly with work life balance policies.

Some of the scholars have suggested that the WLB Policies such as flexi-time, child care opportunity to study, time to elder care, telecommuting all these reduces the intensity of stress of the employees which will result in the high morale, motivation, high performance and satisfaction of the employees (Bruck, et al., 2002; Harmon, 2001; Garvey, 2001; Gibson et al., 2006).

Consequently, the organizations are paying more attention on WLB Policies and developing other benefits and activities which may reduce the workplace stress and work family conflict. Thompson (2002), has classified these work life into five categories

1. Time-based strategies - flexi-time, telecommuting and job sharing;

2. Information-based strategies - relocation assistance, elder care resources, company work/life balance intranet;
3. Money-based strategies like leave with pay, scholarships for dependents;
4. Direct services like onsite childcare, concierge services and takeout dinners.
5. Culture-change strategies like training or focus on employees' performance not office face time.

The work life balance policies offered by the employer to their employees, its significant impact seen on positive working environment which reduce absenteeism, turnover and increased employee morale, productivity, positive attitude and loyalty (Pitt-Catsoouphes et. al., 1995). According to Quinn (1988), there is strong relation between the human relations and the emphasized morale, positive attitude and productivity.

Many extant theories such as social exchange theory (Adams, 1965), and motivational theory of charismatic leadership (Shamir, Zakay, Breinin & Popper, 1998) strongly believed that organizations that engages customer oriented style of management (i.e., exhibiting customer satisfying behaviors, attitudes and beliefs) would have their employees emulating those attitudes, behaviors and beliefs and therefore adapting to the organizational goals of achieving competitive advantage.

Benefits of better work life balance of the employees for organization

1. Employees are more productive
2. Decreases the rates of absenteeism
3. Employees are more likely to stay
4. Employees are more likely to live longer
5. Camaraderie is better
6. Higher morale and motivation among employees
7. Great returns on training and development costs
8. Employees will contribute to the corporate image by becoming its promoters
9. Employees have better sense of well-being

It is vital to understand for any organization to create morale and motivation to get the high performance results. Not sur-pris-ingly, the best results come when both high morale and high moti-va-tion are present.

References :-

1. Blasi, A. (1984). Moral identity and its role in moral functioning. In J. L. Gewertz & W. M. Kurtines (Eds.), Morality, moral development, and moral behavior. (pp. 128-139). New York: Wiley.
2. Blasi, A. (1985). The moral personality: Reflections for social science and education. In M. W. Berkowitz & F. Oser (Eds.), Moral education: Theory and application. (pp. 433-444). Hillsdale, NJ: Lawrence Erlbaum Associates.
3. Colby, A., & Damon, W. (1992). Some do care: Contemporary lives of moral commitment. New York: The Free Press.
4. Colby, A., & Damon, W. (1993). The uniting of self and morality in the development of extraordinary moral commitment. In G. G. Noam & T. G. Wren (Eds.), The moral self (pp. 149-174). Cambridge, MA: MIT Press.
5. Friedman, S. D., & Greenhaus, J. H. (2000). Work and family—Allies or enemies? What happens when business professionals confront life choices. New York: Oxford University Press.
6. Greenhaus JH, Beutell NJ (1985) Sources and conflict between work and family roles. Acad Manage Rev 10:76–88 Journal of Vocational Behavior, 54, 392-415.
7. Kanter, R. M. (1977). Work and family in the United States: A critical review and agenda for research and policy. New York: Russell Sage Foundation.
8. Landauer, J. (1997, July). Bottom-line benefits of work/life programs. HR FOCUS, 74, 7, 3-4.
9. Nunner-Winkler, G. (1993). The growth of moral motivation. In G. G. Noam & T. G. Wren (Eds.), The moral self (pp. 269-291). Cambridge, MA: MIT Press.
10. Otis, N., & Pelletier, L.G. (2005). A Motivational Model of Daily Hassles, Physical Symptoms, and Future Work Intentions among Police Officers. Journal of Applied Social Psychology, 35, 10, pp. 2193-2214.
11. Pitt L F, Watson R T, & Kavan C B, (1995) "Service Quality: A Measure of Information Systems Effectiveness", MIS Quarterly, Jun Edition.
12. Popoff, T., Truscott, S., & Hysert, R. (1986). Military family study: An overview life/work stress and its relationship to health and organizational morale. ORAE Project Report No.96730. Ottawa: Operational Research and Analysis Establishment Directorate of Social andEconomic Analysis.
13. Richer, S.F., Blanchard, C., & Vallerandi, R.J. (2002). A Motivational Model of Work Turnover. Journal of Applied Social Psychology, 32, 10, pp. 2089-2113.
14. The heavy cost of chronic stress. (2002). New York Times. Retrieved December 17, 2002, from http://www.nytimes.com/2002/12/17 /health/psychology/17STRE.html
15. Thompson, C. A., Beauvais, L. L., & Lyness, K. S. (1999). When work-family benefits are not enough: The influence of work-family culture on benefit utilization, organizational attachment, and work-family conflict.
16. Thomas, Jennifer L. (2000). Examination of Current Research: Locus of Control, Self Monitoring, Student Responsibility and Academic Motivation. Research paper.

Figure 2: Well-being of the employees.

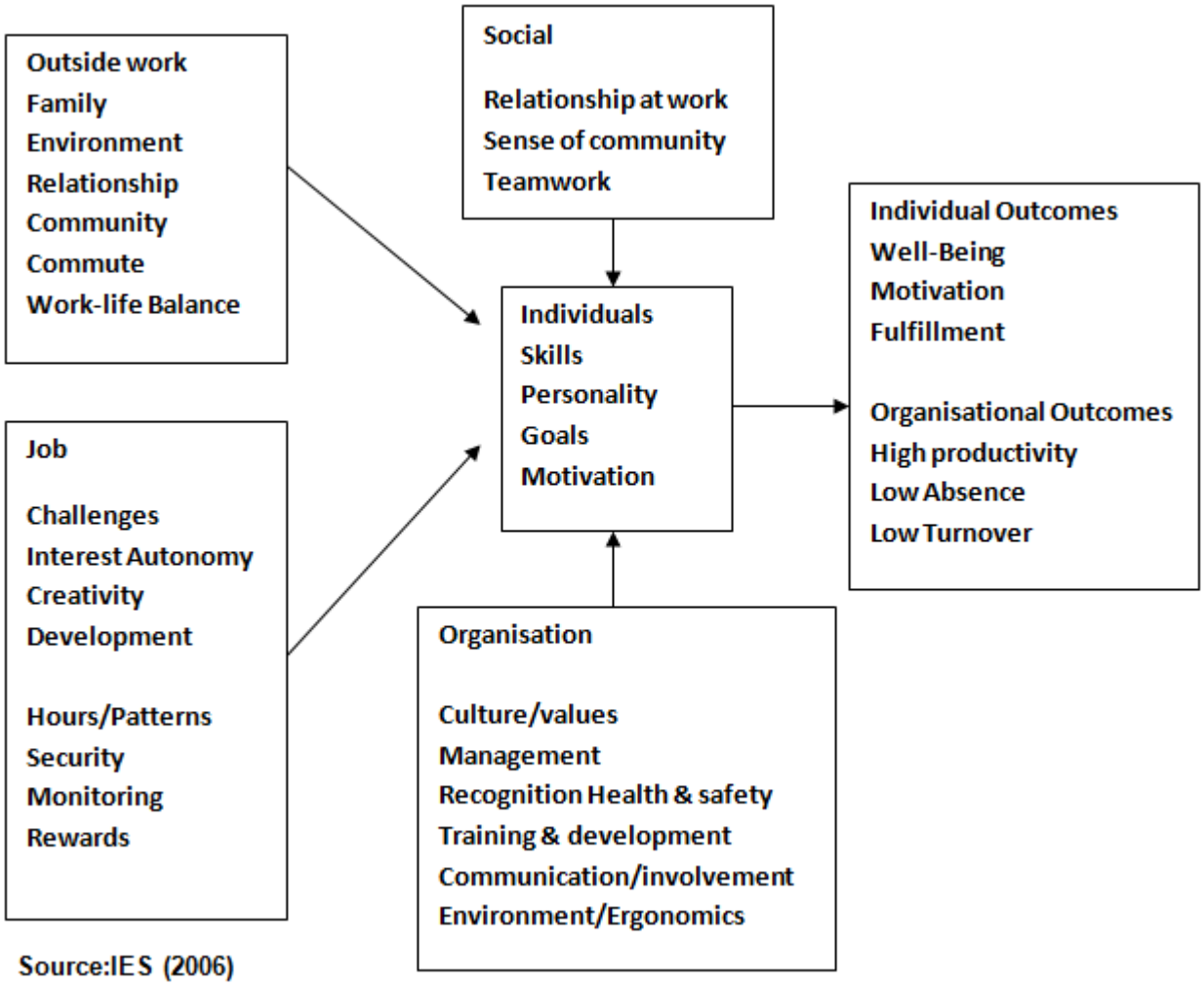

Source:IES (2006)

****

Profitability Analysis of Public Sector Banks of Ratlam district Special Reference to SBI, BOI and CBI

Dr. Suresh Katariya * Vivek Sharma **

Introduction - Financial analysis is the examination of a business from a variety of perspectives in order to fully understand the greater financial situation and determine how best to strengthen the business. A financial analysis looks at many aspects of a business from its profitability and stability to its solvency and liquidity.

Ratio Analysis was undertaken with a view to studying financial performance related to the bank. The financial ratio analysis was considered to be an effective tool in providing bird's eye view of the performance of a business organization. The financial ratio represents the relationship between two accounting figures expressed mathematically.

Profitability ratios reveal a firm's success at generating profits. "The profit margin of a company determines its ability to withstand competition and adverse conditions," reports Credit Guru. Return on assets, reveals the profits earned for each dollar of assets and measures the company's efficiency at creating profit returns on assets. Net worth focuses on financial returns generated by the owner's invested capital.

Review Of Litrature - Rajendran in his comparative study of the public sector and private sector banks during the year 1990-91 has chosen three profitability ratios and six balance sheet ratios. He has brought eight scheduled private sector banks, three nationalized banks and the State Bank of India within the purview of his study.

Seshadri in her book 'Banks since Nationalization' has analyzed the achievements of the nationalized banks with those that were left in the private sector. The progress achieved by these banks in the sphere of branches, deposits, advances etc. were analyzed with secondary data available from various banks, the Reserve Bank of India and so on. The efficiency and profitability of the nationalized banks too were analyzed.

Objective Of The Study :

1. To analyze the Profitability Ratio of public sector commercial banks of the Ratlam district.
2. To study the financial position of selected public sector commercial banks of the Ratlam district.
3. To examine the growth and development of public sector commercial banks.

Data Collection - This study is based on secondary data of commercial banks (public sector) of Ratlam district. The financial analysis for this study was based on Public sector banks (State Bank of India, Bank of India, and Central Bank of India. The data are collected from 2007-2008 to 2011-2012.

The required data for this study are collected from the various sources like State Level Banking Committee (MP), Banks Branches, Annual Reports of District Lead Banks, Reports published by National Institute of Bank Management, Annual Reports of various banks, publications and notifications of RBI, Reports published by Indian Bank Association 25 (IBA), Reports of Credit Rating Agencies like S&P, CRISIL, ICRA, etc.

Sample Design - Our study is based on selected public sector banks(State Bank of India, Bank of India, Central bank of India) in Ratlam district located at three different locations i.e. Urban, Semi-Urban and Rural.

Table - 1

No. Of Branches Of Selected Banks In Ratlam District (AS ON 31.03.2012)

Public Sector Banks	No. OfBranches
SBI	26
BOI	06
CBI	15

Source: Annual Credit Plan, Ratlam district – 2007-2012

Limitations Of The Study - Due to constraints of time and resources, the study is likely to suffer from certain limitations. Some of these are mentioned here under so that the findings of the study may be understood in a proper perspective. The limitations of the study are:

Area Of Study - The study is based on the Financial Analysis in Profitability ratios with special reference to Public Sector Commercial Banks (STATE BANK OF INDIA, BANK OF INDIA and CENTRAL BANK OF INDIA). Therefore, study covers Ratlam District to the fulfillment of objectives of the study.

* Professor (Commerce) Govt. Girls College, Ratlam (M.P.) INDIA
** Asst. Professor, Shri Arihant College of Professional Education, Ratlam (M.P.) INDIA

Period of Study - For collection of the secondary data on financial Analysis of the public sector commercial banks five years i.e. from 2007-2008 to 2011-2012 were taken as the reference period.

Profitability Analysis - Profitability ratio denotes the difference between the interest spread and burden. By deducting provision and contingencies from operating Profit, net profit is derived. This ratio indicates the operating profit per unit of working funds. Higher value of this ratio indicates better profitability and lower value of this ratio indicates lower profitability of the bank. The profitability performance of the banks can be assessed by examining its performance in income and expenditure portfolio. The ratio of the profitability can be arrived at as the excess of spread over the burden for the bank.

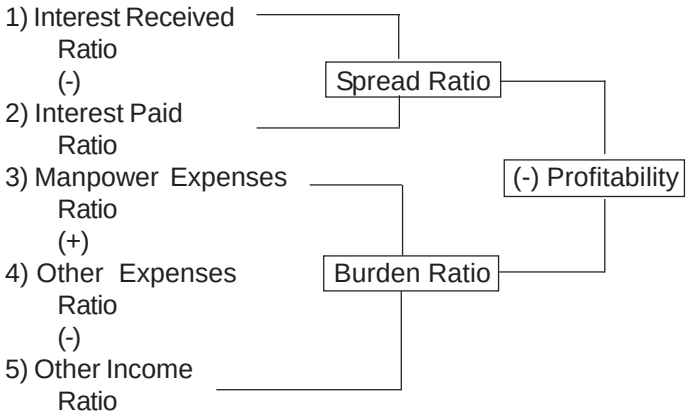

Figure 1 : Variables Of Profitability

From the equations, it can be inferred that profitability of the bank can be improved by strengthening the magnitude of the spread ratio and lowering the magnitude of the burden ratio. The spread ratio can be increased by increasing the interest received ratio 'r' faster than interest paid ratio 'k'. The burden ratio can be lowered by decreasing manpower expenses ratio 'm', other expenses ratio 'o' and increasing other income ratio 'c'.

Table 2 (See in Next Page)

Interpretation - Table 2 represents the profitability performance of the State Bank of India can be assessed by examining its performance in income and expenditure portfolio. The ratio of the profitability can be arrived at as the excess of spread over the burden of the bank. The profitability ratio from year (2007-12)0.07 to 0.04 percent and average ratio of profitability is 0.05 percent Table shows the profitability ratio of the State Bank India during the study period, the State Bank India profit is very low in year 2007-2012. But it is not shows negative value. It means State Bank India slightly good position of Ratlam district.

Table 2 represents the profitability ratio from year (2007-12)-0.39 to -0.24 percent. Its show 2007-2008, 2009-10 and 2011-12 in negative profit ratio in 2008-09 and 2010-11 ratios is positive and the average ratio of profitability is -0.15 for BOI. Bank shows negative value, it means BOI is not better position of Ratlam district.

Table 2 represents the profitability ratio from year 2007-12 0.23 to -0.07 percent. Its show 2009-10 and 2011-12 in negative profit ratio and 2007-08, 2008-09 and 2010-11 ratios is positive and the average ratio of profitability is -0.15for CBI. CBI shows negative value, it means CBI is not better position of Ratlam district.

Findings - The ratio of spread (interest received ratio - interest paid ratio) registered SBI in increasing on trend in a five year period and BOI ratio was increasing trend in year 2007-11 but in year 2011-12 was decreasing in the study period. CBI ratio was in an up and down trend in the study period.

1. The ratio of burden (manpower expenses + other expenses – other income) registered SBI was in a better position because year in the 2009-2012 showed less manpower and other expenses. BOI burden ratio was in a higher trend of the study period except in the year 2011-12. CBI burden ratio is very high in study periods compared to the other public sector banks.
2. The ratio of Profitability (spread ratio-Burden ratio) registered SBI in decreasing pace in five year it means net profit decreased in every year. BOI ratio is negative burden ratio is higher then spread ratio in year 2007-08,2009-10 and 2011-12 and 2008-09 and 2010-2011 is positive (spread ratio is higher than burden ratio). CBI ratio in year 2009-10 and 2011-12 was negative meaning the loss and other year ratio is positive in profit.

Suggestions :

1. Public sector bank SBI, BOI and CBI open many branches in rural and urban area but do not increase business and more expenses in these branches. Public sector bank should improve total business and other income for increase profitability in Ratlam District.
2. Public sector banks of Ratlam district have failed to provide the basic amenities e.g. proper sitting arrangement, cleanliness, drinking water and uninterrupted power supply and Internet connectivity inside the premises of banks.
3. Bank Products (Deposit schemes, loan types) of district level banks should be according to the need and demography of the place where the bank is situated.
4. All the banks should encourage and educate their customers by organising workshops and seminars on Net Banking for quick, safe and up to date services especially in rural and semi-urban areas like Sailana, Alote, Tal, Raoti, Bajana, Shivgarh, Piploda tehsil etc.
5. Banks provide loans for Small scale units, Agriculture Industries (Grapes, Strawberry, Wine industry), Gold Business, Namkin Cluster, Food parks Saree Business in the Ratlam District.
6. Public sector banks should advertise more of the banking services in local newspaper, and local TV channel and other electronic media etc.

Conclusions - On the basis of the above study or analysis banking customer has more trust on the public sector banks.

Profitability ratio concluded that SBI is better than BOI and CBI in public Sector Banks.

References :-

1. Mohan,S.(1997), Financial Management of cooperative spinning
2. Mills, Chaitanya Publishing House, Allahabad, P.1.
3. Ibid
4. Ibid, P.113.
5. Gupta, R.K. (1989), Profitability, Financial Structure and Liquidity, rintwell Publishers, Jaipur, P.28.
6. SamwelKakukoLooyetum (2003), A Study of Business
7. Aparna T, "State Bank of India: Flying High", Chartered Financial Analyst, Vol. 8, Issue. 9, September 2002, pages. 60-61.
8. Luther, J.C.1976. Report of JC Luther, Committee on Productivity, Efficiency & Profitability in Commercial banks, Bombay 1976
9. Shah, S.G.1978, Bank Profitability a Real Issue. The Journal of the Indian Instituteof Banker, July-Sept 1978, pp. 130-144
10. Amandeep. 1991, Profit and Profitability of Indian Nationalized Banks, Ph.D. Thesis, Punjab University, Chandigarh.
11. Swamy, B.N.A.2001, New Competition, Deregulation and Emerging Changes inIndian Banking. Bank Quest The Journal of Indian Institute of Bankers, 729(3): 3-22.
12. MilindSathya .2005. Privatization, Performance, and Efficiency: A study of IndianBanks. Vikalpa,(1):23-28.
13. Pal Ved& Malik N.S .2007.A Multivariate Analysis of the financial characteristics of Commercial Banks in India. The Icfai Journal of Bank Management .VI (3).
14. Mukherjee, A, Nath, P & Pal, MN .2002. Performance Benchmarking and Strategic Homogeneity of Indian Banks. International Journal of Bank Marketing, 20(3) :122-139.

Profitability Analysis Of Public Sector Bank

Table 2 : Profitability Ratio (Spread Ratio-Burden Ratio)

(Figure in percentage)

Year	SBI			BOI			CBI		
	Spread Ratio	Burden Ratio	Profit Ratio	Spread Ratio	Burden Ratio	Profit Ratio	Spread Ratio	Burden Ratio	Profit Ratio
2007-08	1.05	0.98	0.07	-0.10	0.30	-0.40	1.13	0.90	0.23
2008-09	1.04	0.99	0.04	0.42	0.32	0.10	0.83	0.69	0.14
2009-10	0.26	0.22	0.04	-0.27	0.38	-0.65	0.87	0.93	-0.06
2010-11	0.95	0.91	0.04	1.04	0.64	0.40	1.17	1.14	0.04
2011-12	0.71	0.67	0.04	0.13	0.37	-0.24	1.10	1.17	-0.07
MEAN	0.80	0.75	0.05	0.24	0.40	-0.16	1.02	0.97	0.06

Source: Computed

****

Silicosis at a glance: prevalence of disease in Mandsaur district and abatement provisions

Dr. Antimbala Jain *

Abstract - Mandsaur is the only District in Madhya Pradesh which has slate pencil manufacturing industries, responsible for silicosis Disease. At present there are90 working Slate Pencil Industries in which 935 workers are being employed.Workers work all day in Mandsaur, the sole producer in India of white and red slate, to make those rectangular, chalk-like 'pencils' used by primary student in rural government schools and are prone to Silicosis ,an occupational hazard .The study focuses to find out the prevalence of silicosis in Mandsaur district and the latest provisions for mitigating silicosis.

Introduction - The statistics for the overall incidence/ prevalence of occupational disease and injuries for the country is not adequately compiled in an easily accessible format. Leigh et al. have estimated an annual incidence of occupational disease between 924700 and 1902300 and 121000 occupational disease caused deaths in India.A report by National Institute of Occupational Health[1999], records more than 3 million people working in various type of mines, ceramics, potteries, foundries, metal grinding, stone crushing ,agate grinding, slate pencil industry etc. These workers are occupationally exposed to free silica dust and are at potential risk of developing silicosis.Silica (SiO_2, CAS No. 7631-86-9) is found in abundance in nature. The exposure to silica dust produces lung diseases like silicosis and silico-tuberculosis. It also increases the risk of tuberculosis, nonmalignant renal disease, and autoimmune diseases. Silica has also been classified as a carcinogen by International Agency for Research on Cancer (IARC). The exposure to crystalline silica can be occupational or non-occupational.

Workers are exposed to dust containing crystalline silica for about 8 h per day and are at the risk of developing silicosis and silico-tuberculosis.

Prevalenceof Silicosis: an overview - In China, 500,000 cases of silicosis were reported between 1991 and 1995. In Korea and China, tatami (a carpet woven from tatami grass) workers are reported to have contracted silicosis. In Brazil, workers engaged in digging wells have reported a 26% prevalence of silicosis. It is estimated that in India 10 million workers are at risk of the disease .In India, silicosis was first diagnosed among Kolar gold mine workers in Karnataka in 1948. Later it was reported in mica miners in Bihar.

Every state in India has reported cases of silicosis. Guntur, in Andhra Pradesh supports thousands of stone crushing units spread across the city. Workers from these units are frequently seen in the pulmonary section of hospitals; they reportedly occupy around 60% of beds here.In Bahargaon village in Pakur district, West Bengal (the country's single largest producer and supplier of granite ballast to Bangladesh), every second laborer working in the stone crushing factories suffers from silicosis or tuberculosis. Bahargaon and adjoining areas host 500 such units that employ nearly 37,500 people.One village in Andhra Pradesh is even known as "MundarallaThanda (Widows' Village)" because most of the men in the village have died of silicosis contracted whilst working in stone crushing units.The slate pencil industry in Mandsaur in Madhya Pradesh reports a huge 59% prevalence of silicosis.

Slate pencil industry is an unorganized small-scale industry mainly located in and around Mandsaur, Madhya Pradesh, India. A small village called Multanpura about 6 km away from Mandsaur having 6 km^2 area has about 90 slate pencil manufacturing facilities. Cutting of the stone is carried out manually with electrically operated saws. The subsequent operations of collecting, sorting, and packing are carried out manually near the cutting machine. Saiyed et al., reported that total and repairable dust levels near cutting machine were 46.47 and 10.41 mg/m^3 , respectively. Medical survey revealed that prevalence of silicosis in this industry was 54.6%, of these 17.7% of workers had progressive massive fibrosis. Consequently, they installed local exhaust ventilation with the cutting machine in order to reduce dust concentration in the work environment. People residing in the village are also exposed to the airborne silica dust, although they are not engaged in this occupation. Bhagia reported high concentrations of quartz in ambient environment of the village using PM-10 high volume samplers and vertical elutriators. Vertical elutriators have a median cut off at 10 ìm and a maximum cut off at 15 ìm. The average quartz concentration in the vicinity of slate pencil industry

* **Asst. Prof. (Commerce & Management) Atal Bihari Vajpai Hindi Vishwavidaylay, Bhopal (M.P.) INDIA**

are in the range of 41.07 to 57.22 ìg/m ^{3} at two locations within the village with an average of 49.15 ìg/m ^{3} for the village where as the quartz concentration at the control site, 5 km away from the Multanpura village is 3.51 ìg/m ^{3} .Prevalence of non-occupational silicosis and non-occupational silico-tuberculosis in the vicinity (exposed sites) was reported to be 12.6 and 6.3%, respectively.

Although silicosis is fatal and has no cure, it can be prevented if the inhalation of silica dust is minimized. Silica dust of two to five micron size, when inhaled, travels up to the alveoli of the lungs. Sizes larger than this are filtered through the nose or thrown out by cilia in the windpipe. Though highly toxic, silica dust has no smell and offers no warning to the worker. Dust levels can be reduced through engineering controls and good maintenance of the system. The Factories Act has a provision for maintenance of dust levels at work. But many workplaces are not covered by the Act.

Stigma and discrimination associated with HIV/AIDS is well known. But silicosis carries its own stigma. Workers and members of the community, including doctors, label the disease TB since the symptoms are similar. It is in fact common for a silicosis patient to also contract TB. And since TB is infectious, the patient is often isolated from his own family.

Preventive steps taken by the Govt to control silicosis - The problem of silicosis affliction is endemic to the Mandsaur District. It is worth mentioning here that due to various stern measures taken by Govt. of M.P. significant reduction has been noticed in the silicosis exposed workmen. Some of the important steps taken by the state Govt. to tackle this menace are enlisted below:-

1. To implement implement safety measures, measures, the Govt. of M.P. has notified the slate pencil industries under Section 85 of the Factories Act.
2. This industry has further been added in the Schedule XXII under Rule 107 of M.P. Factories Rules, 1962 which provide the statutory cover of safety & health to the workers. In addition to above schedule no. XVII is also added under Rule 107 regarding “free silica” which provides the statutory cover of Safety & Health to the workers.
3. A separate office of the Asstt. Director Industrial Health & Safety was established in the year 1982 at Mandsaur to ensure safety and Health provisions provided in the Factories Act 1948 and rules made there under
4. Every cutter machine in the Factory has been provided with efficient dust extraction system. Collection and Removal of dust at the point of generation by employing engineering control devices such as suction pipe-blower arrangement had been ensured. The dust so collected is being carried to underground collection pit through common conduits. Presently every cutter machine has been fitted with this local exhaust ventilation system.
5. Relocation these polluting units from residential areas to industrial estate, thereby reducing the number of exposed population in Mandsaur town & Village Multanpura. The District Industry Centre (D.I.C.) Department of Industry, M.P. Govt. developed a special Complex in the industrial area of Mandsaur for slate pencil units.
6. Ensuring provision of suitable personal protective equipment viz.appropriate dust mask to each workmen.
7. Registration of new Slate Pencil Industries are not being done since last 4 years under Factories Act 1948.

Survey - As per the recommendations of National conference on silicosis held on 1st March 2011 the State Govt. has conducted a detailed survey in the year 2011 (June-July) of Silica Prone Industries(stone crushers, sand blasting, cement factories, foundries, slate pencil factories etc.) registered under Factories Act 1948. In this survey 6484 workers of 137 factories situated in all 50 Districts were examined by the registered medical practitioners. No silicosis affected worker were found in any district except Mandsaur.

Compensation And Medical Facilities Provided :

1. The Slate Pencil industry is being governed by ESI Act to ensure health services to the workers. ESI Health Services is running 25 bedded hospital for regular treatment of workers suffering from silicosis. Four specialist ESI doctors are posted in this health center at Mandsaur District. In addition to this ESI is running two dispensary; one at labour colony. Mandsaur & another a mobile dispensary in village Multanpura. In addition to E.S.I. medical facility, District Hospital, Mandsaur has full-fledged Silicosis ward. For Medico legal purposes a medical board for silicosis has been constituted under the chairmanship of C.M.H.O. Apart from this board, in charge E.S.I. hospital has been designated as Certifying Surgeon under the Factory Act.
2. The provisions of ESI Act has been extended to workmen employed in the slate pencil units therefore issues of compensation for silicosis affliction is being dealt with as per the provisions of the said Act.
3. The Workmen’s Compensation Act, 1923 is applicable on the factories which are not covered under jurisdiction of ESI Act.

Constitution Of Welfare Board And It’s Activity The Government of M.P. has established “M.P. Slate Pencil Workers Welfare Board” in November 1985. The Board by its various resources provides levies cess @ Rs.04/- per 1000 units of pencils on the production of slate pencils. The fund so collected is being utilized to provide social security to workers & their dependents.

See Table in next page

Monitoring The Welfare And Health Aid For Silicosis Affected Workers - The Govt. of M.P. constituted a high power committee in the year 2011 under the Chairmanship of Additional Chief Secretary, Govt. of M.P. and Senior Officers of various Department who are the member of this Committee. The committee is monitoring the welfare and health aid provided to the Silicosis affected workers Silicosis Policy A

"Silicosis Policy" is also formulated by the committee to provide help to the workers under various Schemes implemented by the different Departments. Some of Schemes under which help is being provided are given below:-

1. DindayalYojna (To identify affected workers and provide them cards to obtain benefits of various schemes)
2. Free medical aid and treatment under AntodayaYojna.
3. To provide employment under ManregaYojna.
4. To provide Nutritional Diet under scheme of Child & Women Welfare Department.
5. Rehabilitation Packages under- Kapil Dhara Koop, IndraAwas, Diesel Pume Set, Kitchen Garden Yojna, Electric Pump,Family Pension, Grocery Store, Husbandry etc.

International response - The ILO/WHO Global Programed for the Elimination of Silicosis (GPES) was established following recommendations in 1995. The joint ILO/WHO committee on occupational health identified the global elimination of silicosis as a priority area for action, obliging countries to place it high on their agendas. India has its own national programmed for the elimination of silicosis.

GPES initially focused on secondary prevention, upgrading the skills of physicians and strengthening the system of health surveillance. A silica essential toolkit has been developed, applying the principles of control banding. Control banding is a risk assessment and management tool used where there is no technical expert, or quantitative exposure data is unavailable. It comprises step-by-step administrative actions to be taken by the employer to eliminate or reduce hazards in the workplace. Employers can be guided on what measures to take to control dust, for instance.

Although a national programmed for the elimination of silicosis in India may be in place, the effects are not being seen on the ground. Mortality and morbidity rates are not going down. And the government does not even have figures to compare any progress that could be taking place. This emphasizes the importance of enforcing effective exposure control and comprehensive surveillance programmed.

References :-

1. NIOSH. National Institute of Occupational Safety and Health, Manual of Analytical Methods; Method 7602, Silica Crystalline by IR. 4 th ed. Atlanta: Centers for Disease Control and Prevention; 1994
2. IARC. International agency for research on Cancer Monographs on the Evaluation of Carcinogenic Rrisks to Humans: Silica, Some Silicates, Coal Dust and Para-Ararmid Fibrils. vol. 68. Lyon, France: WHO, International Agency for Research on Cancer; 1997.G Venu Gopala Reddy [I]et al[/I]. Bombay Hospital journal (website details not available; hard copy in author's collection)
3. The ILO/WHO Global Programme for the Elimination of Silicosis (GPES)', Igor Fedotov [I]et al[/I]. [I]The Global OH Network[/I], p 1, Issue No 12, 2007 ([LINK=http://www.who.int/occupational_health][U]www.who.int/occupational_health[/U}
4. 'Elimination of Silicosis in the Americas', Ellen Galloway,The Global OH Network.,p 10, Issue No 12, 2007
5. 'Silica related diseases: It's not just silicosis', Faye Rice. The Global OH Network,p 6, Issue No 12, 2007
6. 'Contract Killings: Silicosis among adivasi migrant workers', AmitaBaviskar, [I]EPW,[/I][B] [/B]Vol 43, Issue No 25, pp 8-10
7. Bhagia LJ. Non-occupational exposure to silica dust in vicinity of slate pencil industry, India. Environ Monit Assess 2009;151:477-82
8. http://nhrc.nic.in/Documents/NC_on_Silicosis_ 25_07_2014/Madhya_Pradesh.pdf
9. http://www.oehni.in/files/Oehni_Newsletter_Vol1.pdf
10. http://infochangeindia.org/agenda/occupational-safety-and-health/the-dust-that-kills.html
11. Saiyed HN, Parikh DJ, Ghodasara NB, Sharma YK, Patel GC, Chatterjee SK, et al. Silicosis in slate-pencil workers: I. An environmental and medical study. Am J Ind Med 1985;8:127-33

Medical Aid & Other Benefits Provided By Board

S.	Year	No. of Workers died due to Silicosis	Grant Paid after death	No. of workers given medical treatment	Amount Paid for medical treatment
1	2010	11	3,52,765	171	16,88,000
2	2011	15	3,12,555	162	16,00,000
3	2012	15	3,56,001	149	16,23,000
4	2013	16	6,20,200	153	24,56,400
5	2014	9	1,56,600	160	12,97,500
	total	66	17,98,121	795	86,64,900

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Green Banking : An Endeavour Towards Sustainable Development

Dr. Sarita Mundra *

Abstract - In an increasingly eco-conscious market, many businesses are finding creative ways to go green. Whether it is improving their energy efficiency, buying organic products, composting or just turning off electronics at night, being green means all sorts of things to different people. One small contribution towards sustainable development is green banking. Most banks have at least one green initiative in place (or claim to), and a few have made the extra effort to distinguish themselves as green businesses.

Sustainable development can best be achieved by allowing markets to work within an appropriate framework of cost efficient regulations and economic instruments. One of the major economic agents influencing overall industrial activity and economic growth is the financial institutions such as banking sector. Banks should go green and play a pro-active role to take environmental and ecological aspects as part of their lending principle, which would force industries to go for mandated investment for environmental management, use of appropriate technologies and management systems. Adoption of greener banking practices will not only be useful for environment, but also benefit in greater operational efficiencies, a lower vulnerability to manual errors and fraud, and cost reductions in banking activities. Banks are already offering many of the services necessary for businesses to enjoy these benefits .This paper tries to find out the ways to Go Green through 'Green Banking' explores the importance of Green Banking.

Keywords - Green Banking, Online Banking, Paperless Banking, Climate Change, Sustainable Development, Global initiatives, Environment, Environmental Issues, Indian Banking Industry, Corporate Social Responsibility, Global Warming, Low Carbon Economy.

Introduction - Though green banking (environment-friendly banking, ethical banking or sustainable banking) can be defined in a number of ways, in a broader perspective, it is the environment-friendly banking practices that promote their customers to reduce the carbon footprint through their banking activities. It refers to eco-friendly banking in order to minimize environmental degradation and make our planet more habitable by overall reduction of external carbon emission and internal carbon footprint. Providing innovative green products: using online banking instead of branch banking, paying bills online instead of mailing them, purchasing green mortgage, opening up of CDs, green credit cards and money market accounts at online banks instead of large multi-branch banks or finding the local bank in your area that is taking the biggest steps to support local green initiatives. Green banking helps to create effective and far reaching market based solutions to address a range of environmental problems, including climate change, deforestation, air quality issues and biodiversity loss, while at the same time identifying and securing opportunities that benefit customer. Green Banking is a multi-stakeholders' endeavor where banks have to work closely with government, NGOs, International Financial Institutes (IFIs)/International Government Organizations (IGOs), Central Bank, consumers and business communities to reach the goal.

The Indian Banks Association defines it as "Green Bank functions like a normal bank along with considering the social and environmental factors for the protection of the natural resources". According to RBI (IDRBT, 2013), green banking is to make internal bank processes, physical infrastructure and Information Technology effective towards environment by reducing its negative impact on the environment to the minimum level. The UNEP-FI (2007) states that sustainable bank considers the impacts of its operations, various products and services for the current as well as future generation. In order to promote reduction in the external carbon emission, the banks should focus on financing the technology and projects that are environment friendly

To aid the reduction of external carbon emission, banks should finance green technology and pollution reducing projects. Although, banking is never considered a polluting industry,the present scale of banking operations have considerably increased the carbon footprint of banks due to their massive use of energy (e.g. lighting, air conditioning, electronic/electrical equipments, IT etc.), high paper wastage, lack of green buildings etc. Banks should adopt technology, process & products which result in substantial reduction of their carbon footprint as well as develop a sustainable business.

* Assistant Professor, Shri Cloth Market Girls' Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

Objective - This research paper has the following objectives:

1. Understanding the importance of Green Banking.
2. Explore the strategies for Green Banking approach.

Research Methodology - The study mainly includes literature review from secondary data. The secondary data sources include reports of the banks and other relative information published on the banks and other internet sites.

Literature Review :

1. In the early 1990s, the United Nations Environment Programme (UNEP) launched what is now known as the UNEP Finance Initiative (UNEPFI) with the objective of integrating the environmental and social dimension to the financial performance and risk associated with it in the financial sector.
2. First Green Bank is a commercial bank based in Mt. Dora, Florida, United States which commenced its operations in 2009. Some of the big international banks like ABN Amro, Deutsche, Standard Chartered, HSBC Bank etc. look at environment issues discussed under Kyoto Protocol.
3. Bihari, Suresh Chandra (2010), in his research article analyzed the social responsibility of banking sector. He concluded that the role of banks in controlling the environmental damage is extremely important. As per relatively indirect nature of their environmental and social impacts, banks need to examine the effects of their lending and investment decisions.
4. Ginovsky (2009) had emphasized that in order to implement ecologically friendly practices, banks should launch new banking products which promotes the sustainable practices and also needs to restructure their back office operations.
5. Recognizing the warning of global warming the State bank of India has initiated urgent measures to combat the climate change by reducing the bank s own carbon footprint and sensitizing the bank s clients to adopt low carbon emission practices (Sharma, N., 2011). As far as Green Banking in India is concerned, the banking and financial institutions are running behind the schedules compared to global trends(nayak). Moreover, there is negligible awareness of green banking among the customers, even the bank staff (Verma M. K., 2012).
6. In the context Indian policymaking, National Environmental Policy (NEP) in 2006 brings out clear policies, principles and also rules to implement environmental rules and regulations. The impact of banking services on the environment is huge because, banks consume natural resources which add to the pressure on the environment (Srivatsa H. S., 2011). ATMs have been widely adopted but the level of adoption of other electronic banking means despite their potential are yet to pick in a big way (Joshua A J & Koshy M P 2011).
7. Dharwal, Mridul and Agrwal, Ankur (2011), in research article on "Green Banking: An Innovative initiative for Sustainable Development" concluded that Indian banks need to be made fully aware of the environmental and social guidelines to which banks worldwide are agreeing to. As far as green banking is concerned, Indian banks are far behind their counterparts from developed countries.
8. Khawaspatil, S.G. and More, R.P. (2013), in their research article concluded that in-spite of a lot of opportunity in green banking and RBI notifications, Indian banks are far behind in implementation of green banking.

Startegies For Gereen Banking Approach - Strategies for the Green Banking approach are as follows:

1. Going Online - Online banking is a new and fast-developing concept. It helps in conservation of energy and natural resources. Online Banking incorporates: 1. Paying bills online, 2. Remote deposit, 3. Online fund transfers and 4. Online statements. Online savings account and mobile banking is the easiest way to do your bit to bank green and help the environment. Online banking creates savings from less paper, less energy, and less expenditure of natural resources from banking activities.

2. Green Building - Eco-banking strategies use green building which is energy efficient, resource efficient and environmentally responsible. This kind of construction and operational practices reduces negative impact on the environment and its occupants by: building design, natural light and solar radiation, cross ventilation windows, building devise incorporating highly reflective roofing materials to minimize use of land for building, water usage and waste.

3. Green Loans for Home Improvements - The Ministry of Non-renewable Resource in association with some nationalized and scheduled banks undertook an initiative to go green by paying low interest loans to those customers interested in buying solar equipment. Before you undertake a major home improvement project, study if the project can be done in an eco-friendly manner and if you might qualify for a green loan from a bank Green loan are perfect for energy-saving project around the house. For example, the new Green Home Loan Scheme from SBI will support environmentally-friendly residential projects and offer various concessions. These loans will be sanctioned for projects rated by the Indian Green Building Council (IGBC) and offer several financial benefits –a 5 percent concession in margin, 0.25 percent concession in interest rate and processing fee waiver.

4. The Bio Sourced Banks debit and credit Card - Bio sourced bank card acts as a branding tool for bank which are made from an eco-friendly plant starch based plastic substitute called poly lactic acid. These types of card can also be created from renewable sources such as corn and recycles back to its initial resin without loss of quality.

5. Greening Staff - For green indoor, banks develop highly efficient and environment conscious employees who are able to work creatively with low resources. Banks can set green goals as the internal targets to lessen their carbon footprint. Moreover it is required to motivate and energize the work force to follow green path and implement own ideas on green.

6. Power Saving Equipment - Banks can directly contribute to controlling climate change: replace all fused

GSL bulbs, in all owned premises offices and residential areas. Banks can also make a feasibility study to make rain water harvesting mandatory in all the Bank's owned premises.

7. Green Waste Management - Banks should introduce recycling program to waste and for managing waste or reusing waste. Banks can use the different program as like SMART whereas Save Money and Reduce Toxins, total elimination of waste by using clean technology, reduce paper usage eliminating ATM receipt by sending electronic message, and recycling of wastage by reuse of materials.

8. Saving Paper - Bank should purchase recycled paper products with the highest post-consumer waste content possible. This includes monthly statements, brochures, ATM receipts, annual reports, newsletters, copy paper, envelopes etc. Whenever available, vegetable-based inks should be used instead of less environmentally friendly oil based inks.

9. Consolidated Printer and Server - This strategy reduces number of printer uses and reduces printer maintenance cost. When banks open a new branch can be accommodated with consolidated servers that reduces carbon footprint and resource cost.

10. Green Interior Design - Banks can also redesign their branches on green concept. For eco-banking we can use small trees, flower base, green poster, green color on wall and furniture for interior design. This design says the banks green movement or complying with eco-banking.

11. Use Of Solar And Wind Energy - Using solar and wind energy is one of the noble cause for going green. State Bank of India (SBI) has become the first bank in the country to venture into generation of green power by installing windmills for captive use. As part of its green banking initiative, SBI has installed 10 windmills with an aggregate capacity of 15 MW in the states of Tamil Nadu, Maharashtra and Gujarat.

12. Green Internal Meeting - For sustainable environment, banks can perform green internal meeting with its employees through internet which reduces paper consumption and operational expenses. Moreover bank can transmit weekly news through internet and offer green leaning about banks product and policies.

Conclusion - In a rapidly changing market economy where globalization of markets has intensified the competition, banks should play a pro-active role to take environmental and ecological aspects as part of their lending principle which would force industries to go for mandated investment for environmental management, use of appropriate technologies and management systems. The banking and financial sector should be made to work for sustainable development. Eco-banking trends contribute to better living conditions and creating green future for banks, customers and society. Banks are responsible corporate citizens. Every small 'GREEN' step taken today would go a long way in building a greener future and that each one of them can work towards to better global environment. 'Go Green' is an organization wide initiative to lead banks, their processes and their customers to cost efficient automated channels. This will help in reducing carbon-footprint as well as in building awareness and consciousness about environment, nation and society. There is definitely a huge opportunity in clean, renewable energy technologies, emissions reduction and reduced-carbon transportation which can be slowly and steadily be achieved if we get cooperation from all sectors of the economy and bank being an integral part of our economy must lead from the front. Green banking is really a good way for people to get more awareness about global warming; each businessman will contribute a lot to the environment and make this earth a better place to live.

References :-

1. SHRUTI GARG ,"GREEN BANKING: AN OVERVIEW", Global Jornal of advance research, Vol-2, Issue-8 PP. 1291-1296
2. Pravakar Sahoo Bibhu Prasad Nayak," Green Banking in India", Discussion Paper Series No. 125/2008
3. MD. MASUKUJJAMAN* SERENA AKTAR," Green Banking in Bangladesh: A Commitment towards the Global Initiatives", Journal of Business and Technology (Dhaka), Volume VIII, Issues 1 and 2, January-June, July-December, 2013
4. 1K.SUDHALAKSHMI, 2Dr.K.M.CHINNADORAI, "GREEN BANKING PRACTICES IN INDIAN BANKS", International Journal of Management and Commerce Innovations ISSN 2348-7585 (Online) Vol. 2, Issue 1, pp: (232-235), Month: April 2014 - September 2014
5. Jeucken, M. (2001). "Sustainable Finance and Banking, The finance Sector and The Future of the Planet". London, Earthscan.
6. Chaudhuri Tarumoy. (2007). "Study of Ethics in Business Communication in the Service Industry with Emphasis on Banking Industry", National Law University, Jodhpur.
7. Mukherjee, R. (2010) "SBI launches green policy for paperless banking", Financial Chronicle.
8. Green, C. F. (1989). "Business Ethics in Banking." Journal of Business Ethics ,631–634
9. Bahl Sarita (2012). "Role of Green Banking in Sustainable Growth", International Journal of Marketing, Financial Services and Management Research, 1(2).
10. Singh A, (2010) "Mobile Banking – Evolution and Business Strategy for Banks", The Indian Banker
11. Asma Jarin, Mohammad Rahat, Mohammad Abul Kashem, "Eco-Banking Strategies for Competitive Advantages", European Journal of Business and Management ISSN 2222-1905 (Paper) ISSN 2222-2839 (Online) Vol.6, No.3, 2014.
12. http://www.businessinsider.com/green-banking-for-small-businesses-2011-9?IR=T
13. http://www.cwejournal.org/vol10no3/green-banking-for-environmental-management-a-paradigm-shift/

****

Challenges Faced By Women Entrepreneurs

Pooja Chouhan * Dr. Himanshu Mehta ** Dr. Tabassum Patel ***

Abstract - Entrepreneurship amongst women is a relatively recent Phenomenon, which is gradually changing with the growing sensitivity of the roles, responsibilities and Economic status of women in the society in general and family in particular. For women entrepreneurs, starting and operating a business involves considerable risks and difficulties, because in the Indian social Environment women has always lived as subordinate to men, increase in the education levels of women and increased social awareness in respect of the role Women plays in the society.
Keywords - Women entrepreneur, challenges, pull factor, push factor.

Introduction - Women Entrepreneurship is both about Women part in the society and the role of Women Entrepreneurship in the same society. Women are faced with specific obstacles (such as family responsibilities) that have to be overcome in order to give them access to the same opportunities as men. Also, in some countries, women may experience obstacles with respect to holding property and entering contracts. Increased participation of women in the labour force is a prerequisite for improving the position of women in society and self-employed women.

Women Entrepreneurs may be defined as the women or a group of women who initiate, organize and operate a business enterprise. Government of India has defined women entrepreneurs as an enterprise owned and controlled by a women having a minimum financial interest of 51 percent of the capital and giving at least 51 percent of employment generated in the enterprise to women. Like a male entrepreneurs a women entrepreneur has many functions. They should explore the prospects of starting new enterprise; undertake risks, introduction of new innovations, coordination administration and control of business and providing effective leadership in all aspects of business.

The word entrepreneur originates from the French word "entrepreneur" which means "to undertake". In a business context, it means to start a business. The Merriam Webster dictionary presents the definition of an entrepreneur as: one, who organizes, manages and assumes the risk of a business or enterprise.

According to "Peter Drucker", an "Entrepreneur is one who always searches for change, responds to it and exploits it as an opportunity". Entrepreneurs innovate and innovation is a specific instrument of entrepreneurship. It creates resources because there is no such thing as a 'resource' until the human finds a use for something and endows it with economic value.

Women entrepreneurs can be divided into three categories :

First Category :

1. Established in big cities.
2. Having higher level technical & professional qualifications
3. Non traditional.
4. Sound financial positions.

Second Category :

1. Established in cities and town.
2. Having sufficient education.
3. Both traditional and non traditional items.
4. Undertaking women services-kindergarten, crèches, beauty parlors , health clinic etc.

Third Category :

1. Illiterate women
2. Financially Week
3. Involved in family business such as Agriculture, Horticulture, Animal Husbandry, Dairy, Fisheries, Agro Forestry, Handloom, Power loom etc.

Basic Problems Faced By Women Entrepreneurs

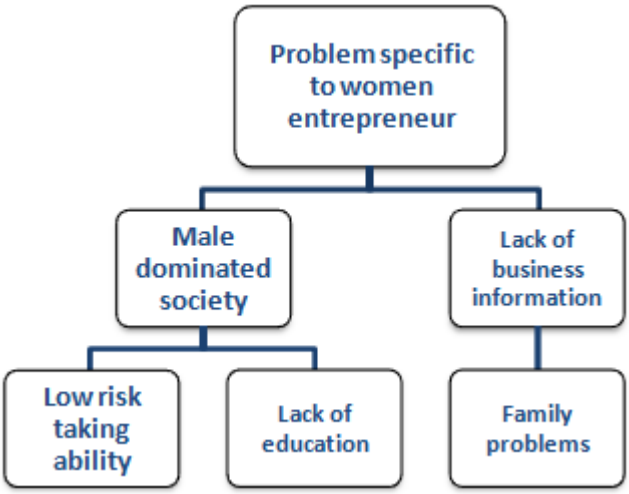

* Research Scholar, Pacific University of Management studies, Udaipur (Raj.) INDIA
** Principal, Pacific Business School, Udaipur (Raj.) INDIA
*** H.O.D, Management Deptt., SYSITS College, Ratlam (M.P.) INDIA

Review Of Literature - Dr Rana ZehraMasood(2011) made the analyses to concept of women entrepreneurs in india; their traits in the business, the problems faced by them when they setup and make some suggestions for future prospects for the development of women entrepreneurs. In the era of liberalization, privatization and globalization along with ongoing IT revolution, today's world is changing at as usurping pace. Political and economic transformations appear to be taking place everywhere as countries convert from command to demand economies, dictatorships moves toward democratic system and monarchies build new civil institutions. These changes have created economic opportunities for women who want to own and operate businesses.

Dr. N. Vasugi(2007) had conducted the study which deals with garments marketing and management. Fashion and garment industries are looked at as an industry of future. It also dealt with the development of women entrepreneurs and their association on different garment manufacturing activities and emerging possible opportunities in the cosmetic and global markets.

AsgharAfsharJahanshahi and et al (2010) Today's world is changing at a startling pace. Political and economic transformations seem to be occurring everywhere—as countries convert from command to demand economies, dictatorships move toward democracy, and monarchies build new civil institutions. These changes have created economic opportunities for women who want to own and operate businesses. Today, women in advanced market economies own more than 25% of all businesses and women-owned businesses in Africa, Asia, Eastern Europe and Latin America are growing rapidly. This paper focuses on woman entrepreneur. Any understanding of woman in global scene and especially in India, also the paper talks about the status of woman entrepreneurs and the problems faced by them when they set up and managed their own businesses in the competitive world of business environment.

Sujata Kumari and et al (2010) the study was undertaken with an objective to study the problems of rural women entrepreneurs. It was conducted in the rural areas of Rajasthan with 60 rural women of whom half were engaged in entrepreneurial activity and half were not. Interview method was used to collect data from women. Information on the entrepreneurial problems was gathered and analyzed. The results of the study indicate lack of supportive network, financial andmarketing problems were the major problem areas for rural women entrepreneurs and major demotivator for other women to initiate entrepreneurial activity.

Objectives Of The Study - To study the challenges face byfor women entrepreneurs for starting their business.

Research Design - A research design is the arrangement of condition for collection and analysis of data in a manner that aims to combine relevant to the research purpose with economy in procedure.

The researcher has adopted Descriptive research design. Since, it describes the state of affairs as it exists at present.

Sample Size - A sample of 50 respondents was taken for the study. Sample size refers to the number of respondents selected from the geographical area to constitute sample

Motivational Factors - Scores Obtained

S.	Factor	Score	Rank
I	**Push Factors**		
1	Death of a bread earner	22.6	4
2	Sudden fall in family income	32.6	2
3	Permanent inadequacy in income of family	24.4	3
4	To improve standard of living	47.8	1
II	**Pull Factors**		
1	Women's desire to evaluate their talent	54.7	1
2	Need & perception of women's liberalization	36.7	3
3	To utilize their free time &education	38.4	2
4	To get economic independence	34.0	4
5	To gain recognition, importance& social status	24.5	5

The push factors which motivated women to undertake job were 'to improve standard of living', 'sudden fall in family income', 'permanent inadequacy in income of the family' and 'death of bread winner'. The scores assigned for these factors were 47.8 points, 32.6 points, 24.4 points and 22.6 points respectively.

The pull factors which motivated women to undertake job were 'women's desire to evaluate their talent', 'to utilize their free time and education', 'need and perception of women's liberation, equity, etc', 'to gain recognition, importance and social status' and 'to get economic independence'. The scores assigned for these factors were 54.7 points, 38.4 points, 36.7 points, 34 points and 24.5 points respectively.

Financial Problems and Causative Factors Faced By Women Entrepreneurs (See in next page)

Conclusion - This research work is a rewarding exercise to the researcher to gain more knowledge on the role of women entrepreneurs. It is concluded that most of the women entrepreneurs are facing the constraints in aspects of financial, marketing, production, health, work place facility problems and work family conflicts. All most all the women entrepreneurs are irrespective of their education, age, marital status, caste, religion, type of organizations, ownership type, experience, amount of capital investment in their business. The major problems faced by women entrepreneurs are:-

Financial Problems - Finance is a most important aspect of any business. Non-availability of long-term finance, regular and frequent need of working capital and long procedure to avail financial help were found to be the financial problems faced by respondents based on the multiple responses given by them Non availability of long-term finance was found to be a problem faced by women entrepreneurs.

Marketing Problems - During the process of marketing of products women entrepreneurs faced certain problems viz. poor location of shop, lack of transport facility and tough

competition from larger and established units. There was a significant difference in the problems faced by entrepreneurs. Difficulty in affording own vehicle was a major factor causing marketing problem.

Production Problems - Production problems faced by maximum respondents were non availability of raw material. Non-availability of raw material was one of the reasons to the slow growth of women entrepreneurs. Other production problems were non-availability of machine or equipment, lack of training facility and non availability of labour. Major causable factors leading to production problems were high cost of required machine or equipment.

Work Place Problems - The work place facility problems faced were viz. Inadequate work place for water, less entrance for natural light and improper space for work. Women entrepreneurs faced the problem of lack of proper places. Work place problems were faced by maximum respondents. Causable factors were water shortage, less entrance for natural light and lack of sufficient area for business.

Limitations Of The Study : The following are the limitations of the study. They are as follows:

1. Time and cost constraints are the other important factors.
2. Chances of personal bias while responding to the questionnaire especially for the data.
3. Such as family income, educational qualification, etc.
4. The study is restricted to the Ratlam only.

Suggestions :

1. Procedure of getting finance should be simple
2. Effective propagation of programs and yojnas.
3. Linkages between product, services and market centers.
4. Encouragement to technical and professional education.

Future Scope Of The Study - The study sought to establish the constraints that women entrepreneurs face in various sectors from an empowerment perspective. This is because the sector provides a sustainable means for livelihoods for many women, yet they face specific challenges that require to be addressed at a policy and practical level. The starting point being that the policy and regulatory environment often has a significant impact on the ability of women to engage in business activities. The study therefore interrogated and problematized bureaucratic, legal and social hurdles women entrepreneurs' encounter in formalizing and running their business ventures towards possible reforms in policy and practice necessary to enhance women's full economic participation..

References :-

1. Hisrich, R.D., The women entrepreneurs, characteristics, skills, problems and prescriptions for success", in the Art & Science of Entrepreneurship (Mass Ballinger Publishing Co.).,2009
2. Anil Agarwal (1984), "Environmental Change and Women in India," Samayasakthi, Vol. 1, 1984, p. 27.
3. Bashier, Seema (2002). Attitude towards Women Entrepreneurs in J&K. WomenEntrepreneurship- A Futuristic Outlook (2002): Government College for Women,Srinagar, J&K.
4. Bhattacharjee, S. K. and Akhouri, M. M. P. (1975). Profile of a small industry entrepreneur. SEMDE, 2 (1): pp 73-86.
5. Ganesan,S., "Status of Women Entrepreneurs in India", New Delhi, Kanishka, 2003, VI, 176 p., ISBN 81-7391-561-X.
6. Patel, AR (1995): Entrepreneurship and small business development for women. Kurukshetra, 43 (11): 65-68.
7. Pestonje DM and UdaiPareek (Eds) (1997). Studies in organizational stress and coping. Jaipur, Rawat publication.
8. Sobha Rani, B., Koteswara Rao, D., "Perspectives on Women Entrepreneurship", The Icfai Journal of Entrepreneurship Development, Vol. 4, No. 4, pp. 16-27, December 2007
9. Das K (2007). "SMEs in India: Issues and Possibilities in Times of Globalisation", in Hank Lim (ed.), "Asian SMEs and Globalization", ERIA Research Project Report 2007 No.5, March, ERIA, Bangkok.
10. Dhaliwal S (1998). Silent contributors: Asian female entrepreneurs and women in business. Women's Studies International Forum, 21(5): 463-474.
11. Dhameja SK, Bhatia BS, Saini JS (2002). "Problems and constraints of women entrepreneurship", in D.D. Sharma and S.K. Dhameja (eds.). Women and Rural Entrepreneurship, Chandigarh: Abhishek Publications).
12. Dhillon P (1998). Women Entrepreneurs: Problems and Prospects, New Delhi: Blaze Publishers and Distributors.
13. Kishor N. Choudhary and Dr. Arvind P.Rayalwar (2011)Variorum Multi- Disciplinary e-Research Journal Vol.-01, Issue-III, February 2011.

Financial Problems and Causative Factors Faced By Women Entrepreneurs

Financial Problems & Factors	Garment Sector	Beauty Parlour	Kirana	Boutique
Non availability of long term finance	3.95	3.95	4.25	3.9
Regular & frequent need of working capital	4.8	4.7	5.0	4.2
Long procedure to avail financial help	3.8	3.8	3.5	3.2
High cost of living	3.25	3.23	3.9	3.8
Too many dependents	4.3	4.2	4.2	4.0
Mean	**4.02**	**3.98**	**4.05**	**3.82**

****

Liquidity Crunch : It's Impact on Indian market

Dr. Deepali Behere *

Abstract - The worst financial crunch since the great depression of 1930,s and the first fall since World War II are redrawing the boundaries between Government and markets across the world. denouncing the decoupling theory , today global financial crisis has made direct or indirect impact on most of the country ,s market , which has appeared in many ways , firstly ,due to panic selling ,the prices of most of the commodity has fallen sharply; secondly demand for commodity is being impacted owing to slow down in the international and local economy ; thirdly tight liquidity in the local market has affected commodity business and lastly foreign investment outflow has led to fall in rupee against the dollar due to which commodity importers are incurring losses ,while exporter stand to gain. there is enormous and uncertainty about the depth and duration of the current global recession that even the majority of the expert opinions now concedes a substantial likelihood that the worst is yet to come. India is in the middle of storm at the moment, there can be no doubt about that. The situation is worse than we can imagine such that even the local commodity market is also not remaining untouched by the liquidity problem. It is severity and massive collateral damage to the real economy has confounded the optimists. But the important points to note is that this storm is not of India's making. The only option left in this situation is big-bail out or credit seizure.The objective of this paper is to analyze the liquidity crunch and its impact on Indian economy, and the suggestion thereof that can be used to save the situation in India's context.
Key words - India, Economy, global.

Introduction - HOWEVER, when going gets tough, tough gets going. Our biggest strength is that we do not need necessarily an ideal atmosphere to succeed. We are used to fighting in trains, similarly, we are able to negotiate many challenges, and there is always a silver lining to every crisis. Time and again, India has demonstrated so in a Myriad ways. Even though the present financial turmoil in a number key developed economies and above all, the earth trembles, it is the most fragile who notice it most. Today, the consumers in developed and developing economies are caught between rising commodity prices and credit crunch. No country today, is immune to the effect of U S economic slowdown. It is also believed that ''GLOBALIZATION'' is the prime reason for this inflection as today every economy has become integrated with every country ,from raw materials to finished products ,services and capital.India's economy may be fragile in the sense it is very vulnerable to what is colloquially know as ''global risk sentiment'', but it is not susceptible to having its growth trajectory knocked completely off. India may be shaken, but her economy will not be broken. The problem is that in the present global environment people are not simply not willing to take or assume what is perceived as ''risky'', that is from the emerging economic point of view, the damaging premium.

The Liquidity crunch has already resulted in downsizing many sectors of the economy. The common man is suffering ,as there is not only scarcity of jobs, but a freeze on increment. Given this , people have no choice but cut expenditure and not borrow unless absolutely necessary. Globally, thing are still a lot more damaging in the financial services sector. Action taken by the RBI are now critical, with the hope of turning the Indian economy around . Today, the construction sector, energy sector, capital goods, health care, power, logistics, chemicals, textile sector are already in for trouble times, as global and national capacity gluts threaten a gloomy price outlook, but never the less, we can take some comfort that today, bank are visibly starting to lower their lending rate on various loan categories. But it is also imperative In India, the marginal propensity to consume is still low as compared to other countries ,that cuts along are unlikely to boost spending already the liquidity crunch is already having its impact on the foreign institutions investors also.

- The middle class in India today is witnessing its first financial meltdown a possible deep Recession. The information technology-business process outstanding unit (IT-BPO) myth is also under huge problem. The job losses already running into lakhs in the us alone. The trade deficit is also reaching an alarming proportion. Thanks to worker's remittances from NRI deposits but for some reason, if the remittance dry up and FIIs fund take flight,it will be a repetition of 1991.

The middle boom might be glamorous but depression in income and losses in the market are far more organizing .the current exchange rate offers handsome returns but the orders are Drying up due to impending recession. The impact on working class by means of wage, compensation and work loads, a legal retrenchment and worsening of Job security and working condition etc will be onerous. Already this has started happening.

The index of industrial production (IIP) has also dropped from 7% in September 2007 to 5.5% in September 2008 to 0.4 in October 08 which is already negative; still nobody knows what will happen.

* **Asstant Professor, Career College, Bhopal (M.P.) INDIA**

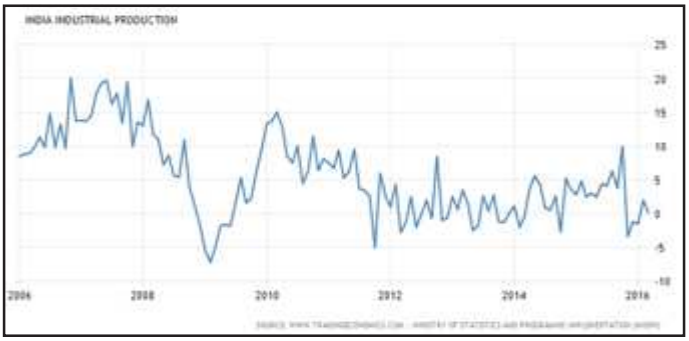

When the foreign investors pulled out Rs. 54283 crore from the equity markets between January and November 2008 it made the sensex crashed by almost 60% due to this sudden Outflow. The large scale capital outflow had to put a severe pressure on rupee. The value of rupee came down from 39.4% per dollar in November 2008to 48.9% percent dollar a fall of 24.1%

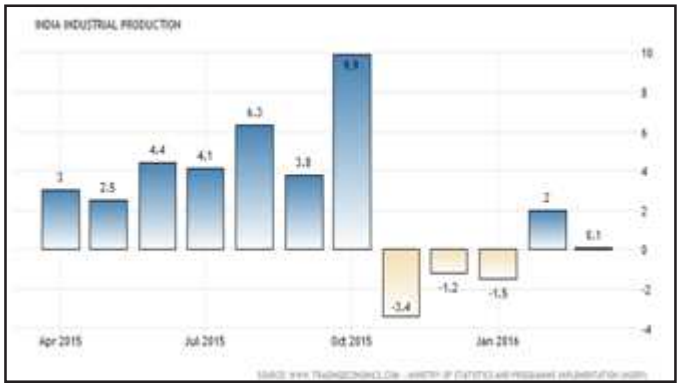

The government revenues have fallen by 10.12% in Oct. 2008, but its expenses grew by 16.28% which is more than 79% the budget estimates.

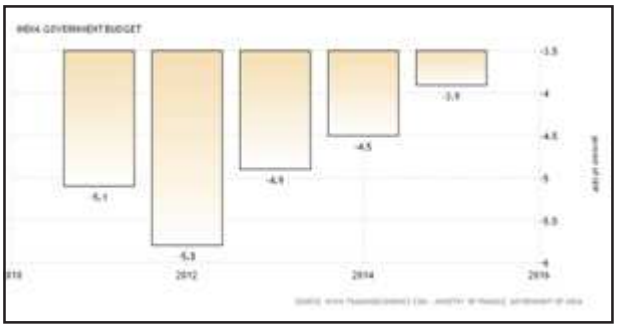

The Crisis has also demonstrated the interconnections of nations. The US may have a big hand in precipitating the Crisis, but it cannot solve it in isolation. India today, must recognize That it is an integral part of emerging global system. She cannot escape the global down swing as the accompanying table shows,

Subregion/Economy	2009	2010	2011	2012	2013
Central Asia	3.2	6.6	6.2	6.1	6.2
Azerbaijan	9.3	5.0	0.1	4.1	3.5
Kazakhstan	1.2	7.0	7.5	6.0	6.5
East Asia	6.7	9.8	8.0	7.4	7.7
China, People's Rep. of	9.2	10.4	9.2	8.5	8.7
Hong Kong, China	-2.6	7.0	5.0	3.0	4.5
Korea, Rep. of	0.3	6.2	3.6	3.4	4.0
Taipei,China	-1.8	10.7	4.0	3.4	4.6
South Asia	7.5	7.8	6.4	6.6	7.1
Bangladesh	5.7	6.1	6.7	6.2	6.0
India	8.4	8.4	6.9	7.0	7.5
Pakistan	1.7	3.8	2.4	3.6	4.0
Sri Lanka	3.5	8.0	8.3	7.0	8.0
Southeast Asia	1.4	7.9	4.6	5.2	5.7
Indonesia	4.6	6.2	6.5	6.4	6.7
Malaysia	-1.6	7.2	5.1	4.0	5.0
Philippines	1.1	7.6	3.7	4.8	5.0
Singapore	-1.0	14.8	4.9	2.8	4.5
Thailand	-2.3	7.8	0.1	5.5	5.5
Viet Nam	5.3	6.8	5.9	5.7	6.2
The Pacific	4.2	5.5	7.0	6.0	4.1
Fiji	-1.3	-0.2	2.1	1.0	1.2
Papua New Guinea	6.0	7.4	8.9	7.5	4.5
Developing Asia	6.0	9.1	7.2	6.9	7.3

India does not have a particularly large service. According to world development indicators 2007-2008, as the share of services in GDP is only 53% against global average of 69% and 59% in all low/middle countries.The impact of liquidity crunch is imminent that even the transport and commun-i cation shows a mix picture. The commercial vehicle sales halved in the last two to three months or so. The finance and the real estate also present a mix picture. Today, even banks are fearful of bad dates. In the current fiscal, a high of 8.6% to 9% in 2007-08 as predictable that this may declined further to6.2% in the next fiscal.The country's exports which posted a robust of 30.9% growth rate in the first half of this fiscal, today it has contracted by 12.1%, the first time in 5 years.

The commodity prices and traders today are reeling under falling slowdown in demand.The availability of finances is yet to improve, despite the measures taken by the governments to announce two stimulus packages, seeking to raise public spending and making available easier credits for sector such as exports , housing and small industries.

Suggestions And Conclusions - Though India is in a unique position, but we still need an effective regulatory system, that allows innovation, but not permissiveness, a locally customized global governance model is imperative the development of new governance model is imperative, all support structures such as rating agencies, rules , external auditors and board to function transparently to restore trust. In this case therefore, the government interference in the economy is necessary to achieve equilibrium for stability in prices and higher levels of income and employment.

We must go beyond mathematical models such as value at risk (VaR) to deeper understanding of their underlying assumptions; we have to move from understanding trends to understanding discontinuities.

References :-

1. The Economic Times of India
2. Ww.economictimes.com
3. The business standard Vol.XV number.
4. www.businessworld.com

उपभोक्ताओं के लिये न्याय प्राप्ति की प्रक्रिया

डॉ. केशव मणि शर्मा *

शोध सारांश – भारत देश में शॉपिंग के मामले में महिलाएँ पुरूषों से कहीं आगे हैं किन्तु उपभोक्ता अधिकारों की जागरूकता के मामलों में आज उनका आँकड़ा सिर्फ 7.45 प्रतिशत[1] है। जबकि नेशनल कन्ज़्युमर हेल्प लाईन टोल फ्री नंबर 1800-11-4000 पर देश के सभी उपभोक्ता अपनी शिकायत दर्ज करवा सकते हैं। मध्यप्रदेश के उपभोक्ताओं के लिये शिकायत दर्ज करवाने हेतु फोन नंबर 0755-2259778 भी उपलब्ध है। इसके बावजूद भी उपभोक्ता कदम-कदम पर ठगी का शिकार हो रहे हैं, क्योंकि उन्हें अपने उपभोक्ता अधिकारों की जानकारी ही नहीं हैं और इसके अलावा चलो छोड़ो ... जाने भी दो .... कौन परेशान होगा ?.. जैसी मानसिकता के चलते आज भी उपभोक्ता खासकर महिलाएँ अपने उपभोक्ता अधिकारों का उपयोग करने में कतरा रही हैं।

वकील की आवश्यकता नहीं होना, 90 दिन जैसी अल्प अवधि में न्याय प्राप्त होना, न्यूनतम शुल्क, न्यायिक प्रक्रिया की न्यूनता जैसी विशेषताएँ होने पर भी आज हमारे देश में 1 जून 2015 तक राष्ट्रीय, राज्य एवं जिला स्तर पर उपभोक्ता अदालतों में कुल मिलकर 43,11,892 मामले पंजीकृत किये गये जिनमें से 39,39,514 मामलों का निपटारा किया गया।[2]

यदि हम उपभोक्ता मामलों के प्रति जागरूक होकर अपना अधिकार चाहते हैं, तो हमें क्रय की गई वस्तु के देयक के साथ साहसिक दिल की भी ज़रूरत है, मानसिकता बदलना होगी। उपभोक्ता क्लबों का गठन करना होगा। मिडियेशन केन्द्रों की संख्या बढ़ाना होगी तथा जागरूकता संबंधी सरकारी प्रयासों में वृद्धि भी करना होगी।

प्रस्तावना – भारत देश विश्व उपभोक्ता बाजार के शीर्ष पायदान पर होते हुए भी आज यहाँ उपभोक्ता अधिक दाम, गारण्टी के बाद सेवा नहीं देना, बिना मानक की वस्तु की बिक्री, कम नाप, कम तौल, बिल नहीं देना, बिल मांगने पर Estimate की कापी पकड़वाना, इत्यादि अनेक समस्याओं से घिरा हुआ है। उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के प्रावधानों में शुल्क की व्यवस्था ठीक नहीं होने से भी अधिकांश उपभोक्ताओं द्वारा न्याय प्राप्ति से कतराना, अशिक्षा एवं सामाजिक प्रतिष्ठा के कारण अदालतों में जाने से घबराना, आज के उपभोक्ता की विवशता प्रतीत हो रही है।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध आलेख का उद्देश्य उपभोक्ताओं को अपने हितों की रक्षा के लिये उनके अधिकारों से अवगत करवाना तथा उपभोक्ताओं द्वारा न्याय प्राप्ति हेतु क्या प्रक्रिया अपनाई जाएं, न्याय प्राप्ति हेतु आवेदन के प्रारूप, शुल्क, न्याय प्राप्ति की अवधि, उपभोक्ता अदालतों की अधिकारिता, अपील संबंधी प्रक्रिया के उल्लेख के माध्यम से जागरूकता पैदा करना है। साथ ही वर्तमान तकनीकी युग में उपभोक्ता शिकायत/ विवादों के सामधान हेतु हेल्पलाईन, वेबसाईट इत्यादि की जानकारी के माध्यम से उपभोक्ता जागरूकता पैदा करना भी शोध-पत्र का सहायक उद्देश्य है।

शोध परिकल्पना – विद्यार्थियों एवं आम नागरिकों से उपभोक्ता शोषण के अनेक मामलों की चर्चा होने से यह ज्ञात हुआ कि कियोस्क संचालक पोर्टल शुल्क रू. 120 के स्थान पर एक उपभोक्ता से रू. 3,000 ले लेता है।[3] स्टाम्प वेण्डर रू. 10 का स्टाम्प रू. 15 में बेचता है। नोटरी रू. 25 के स्थान पर रू. 200 शुल्क लेता है। कोल्ड ड्रिंक्स विक्रेता MRP रू. 33 के स्थान पर कोकाकोला रू. 40 में बेचता है और इनमें से कोई भी बिल नहीं देता है। फिर भी उपभोक्ता अधिकारों की जानकारी के अभाव में उपभोक्ता को यह नहीं पता होता है कि वह क्या करे ? जिससे उसका शोषण रूक सके। आम उपभोक्ता शोषण से मुक्ति की प्रक्रिया को जान सके। इसी परिकल्पना के साथ यह शोध-पत्र तैयार किया गया है।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र – शोध-पत्र का क्षेत्र केवल 'उपभोक्ता' तक ही सीमित है, अन्य उत्पादकों, एकाकी व्यापारी, साझेदारी संस्थान, कम्पनी तथा अन्य क्रेता, विक्रेताओं एवं सरकारी विभागों के संदर्भ में इसका क्षेत्र अधिक विस्तृत नहीं हैं।

महत्वपूर्ण परिभाषाएँ :

उपभोक्ता (Consumer) **–** ऐसा व्यक्ति जिसने पूर्ण या आंशिक मूल्य चुकाकर या मूल्य चुकाने का वायदा करके उपभोग हेतु कोई माल या सेवा खरीदी हो, उपभोक्ता कहलाता है। परन्तु ऐसा व्यक्ति उपभोक्ता नहीं कहलायेगा। जिसने माल को दुबारा बेचने या किसी वाणिज्यिक प्रयोजन (Commercial purpose) के लिये खरीदा हो। परन्तु 1993 के संशोधन के अनुसार क्रेता द्वारा खरीदे गये माल का उपयोग केवल अपने स्व-रोजगार के साधन के रूप में जीविका उपार्जन हेतु किये जाने की दशा में उक्त उपयोग वाणिज्यिक प्रयोजन की श्रेणी में नहीं आयेगा।

परिवाद (Complaint) **–** किसी परिवादी द्वारा माल या सेवा में त्रुटी या कमी होने के कारण लिखित में किया गया कोई अभिकथन (Allegation) जिसके आधार पर वह उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत अनुतोष (Restrictive Trade) चाहता है। संशोधन 2002 द्वारा – परिवाद की परिभाषा में 'अनुचित व्यापार प्रथा' (RestrictiveTrade Relief) तथा 'अवरोधक व्यापार प्रथा' (Unfair Trade Practice) को शामिल किय गया है।

– 2002 के संशोधन अनुसार – उपभोक्ता की मृत्यु की दशा में उसके विधिक उत्तराधिकारी या प्रतिनिधि परिवादी होंगे।

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) पं. बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.) भारत

उपभोक्ता विवाद (Consumer Dispute)– वह व्यक्ति जिसके विरूद्ध परिवाद किया जाता है, परिवाद में किये गये अभिकथनों का प्रतिवाद करता है तो यह विवाद उपभोक्ता विवाद कहलाता है।

शोध व्याख्या :

कैसे करें उपभोक्ता फोरम में शिकायत – उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत किसी उपभोक्ता द्वारा सामान या सेवा खरीदने के लिये राशि भुगतान की है और वह सामान या सेवा गुणवत्ता या मात्रा में कम निकलता है और विक्रेता ऐसी चीज को बदलता नहीं है या विक्रेता MRP से अधिक मूल्य वसूलता है और यदि उपभोक्ता चुप रह जाता है, तो यह उसका शोषण है। इस शोध-पत्र में उपभोक्ता अपने अधिकार प्राप्ति के लिये शिकायत करके सामान की कीमत तो वसूल कर ही सकते हैं साथ ही हर्जाना भी ले सकते हैं। इसके लिये कुछ महत्वपूर्ण बातों का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है।

कौन-कौन सी सेवायें वाद के काबिल हैं अथवा दाखिल किए जा सकने योग्य वाद :

1. सेवा में कमी
2. माल में खराबी या कमी (गुणवत्ता, मात्रा, शक्ति, शुद्धता, मानक संबंधी)
3. अनुचित व्यापारिक प्रथा के कारण हानि
4. अवरोधक व्यापारिक प्रथा के कारण हानि।

वाद जो उपभोक्ता फोरम में दाखिल नहीं हो सकेंगे :

1. नि:शुल्क सेवा (Free of charge service) (शिक्षा)
2. व्यक्तिगत सेवा की संविदा (Contract of Personal Service)
3. व्यवहार न्यायालय (Civil Court) के क्षेत्र के मामले तथा अचल सम्पत्ति का सौदा
4. केन्द्र सरकार द्वारा अधिसूचित मामले यथा सरकारी अस्पताल में नि:शुल्क चिकित्सा

विभिन्न उपभोक्ता अदालतों की अधिकारिता :-

जिला फोरम – (रू. 20 लाख तक के दावे) (कार्यालय-प्रत्येक जिला मुख्यालय पर)

राज्य आयोग – (रू. 20 लाख से अधिक किन्तु रू. 1 करोड़ तक के दावे तथा जिला उपभोक्ता फोरम के आदेश के विरूद्ध की गई अपील की सुनवाई का अधिकार) (कार्यालय-प्रत्येक राज्य की राजधानी मुख्यालय पर)

म.प्र.राज्य उपभोक्ता विवाद प्रतितोशण आयोग का कार्यालय 76,अरेरा हिल्स, भोपाल-462011 पर स्थित है।

राष्ट्रीय आयोग – रू.1करोड़ से अधिक के दावे तथा राज्य आयोग की अपील के विरूद्ध सुनवाई का अधिकार (कार्यालय-उपभोक्ता न्याय भवन एफ ब्लॉक जी.पी.ओ. कॉम्प्लेक्स आई.एन.ए. नई दिल्ली-110023)

वाद प्रस्तुत करने की अवधि – धारा-24 (क) के अनुसार जिला फोरम में परिवाद तभी ग्रहण किया जा सकेगा जबकि वह वाद कारण उत्पन्न होने से दो वर्ष के अंदर प्रस्तुत किया गया हो, यदि पर्याप्त कारण दर्शित किया जाता है तो उपरोक्त समयावधि पश्चात भी परिवाद सुनवाई में लिया जा सकता है।

शुल्क का विवरण :

जिला उपभोक्ता विवाद प्रतितोषण फोरम हेतु :

रूपये एक लाख के दावे तक -

बी.पी.एल. हेतु	–	निरंक
अन्य के लिये	–	रू. 100/-

रूपये एक लाख से अधिक एवं रूपये पाँच लाख तक के दावे हेतु – रू. 200/-
रूपये पाँच लाख से अधिक एवं रूपये दस लाख तक के दावे हेतु – रू. 400/-
रूपये दस लाख से अधिक एवं रूपये बीस लाख तक के दावे हेतु – रू. 500/-

राज्य उपभोक्ता विवाद प्रतितोषण आयोग हेतु :

रूपये बीस लाख से अधिक एवं रूपये पचास लाख तक के दावे हेतु – रू. 2000/-

रूपये पचास लाख से अधिक एवं रूपये एक करोड़ तक के दावे हेतु – रू. 4000/-

राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद प्रतितोषण आयोग हेतु :-

रूपये एक करोड़ से अधिाक के दावों हेतु रू. 5000/-

शुल्क जमा करने की विधि – 'जिला उपभोक्ता विवाद प्रतितोषण फोरम' के नाम से पोस्टल ऑर्डर, बैंक ड्राफ्ट, बैंकर्स चेक या पे-ऑर्डर द्वारा जमा किया जावेगा। राज्य आयोग के लिये संबंधित राज्य उपभोक्ता विवाद प्रतितोषण आयोग यथा 'मध्यप्रदेश राज्य उपभोक्ता विवाद प्रतितोषण आयोग' के नाम से तथा राष्ट्रीय आयोग के लिये 'राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद प्रतितोशण आयोग' के नाम से शुल्क जमा होगा।

आवेदन में दी जाने वाली जानकारियाँ – शिकायतकर्ता को आवेदन में खरीदी गई वस्तु या सेवा के बिल के साथ ही निम्नलिखित जानकारियाँ तीन प्रतियों में देना चाहिये। मौखिक शिकायत का कोई आधार नहीं रहता है। यदि कोई व्यापारी बिल नहीं देता है, उसके स्थान पर कच्ची रसीद या ऐस्टीमेट बनाकर देता है और उसका माल खराब निकलता है और व्यापारी साफ तौर पर इस बात से इंकार कर देता है कि उसने उक्त माल बेचा ही नहीं तो ऐसी स्थिति में उपभोक्ता उस स्लिप/रसीद या एस्टीमेट को शपथ-पत्र के साथ फोरम या आयोग में प्रस्तुत कर सकते हैं। यदि कोई व्यक्ति साथ में सामान लेने गया हो, तो समर्थन में उसका भी शपथ-पत्र लगाने से उपभोक्ता को इस अधिनियम के अंतर्गत प्रतितोष प्राप्त हो सकेगा। :

1. शिकायतकर्ता का नाम, पता एवं मोबाईल नंबर।
2. विरोधी पक्षकार का नाम, पता।
3. क्रय की गई वस्तु अथवा सेवा का नाम।
4. परिवाद का कारण।
5. परिवाद उत्पन्न होने का दिनांक एवं स्थान।
6. परिवाद का विस्तृत विवरण।
7. फोरम अथवा आयोग से अपेक्षित सहायता का विवरण।
8. परिवाद के समर्थन में लगाये गये दस्तावेजों की सूची एवं उनकी छांयाप्रतियाँ।
9. क्षतिपूर्ति का आधार।

शिकायत निराकरण की प्रक्रिया :

1. वाद स्वीकार्य करने की तिथि से 21 दिन के भीतर जिला फोरम द्वारा विरोधी पक्षकार को इस आशय से सूचना-पत्र जारी करेगा कि वह सूचना प्राप्ति के 30 दिन के अन्दर अपना लिखित अभिकथन फोरम को भेजें।
2. प्रयोगशाला की स्थिति में अवधि 45 दिन रहेगी। जाँच संबंधी व्यय परिवादी वहन करेगा।
3. रिपोर्ट प्राप्त होने पर जिला फोरम उसकी प्रति विरोधी पक्षकार को देगा।

4. विरोधी पक्षकार परिवाद के तथ्यों को अस्वीकार करता है या निश्चित समयावधि में जवाब नहीं देता है, तो फोरम साक्ष्य के आधार पर निर्णय देगा।
5. परिवादी की अनुपस्थिति पर वाद खारिज करने की अधिकारिता फोरम के पास रहेगी।

अपील की प्रक्रिया :-

राज्य आयोग को अपील – जिला फोरम का आदेश पारित होने के दिनांक से 30 दिन की अवधि में राज्य आयोग में अपील दाखिल की जा सकती है। विलम्ब से भी अपील स्वीकार की जा सकती है।

अपील हेतु राशि का भुगतान – जिला फोरम के आदेशानुसार अपेक्षित रकम का 50 प्रतिशत या 25 हजार रूपये जो भी दोनों में से कम हो अपीलार्थी द्वारा राज्य आयोग के पास जमा करने पर ही अपील स्वीकार की जाती है।

राष्ट्रीय आयोग को अपील – राष्ट्रीय आयोग के समक्ष राज्य आयोग के निर्णय से 30 दिन में अपील की जा सकती है। अपील विलम्ब से स्वीकार्य होगी।

अपील शुल्क – राज्य आयोग द्वारा निर्धारित राशि का 50 प्रतिशत या 35 हजार रूपये जो भी कम हो, अपीलार्थी द्वारा जमा करने पर ही अपील स्वीकार्य होगी।

उच्चतम न्यायालय को अपील – धारा-23 के अनुसार राष्ट्रीय आयोग के आदेश के विरूद्ध 30 दिवस में उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील प्रस्तुत की जा सकती है। उच्चतम न्यायालय इस अवधि में छूट भी दे सकता है।

अपील शुल्क – राष्ट्रीय आयोग के आदेश में यदि कोई राशि अदा करने का निर्देश हो, तो उस राशि का 50 प्रतिशत या 50 हजार रूपये जो भी कम हो, अपीलार्थी द्वारा जमा करने पर ही अपील स्वीकार्य होगी।

अन्य प्रावधान :

1. तुच्छ या तंग करने वाला परिवाद – धारा-26 के अनुसार यदि किसी उपभोक्ता द्वारा किसी व्यापारी को परेशान करने की नियत से व्यापारी दोष नहीं होते हुए भी शिकायत की जाती है तो ऐसे उपभोक्ता की शिकायत हर्जाने के साथ खारिज कर दी जायेगी और ऐसे उपभोक्ता पर रू.10,000तक का जुर्माना किया जा सकता है।

2. दण्ड या सजा – धारा-27 के अनुसार आदेश का पालन नहीं करने वाले पक्षकार को 1 माह से 3 वर्ष का कारावास अथवा रू.2,000से रू.10,000तक के जुर्माने से दण्डित किया जा सकेगा। न्यूनतम कारावास एक माह का एवं न्यूनतम जुर्माना रू.2,000होगा।

आदेशों का पालन करवाना – यदि पीड़ित पक्षकार उच्च स्तर पर अपील नहीं करता है तो दिया गया निर्णय अंतिम माना जावेगा। अंतिम आदेश का पालन व्यवहार न्यायालयों या उच्च न्यायालयों की तरह ही मान्य होगा।

निष्कर्ष – वर्तमान में भारतीय परिवेश में उपभोक्ता शिक्षा एवं जागरूकता के अभाव में शोषण के शिकार हो रहे हैं। अधिकांश उपभोक्ता जो कि शोषण की छोटी श्रेणी में आते हैं अर्थात् जिनका परिवाद रू.100से कम मूल्य का होता है वे उपरोक्त अधिनियम के अंतर्गत अपना समय बर्बाद यह सोचकर नहीं करना चाहते, कि रू.100तो उन्हें वाद-शुल्क ही जमा करना होगा। साथ ही महिलाएं भी अपनी मानसिकता सामाजिक कारणों से नहीं बदल पा रही हैं। हमारे देश में उपभोक्ता जागरूकता संबंधी कार्य भी बड़े पैमाने पर नहीं होते हैं। उपभोक्ता न्यायालय भी वर्तमान में माह में कुछ ही दिन प्रत्येक जिले में काम करते हैं। यहाँ तक कि एक ही फोरम अध्यक्ष को तीन-चार जिलों का कार्य देखना पड़ता है।

सुझाव :

1. शुल्क को सूचना का अधिकार अधिनियम की तरह रू.100से कम करके रू.10तक लाया जाना चाहिये।
2. उपभोक्ता जहाँ निवास करता है, वहाँ उसे परिवाद दाखिल करने का अधिकार होना चाहिये।
3. परिवादी का परिवाद इस आधार पर खारिज नहीं कर दिया जाना चाहिये कि वह नियत दिनांक को पेशी पर उपस्थित नहीं हुआ। उसे एक अवसर और दिया जाना चाहिएं।
4. परिवादी के रहन-सहन के स्तर और शिक्षा को ध्यान में रखकर ही परिवाद जारी रखना चाहिएं।
5. प्रत्येक जिले में उपभोक्ता सूचना केन्द्र की स्थापना की जाना चाहिएं।
6. स्कुलों तथा कॉलेजों में उपभोक्ता संरक्षण को पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना चाहिएं।
7. प्रत्येक स्तर पर उपभोक्ता कल्याण निधि की स्थापना की जाएं एवं उसके माध्यम से उपभोक्ता शिक्षा एवं शोध हेतु केन्द्र की स्थापना की जाना चाहिएं।
8. शिकायत निवारण हेतु 90 दिन के नियम की अनदेखी करने पर सख्त आदेश जारी होने चाहिएं।

जागरूकता हेतु विभिन्न इलेक्ट्रॉनिक माध्यम :-

1. नेशनल कन्ज़्युमर हेल्पलाईन नंबर (टोल फ्री) 1800-11-4000
2. म.प्र. कज़्युमर हेल्पलाईन भोपाल नंबर 0755-2259778
3. म.प्र. राज्य उपभोक्ता आयोग की वेबसाईट www.mpscdrc.nic.in
4. केस या निर्णय की स्थिति ऑनलाईन जानने के लिये www.confonet
5. भ्रामक विज्ञापनों पर अंकुश लगाने हेतु शिकायत के लिएं www.gama.gov.in

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. म.प्र. राज्य उपभोक्ता विवाद प्रतितोषण आयोग भोपाल की स्मारिका 2015।
2. रोजगार समाचार-सूचना एवं प्रकाशन मंत्रालय नई दिल्ली 19 से 25 दिसम्बर 2015।
3. नई दुनिया, दैनिक समाचार-पत्र इन्दौर प्रथम संस्करण दिनांक-12 अगस्त 2013 एवं 26 मई 2016।
4. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम लेखक सिंह एस.के., सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी इलाहाबाद।
5. व्यावसायिक सक्रियम लेखक डॉ. शुक्ल एस.एम. एवं प्रो. अग्रवाल वी.पी., साहित्य भवन पब्लि.आगरा
6. निगमीय विधि व्यवस्था, डॉ. नौलखा आर.एल., रमेश बुक डिपो जयपुर।

****

ग्रामीण गतिशीलता में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की भूमिका

डॉ. आशीष कुमार जैन * डॉ. दिनेश कुमार परेता **

शोध सारांश – ग्रामीण एवं अर्द्धशासकीय क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधायें उपलब्ध कराने हेतु स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने कई महत्ववूर्ण योजनात्मक कदम उठायें हैं। स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने ग्रामीण गतिशीलता में कृषि विकास के लिये अपनी अलग शाखाओं का निर्माण किया है, जिससे कृषक सुविधापूर्वक सरलता से कृषि विकास हेतु साख (ऋण) ले सकें। कृषि के विकास से ग्रामीण गतिशीलता में परिवर्तन आएगा और स्टेट बैंक ऑफ इंडिया सभी जरूरतमंद कृषकों को हर संभव सहायता देने के लिये तत्पर होता है। ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक जमा गतिशीलता के लिये यह आवश्यक है कि ग्रामीण कृषक अपनी बचतों को बैंक में जमा करवायें जिससे आर्थिक विकास के साथ-साथ ग्रामीण विकास भी संभव है। इस कार्य में बैंक आशातीत सफलता भी प्राप्त कर रहे हैं।

प्रस्तावना – स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने अर्द्धसरकारी एवं ग्रामीण क्षेत्रों के विकास हेतु अपनी नीतियों में परिवर्तन किया है, जिससे ग्रामीण विकास जमाओं में गतिशीलता में वृद्धि करने के लिये अपनी शाखाओं का निर्माण ग्रामीण एवं अर्द्धशहरी क्षेत्रों में किया है और ग्रामीण विकास के लिये विभिन्न सुविधायें उपलब्ध कराने के उद्देष्य से शाखाओं का निर्माण किया है क्योंकि हमारे भारत देश में गांव रीढ़ की हड्डी के समान है। स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ग्रामीण आर्थिक विकास हेतु कृषि यंत्र, बीज, खाद, ट्रेक्टर, इंजन, पशु खरीदने के लिये वित्तीय सहायता कर इनकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये अधिक से अधिक ऋण राशि प्रदाय करने के लिये प्रयत्नशील है। यह बैंक ग्रामीण आर्थिक विकास के लिये महत्वपूर्ण पहल कर रही है और इसके लिये यह प्रयत्नशील भी है।

देश का भविष्य मुख्य रूप से कृषि पर निर्भर है। यदि यह कहा जाये कि विकास की गति को बढ़ाने वाला एकमात्र क्षेत्र कृषि है, तो यह अतिश्योक्ति नहीं होगी। भारत में 70 प्रतिशत से भी अधिक जनता का मुख्य व्यवसाय कृषि तथा उससे चलने वाले उद्योग धंधे हैं। उद्योग धंधों की बुनियाद डालने वाले कारकों में हम कृषि को अग्रणी मानते हैं, क्योंकि अधिकतर उद्योग कृषि द्वारा उत्पादित फसलों पर निर्भर करते हैं। इसी महत्ता के कारण शायद ऐसी कोई पंचवर्षीय योजना नहीं है, जिसमें आर्थिक विकास की आधारभूत कही जाने वाली कृषि पर कुछ विचार न किया गया हो परंतु इसके बावजूद भी कृषि क्षेत्र पर अत्याधिक दबाव बढ़ता जा रहा है और अनेक आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा हैं।

कृषि की महत्ता को स्वीकार किया वरन् वर्तमान में कृषि व्यवस्था में अवरोधों के कारणों की ओर दृष्टि प्राय: सब ने डाली है। यह समस्त आर्थिक विकास के लिये संगत व सार्थक हैं। यदि कृषि के क्षेत्र में उन्नति होती है तो कृषकों की आर्थिक स्थिति में परिवर्तन होता हैं। इन सभी का श्रेय स्टेट बैंक ऑफ इंडिया को जाता है और ग्रामीण गतिशीलता में परिवर्तन होता है।

उद्देश्य :

1. स्टेट बैंक ऑफ इंडिया का मुख्य उद्देश्य वाणिज्यिक बैंकिंग व्यवस्था में एक महत्वपूर्ण अंग को सरकारी नियंत्रण में लाना है ताकि ग्रामीण क्षेत्र की आर्थिक नीतियों के संचालन में सहायता मिल सके।
2. स्टेट बैंक ऑफ इंडिया का महत्वपूर्ण उद्देष्य में देश में विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधाओं का विकास करना है ताकि ग्रामीण जनता में बचत करने में प्रोत्साहन मिले।
3. कृषि एवं ग्रामीण उद्योगों के विकास के लिये सरलतापूर्वक कम से कमषर्तों पर सहकारी संस्थाओं को ऋण देना, लाईसेंस प्राप्त गोदामों एवं बिक्री समितियों की स्थापना करना।
4. ग्रामीण स्तर पर छोटे उद्योगों के लिये वित्त प्रबंध तथा उनकी मौद्रिक नीति का पालन करना तथा उसे अधिक सक्रिय बनाने में सहायक होना।
5. किसानों द्वारा बहुफसलीय कार्यक्रम अपनाने तथा फसलों का उत्पादन बढ़ाने को प्रोत्साहन देने की दृष्टि से स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने सिंचाई योजनायें जैसे- नलकूप, कूप मरम्मत, नहर, विद्युत पंप, स्प्रिलिंकर पाईप आदि के लिये वित्तीय सहायता प्रदान करना है।
6. स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के द्वारा कृषि व्यवसायों के अलावा अनेक सेवा व्यवसायों को वित्तीय सहायता प्रदान करती है। जैसे- किराना व्यवसाय, मनहारी की दुकान, कपड़ा दुकान, टेलरिंग आदि।
7. ग्रामीण विकास के लिये स्टेट बैंक ऑफ इंडिया अपनी स्थापना से ही लघु उद्योगों को जैसे- अगरबत्ती कारखाना, चमड़े का सामान, मिट्टी के बर्तन बनाना, बीड़ी उद्योग, मधुमक्खी पालन के लिये वित्तीय सहायता प्रदान करना है।

परिकल्पनायें :

1. यदि ग्रामीण स्तर पर कृषकों का आर्थिक विकास में परिवर्तन होता है, तो वह ग्रामीण गतिशीलता में भी परिवर्तन होता है। यह परिवर्तन मुख्य रूप से बचतों के आधार पर संभव है।
2. यदि ग्रामीण क्षेत्रों में अन्य लघु उद्योगों की स्थापना की जाये तो ग्रामीण गतिशीलता में परिवर्तन हो सकता हैं।
3. साख उपलब्ध होने से कृषि के उत्पादन में वृद्धि होगी, जिससे कृषक ऋणग्रस्तता से मुक्त हो जायेंगे और उत्पादन में वृद्धि के साथ देश के विकास में भी परिवर्तन होगा।

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य)शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान (वाणिज्य)शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

4. यदि कृषकों को बैंक पर्याप्त मात्रा में साख (ऋण) उपलब्ध करा दी जाये तो कृषि क्षेत्र का तेजी से विकास हो सकता है, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में विकास तेजी से हो सकता हैं।
5. स्टेट बैंक ऑफ इंडिया यदि कृषकों को नवीन साख योजनाओं का सही तरीके से संचालन करता है, तो कृषक वर्ग में आर्थिक परिवर्तन आ जायेगा।

ग्रामीण गतिशीलता में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की भूमिका – बैंकिंग एक अति प्राचीन व्यवसायिक क्रिया है। यद्यपि प्राचीन काल में आज जैसे आधुनिक बैंक नहीं थे, तथापि अनेक देशों मे बैंकिंग कार्य वहाँ के महाजन, सुनार और सर्राफ द्वारा किया जाता था। आधुनिक बैंक का शुभारंभ सत्रहवीं शताब्दी के प्रारंभ में हुआ। धीरे-धीरे बैंकों का आर्थिक महत्व बढ़ता गया और संयुक्त पूंजी वाले बैंक स्थापित किएं जाने लगे, इससे बैंकों के विकास की गति और तेज हो गयी।

ग्रामीण एवं अर्द्धशासकीय क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधायें उपलब्ध कराने हेतु स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने कई महत्वपूर्ण योजनात्मक कदम उठायें हैं। स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने ग्रामीण गतिशीलता में कृषि विकास के लिये अपनी अलग शाखाओं का निर्माण किया है, जिससे कृषक सुविधापूर्वक सरलता से कृषि विकास हेतु साख (ऋण) ले सकें। कृषि के विकास से ग्रामीण गतिशीलता में परिवर्तन आएगा और स्टेट बैंक ऑफ इंडिया सभी जरूरतमंद कृषकों को हर संभव सहायता देने के लिये तत्पर होता है। ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक जमा गतिशीलता के लिये यह आवश्यक है कि ग्रामीण कृषक अपनी बचतों को बैंक में जमा करवायें। जिससे आर्थिक विकास के साथ-साथ ग्रामीण विकास भी संभव है। इस कार्य में बैंक आशातीत सफलता भी प्राप्त कर रहे हैं।

ग्रामीण क्षेत्र के कृषि कार्यों में वित्तीय सुविधाएं प्रदान करने के उद्देश्य से कृषि बैंकों की स्थापना की गई जो मुख्य रूप से ग्रामीण कृषकों को तीन प्रकार से ऋण प्रदान करती हैं-

1. **दीर्घावधि ऋण –** यह ऋण मुख्य रूप से भूमि खरीदने या स्थायी सुधार करने के लिये कृषकों को इसकी आवश्यकता होती है। ऐसे ऋणों की आवश्यकता 5 वर्ष से 25 वर्ष तक होती है।
2. **मध्यावधि–** ऐसे ऋण की अवधि 3 वर्ष से अधिक और 5 वर्ष की होती है। यह कृषकों को औजार खरीदने, बैल खरीदने अन्य प्रकार के यंत्र खरीदने के लिएं इस प्रकार के ऋण की आवश्यकता होती है।
3. **अल्पावधि ऋण–** कृषकों को बीज खरीदने, खाद खरीदने या लगान देने के लिये 6 माह से 1 वर्ष के ऋण की आवश्यकता होती है, ऐसे ऋण अल्पावधि ऋण कहलाते हैं।

ऋणों का वितरण– स्टेट बैंक ऑफ इंडिया द्वारा अनुमोदित कार्यक्रम एवं कार्य की प्रगति के अनुसार ऋण का वितरण किया जाता है। जिस कार्य के लिये ऋण स्वीकृत किया गया है वह संपूर्ण कार्य के 4-5 माह के अंदर वस्तु किसी भी परिस्थितियों में वर्षा ऋतु के पूर्व सम्पादन करना होता है। कुआं के लिये अंतिम किस्त कुआं योजना के पूर्ण होने पर दी जायेगी। उपकरण (डक्यूमेंट) ऋण, खेत में डाली जाने वाली वस्तुओं, कुआं निर्माण की सामग्री खरीदकर चाहेगे। उनकी पूर्ति करने वाले (सप्लायर) को खातेदार की जोखिम एवं जिम्मेदारी पर भुगतान बैंक द्वारा किया जाता है। खातेदार को बैंक द्वारा भुगतान किए जाने के पहले बैंक को यह सुनिश्चित और संतुष्ट करना होगा कि खातेदार को प्राप्त उपकरण व सामग्री अच्छी हालत में होने के संबंध में खातेदार को एक प्रमाण देना है।

स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया की ग्रामीण स्तर पर संचालित जमा योजनाएं– स्टेट बैंक ऑफ इंडिया निम्न रूपों में ग्रामीण स्तर पर जमायें स्वीकार करती हैं और औद्योगिक वित्त में विशेष योगदान देती हैं। यह बैंक एक ऐसा बैंक है जिसकी अधिकांश शाखाऐं ग्रामीण स्तर पर विशेष योगदान देते हुए प्रगति के मार्ग पर अग्रसर हैं।

स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने बचत को प्रोत्साहन देने के लिये ऐसी योजनाएं प्रारंभ की हैं, जिससे कृषक बचत करने के लिये प्रेरित हो सकें। नवीन जमा योजना ग्रामीण स्तर पर संचालित हो रही हैं वे निम्नानुसार है:

1. **नगद प्रमाण पत्र योजना–** स्टेट बैंक ऑफ इंडिया नगद प्रमाण पत्र योजना प्रारंभ की है, यह योजना 27.05.1985 से लागू की गई थी। यह बैंक नगद प्रमाण पत्र विभिन्न समय अवधियों के लिये जारी करता है एवं उन पर ब्याज की दर अपेक्षाकृत अधिक रहती है। जमाकर्ता को जमा राशि की आवश्यकता समय अवधि से पूर्व पड़ती है, तो उसे उस समय तक के ब्याज सहित अंकित राशि में कटौती कर वापिस कर दी जाती है। यह योजना की अवधि 6 माह से लेकर 10 वर्ष तक हो सकती है।
2. **पुनर्निवेश योजना–** यह योजना एक प्रकार से सावधि जमा योजना के अपूर्वमिल की लाभादायी योजना है। इस योजना के अनुसार प्रत्येक 3 माह में ब्याज चुकाया जाता है। इस योजना में राशि या जमा की गई राशि पर भविष्य में होने वाले बड़े व्ययों के लिये निश्चितंता का अवसर प्रदान करती हैं।
3. **सावधि जमा व स्थायी जमा योजना–** इस सावधि जमा में जमा राशि को जमाकर्ता एक निश्चित अवधि के पश्चात् ही निकाल सकता है। यह अवधि 1 माह से लेकर 10 वर्ष या उससे अधिक हो सकती है। जमाकर्ता राशि जमा करते समय निश्चित करता है कि कितने समय के लिये राशि जमा करना है और जमा राशियों का विशेष लाभ बैंकों को यह होता है कि एक निश्चित समय अवधि तक यह राशि नहीं मांगी जायेगी। इसका उपयोग बैंक कर सकती है और अवधि समाप्त होने के पश्चात् ब्याज सहित जमाकर्ता को राशि वापिस कर दी जाती है।
4. **बचत बैंक जमा योजना–** बचत बैंक खाता निम्न एवं मध्यम वर्ग के व्यक्तियों के लिये उत्तम है, जो अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये वर्तमान आय का कुछ भाग बचाकर रखना चाहते हैं एवं जमा राशियों पर उचित दर से ब्यात भी पाते हैं। वेतनभोगी तथा अल्प आय वाले व्यक्तियों के लिये बचत बैंक योजना बहुत लाभदायी है। इसमें अपनी छोटी-छोटी बचतों को सुविधानुसार जमा कर सकते हैं एवं आवश्यकता पड़ने पर सरलता से प्राप्त कर सकते हैं।
5. **आवर्ती जमा योजना–** इस योजना का मुख्य उद्देश्य नियमित रूप से बचत करना एवं बचत करने के लिये प्रोत्साहित करना है, इस पर ब्याज दर अपेक्षाकृत अधिक होती है। आवर्ती जमा खाता 1 वर्ष से लेकर 5 वर्ष तक खोला जा सकता है। खाता खोलने के लिये राशि 5 रूपये एवं उसके गुणक में हो सकती हैं, जिसे जमाकर्ता को प्रतिमाह जमा करना आवश्यक है। आवर्ती जमा खातों पर दिए जाने वाले ब्याज की दर स्थायी जमा खाते के समान ही होती है।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि यदि ग्रामीण गतिशीलता में परिवर्तन लाना है, तो स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की विभिन्न संचालित योजनाओं का लाभ लेना अनिवार्य होगा। जिससे ग्रामीण विकास के स्तर में परिवर्तन होगा।

समस्यायें – ग्रामीण क्षेत्र की उन्नति तभी संभव है जब कृषि की उन्नति संभव हो। जब तक तकनीकी साधनों की पूर्ति के साथ-साथ वित्तीय साधनो की पूर्ति न की जाएं। तब तक कृषि क्षेत्र में उन्नति संभव नहीं है। ग्रामीण कृषक वर्ग

की आर्थिक स्थिति काफी कमजोर है। इसमें संस्थागत एवं तकनीकी परिवर्तन लाना संभव नहीं हो पा रहा है। इस महत्वपूर्ण कार्य का दायित्व समस्त राष्ट्रीयकृत बैंक और अन्य वित्तीय संस्थाओं को सौंपा गया था, लेकिन विभिन्न समस्याओं का सामना ग्रामीण स्तर पर करना पड़ा जिसका विवरण निम्नप्रकार है–

1. ग्रामीण क्षेत्र में साक्षरता का अभाव होने के कारण बैंकिंग व्यवस्था का समुचित ज्ञान नहीं है। फलस्वरूप उन्हें वित्त सुलभ तरीके से प्राप्त नहीं होता है, क्योंकि वित्त प्राप्ति हेतु आवेदन पत्रों में चाही गई जानकारी कृषकों द्वारा कुशलतापूर्वक नहीं दी जाती है और जानकारी के अभाव में आबंटन पत्र रद्द हो जाते हैं।
2. ग्रामीण कृषकों में जागरूकता का अभाव है। जागरूकता के अभाव में बैंकिंग प्रणाली से होने वाले लाभ से वंचित रहना पड़ता है।
3. बैंकिंग व्यवस्था का ज्ञान न होने के कारण ग्रामीण कृषक समय पर ऋण प्राप्त नहीं कर पाते हैं और बैंक नीतियों में विश्वास नहीं रख पाते हैं।
4. जो कृषक गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन कर रहे हैं। जिनके पास किसी भी प्रकार की चल–अचल सम्पत्ति नहीं है, उन्हें स्वरोजगार योजना के तहत प्राप्त होने वाले ऋण एवं अनुदान की जानकारी नहीं है। जिससे वे इन योजनाओं का लाभ नहीं ले पा रहे हैं।
5. बैंक ग्रामीण स्तर पर विभिन्न शाखायें तो खोल रहा है, लेकिन पर्याप्त मात्रा में स्टाफ की कमी होना है।
6. ग्रामीण कृषक अपने वित्त/साख का लेखा–जोखा समुचित ढंग से नहीं रखते हैं जिससे इनकी मांग को पूरा करने में बैंक को कठिनाई आती है और बैंक उस साख के बारे में सही जानकारी नहीं दे पाती है। यह एक प्रमुख समस्या है।
7. एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत लघु एवं सीमांत कृषकों को तथा ग्रामीण कारीगरों को वित्त उपलब्ध कराया जाता है परंतु इस वित्त का शत् प्रतिशत नहीं किया जाता है।
8. अनेक ग्रामीण क्षेत्रों में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की शाखाएँ न होने से उन्हें आसपास के शहर तक कृषि साख लेने के लिए जाना पड़ता है जिससे आर्थिक हानि तथा आने–जाने के लिये परिवहन जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

समस्याओं के निराकरण हेतु समाधान :

1. यदि कृषक शिक्षित हो जाऐं, तो स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की नवीन कृषि साख योजनाओं की जानकारी ले सकते हैं और उनका भरपूर फायदा उठाकर लाभ ले सकते हैं, जिससे आर्थिक विकास संभव हो जाता है।
2. यदि ग्रामीण स्तर पर विभिन्न प्रकार के विज्ञापनों के माध्यमों से नवीन योजनाओं की जानकारी दी जाऐं तो ग्रामीण कृषकों में जागरूकता का विकास होगा।
3. बैंकिंग संस्थाओं को भी कृषि साख उपलब्ध कराने के लिए लंबी और जटिल कागजी कार्यवाहियों से मुक्त रखते हुए सुलभ एवं सस्ती ब्याज दरों पर साख उपलब्ध कराना चाहिए।
4. यदि स्टेट बैंक ऑफ इंडिया अपनी योजनाओं के माध्यम से कृषि वित्त उपलब्ध कराता है । तो कृषि की उन्नति के साथ–साथ कृषक की आर्थिक उन्नति भी संभव है, जिससे गरीबी रेखा से ऊपर उठकर अपना जीवनयापन कर सकता है।
5. यदि स्टेट बैंक ऑफ इंडिया पर्याप्त मात्रा में ग्रामीण क्षेत्र में कार्यालयीन स्टाफ उपलब्ध कराता है, तो कम से कम समय में अधिक से अधिक कार्य किया जा सकता है, जिससे ग्रामीण क्षेत्र में कम समय में कृषि वित्त उपलब्ध कराया जा सकता है।
6. यदि कृषक अपने वित्त का लेखा समुचित ढंग से करता है, तो उसका भुगतान सरल तरीके से किया जा सकता है और बैंक द्वारा चाही गई जानकारी तुरंत देकर उसकी कार्यवाही पूर्ण कर सकता है।
7. बैंक अधिकारी ऋणी व्यक्ति से लगातार संपर्क बनाये रखे। उसे यह विश्वास दिलाएं कि उसके द्वारा दी गई जानकारी का उपयोग बैंक स्वयं करता है। इस जानकारी के द्वारा बैंक को साख के निर्धारण एवं संचालन में सहायता मिलती है।
8. कृषकों की वित्त की इस गंभीर समस्या का समाधान करने के लिए स्टेट बैंक ऑफ इंडिया को प्रत्येक ग्रामीण स्तर पर अपनी शाखाएँ खोलनी चाहिए, ताकि कृषकों को साख संबंधी योजनाओं व सुविधाओं का लाभ प्राप्त हो सके।

निष्कर्ष – हम यह कह सकते है कि स्टेट बैंक ऑफ इंडिया ने ग्रामीण गतिशीलता में कृषि विकास के लिये अपनी अलग शाखाओं का निर्माण किया है, जिससे कृषक सुविधापूर्वक सरलता से कृषि विकास हेतु साख (ऋण) ले सकें। कृषि के विकास से ग्रामीण गतिशीलता में परिवर्तन आएगा और स्टेट बैंक ऑफ इंडिया सभी जरूरतमंद कृषकों को हर संभव सहायता देने के लिये तत्पर होता है। ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक जमा गतिशीलता के लिये यह आवश्यक है कि ग्रामीण कृषक अपनी बचतों को बैंक में जमा करवाएं जिससे आर्थिक विकास के साथ–साथ ग्रामीण विकास भी संभव है। इस कार्य में बैंक आशातीत सफलता भी प्राप्त कर रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. B. Ramachandra Rao: India Banking Deep & Deep Publications
2. Dr. A.B. Kalkunditkar: Banking Law & Practice M.N. Khembhavi, R. Natraj Himalaya Publishing House Bombay, Delhi 1990
3. M.L. Chhipa: Monetary And Banking Development of India Jaipur-1990
4. T.A. Vaswani: The Banker and the balance sheet Lalwani Publishing House Bombay- 2000
5. S.N. Gupta: Law and Banking The Commercial Law Publications Delhi-1985
6. Vasant Desai: Development Banking issue and option, Himalaya Publications House Nagpur 1988
7. डी.एस. मेहता एवं पी.ए. जैन: भारतीय बैंकिंग रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर।
8. आर.डी. सक्सेना एवं वाय एस भंडारी : भारतीय बैंकिंग विकास एवं समस्यायें, विकास पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली।
9. डॉ. हरीशचंद वर्मा : बैंकिंग विधि एवं व्यवहार, साहित्य भवन, आगरा।
10. हेमेन्द्र जैन : कृषि वित्त, रामप्रसाद एण्ड संस, भोपाल।
11. डॉ. एम.एल. सेठ : मुद्रा एवं बैंकिंग लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा।
12. एस.के वसु : बैंकिंग सिद्धांत एवं व्यवहार, द मैकमिलन कं. ऑफ इंडिया लिमिटेड, दिल्ली।
13. www.sbi.co.in
14. www.sbi.agricultureloans.in
15. www.statebankofindia.com

पन्ना जिले में खनिज आधारित उद्योगों की सम्भावनाओं का अध्ययन

डॉ. विनोद कुमार शुक्ला * प्रदीप कुमार रावत **

शोध सारांश – भारतीय उद्योग आज चौराहे पर खड़ा है तथा औद्योगिकीकरण की गति में तेजी लाना नितांत आवश्यक है, जिससे की राष्ट्र के आर्थिक विकास का संवर्द्धन संभव हो एवं जिले वासियों के जीवन में उन्नयन किया जा सके राष्ट्रीय उद्देश्यों एवं महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिये यह नितांत आवश्यक है कि पन्ना जिले में उपलब्ध खनिज एवं मानव संसाधन का अधिकतम एवं अनुकूलतम उपयोग किया जाये।

पन्ना जिले में खनिज उद्योगों के स्थापना का मूल उद्देश्य प्रकृति प्रदत्त अमूल्य खनिज सम्पदाओं का वैज्ञानिक एवं सुव्यवस्थित रूप से सुनियोजित ढंग से दोहन करना है एवं अधिक से अधिक लोगों को रोजगार प्रदान करना तथा जिले की अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाना है।

शब्द कुंजी – बेरोजगारी निर्भरता, गरीबी, अविकसित, गरीबी खनिज उद्योग– हीरा, चूना पत्थर फर्शी पत्थर।

प्रस्तावना – किसी देश की आर्थिक प्रगति में उद्योगों का महत्वपूर्ण स्थान होता है। संसार की प्रगति एवं आर्थिक सम्पन्नता पर यदि निगाह डाली जाये तो यह स्पष्ट रूप से प्रकट होता है कि देशों में औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप औद्योगिकीकरण तेजी से हुआ, वही देश प्रगति पथ पर संसार में अग्रणी रहे जिनमें इंग्लैण्ड, जर्मनी, जापान, संयुक्त राज्य अमेरिका सोवियत रूस आदि ऐसे ही विकसित अर्थव्यवस्था वाले देश है विश्व के सभी अल्पविकसित और विकासशील देशों में भारत का सभी क्षेत्रों में विशिष्ट स्थान है।

आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करने में भारत दूसरे देशों का मार्गप्रशस्त करने में समस्त क्षमताएं रखता है। परन्तु क्षमताओं का पूर्ण उपयोग न हो पाने के कारण उद्योग विकसित नहीं हो पाये। जिनके कारण बेरोजगारी भुखमरी जैसी स्थिति पर काबू नहीं पाया जा सका है।

उद्योगों की स्थापना एवं उनके विकास में खनिज पदार्थों की पूर्ण भूमिका रहती है। उद्योग व्यापार जहां एक ओर सरकारी राजस्व में योगदान करते है, वहीं दूसरी ओर देश की कृषि पर निर्भरता को कम करते है तथा प्राकृतिक संसाधनों का अच्छे प्रकार से दोहन संभव हो पाता है। जिस क्षेत्र में जितनी अधिक मात्रा में खनिज पाये, उन क्षेत्रों में उतनी ही गति से आर्थिक विकास होता है, उदाहरण के रूप में जमशेदपुर में लोहा स्टील कम्पनी उड़ीसा में राउरकेला इस्पात संयत्र छत्तीसगढ में भिलाई स्टील इस्पात संयत्र मध्यप्रदेश के रीवा–सतना जिले में स्थापित अनेक सीमेन्ट उद्योग इसके प्रमुख उदाहरण है। इसी संदर्भ में यदि हम मध्यप्रदेश राज्य में स्थित पन्ना जिले की ओर नजर डाले तो यह बात स्पष्ट हो जावेगी कि पन्ना जिला उद्योग की दृष्टि से महत्वपूर्ण जिला होगा जहां हीरा एवं अन्य बहुमूल्य खनिज चूना का पत्थर सीमेन्ट पत्थर इमारती पत्थर एवं गेरू के दुर्लभ भंडार है। इन खनिज पदार्थों के आधार पर पन्ना जिले में खनिज आधारित हीरा कटिंग तरासने एवं पालिसिंग सीमेन्ट, फर्शी पत्थर एवं गेरू उद्योगों की इकाईयॉ स्थापित की जा सकती है। यद्यपि पन्ना जिला मप्र.के पिछड़े जिलों की सूची में गिना जाता है। क्योंकि इस जिले में न कोई भी लघु एवं वृहत उद्योग स्थापित है।

पन्ना जिला को विश्वस्तरीय पहचान बनाने वाला यहां की धरा से निकलने वाला बेशकीमती खनिज हीरे पर आधारित गुजरात एवं महाराष्ट्र राज्यों में कई इकाईयां स्थापित की गई है। परन्तु इस जिले में इसी से संबंधित खनिज की महत्वपूर्ण औद्योगिक इकाइयों को स्थापित नहीं किया जा सका। यहां अन्य खनिजों से संबंधित वृहत उद्योगों की स्थापना की अपार संभावनायें है। इन खनिजों से जिले में हजारों बेरोजगार युवक युवतियों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रोजगार प्राप्त हो सकेगा। जिससे प्रति व्यक्ति आय एवं राष्ट्रीय आय में वृद्धि होगी और कृषि निर्भरता कम होगी पन्ना जिले में खनिज सम्पदा प्रचुर मात्रा में है। किन्तु खनिज से यहां के स्थानीय निवासियों के परिचय न होने के कारण वर्तमान में खनिज पृथ्वी के गर्भ में सोया हुआ है। दूसरी ओर जिले के सम्मुख दरिद्रता असमर्थता बेरोजगारी आदि समस्यायें मुख खोले खड़ी है, सरकार के सर्वे खनिज सम्पदा के क्षेत्रों से पता चला है।

लेकिन खनिज विदोहन की उत्खन्न नीति दोषपूर्ण होने के कारण विदोहन में काफी कठिनाइयों का सामना करना पड रहा है, प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से खनिज आधारित उद्योगों की समस्या एवं संभावनाओं में यह ज्ञात करने का प्रयास किया गया है कि पन्ना जिले में औद्योगिक इकाईयों की स्थापना से बेरोजगारों को रोजगार के क्षेत्र में असीमित अवसर प्राप्त हो सकेगें एवं पलायन को रोका जा सकेगा और इस जिले को विकसित जिले की सूची में सम्मिलित किया जा कर आर्थिक सम्पन्न बनाया जा सकेगा।

उद्देश्य :

1. पन्ना जिले में हीरा– कर्टिंग, तरासने, पॉलिसिंग उद्योग स्थापित कराना।
2. जिले के चूना पत्थर से सीमेन्ट एवं इस्पात उद्योगों को विकसित कराना।
3. फर्शी पत्थर उद्योग लगाना।
4. मारबल उद्योगों को प्रोत्साहित करना।
5. गेरू खनिज से पेन्ट, पॉलिस टूथ पेस्ट उद्योग लगाना।
6. बेरोजगारी गरीबी, दरिद्रता, हटाना।
7. पन्ना जिले के अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाना।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) विशेष कर्तव्यस्थ अधिकारी, मध्यप्रदेश शासन उच्चशिक्षा,विभाग भोपाल (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी,अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

8. जिले में कृषि निर्भरता को कम करना।
9. स्व – रोजगार के अवसर प्रदान करना।
10. खनिज आधारित उद्योगों को स्थापित कराना।

परिकल्पना – पन्ना भारत का हृदय स्थल कहा जाने वाला मध्यप्रदेश के बुन्देली अंचल का महत्वपूर्ण जिला है जो विश्व मानचित्र में खनिज हीरा एवं अन्य गौण खनिजों के उत्खनन के क्षेत्र में अपनी विशिष्ट पहचान बनाये हुऐ है।

दुनिया के तमाम देशों को हीरा देने वाला मध्यप्रदेश राज्य पन्ना जिले के कारण ही विश्वविख्यात है, परन्तु विकास की गति में उद्योग विहीन होने के कारण बहुत पीछे है।

पन्ना नगर से 15 किलोमीटर दूर मझगवां में स्थित एनएमडीसी. परियोजना मर्यादित हीरा खनिज परियोजना जो कि गिने चुने निगमों में से एक है। लाभ पर चल रहा है। निगम को यह खनन परियोजना प्रतिवर्ष जहां करोडों रूपये के हीरो का उत्खनन एवं विक्रय करके अपना लाभार्जन बढ़ा रही है। लेकिन विपन्नता इस जिले के लिये अभिशाप बनी हुयी है और यह सम्पूर्ण क्षेत्र औद्योगिक पिछड़ेपन का शिकार है।

खनिजों का विदोहन पूर्ण रूप से बडे व्यापारिक वर्ग और बाहर के बडे शहरों में स्फीत व्यवस्था के माध्यम से हो रहा है, जिस कारण मध्य प्रदेश का यह जिला विभिन्न आर्थिक समस्याओं जैसे कि – निर्धनता, बेकारी, बेरोजगारी, प्रतिव्यक्ति न्यून आय बचत का निम्नस्तर निवेश व पूंजी निर्माण की धीमी गति आदि से ग्रस्त है। उत्खनन क्षेत्रों का असर न तो पन्ना वासियों पर ज्यादा है न ही पन्ना में औद्योगिक विकास को भी बढावा मिल पा रहा है।

इस क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधन परिपूर्ण होते हुऐं भी मानव संसाधन काफी सस्ते है। तथा विकास की दर न्यूनतम है। वर्तमान परिस्थितियों के परिवर्तन से खनिज श्रमिकों को पूर्व की अपेक्षा वर्तमान में अधिक परिश्रमिक प्राप्त हो रहा है।

शोधार्थी द्वारा श्रमिकों से चर्चा उपरान्त यह निष्कर्ष निकाला गया कि मैदानी सर्वेक्षण के दौरान श्रमिक अभी बहुत अधिकारों एवं सुविधाओं से वंचित है। पन्ना जिले में हीरा खनिज उत्खनन के लिये राष्ट्रीय विकास निगम की स्थापना की गई थी। तत्समय यहां के स्थानीय निवासियों के मन में काफी आशाएं और इस क्षेत्र की जनता काफी हर्षित एवं उत्साहित थी क्योंकि ऐसी आशा की जाती थी इस निगम के कारण रोजगार के अधिक अवसर उपलब्ध होंगे उनकी आर्थिक स्थिति मजबूत होगी पर ऐसा न के बराबर हुआ। अन्त में परिकल्पना के तौर पर शोधकर्ता यह कह सकता है कि हीरा उत्खनन में पन्ना जिला काफी विकसित रहा परन्तु अन्य खनिजों के सफल सिमट कर रह गये।

स्थानीय विकास की दर शून्य रही अर्थात पन्ना जिले के ग्रामीण आबादी की पलायन को दृष्टिगत रखते हुये छोटे उद्योगो को स्थापना एवं उस पर पर्याप्त ध्यान दिया जाएं तो वह दिन दूर नहीं होगा जब पन्ना जिला औद्योगिक सूची में पहले स्थान पर न आ जाएं आवश्यकता है हमें ऐसे सुअवसर प्राप्त करने की।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र पूर्णत: मौलिक है तथा जानकारी एवं आकड़ों को एकत्र करने में प्राथमिक एवं द्वितीयक संमको का सहारा लिया गया है। ये संमक सरकारी प्रकाशनों एवं व्यक्तिगत साक्षात्कार से संकलित किये गएं इसके लिये पूर्व से ही प्रश्नावालियां एवं अनुसूचियां तैयार करके आवश्यक आकड़े एकत्र किये गएं। इस प्रकार प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण करके एवं अन्य उपलब्ध तथ्यों एवं विचारों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया जिससे सही एवं ठोस तथ्य प्राप्त किये गएं। जिसके आधार पर शासन खनिज उद्योग के विकास के लिये भावी योजनाएं तैयार कर सकें साथ ही यह शोध पत्र भावी विद्धानों के लिये मार्ग दर्शन का कार्य भी कर सकें।

अध्ययन का क्षेत्र – प्रस्तुत शोध में अध्ययन क्षेत्र के रूप में मध्यप्रदेश के पन्ना जिला हीरा खनिज एवं अन्य गौण खनिजों के क्षेत्रों को सम्मिलित किया गया है।

उपकरण –प्रस्तुत शोध कार्य में शोध उपकरण के रूप स्वनिर्मित साक्षात्कार, प्रश्नावलियों एवं अनुसूची का प्रयोग किया गया है।

शोध अध्ययन की निर्देशन इकाई – शोध अध्ययन में शोध इकाई के रूप में मध्यप्रदेश के पन्ना जिले की बहुमूल्य रत्न हीरा एवं अन्य गौण चूना पत्थर, फर्शी पत्थर गेरू का चयन निम्न विशेषताओं के आधार पर किया गया है।

1. पन्ना जिले को हीरा उत्पादन में प्रथम स्थान प्राप्त है।
2. हीरा की उच्चगुणवत्ता, विशेष चमक, उच्च कीमती।
3. नव रत्नों में से एक।
4. सीमेन्ट उद्योग हेतु उपयुक्त चुना पत्थर।
5. इमारती मारबल युक्त फर्शी पत्थर।
6. प्राइमर, पेन्ट, टूथ पेस्ट युक्त गेरू खनिज।
7. प्रस्तुत सोध अध्ययन में उन्ही खनिजों को सम्मिलित किया, जिनकी उद्योग के लिये प्रथम आवश्यकता है।

संमक संकलन के स्त्रोत :

1. **प्राथमिक समंको का संकलन –** प्राथमिक के संकलन हेतु स्वनिर्मित साक्षात्कार, अनूसूची का प्रयोग किया गया है।

2. **द्वितीय संमको का संकलन :–** द्वितीय संमक संकलन के लिएं संबंधित शोध पुस्तकों पत्र–पत्रिकाओं समाचार पत्र संबंधी योजनाओं की रिर्पोट शोध ग्रन्थ इन्टरनेट अन्य सूचना माध्यमों का प्रयोग किया गया।

प्रयुक्त सांख्यिकी विधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन में संकलित तथ्यों का वर्गीकरण करके तथ्यों एवं विचारों का तुलनात्मक अध्ययन किया निष्कर्षों की विश्वनियता हेतु उपकल्पना की सार्थकता ज्ञात करने के लिये कई वर्ग परीक्षण का प्रयोग किया गया है।

शोध व्याख्या :

पन्ना जिले खनिज आधारित उद्योगों की सम्भावनाएं एक सिहांवलोकन – पन्ना जिले में खनिज आधारित उद्योगों की अपार संभावना है यहां पर पाया जाने वाला फर्शी पत्थर नव निर्माण कार्य एवं मारवल उद्योग की दृष्टि से सफल उद्योग साबित हो सकता है। इस पत्थर से लघु एवं वृहद कटिंग पॉलिसिंग उद्योग स्थापित की जाने में किसी प्रकार की समस्या नहीं है। इस पत्थर आधारित पत्थर कटिंग उद्योग स्टोन चिप्स, डिजाइन एवं शिल्प कला उद्योग बहुत अच्छे चलाएं जा सकते है।

चूना पत्थर से सीमेन्ट उद्योग की सम्भावना – पन्ना जिले में चूना पत्थर से चूना एवं सीमेन्ट दोनों उद्योग स्थापित होने की संभावना है। यहां के चूना पत्थर को अगर दूसरे जिलो एवं राज्यों से तुलना की जाएं तो सबसे अच्छा खाने योग्य चूना इसके साथ इस चूने से विभिन्न उपयोग किएं जा सकते है। जैस चिनाई, चूना कंक्रीट, निर्माण इसी के साथ इस चूने को डिस्टेम्पर निर्माण में भी किया जा सकता है

पन्ना जिले के पन्ना तहसील में पाया जाने वाला चूना पत्थर चूना उद्योग के लिये अनुकूल है, इसके अतिरिक्त गुनौर एवं पवई तहसील में निकलने वाला चूना पत्थर सीमेन्ट उद्योग के निर्मित करने की दृष्टि से अनुकूल है

अर्थात कहा जा सकता है कि पन्ना जिला में चूने पत्थर की किस्में है दोनों किसम चूना एवं सीमेन्ट उद्योग के लिये उपयुक्त है। भू-विज्ञान सर्वेक्षण के अनुसार यह क्षेत्रफल पन्ना जिले के गुनौर सिमरिया एवं पवई तहसील को स्पर्श करता है, जिसका कुल क्षेत्रफल 2314380 हेक्टेयर है।

गेरू की उपलब्धता के आधार पर उद्योग की सम्भावना – गेरू एक चिकनी मिट्टी अथवा महीन बालू से मिली होती है, जिसका नाम गेरू होता है ये कई रंग की होती है। इसका उपयोग पॉलिस एवं पेन्ट उद्योग में सर्वाधिक होता है। पन्ना जिले में गुनौर तहसील से लगे क्षेत्रों में गेरू उद्योग लगाये जा सकते है।

हीरा, कटिंग, पालिसिंग, जडने के आधार, पर लघु एवं कुटीर उद्योगों के रूप में सम्भावना – हीरा कटिंग से तात्पर्य हीरा खनिज को काटकर उसको विभिन्न आकृति में उसी के अनुसार परिवर्तित कर अधिक उपयोगी बनाना।

पन्ना मध्यप्रदेश राज्य का हीरा उत्पादित करने वाला जिला है, जहां पर हीरा खनिज के प्रमाणिक भंण्डार है, जहां पर इनका दोहन भी किया जाता है। हीरा खनिज को यहां की खदानों से निकालकर नीलामी द्वारा बाहरी राज्यों के व्यापारियों को बिना कटिंग पॉलिसिंग के बेच दिया जाता है जिससे यहां के खदान पट्टेदारों को कोई लाभ नहीं मिल पाता। जबकि यहां हीरा कटिंग पांलिसिंग जडने एवं सफाई करने के उद्योग स्थापित होने में पूरी संभावना है।। इसके अतिरिक्त यहां इस खनिज पर डायमण्ड पार्क महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

इस पार्क के स्थापित हो जाने पर हीरा का विशिष्ट बाजार निर्मित हो जायेगा और सुरक्षित होगा इस पार्क में हीरा उद्योग के लिये 100 दुकानें खोलने हेतु स्थल की आवश्यकता होती है जो पूर्णत: नगर के बाजार अलग हटकर होती अर्थात कहा जा सकता कि हीरा का विशिष्ट बाजार होता है।

इस पार्क के स्थापित हो जाने पर यहां के हीरा व्यापार को प्रोत्साहन मिलेगा और जिले के युवक युवतियों को रोजगार मिलेगा शासन को किराया रायल्टी एवं अन्य राजस्व प्राप्त होंगे साथ ही 500 सोना चांदी आभूषण बनाने वाले करीगर को रोजगार मिलेगा। इसके साथ होटल व्यवसाय एवं यातायात पर बल मिलेगा।

निष्कर्ष –पन्ना जिले में खनिज उद्योगों के स्थापना का मूल उद्देश्य प्रकृति प्रदत्त अमूल्य खनिज संपदाओं का वैज्ञानिक एवं सुव्यवस्थित रूप से सुनियोजित ढंग से दोहन करना है।

जिससे जिले में खनिज आधारित उद्योगों पर उत्पादन तकनीकी में सुधार एवं नई मशीनों की स्थापना से न्यूनतम लागत पद पदार्थों का उत्खन्न करके यहां अच्छे से अच्छा उद्योग उपरोक्त खनिजों के आधार पर लगाये जा सकते है। और जिले की बेरोजगारी, गरीबी एवं दरिद्रता पर काबू पाया जा सकता है।

सुझाव – शोधार्थी , शोध पत्र के माध्यम से अनुरोध करता है कि समस्याओं एवं सम्भावनाओं पर शासन यदि विचार करता है, तो क्षेत्र में आर्थिक एवं औद्योगिक परिदृश्य में परिवर्तन लाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पन्ना जिले का आर्थिक विकास – उद्योग विभाग पन्ना
2. खनिज नीति 2010
3. मध्यप्रदेश राज्य पत्र आसाधारण।
4. ई-खनिज बेबसाईट से प्राप्त जानकारी।
5. पत्थर खदान मजदूर संघ कार्यालय से प्राप्त दस्तावेज।
6. दैनिक भास्कर समाचार पत्र।
7. खान एवं खनिज मैन्यूअल- एसपी.क्षेत्रपाल।
8. प्रबन्ध के सिद्धान्त – शुला एमबी.वर्धमान।
9. मध्यप्रदेश जन संपर्क का प्रकाशन- राकेश श्रीवास्तव।
10. विपणन प्रबंध – डॉ0 एससी.जैन

****

भारत में कृषि विकास के कार्यक्रम एवं योजनाएं

डॉ. निर्मला वास्केल *

शोध सारांश – पिछले 60 वर्षो में भारतीय कृषि अनेक समस्याओं जैसे निम्न विकास दर न्यून उत्पादकता, सीमित निर्यात, अपर्याप्त निवेश, घटिया तकनीकी, क्षेत्रिय असमानता आदि से घिरी हुई है। इन समस्याओं को हल करने में कृषि विकास कार्यक्रमों एवं राष्ट्रीय कृषि नीति ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। वास्तविकता यह है कि उपरोक्त कृषि विकास कार्यक्रम एवं नीतियां अर्थव्यवस्था के अनुरुप है और तीव्र विकास में प्रभावी योगदान दे सकती है। इन नीतियों और कार्यक्रमों से कृषि विकास की उँची दर, मजबूत बुनियादी संरचना, कृषि आधारित उद्योगों का विस्तार, अधिक रोजगार, फसलों की हानि की क्षति पूर्ति, किसानों को ऋण उपलब्ध करवाना, अधिक रोजगार , विश्व बाजारों की चुनौतियों का सामना करना आदि । कृषि विकास के कार्यक्रमों व नीतियों के उद्धेश्यों को मूर्तरुप देने के लिये सुझाए गऐ उपाय वर्तमान परिस्थितियों के लिये अनुकूल है, परंतु अभी भी नीतियों एवं कार्यक्रमों में अनेक सुधारों की आवश्यकता है। निवेश और अनुसंधान के अतिरिक्त पट्टे पर प्राप्त जमीन पर खेती करने, डेयरी उद्योग एवं कृषि से जुड़े अन्य उद्योग धन्धों के संचालन में निजी क्षेत्र की कम्पनियों के सहयोग का प्रावधान नीति में किया गया है। भूमि सुधार की दिशा में आगे बढ़ने पर विशेष ध्यान दिया गया है, जो हर दृष्टि से आवश्यक है।

प्रस्तावना – प्राचीन काल से ही भारत कृषि प्रधान देश रहा है। उस समय देश में विस्तृत कृषि पद्धति प्रचलित थी। विशाल कृषि क्षेत्र एवं सीमित जनसंख्या के कारण कारण ग्रामवासी सरलता से अपनी आवश्यकता के अनुरुप खाद्यान्न पैदा कर लेते थे और वे पूर्णत: खाद्यान्न की दृष्टि से आत्मनिर्भर थे, किन्तु समय के साथ-साथ जनसंख्या में तीव्र वृद्धि हुई तथा कृषि के विकास पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। परिणाम यह हुआ कि देश में खाद्यान्नों की कमी होने लगी और बड़ी मात्रा में आयात करके देश की आवष्यकता को पूर्ण करने को पूर्ण किया गया, साथ ही देश की पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि विकास को प्राथमिकता दी गयी। पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि विकास के लिये सामुदायिक विकास कार्यक्रम,सघन कृषि योजना,सिचाई सुविधाओं में वृद्धि, उन्नत बीजों का आविष्कार एवं उपयोग,उर्वरकों एवं कीटनशकों का अधिक उत्पादन एवं उनका उपयोग, कृषि की उन्नत विधियों का आविष्कार, एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम का क्रियान्वयन, कृषि क्षेत्र में आवश्यक ऋणों की उपलब्धता हेतु बैकों का राष्ट्रीयकरण, कृषि बीमा आदि कार्यक्रम प्रारम्भ किऐ। कृषि विकास के इन कार्यक्रमों के फलस्वरुप देश में खाद्यान्नों का उत्पादन बढ़ा और देश आत्मनिर्भर होने के साथ-साथ निर्यातक देश बन गया।

शोध पत्र के उद्देश्य – प्रस्तुत शोधपत्र में निम्न उद्देश्यों को लिया गया है :

- कृषि क्षेत्र में विद्यमान क्षमता का आंकलन करना ।
- कृषि विकास के अन्तर्गत विभिन्न कार्यक्रमों की जानकारी प्राप्त करना।
- कार्यक्रमों एवं योजनाओं के अन्तर्गत कृषि विकास का अध्ययन करना।
- कृषि विकास के लिये सुझाव प्रस्तुत करना।

भारत में कृषि विकास की विभिन्न कार्यक्रम एवं योजनाएं :

1. भूमि सुधार कार्यक्रम – भारत में भूमि सुधार संकुचित अर्थो में छोटे किसानों व खेतिहर मजदूरों के हितो के अनुकुल भूमि के स्वामित्व का निर्धारण करना है। भूमि सुधारों के अन्तर्गत उत्पादन में वृद्धि, कृषकों के भूमि से सम्बन्धित अधिकारों की सुरक्षा, जोत की सीमा का निर्धारण, रोजगाार में वृद्धि, नियोजित विकास, समानता एवं सामाजिक न्याय प्रणाली को बेहतर बनाना है। भूमि सुधार कार्यक्रमों के अन्तर्गत कुछ इलाको को छोड़कर बिचोलियों काश्तकारी प्रथा समाप्त कर दी गई है। देश में व्यापक रुप में विधायी कार्यक्रम बनाये गये है। 1950-60 के दशक कें अधिकांश राज्यों में भूमि हदबंदी कानून बनाये गये, जिन्हें बाद में 1972 में केंन्द्र द्वारा जारी दिशा-निर्देशो के अनुरुप संशोधित किया गया, विभिन्न परिसीमन कानूनों के अर्न्तगत सितम्बर 2001 तक देश में 73.66 लाख एकड़ भूमि को अतिरिक्त घोषित की गई, जिसमें से लगभग 64.95 लाख एकड़ भूमि को अधिग्रहित किया गया और 53.79 लाख एकड़ भूमि को 55.84 लाख वर्ष 1988-89 में भू-अभिलेखों के कम्प्यूटरीकरण के लिये एक केन्द्र प्रायोजित योजना 8 जिलों में शुरू की गयी थी। वर्तमान में यह योजना देश के 582 जिलों में लागू की गई है अनेक राज्यों में उपयोग कर्ताओं तथा आम जनता के लिये अधिकारों के अभिलेखों की कम्प्युटरीकृत प्रतियॉ उपलब्ध कराई गई है।

2. भूमि अधिग्रहण विधेयक 2011– भूमि अधिग्रहण के मामलों में पारदर्शिता लाने तथा ऐसे अधिग्रहणों से प्रभावित होने वाले लोगों के साथ न्याय करने व उन्हें उचित मुआवजा प्रदान करने के लिये सरकार ने संशोधित मसोदे वाला भूमि अधिग्रहण विधेयक का मसोदे वाला भूमि अधिग्रहण विधेयक लोक सभा में 7 सितम्बर 2011 को प्रस्तुत किया है। विभिन्न पक्षों के साथ विचार विमर्श व कानूनी बारीकियों के अध्ययन के पश्चात् इस विधेयक का मसौदा तैयार किया गया है, यह पुराने अधिनियम का स्थान लेगा। इस विधेयक में अधिग्रहण से सम्बधित भूमि से जुड़े 80 प्रतिशत लोगों की सहमति अनिवार्य की गई है। संशोधित मसोदे में एक भूमि विकास बैक स्थापित किया जायेगा ।

3. कृषि श्रमिक सामाजिक सुरक्षा योजना 2001 – इस योजना के अन्तर्गत जीवन बीमा सुरक्षा, सांवधिक एकमुश्त जीवन लाभ तथा कृषि मजदूरों को पेंशन लाभ दिया जाता है, इस योजना में 18 से 50 वर्ष तक के लोगों को शामिल किया गया है। इस योजना में 60 वर्ष के पहले स्वाभाविक

* 210, त्रिमूर्ति नगर, धार (म.प्र.) भारत

मृत्यु पर 20,000 रूपये दिये जाते है तथा ब्याज के साथ जमा राशि वापस की जाती है दुर्घटना में मृत्यु होने पर 50,000 रूपये प्रदान किए जाते है।

4. राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना –इस योजना का प्रारम्भ रबी वर्ष 1999–2000 से किया गया है। इस योजना का मुख्य उद्देष्य सुखे, बाढ़, ओलावृष्टि, चक्रवात, आग, कीट/बीमारियों आदि जेसी प्राकृतिक आपदाओं के कारण फसल को हुई क्षति से किसानों का संरक्षण करना है ताकि आगामी मौसम में उनकी ऋण की बहाली सुस्पष्ट हो सके। यह योजना 23 राज्यों तथा 2 केन्द्रशासित प्रदेशों में लागू की गयी है।

5. राष्ट्रीय कृषि विकास योजना –राज्यो को प्रोत्साहित करने के लियें 16 अगस्त 2007 को सरकार ने पांच वर्षो के लिये 25,000 करोड़ रुपये के आवंटन के साथ राष्ट्रिय कृषि विकास योजना को मन्जूरी दे दी। इस योजना का उद्देश्य कृषि और सम्बद्ध क्षेत्रों का सम्पूर्ण विकास सुनिष्चित करके ग्यारहवी पंचवर्षीय योजना के दौरान कृषि में 4 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि प्राप्त करना है इस योजना में 2011–12 के लिये 7811 करोड़ रुपयो का प्रावधान किया गया था।

6. राष्ट्रीय कृषि नीति 2007 – इस नीति के अन्तर्गत परिसम्पति में सुधार, कुशलतापूर्वक जल का उपयोग, नई प्रौद्योगिकी, राष्ट्रीय कृषि जैव सुरक्षा प्रणाली ,बीज और मृदा स्थिति, महिलाओं के लिये सहायता सेवाएं, ऋण व बीमा विस्तार की व्यवस्था की गयी है।

7. राष्ट्रीय कृषक आयोग एवं नई राष्ट्रीय कृषि नीति – इस नई कृषि नीति में सभी कृषिगत उपजों के लिये न्यूनतम समर्थन मूल्य, मूल्यों में उतार–चड़ाव से किसानों की सुरक्षा हेतु मार्केट रिस्क स्टेबलाइजेशन फण्ड का सुझाव, किसानों के लिये बीमा योजनाओं का विस्तार, कृषि सम्बन्धी मामलों में स्थानिय पंचायतों के अधिकारों में वुद्धि।

8. राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन – इस योजना में 2011–12 के अन्त तक चावल, गेहूँ और दालों के उत्पादन को क्रमश: 10 मिलियन टन, 8मिलियन टन, और 2 मिलियन टन तक बड़ाने का लक्ष्य था, यह योजना देश के 17 राज्यों 312 जिलों में लागू है। ग्यारहवी पंचवर्षीय योजना (2007–12)के दौरान इस योजना का कुल परि० 4883 करोड़ रुपये का है।

9. खाद्य सुरक्षा विधेयक – निर्धनों को रियायती मूल्य पर खाद्यान्न उपलब्ध कराना तथा देश में खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिये केन्द्र सरकार के महत्वाकांक्षी खाद्य सुरक्षा विधेयक को 22 दिसम्बर 2011 को संसद में प्रस्तुत किया गया है केन्द्रीय मंत्रिमंडल में 18 दिसम्बर 2011 को मंजूरी प्रदान की थी। इसके अन्तर्गत देश की 62.5 प्रतिशत जनसंख्या को रियायति दर पर गेंहू, चांवल उपलब्ध हो सकेगा इस योजना में प्रतिव्यक्ति 7 कि.ग्रा. अनाज प्रतिमाह अत्यधिक रियायति मूल्य पर उपलब्ध कराने का प्रावधान खाद्य सुरक्षा विधेयक में किया गया है अनाज में चावल का मूल्य 3 रुपये प्रति कि.ग्रा. तथा गेहूँ का 2 रु.प्रति कि.ग्रा. तथा मोटे अनाज का मूल्य 1 रु.प्रति कि.ग्रा. होगा।

10. भारत में हरित क्रांति–:1960 के दशक के मध्य (1966–67) में कृषि में हरित क्रांति आई इसका श्रेय अमेरिकी कृषि वैज्ञानिक डॉ.नोरमान ई. बोरलॉग तथा डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन को जाता है। भारत में हरित क्रांति के फलस्वरुप फसलों की उत्पादकता में काफी वृद्धि हुई है और अभी भी नई तकनीकी से गेंहू में 2.5 गुना, धान में 3 गुना, मक्का में 3.5 गुना, ज्वार में 5 गुना, बाजरा में 5.5 गुना उत्पादन में वृद्धि की सम्भावना है।

11. एवरग्रीन रिवाल्यूशन – हरित क्रांति की सफलता के पश्चात् भारत को अब द्वितीय हरित क्रांति अर्थात् एवरग्रीन रिवाल्यूशन की और बढ़ना है ताकि देश के सालाना खाद्यान्न उत्पादन को 210 मिलियन से दोगुना करके 420 मिलियन टन किया जा सके।

12. भारत में श्वेत क्रांति अर्थात् 'आपरेशन फ्लड'– दूध के उत्पादन में तीव्र वृद्धि ही 'श्वेत क्रांति' कहलाती है ।श्वेत क्रांति लाने के लिये पशु मालिकों को पशु पालन के सुधरे तरीकों का पैकेज प्रदान किया गया बाद में श्वेत क्रांति की गति तेज करने के लिये 'आपरेशन फ्लड' आरम्भ किया गया। 2000–01 में देश में कुल दूध उत्पादन 81.4 मिलियन टन था, जो कि 2007–8 में 104.8 मिलियन टन हो गया। 2010–011 के अन्तिम आंकड़ों के अनुसार दूध उत्पादन का यह स्तर 121.8 मिलियन टन तक पंहुच गया। विश्व में दूध उत्पादन में भारत का स्थान पहला है। ऑपरेशन फ्लड के सूत्रधार 'डॉ. वर्गीज कुरियन' है। आज ऑपरेशन फ्लड योजना के अन्तर्गत लगभग 90 लाख किसान तथा उनके परिवार के सदस्य कार्यरत होकर 70 हजार से अधिक डेयरी सहकारी संस्थाओं से सम्बद्ध होकर डेयरी सहकारी विकास कार्यक्रम से लाभान्वित हो रहे है। इस कार्यक्रम के परिणामस्वरुप दूध की प्रतिव्यक्ति दैनिक खपत 2007–08 में 252 ग्राम थी जो कि 2010–011 में बढ़कर 281 ग्राम तक हो गयी है।

13. त्वरित सिंचाई लाभ कार्यक्रम – यह कार्यक्रम 1996–97 प्रारम्भ किया गया था। इसका उद्देश्य राज्यों को अधूरी , बड़ी तथा मध्यम सिंचाई परियोजनाओं को पूरा करने के लिये ऋण प्रदान करना था। इस योजना के तहत राज्यों को अनुदान के रुप में मार्च 2009 तक 281 बड़ी तथा 10,849 लघु सिंचाई योजनाओं के लिये 42,920 करोड़ रुपये का अनुदान उपलब्ध कराया गया था। त्वरित सिंचाई लाभ कार्यक्रम के तहत केन्द्रिय श्रम सहायता अनुदान के तहत 50380.64 करोड़ रुपये, 30 नवम्बर 2011 तक जारी किये गयें थे। 31 मार्च 2011 तक 290 परियोजनाएं AIBP के अन्तर्गत कवर की जा चुकी थी तथा 134 पूरी कर दी गयी।

14. कमान क्षेत्र विकास कार्यक्रम – इस योजना को पांचवी पंचवर्षीय योजना (1974–75) के प्रारम्भिक वर्ष में प्रारम्भ किया गया था। इस कार्यक्रम का उद्देश्य देश की चुनी हुई बड़ी और मझली परियोजनाओं की सिंचाई क्षमता का तेजी से बेहतर उपयोग सुनिश्चित करना था। 1974 में 60 बड़ी और मध्यम परियोजनाओं के साथ इस कार्यक्रम की शुरुआत हुई थी, मार्च 2004 के अन्त तक इसके तहत 310 परियोजनाएं शामिल की जा चुकी थी। 1अप्रैल 2004 से कमान क्षेत्र विकास कार्यक्रम को पुनर्गठित करके, कमान क्षेत्र विकास तथा जल प्रबन्धन कार्यक्रम का नाम दिया गया था। अब यह योजना 11वी पंचवर्षीय योजना के दौरान राज्य क्षेत्र की योजना के रुप में कार्यान्वित की जा रही है।

15. क्रॉप एग्रीकल्चर प्रोड्यूज लोन स्कीम – किसानों को अपनी उपज का बेहतर मूल्य प्राप्त होने तक उपज को रोकने में सक्षम बनाने के लिये कॉरपोरेशन बैंक द्वारा एक नई कृषि ऋण योजना 1 अप्रैल 2005 से प्रारंभ की गई है, इस योजना में किसान अपनी उपज का सेंट्रल वेयर हाउसिंग कार्पोरशन अथवा स्टेट वेयर हाउसिंग कार्पोरशन के किसी गोदाम में भंडारण करके उसकी रसीद के आधार पर कार्पोरशन बैक से ऋण प्राप्त कर सकता है।

16. किसान क्रेडिट कार्ड योजना – किसान क्रेडिट कार्ड योजना अगस्त 1998 में वाणिज्यिक बैंकों, क्षेत्रिय ग्रामीण बैंको तथा सहकारी बैंको से प्राप्त ऋण को सुसाध्य बनाने के लिये प्रारम्भ की गई थी। इस योजना के अन्तर्गत अगस्त 1998 से लेकर सितम्बर 2011 तक 10.04 करोड़ किसान क्रेडिट कार्ड जारी किये जा चूके है। इनमें 48.21 प्रतिशत कार्ड सहकारी बैंकों द्वारा, 13.16 प्रतिशत कार्ड क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा तथा 38.63 प्रतिशत

कार्ड वाणिज्यिक बैंकों द्वारा जारी किये गये थे।

सुझाव :

1. हरित क्रांति का विस्तार – हरित क्रांति तभी सफल कही जा सकती है जब इसका क्रियान्वयन सभी फसलों एवं सभी क्षेत्रों में सुनियोजित तरीके से किया जाए।

2. कार्यक्रमों एवं योजनाओं का समय पर क्रियान्वयन – कृषि विकास से सम्बन्धित कार्यक्रमों को निर्धारित समय पर क्रियान्वित किया जाना चाहिये।

3. कुशल प्रशासनिक मशीनरी की स्थापना – एक कुशल प्रशासनिक तंत्र की स्थापना की जाना चाहिए ताकि कार्यक्रमों एवं कृषिगत योजनाओं को समय पर क्रियान्वित किया जा सके।

4. संस्थाओं में समन्वय – कृषि उत्पादन एवं विकास से सम्बन्धित सरकारी विभागों, पंचायतों, सहकारी समितियों व अन्य इसी प्रकार की संस्थाओं में समन्वय होना चाहिये।

5. कृषकों के लिऐ फसल बीमा योजना शीघ्रता एवं व्यापकता से लागू की जाना चाहिए।

निष्कर्ष – कृषि विकास के इन कार्यक्रमों के फलस्वरुप देश में खाद्यान्नों का उत्पादन बड़ा और देश खाद्यान्नों की दृष्टि से आत्मनिर्भर होने के साथ–साथ निर्यातक देश भी बन गया, किन्तु खाद्य तेल एवं दालों का अभाव अभी भी बना हुआ है और इसके लिये हमें आयात पर निर्भर रहना पड़ रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय अर्थव्यवस्था एक समीक्षात्मक अध्ययन, 2009, भरत झुनझुनवाला, राजपाल एण्ड संस नई दिल्ली।
2. भारत की अर्थनीति, 2006, विमल जालान राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. भारतीय अर्थव्यवस्था सर्वेक्षण एवं मूल्यांकन, 2010, प्रो एस.एन.लाल,डॉ.एस.के.लाल, शिवम् पब्लिशर्स, इलाहाबाद।
4. भारतीय अर्थव्यवस्था, 2009, रूद्र दत्त एंव सुंदरम के.पी.एम., एस.चन्द एण्ड क.लि. नई दिल्ली।
5. भारत 2012, विज्ञापन एवं दृश्य प्रसार निदेशालय भारत सरकार, नई दिल्ली।
6. योजना, प्रकाशन विभाग,सूचना और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार
7. भारतीय अर्थव्यवस्था,दत्तरूद्र एवं सुदंरम के पी एम, एस चंद एण्ड क.लि. दिल्ली(2012)
8. hhttp://indiabudget.nic.in

****

कृषि विपणन पुरस्कार योजना का अध्ययन

डॉ. राजू रैदास *

शोध सारांश – विश्व के किसी भी कार्यों को अत्यधिक तीव्र गति से क्रियान्वित करना है तो उसके लिए आवश्यक है कि पुरस्कार दिया जाय। पुरस्कार के माध्यम से किसी भी कार्यो को अत्यधिक क्रियाशील एवं प्रभावी बनाया जा सकता है। इसी तरह से मध्यप्रदेश कृषि उपज मंडियों में भी कुछ कृषि विपणन पुरस्कार योजनाओं की शुरुआत की गई है। इसकी सभी कृषि विपणन पुरस्कार योजनाओं का अध्ययन इसमें किया गया है।

प्रस्तावना – कृषि उपज मण्डी प्रांगणों के बाहर अधिसूचित कृषि उपजों के अवैधानिक क्रय – विक्रय से होने वाले शोषण एवं क्षति से कृषकों को बचाने एवं विनिर्दिष्ट मण्डी प्रांगण के बाहर अवैध व्यापार को नियंत्रित कर मण्डी फीस के अपवंचन को रोकने हेतु मण्डी क्षेत्र के कृषकों को अपनी अधिकाधिक कृषि उपज मण्डी प्रांगण में खुली नीलामी पद्धति से प्रतिस्पर्धात्मक मूल्यों पर विक्रय करने हेतु प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से मण्डी समिति द्वारा 'कृषि विपणन पुरस्कार योजना' को निम्नानुसार निर्धारित प्रक्रिया/शर्तो के अधीन प्रभावशील किया जा सकता है :–

1. योजना की प्रक्रिया – कृषि विपणन पुरस्कार योजना की मण्डी समिति में प्रभावशील करने के लिये संबंधित मण्डी समिति को निम्नानुसार प्रक्रिया का पालन करना अनिवार्य होगा।

अ. योजना की स्वीकृति – कृषि विपणन पुरस्कार योजना को प्रभावी करने के पूर्व मण्डी समिति अपने सम्मेलन में मण्डी निधि की उपलब्धता तथा मण्डी की आर्थिक परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए कार्यसूची में प्रस्ताव रखकर विचार – विमर्श कर योजना को सर्व सम्मति से प्रभावशील करने का निर्णय लेगी।

(ब) योजना में विजेताओं को पुरस्कार वितरण, हेतु नगद अथवा कृषि यंत्रों वस्तुओं एवं कृषि हेतु उपयोगी अन्य साधनों का (योजना की स्वीकृति राशि के अधीन) चयन कृषि उपज मण्डी समिति द्वारा किया जावेगा।

(स) बजट प्रावधान – योजना हेतु मण्डी समिति अपने बजट में पुरस्कार मद हेतु राशि का प्रावधान नियमानुसार करेगी।

(द) लाटरी ड्रा हेतु मण्डी समिति द्वारा आयोजित किये जाने वाले कार्यक्रम एवं योजना के प्रचार–प्रसार किये जाने वाले व्यय का प्रावधान भी मण्डी समिति द्वारा बजट में ही पृथक मद स्थापित कर किया जावेगा, एवं विधिवत स्वीकृति प्राप्त की जावेगी।

2. योजना का स्वरूप – प्रांगण में कृषकों द्वारा अधिसूचित कृषि उपज विक्रय हेतु लाए जाने पर उन्हें अपनी कृषि उपज की एन्ट्री (प्रविष्टि) मण्डी गेट पर प्रवेश पंजी में करवाकर प्रवेश पर्ची प्राप्त करनी होगी। एवं अधिसूचित कृषि उपज मण्डी को नीलामी द्वारा मण्डी प्रांगण में विक्रय करवाना होगा। अधिसूचित कृषि उपज के नीलामी में विक्रय के पश्चात् अनुबंधकर्ता कृषक द्वारा धारा – 37 (1) के आधीन मण्डी कर्मचारी द्वारा जारी अनुबंध पर्ची धारा –37(2) एवं अपविधि कडिका –17 (14) के अधीन क्रेता व्यापारी द्वारा प्रारूप–4 में जारी ' भुगतान पत्रक ' सहित कृषि उपज मण्डी समिति के कार्यालय में प्रस्तुत करने पर मण्डी कार्यालय द्वारा सीरियल नंबर अंकित कर रिकार्ड में प्रविष्टी कर पृथक से एक भुगतान पत्रक जारी किया जायेगा। जिस पर मण्डी समिति के कर्मचारी के हस्ताक्षर एवं मुद्रांकित होगी। एक से अधिक अधिसूचित कृषि उपज विक्रय होने पर पृथक – पृथक भुगतान पत्रक मण्डी समिति द्वारा जारी किये जावेगें। मण्डी समिति द्वारा जारी भुगतान पत्रक की द्वितीय प्रति मण्डी समिति के कार्यालय में सुरक्षित उपलब्ध रखी जावेगी। भुगतान पत्रक पर कृषक का पूरा नाम, वल्द, पूर्ण पता व उसके हस्ताक्षर अंकित होगें। मण्डी समिति द्वारा जारी भुगतान पत्रक प्रस्तुत करने पर ही विजेयता कृषक को पुरस्कार प्रदान किया जावेगा। भुगतान पत्रक गुम या नष्ट होने की स्थिति में मण्डी समिति विजेयता कृषक की पहचान प्राप्त करने हेतु निम्नानुसार सभी आवश्यक विधिक राय एवं परामर्श आवश्यक विधिक औपचारिताएँ पूर्ण कर विजेयता से शपथ पत्र प्राप्त करेगी। यदि मण्डी समिति औपचारिताएँ पूर्णकर विजेयता कृषक की पहचान एवं की गई उक्त विधिक प्रक्रिया से पूर्णत: से सन्तुष्ट होती है तो संबंधित कृषक को पुरस्कार की राशि वितरित / भुगतान करने का निर्णय ले सकती है, परन्तु ऐसे प्रकरणों में मण्डी समिति द्वारा की गई कार्यवाही एवं विजेयता कृषक को पुरस्कार की राशि का भुगतान/वितरण पूर्व प्रबंध संचालक का पूर्व अनुमोदन प्राप्त करना अनिवार्य होगा।

3. योजना की पुरस्कार राशि – योजना की प्रति ड्रा पुरस्कार राशि कृषि उपज मण्डी समिति के प्रवर्गों (श्रेणी) अनुसार उनके सामने दशायी गई संख्या अनुसार निम्नानुसार होगी –

सारणी 1/2 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

4. योजना का ड्रा – कृषि उपज मण्डी समितियों द्वारा कृषि विपणन पुरस्कार योजना का ड्रा लाटरी द्वारा प्रत्येक वर्ष में तीन वार तथा राष्ट्रीय पर्व 15 अगस्त (स्वतंत्रता दिवस) 26 जनवरी (गणतत्र दिवस) एवं बलराम दिवस (शासन द्वारा घोषित दिनांक) पर निकाले जावेंगें। ड्रा निकालने हेतु कृषि उपज मण्डी समिति द्वारा 01 जनवरी से 30 अप्रैल तक जारी भुगतान पत्रकों का ड्रा 15 अगस्त व 01 मई से 15 अगस्त तक जारी भुगतान पत्रकों का ड्रा बलराम जयंती को तथा 16 अगस्त से 31 दिसम्बर तक जारी भुगतान

* अतिथि विद्वान, शासकीय महाविद्यालय, उमरिया (म.प्र.) भारत

पत्रकों का ड्रा 26 जनवरी को निकाला जावेगा। बलराम जयंती को (शासन द्वारा घोषित तिथि) को निकाले जाने वाले ड्रा के साथ ही बम्पर ड्रा भी पृथक से निकाला जावेगा, जिसमें विगत वर्ष 16 अगस्त से वर्तमान वर्ष 15 अगस्त तक जारी भुगतान पत्रकों को शामिल कर ड्रा निकाला जावेगा। यदि किन्ही अपरिहार्य कारण वश बलराम जयंती को मण्डी द्वारा ड्रा नही निकाला जा सका है तो यह ड्रा आगामी ड्रा की तिथि तथा 26 जनवरी को मण्डी में जारी 01 मई से 15 अगस्त तक के भुगतान पत्रकों के लिए और 16 अगस्त से 31 दिसम्बर तक जारी भुगतान पत्रकों के लिए ताकि उपरोक्त उल्लेख अनुसार बम्पर ड्रा (विगत वर्ष 16 अगस्त से वर्तमान वर्ष 15 अगस्त तक जारी भुगतान पत्रकों को शामिल कर) अलग-अलग निकाला जावेगा। योजना का ड्रा कृषि उपज में समिति द्वारा मण्डी क्षेत्र में प्रचार प्रसार कर कृषकों , व्यापारियों, मण्डी क्षेत्र के प्रगतिशील कृषकों, जनप्रतिनिधियों, प्रशासनिक अधिकारियों, गणमान्य नागरिकों की उपस्थिति में खोला जावेगा। योजना तथा लाटरी ड्रा निकाले जाने वाली तिथि का व्यापक प्रचार - प्रसार मण्डी समिति द्वारा किया जावेगा। जिसकी सूचना मण्डी समिति की, नगरपालिका, पंचायत, जनपद, तथा कलेक्टर कार्यालय के सूचना पटल पर सूचनार्थ चस्पा करायी जावेगी। यथा संभव ड्रा की तिथि में कोई परिवर्तन नही किया जावेगा।

5. योजना के क्रियान्वयन एवं सुचारू संचालन हेतु उपसमिति का गठन – कृषि विपणन पुरस्कार योजना का सुचार एवं बेहतर ढंग से प्रभावशील/संचालन करने के लिए कृषि उपज मण्डी समिति द्वारा नियमानुसार यदि आवष्यक हो तो ठहराव/प्रस्ताव पारित कर उपसमिति का गठन किया जा सकेगा, परन्तु योजना को मण्डी क्षेत्रों में सुचारू एवं बेहतर ढंग से प्रभावशील करने का पूर्ण दायित्व मण्डी समिति के सचिव का रहेगा।

6. अंतिम निर्णय का अधिकार – कृषि का उपज मण्डी समिति द्वारा प्रभावशील की गई कृषि विपणन पुरस्कार योजना में उत्पन्न किसी भी प्रकार के विवाद पावर अंतिम निर्णय का अधिकार कृषि उपज मण्डी समिति को होगा, जो सभी पक्षों को मान्य करना अनिवार्य होगा।

7. योजना से संशोधन/परिवर्तन का अधिकार – कृषि विपणन पुरस्कार योजना में आवश्यकतानुसार किसी भी समय किसी भी प्रकार से संशोधन/परिवर्तन/रद्द अथवा दिशा-निर्देश जारी करने का सर्वाधिकार प्रबंध संचालक मण्डी बोर्ड को सुरक्षित है। प्रबंध संचालक द्वारा योजना के संबंध में दिये गये निर्देशों का पालन करना एक मण्डी समिति के लिए अनिवार्य होगा।

सन्दर्भ गन्थ सूची :-

1. मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी विधि संहिता, इण्डिया लॉ हाऊस इन्दौर।
2. विपणन प्रबंध, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
3. www.google.com/wikipedia.com

क्र.	मण्डी का प्रवर्ग	कड़िका 4 में उल्लेखित तीन ड्रा के माध्यम से निकाले जाने वाले पुरस्कारों की अधिकारी की अधिकतम कुल राशि	कड़िका-4 में उल्लेखित बम्पर ड्रा के पुरस्कार में दी जाने वाली का नाम / राशि (यह कड़िका -4 में उल्लेखित सामान्य तीन ड्रा से अतिरिक्त होगी।)
1	क-प्रवर्ग की मण्डी समिति	1,04,000,00	35 अश्वशक्ति का ट्रेक्टर
2	ख-प्रवर्ग की समिति	69,500,00	50 हजार रूपये मुल्य के कृषि यंत्र
3	ग-प्रवर्ग की समिति	39,000,00	50 हजार रूपये मुल्य के कृषि यंत्र
4	घ-प्रवर्ग की समिति	21,000,00	50 हजार रूपये मुल्य के कृषि यंत्र

मण्डी समिति का प्रवर्ग	बम्पर पुरस्कार की संख्या	प्रत्येक बम्पर पुरस्कार की निधार्रित राशि/ दी जाने वाली वस्तु का नाम	प्रथम पुरस्कार की संख्या	प्रत्येक पुरस्कार की निधा-रित राशि	द्वितीय पुरस्कार की संख्या	प्रत्येक पुरस्कार की निधा-रित राशि	तृतीय पुरस्कार की संख्या	प्रत्येक पुरस्कार की निधा-रित राशि	चतूर्थ पुरस्कार की संख्या	प्रत्येक पुरस्कार की निधा-रित राशि
क	01	35 अश्व शक्ति का ट्रेक्टर	01	21000	02	15000	03	11000	04	5000
ख	01	50 हजार रूपये मूल्य के कृषि यंत्र	01	15000	02	8000	03	5500	04	3000
ग	01	50 हजार रूपये मूल्य के कृषि यंत्र	01	10000	02	6000	03	3000	04	2000
घ	01	50 हजार रूपये मूल्य के कृषि यंत्र	01	5000	02	3000	03	2000	04	1000

****

लिंग संरचना का विश्लेषण– मध्यप्रदेश के बड़वानी जिले के संदर्भ में

डॉ. एन.एल.गुप्ता * लक्ष्मीकांत गुप्ता **

शोध सारांश – नारी शक्ति की आवश्यकता को आज चारों ओर महसूस किया जा रहा है, भारत में नारी को पुरूष की समकक्षता में बराबरी के लगभग सभी संवैधानिक अधिकार प्राप्त हो गये है। परंतु भारत में आज भी स्त्री पुरूष अनुपात असंतुलित है। स्त्री व पुरूष समाज रूपी चिड़ियॉ के दो पंख ही है इन पंखों का असंतुलन चिड़ियॉ को उड़ान नहीं भरने देगा। भारत की वर्तमान लिंगानुपात की स्थिति को देखते हुऐ आवश्यकता है की इस अनुपात को बढ़ाने के लिए समाज की मानसिक स्थिति में परिवर्तन लाया जाऐं। उन सामाजिक परम्पराओं का उन्मूलन किया जाएं जो स्त्री की स्थिति को निम्न बनाती है।

जिला बड़वानी के लिंगानुपात की तुलना यदि मध्यप्रदेश तथा भारत के लिंगानुपात से की जाएं तो स्पष्टत: यह कहा जा सकता है की अुनपात की स्थिति में निरंतर सकारात्मक परिवर्तन आ रहा है। जिला बड़वानी आदर्श लिंगानुपात की स्थिति को छुने को अग्रसर है।

प्रस्तावना – भारत एक विकासशील देश है। किसी भी देश की बढती हुई जनसंख्या उस देश की आर्थिक प्रगति को मंद कर देती है। बढ़ती हुई जनसंख्या में यह अनिवार्य है की उसमें लिंगानुपात का संतुलन बना रहे। समाज का असंतुलित विकास अविश्वास एवं विघटन को बढ़ावा देता है। लिंगानुपात विवाह एवं शिशुओं की संख्या पर भी प्रभाव डालता है। जनसंख्या संरचना का सबसे रोचक तथा लोकप्रिय तत्व उसमें पुरूष एवं स्त्रियों का अनुपात निकालना है, जिसे लिंगानुपात कहा जाता है। लिंग अनुपात की स्थिति भारत में पूर्व में एक जटिल समस्या रही है। देश के जनांनकीय विश्लेषण में उस देश की लिंग संरचना महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारत की जनसंख्या संरचना की विशेषता यह है कि यहॉ स्त्रियों की संख्या पुरूषों की संख्या से कम है। लिंग अनुपात का जन्म और मृत्युदर से भी गहरा संबंध होता है। सामान्यत: स्त्रियों की मृत्युदर पुरूषों की मृत्युदर से कम होती है क्योंकी स्त्रियों में बीमारियों के विरूद्ध प्रतिरोधक क्षमता पुरूषों के अपेक्षाकृत अधिक होती है। लिंग अनुपात में विषमता के कारण सामाजिक बुराईयों को पनपने का अवसर मिलता है, जनगणना के आकड़ों का अध्ययन करें तो यह स्पष्ट होता है की इस ईक्कीसवीं सदी में जहॉ हर क्षेत्र में मानव अधिकारों, स्वतंत्रता और समानता और महिला सशक्तिकरण की चर्चा बैठकों सम्मेलनों में हो रहीं है। वहीं भारत में स्त्रियों के लिए घरेलू स्तर पर विपरित धारणा दृष्टिगोचर हाती है। इसलिये लिंग संरचना का अध्ययन आवश्यक है।

लिंग संरचना से आशय – प्रति हजार पुरूषों पर स्त्रियों की संख्या को लिंग अनुपात या स्त्री–पुरूष अनुपात कहा जाता है। लिंगानुपात भिन्न भिन्न देशों में भिन्न भिन्न प्रकार से निकाला जाता है। भारत में लिंगानुपात एक हजार पुरूषों के संदर्भ में महिलाओं की संख्या के रूप में व्यक्त किया जाता है।

लिंगानुपात = (महिलाओं की संख्या/ पुरूषों की संख्या)1000

आदर्श लिंगानुपात में पुरूषों पर महिलाओं की संख्या अधिक होती है। भारत में महिलाओं की संख्या पुरूषों की तुलना में कम होने के कारण है–

1. **परंपरागत सोच –** भारतीय सामाजिक व्यवस्था के अनुसार परिवार का नाम बढ़ाने वाला या वंशवृद्धि सिर्फ लड़को से ही होती है। जीवन के अंत में गंगाजल, अग्नि देने वाला बेटा ही होता है। यही सामाजिक सोच प्रतिकुलता पैदा करती है।
2. परिवार नियोजन के अभाव में बार बार प्रसूती के कारण शरीर कमजोर हो जाता है और उनकी मृत्यु हो जाती है।
3. लड़कियों के प्रति भेदभाव का व्यवहार जन्म से ही शुरू हो जाता है, जिससे उनकी मानसिकता पर विपरीत असर पड़ता है और उनकी मृत्यु हो जाती है।
4. बाल विवाह भी महिलाओं की मृत्यु का एक कारण है।
5. भारत में लड़कियो का जन्म अभिशाप माना जाता है। इस कारण या तो भ्रुण में या पैदा होते ही हत्या कर दी जाती है।
6. भारत में लड़कियों की कम देखभाल होती है, जिसके कारण या तो बाल्यकाल में या प्रसूती अवस्था में हीं उनकी मृत्यु हो जाती है।
7. दहेजप्रथा समाज में कुप्रथा है। दहेज लेने देने का तरीका बदल गया है, जिसके कारण कन्या को जन्म के बाद या शादी के बाद मार दिया जाता है।
8. क्रोमोसोम विच्छेद का उपयोग अनुवांशिक बीमारी के लिये किया जाता था, पर आज इसका दुरूपयोग भी स्त्रियों की कमी का कारण है।

बड़वानी जिले में लिंग संरचना की स्थिति का विश्लेषण – बड़वानी जिले में लिंग संरचना की स्थिति का अध्ययन एवं विष्लेषण किया गया जो इस प्रकार से है।

तालिका क्रमांक 01 – बड़वानी जिले में लिंगानुपात की स्थिति

क्र.	जनगणना वर्ष	लिंगानुपात प्रति 1000 पुरूषों पर स्त्रियों की संख्या
1	1991	963
2	2001	977
3	2011	983

स्त्रोत – भारत की जनगणना 1991, 2001, 2011

यदि बड़वानी जिले में लिंगानुपात की स्थिति को देखा जाये तो 1991 में यह 963 था, जो बढ़कर 2001 में 977 हो गया और 2011 में यह 983/ 1000 हो गया।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शहीद भीमा नायक, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत
** शहीद भीमा नायक, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

तालिका देखने पर यह स्पष्ट होता है कि बड़वानी जिले में लिंगानुपात में निरंतर वृद्धि हो रही है। जहॉ 1991 में यह 963 स्त्रियॉ प्रति हजार पुरूष थी, 2001 में यह प्रति हजार पुरूष 977 हो गयी, मतलब स्त्रियों की संख्या में 14 स्त्रियों की वृद्धि हुई है। उसी प्रकार 2011 में प्रति हजार पुरूष पर स्त्रियों की संख्या बढ़कर 977 से 983 हो गयी यानि वर्ष 2001 की तुलना में 06 स्त्रियॉ बढ़ गई। अत: स्पष्ट है की स्त्रियों की संख्या में लगातार वृद्धि एक सकारात्मक दृष्टिकोण को दर्शाता है। इसके निम्न कारण है :-

1. साक्षरता में वृद्धि के कारण लिंगानुपात में सुधार हुआ है। 2011 की जनगणना अनुसार जिले में साक्षरता का प्रतिशत 49.08 है। शिक्षा से सोच में बदलाव आता है।
2. साक्षरता के कारण महिलाएं आर्थिक रूप से सक्षम हुई है। महिलाओं से संबंधित भ्रांतियॉ कम हुई है।
3. चिकित्सा व्यवस्था में पहले की अपेक्षा सुधार व अधिक उपलब्धता एवं जागरूकता के कारण मातृत्व मृत्युदर व कन्या भ्रुण हत्या में कमी आई है।

बड़वानी जिले का विकास खंडवार लिंगानुपात अध्ययन करने पर निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए जो इस प्रकार से है -

तालिका क्रमांक . 02 : बड़वानी जिले में विकास खंडवार लिंगानुपात की स्थिति (प्रति हजार पुरूषों पर स्त्रियों की संख्या)

क्र.	ब्लॉक	लिंगानुपात 1991	लिंगानुपात 2001	लिंगानुपात 2011
1	बड़वानी	952	969	974
2	पाटी	951	969	986
3	राजपुर	963	977	980
4	ठीकरी	966	959	964
5	सेंधवा	969	980	984
6	निवाली	973	990	1008
7	पानसेमल	968	995	986
कुल जिला बड़वानी		963	977	983

स्त्रोत - भारत की जनगणना 1991, 2001, 2011 (जिला बड़वानी)

1. बड़वानी ब्लॉक में जनगणनानुसार लिंगानुपात की स्थिति- 1991 में स्त्रियॉ प्रति 1000 पुरूष पर 952, 2001 में स्त्रियॉ प्रति 1000 पुरूष पर 969 व 2011 में स्त्रियॉ प्रति 1000 पुरूष पर 974 थी। यानि देखने पर ज्ञात होता है की तीनों जनगणनाओं में लिंगानुपात की स्थिति में सुधार आया है।
2. पाटी ब्लॉक में लिंगानुपात की स्थिति अनुसार स्त्रियॉ प्रति 1000 पुरूष 1991 में 951, 2001 में 969 तथा 2011 में 986 थी। इस प्रकार तीनों जनगणनाओं में लिंगानुपात में लगातार वृद्धि हुई है।
3. राजपुर ब्लॉक में लिंगानुपात स्त्रियॉ प्रति 1000 पुरूष 1991 में 963, 2001 में 977 तथा 2011 में 980 थी। राजपुर ब्लॉक में भी तीनों जनगणनाओं में लिंगानुपात में लगातार वृद्धि हुई है।
4. ठीकरी ब्लॉक में लिंगानुपात स्त्रियॉ प्रति 1000 पुरूष 1991 में 966, 2001 में 959 तथा 2011 में 964 थी। ठीकरी ब्लॉक में 1991 की तुलना में 2001 में 07 स्त्रियॉ कम हुई है, जबकि 2001 की तुलना में 2011 में 05 स्त्रियॉ बढ़ी है। तीनों जनगणनाओं में बड़वानी जिले में सबसे कम लिंगानुपात वाला ब्लॉक ठीकरी है।
5. सेंधवा ब्लॉक में लिंगानुपात की स्थिति अनुसार स्त्रियॉ प्रति 1000 पुरूष 1991 में 969, 2001 में 980 तथा 2011 में 984 थी। सेंधवा ब्लॉक में 1991 की तुलना में 2001 में 11 स्त्रियॉ, जबकि 2001 की तुलना में 2011 में 04 स्त्रियों की वृद्धि हुई है।
6. निवाली ब्लॉक में लिंगानुपात की स्थिति अनुसार स्त्रियॉ प्रति 1000 पुरूष 1991 में 973, 2001 में 990 तथा 2011 में 1008 थी। निवाली ब्लॉक में 1991 की तुलना में 2001 में 17 स्त्रियॉ, जबकि 2001 की तुलना में 2011 में 18 स्त्रियों की वृद्धि हुई है। निवाली ब्लॉक 1991 तथा 2011 की जनगणनाओं में सर्वाधिक लिंगानुपात वाला ब्लॉक रहा है। जिले में निवाली ब्लॉक ऐसा एकमात्र विकासखण्ड है जिसमें 2011 की जनगणना में स्त्रियों का अनुपात पुरूषों से अधिक है, यह आदर्श लिंगानुपात की स्थिति दर्शाता है।
7. पानसेमल ब्लॉक में लिंगानुपात की स्थिति अनुसार स्त्रियॉ प्रति 1000 पुरूष 1991 में 968, 2001 में 995 तथा 2011 में 986 थी। पानसेमल ब्लॉक में 1991 की तुलना में 2001 में अत्यधिक 27 स्त्रियॉ बढ़ी है, जबकि 2001 की तुलना में 2011 में 09 स्त्रियॉ कम हुई है।

तालिका क्रमांक . 03 : देश प्रदेश तथा जिलें में लिंगानुपात :

क्र.	स्थान	लिंगानुपात 1991	लिंगानुपात 2001	लिंगानुपात 2011
1	भारत	927	933	943
2	मध्यप्रदेश	932	920	931
3	बड़वानी	963	977	983

स्त्रोत - भारत की जनगणना 1991, 2001, 2011

यदि भारत व मध्यप्रदेश से बड़वानी जिले की तुलना की जाए तो 1991 में भारत का लिंगानुपात प्रति 1000 पुरूष पर स्त्रियों की संख्या 927, मध्यप्रदेश में 932 तथा बड़वानी जिले में 963 था यानि लिंगानुपात देश व प्रदेश की तुलना में जिले में अधिक था। इसी प्रकार 2001 में जिले का लिंगानुपात 977 था जो कि भारत व मध्यप्रदेश की तुलना में अपेक्षाकृत कहीं अधिक है।

इसी प्रकार 2011 में भारत का लिंगानुपात प्रति 1000 पुरूष पर स्त्रियों की संख्या 943, मध्यप्रदेश में 931 तथा बड़वानी जिले में 983 था। तालिका देखने से स्पष्ट होता है की तीनो जनगणनाओं में जिले का लिंगानुपात भारत तथा मध्यप्रदेश की तुलना में लगातार बढ़ा है।

निष्कर्ष - बड़वानी जिले की लिंग संरचना की स्थिति जानने के लिए पिछली तीन जनगणनाओं का विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है की भारत तथा मध्यप्रदेश से बड़वानी जिले की स्थिति अधिक बेहतर है। इसका कारण जिले में चिकित्सा व्यवस्था में सुधार एवं भ्रुण हत्या कानून व शिक्षा के प्रति जागरूकता है। साक्षरता से सामाजिक सोच में सकारात्मक बदलाव आया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुमार वी., जनांकिकी, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा 1998
2. भारत की जनगणना 2011, घटनाचक्र (सम-सामायिक)
3. नवीन शोध संसार, पत्रिका
4. दैनिक पत्र-पत्रिकाएँ
5. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, बड़वानी म.प्र.

रीवा जिले की लधु एवं कुटीर औद्योगिक इकाईयों का स्थानीय राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में भूमिका

डॉ. ज्योति जायसवाल *

शोध सारांश – आधुनिक युग औद्योगिक युग है, इस युग में मानव जीवन को सुखी एवं सम्पन्न बनाने में विज्ञान एवं औद्योगिकरण ने महत्वपूर्ण योगदान किया है, चूँकि सभी देश इसको अपनी प्रगति के लिये एक वरदान मानते हैं। इसलिये औद्योगिकरण को अधिक से अधिक अपनाना चाहते है।
शब्द कुंजी – औद्योगिक विपणन, अर्थव्यवस्था, विज्ञान, भूमिका, प्रबंध, प्रगति ।

प्रस्तावना – रीवा जिले की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान है। औद्योगिक दृष्टिकोण से यह क्षेत्र पिछड़ा हुआ है। इस जिले में स्वतंत्रता से पूर्व मध्यप्रदेश के उत्तरपूर्वी छोर बघेलखण्ड के पठार पर रीवा जिला अवस्थित है यहॉ की जलवायु समशीतोष्ण है। लोगों का मुख्य व्यवसाय खेती है, किन्तु धीरे–धीरे लोग कृषि के अलावा अन्य उद्यम जैसे – उद्योग, व्यापार एवं सेवा की ओर आकर्षित हो रहे है। शासन द्वारा रीवा जिले को औद्योगिकरण की श्रेणी के तहत् पिछड़ा **'स'** श्रेणी के अन्तर्गत वर्गीकृत किया गया है। जिले में कृषि वन एवं खनिज सम्पदा पर आधारित औद्योगिक इकाईयॉ कार्यरत है, औद्योगिक इकाईयों का उत्पादन तब तक उपयोगी नहीं है, जब तक इनके विपणन का समुचित प्रबंध न हो। यद्यपि आधुनिक युग में उत्पादित वस्तुओं की दुर्लभता नहीं है, किन्तु समुचित आकार के बाजार की दुर्लभता अवश्य हैं।

रीवा जिले के विभिन्न इकाईयों द्वारा उत्पादित वस्तुओं का विपणन का ढॉचा स्थानीय, प्रादेशिक, राष्ट्रीय एवं अर्न्तराष्ट्रीय स्तर का है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध में प्राथमिक एंव द्वितीयक समंको का प्रयोग किया गया है।

उद्देश्य :

1. रीवा जिले में लघु एवं कुटीर उद्योगों द्वारा उत्पादित वस्तुओं की जानकारी उपलब्ध कराना।
2. जिले में औद्योगिक इकाईयों द्वारा उत्पादित की जाने वाली वस्तुओं के विपणन क्षेत्र से परिचित कराना।
3. औद्योगिक जिले को औद्योगिक विकास की संभावनाओं से परिचित कराना।

रीवा जिले में लघु एवं कुटीर औद्योगिक इकाईयों द्वारा उत्पादित माल का स्थानीय, प्रादेशिक, राष्ट्रीय एवं अर्न्तराष्ट्रीय विपणन हो रहा है।

स्थानीय विपणन :

सारणी क्रमांक–01 : जिलें के विभिन्न प्रमाप उद्योगो द्वारा वस्तुओं का स्थानीय विपणन

क्र.	उद्योग का नाम	औधोगिक इकाईयों का आकार	उत्पादित वस्तु
1	सुपाड़ी खिलौना उद्योग, रीवा	कुटीर	सुपाड़ी के खिलौने
2	सॉची टाइल्स, रीवा	लघु	मौजेक टाइल्स
3	काष्ठ खिलौना उद्योग, रीवा	कुटीर	लकड़ी के खिलौने
4	हस्तकरघा उद्योग, रीवा	कुटीर	परदे के कपडे
5	बीड़ी उद्योग	कुटीर	बीड़ी
6	चर्म शिल्प	कुटीर	जूता/चप्पल
7	कुम्हारी उद्योग	कुटीर	गमला, मटके
8	ईंट भट्टा उद्योग	कुटीर	कुल्हड़, ईंट
9	दरी निर्माण उद्योग	कुटीर	ऊन, दरी
10	पीतल/कॉसा बर्तन उद्योग	कुटीर	पीतल कॉसा बर्तन
11	लोहरी उद्योग	कुटीर	सरोता, खुरपी
12	तेल धानी, उद्योग	कुटीर	अलसी/सरसो तेल
13	बेंत बॉस उद्योग	कुटीर	टोकरी, इलियॉ, सूपा, चटाई

स्त्रोत व्यक्तिगत सर्वेक्षण के द्वारा

सारणी क्र. 01 से स्पष्ट है कि रीवा जिले में स्थापित एवं उत्पादन कार्यो में संलग्न लघु एवं कुटीर उद्योगों द्वारा उत्पादित वस्तुओं का स्थानीय विपणन में महत्वपूर्ण योगदान है।

रीवा जिले का सुपाड़ी खिलौना उद्योग जिले में स्थित हस्तशिल्प कर्मियों की हस्तकला की एक अद्भुत मिसाल है। पूरे प्रदेश में सुपाडी के खिलौने सिर्फ रीवा जिले में ही बनाये जाते है। सुपाड़ी के टुकड़ो को जोड़कर ताजमहल, टेबिल लैम्प, कंगारू सेट, टी–सेट, देवताओं की मूर्तियॉ, पंचमुखी मंदिर, चूड़ीदान, अंगूठी, छड़ी इत्यादि प्रतिकृतियॉ बनाई जाती है।

जिले के पर्दे के कपड़े स्थानीय हस्तकरधा इकाईयों के महत्वपूर्ण उत्पाद माने जाते है, इसके अतिरिक्त रीवा जिले के मऊगंज एवं हनुमना विकाखण्डों में दरी/कालीन बुनाई में लगे शिल्पियों का भी स्थानीय विपणन ढॉचे में अपना एक अलग स्थान है। रीवा जिले में बीड़ी निर्माण में संलग्न औद्योगिक इकाईयों का स्थानीय विपणन के अतिरिक्त प्रादेशिक एवं राष्ट्रीय विपणन में भी योगदान है।

इस महत्वपूर्ण कुटीर उद्योगों के अतिरिक्त काष्ठ खिलौना, चर्मशिल्प, कुम्हारी ईंट भट्टा, लोहारी, तेलधानी, कॉसा, पीतल, बर्तन एवं बेत, बॉस उद्योग जिले की महत्वपूर्ण औधोगिक इकाईयॉ है, जो कुटीर उद्योग के क्षेत्र में निरन्तर उत्पादनरत रहकर स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति कर विपणन

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मुरैना (म.प्र.) भारत

द्वारा स्थानीय अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में अपनी अलग-अलग पहचान स्थापित किये हुये है।

प्रादेशिक विपणन – मध्यप्रदेश के रीवा जिलें में स्थापित लधु एवं कुटीर औद्योगिक इकाईयॉ विपणन की दृष्टि से केवल स्थानीय महत्व की ही नही, अपितु प्रदेश के विभिन्न भागों में स्थित उद्योग समूहों एवं उपभोक्ताओं के दृष्टिकोण से अपना विशिष्ट स्थान रखती है।

रीवा जिले के विभिन्न प्रमाप उद्योगों द्वारा प्रादेशिक विपणन :

सारणी क्रमांक-02

क्र.	उद्योग का नाम	औद्योगिक इकाईयों का आकार	उत्पादित वस्तु
1	सुपाड़ी खिलौना, उद्योग	कुटीर	सुपाड़ी के खिलौने
2	बीड़ी उद्योग	कुटीर	बीड़ी
3	हस्तकरधा उद्योग	कुटीर	परदे के कपड़े
4	दरी निर्माण उद्योग	कुटीर	दरी

स्त्रोत व्यक्तिगत सर्वेक्षण के द्वारा

रीवा जिले में स्थित सुपाड़ी खिलौना उद्योग में उद्यमरत शिल्पियों द्वारा उत्पादित सुपाड़ी के खिलौने मध्यप्रदेश हस्तशिल्प निगम के माध्यम से क्रय किये जाते है। इसके अतिरिक्त आसपास के क्षेत्रीय व्यापारियों द्वारा भी मॉग पर इसका विक्रय किया जाता है। रीवा जिले में बीड़ी व्यापारी क्षेत्र के निर्मित उत्पाद प्रादेशिक विपणन में समर्थ है। हस्तकरधा एवं दरी निर्माण में संलग्न कुटीर उद्यमियों द्वारा मध्यप्रदेश हस्तकरधा बोर्ड एवं स्वयं के पारिवारिक सदस्यों के माध्यम से उत्पादित माल के विपणन की व्यवस्था की जाती है।

राष्ट्रीय विपणन :

सारणी क्रमांक-03 : रीवा जिले के विभिन्न प्रमाप उद्योगों द्वारा वस्तुओं का राष्ट्रीय विपणन

क्र.	उद्योग का नाम	औद्योगिक इकाईयों का आकार	उत्पादित वस्तु
1	बीड़ी उद्योग	कुटीर	बीड़ी
2	सुपाड़ी खिलौना उद्योग	कुटीर	सुपाड़ी के खिलौने

स्त्रोत - व्यक्तिगत सर्वेक्षण द्वारा

कुटीर उद्योग श्रेणी समूह की मात्र दो इकाईयॉ ही जिले में राष्ट्रीय विपणन में योगदान दे रही है। मध्यप्रदेश हस्तशिल्प विकास निगम के माध्यम से सुपाड़ी खिलौना उद्योग में उद्यमरत हस्तशिल्पी अपने द्वारा उत्पादित माल विक्रय कर पा रहें है। जिले में बनी बीड़ियों का विक्रय निर्माता प्रमण्डलों के माध्यम से देश के विभिन्न भागों में किया जा रहा है।

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन – रीवा जिला का सुपाड़ी खिलौना उद्योग हस्तशिल्प की दृष्टि से अद्धितीय है, किन्तु साधनों एवं पर्याप्त विपणन माध्यम के अभाव क्षेत्र में क्षेत्र के इस अद्धितीय शिल्प को यथा योग्य पुरस्कार अभी तक नहीं मिल पाया है। इस अद्धितीय शिल्पकला में उद्यमरत शिल्पियों एवं इस शिल्प के संरक्षण के लिये विपणन के उचित माध्यम के तलाशने की आज सर्वाधिक आवश्यकता है, अन्यथा समय के साथ यह परम्परागत शिल्पकला इस क्षेत्र में विलुप्त हो जायेगी, जबकि इस शिल्प में उद्यमरत उद्यमियों को अपने उत्पाद के विपणन के लिये यदि उचित माध्यम उपलब्ध हो तो इसमें कोई संदेह नहीं कि ये शिल्प अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक का बाजार विकसित कर विदेशी मुद्रा अर्जित कर स्वयं क्षेत्र एवं राष्ट्र की अर्थव्यवस्था में अपना योगदान दे सकने में सक्षम है।

सुझाव – रीवा जिले में निम्न उद्योगो के विकास की भारी संभावनाऐ है कृषि आधारित उद्योग जैसे :- मशीनों का निर्माण, उर्वरक कारखाना, गेहूँ, तथा सोयाबीन वाले उद्योगों की स्थापना, चीनी मिल, दाल मिल, तेल मिल, कागज एवं पशु आहार उद्योग आदि विकसित किये जा सकते है। खनिजों पर आधारित उद्योगों के अन्तर्गत इस क्षेत्र में चूना भट्टा, कॉच, फैक्ट्री पत्थर उद्योग इत्यादि। कोयला तथा लोहा आदि महत्वपूर्ण खनिजों का अभाव है किन्तु यह क्षेत्र कृषि से समृद्ध है। अत: कृषि पर आधारित उद्योगों के लिये पर्याप्त कच्चामाल सहजता से उपलब्ध हो सकता है।

जिले में रेलमार्गो की स्थिति निराशाजनक है। रीवा को छोडकर अन्य किसी भी क्षेत्र में रेलमार्ग की सुविधा नहीं है। रीवा जिले में सड़क परिवहन का विकास भी आशाजनक नहीं है। अत: केन्द्र एवं राज्य सरकारो को परिवहन सुविधा के विस्तार का सघन प्रयास करना चाहिये, ताकि औधोगिक विकास प्रक्रिया को तीव्र किया जा सकें तथा स्थानीय राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. विपणन के सिद्धांत - डॉ एस.सी.जैन
2. प्रतियोगिता दर्पण अतिरिक्तांक
3. जिला उद्योग केन्द्र का वार्षिक प्रतिवेदन वर्ष 2013, 2014
4. रीवा पत्रिका वर्ष 2011, 2012, 2013, 2014
5. शोध प्रबंध
6. विभिन्न बेबसाइट
7. अन्तर्राष्ट्रीय विपणन - डॉ. एस.सी.जैन

****

वाणिज्य शिक्षा के माध्यम से छात्राओं में बढ़ती रोजगार प्राप्ति की संभावनाएँ (उज्जैन जिले के महाविद्यालयों की पूर्व छात्राओं के विशेष सन्दर्भ में)

डॉ. परमसिंह पटेल * माधुरी यादव **

प्रस्तावना – वर्तमान युग विज्ञान और प्रौद्योगिकी का युग है। प्रौद्योगिकी का विकास शिक्षा एवं मानवीय आवश्यकताओं द्वारा होता है। शिक्षा एक व्यापक शब्द है। मानव समाज में यह माना जाता है कि शिक्षित के लिए रोजगार की कमी नहीं है। शिक्षा का अर्थ ऐसे ज्ञान से है, जिससे हमारे युवाओं का सर्वांगीण विकास हो सके। उसे किताबी ज्ञान के साथ-साथ व्यावहारिक ज्ञान भी मिल सके। वाणिज्यिक गतिविधियों से सम्बन्धित शिक्षा का आरम्भ सिन्धु घाटी सभ्यता काल से ही होता चला आ रहा है। आदिम काल में मानव अपने जीवन यापन हेतु जो उत्पादन, उपभोग, वितरण एवं विनिमय करता था उसमें भी वाणिज्यिक शिक्षा केन्द्र में समाहित थी। आज यत्र तत्र सर्वत्र यही हो रहा है कि शिक्षा का प्रत्यक्ष संबंध रोजगार से होना चाहिये, अर्थात् ऐसी शिक्षा दी एवं ली जानी चाहिए, जो वाणिज्यिक गतिविधियों में सहायता प्रदान करके रोजगार दे सके। प्राचीन समय से ही यह सूत्र वाक्य रहा है कि शिक्षा का उद्देश्य रोजगार देना नहीं है। समूची शिक्षा और प्रशिक्षण का उद्देश्य मनुष्य का विकास, उसकी बुद्धिमता का विकास एवं उसके व्यक्तित्व का विकास करना है। जिस संयम के द्वारा इच्छा शक्ति का प्रवाह और विकास किया जाता है और वह फलदायक होता है, वही शिक्षा कहलाती है। इसलिए मानवीय बुद्धिमता को इतना विकसित कर देना की रोजगार स्वयं उसके पास चले आये। भारतीय संदर्भ में मालवीय भाषा में कहा जाता है कि – ***आजकल का छोरा-छोरी पढ़या तो है पर गुणया कोनी। अर्थात् आजकल की पीढ़ी पढ़ी लिखी तो है लेकिन गुणवान नहीं।*** यह एकदम प्रासंगिक एवं सार्थक तथ्य है। हमारी वर्तमान वाणिज्य शिक्षा में रोजगार प्रदान करने की भरपूर संभावना है। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग भी वाणिज्य विषय में शिक्षितों को रोजगार मूलक बनाने, उसमें श्रेष्ठ गुणवत्ता लाने हेतु प्रयासरत् है। वाणिज्य का सबसे ज्यादा संबंध उद्योगों, व्यवसायों, बैंकों, बीमा क्षेत्रों एवं इन सभी में काम करवाने वालों एवं करने वालों से होता है। वाणिज्य में स्नातक एवं स्नातकोत्तर छात्र को उतना रोजगार प्राप्ति के लिए भटकना नहीं पड़ता है जितना कि अन्य विषय में शिक्षित छात्र-छात्राओं को वर्तमान समय वर्ष 2016 में भटकना पड़ रहा है।

व्यापार, व्यवसाय, वाणिज्य के प्रत्येक घटक से रोजगार सृजन स्वत: प्रस्फूटित होता है, अत: इनका अध्ययन करने वाले को बेरोजगार होना ही नहीं चाहिए। आज वाणिज्य क्षेत्र में अकादमिक लोगों की मत भिन्नता यही है कि हमारा उत्पाद बाजार में खप नहीं पा रहा है तथा स्थानीय व्यवसायी, उद्योगपतियों की मत भिन्नता यह है कि उन्हें काम करने वाले योग्य व्यक्ति नहीं मिल पा रहे हैं। काम देने वाले कह रहे हैं कि काम करने वाले नहीं हैं। काम चाहने वाले कह रहे हैं कि उन्हें काम नहीं मिल रहा है। इस समस्या का समाधान स्थानीय व्यवसाय, उद्योगों एवं व्यापार तथा वाणिज्य शिक्षा में परस्पर और निरंतर संवाद बना कर किया जा सकता है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य – मानव एक सामाजिक प्राणी है। उनके द्वारा किये जाने वाले प्रत्येक कार्य के पीछे कोई न कोई उद्देश्य अवश्य रहता है। वाणिज्य विषय का महत्व, व्यापार, व्यवसाय वाणिज्यिक गतिविधियों के कारण लगातार विस्तृत होता जा रहा है, इसका कार्यक्षेत्र लगातार बढ़ रहा है। वाणिज्य शिक्षा के माध्यम से युवतियों में बढ़ती रोजगार की संभावनाऐं संबंधित प्रस्तुत शोध अध्ययन के वाणिज्यिक दृष्टिकोण से निम्न उद्देश्य है :-

1. वाणिज्य विषय द्वारा रोजगार प्राप्ति सम्बन्धित सम्पूर्ण जानकारियाँ प्राप्त करना।
2. शासकीय क्षेत्र में रोजगार प्राप्ति सम्बन्धित स्वरूपों का अध्ययन करना।
3. अशासकीय क्षेत्र (निजी) में वाणिज्य विषय से रोजगार प्राप्ति की संभावनाओं का अध्ययन करना।
4. वाणिज्य विषय द्वारा लघु-कुटीर उद्योगों तथा स्वयं सहायता समूह निर्माण सम्बन्धित अध्ययन करना।
5. वाणिज्य शिक्षितों की वर्तमान प्रस्थिति एवं भूमिका को ज्ञात करना।

अध्ययन की उपकल्पना – उपकल्पना दो शब्दों उप + कल्पना के योग से बनी है, जिसका तात्पर्य है, पूर्व चिंतन। उपकल्पना इस बात का वर्णन करती है कि हम क्या देखना चाहते है? उपकल्पना भविष्य की ओर देखती है। यह एक तर्कपूर्ण वाक्य भी है, जिसकी वैधता की परीक्षा भी की जा सकती है। उपकल्पना शोध सम्बन्धित ऐसा विचार है जो अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। प्रस्तुत शोध कार्य को पूर्णता प्रदान करने हेतु यह उपकल्पना बनाई कि:-

1. वाणिज्य विषय अध्ययन से विभिन्न क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों की प्राप्ति संख्या लगातार बढ़ रही है।
2. शासकीय क्षेत्रों में रोजगार की प्राप्ति हो रही है।
3. अशासकीय क्षेत्रों में रोजगार की प्राप्ति हो रही है।
4. वाणिज्य शिक्षितों की वर्तमान प्रस्थिति एवं भूमिका में लगातार सकारात्मक परिवर्तन हो रहा है।

शोध प्रविधि : 1. अध्ययन क्षेत्र – सम्पूर्ण उज्जैन जिला।

2. अध्ययन का समग्र – उज्जैन जिले के विभिन्न महाविद्यालयों से वाणिज्य विषय में उच्च शिक्षा (बी.कॉम., एम.कॉम., एम.फिल., पीएच.डी.)

* विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला - उज्जैन (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (वाणिज्य) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

प्राप्त छात्राऐं।

3. अध्ययन इकाई – वाणिज्य विषय में शिक्षित तथा रोजगार प्राप्त कर चुकी उज्जैन जिले की छात्राऐं।

दैव निदर्शन विधि की लाटरी प्रणाली से समग्र में से 100 अध्ययन इकाईयों का चयन करके शोध कार्य पूर्ण किया गया है।

तथ्य संकलन :

1. प्राथमिक तथ्य – साक्षात्कार अनुसूची, अवलोकन, समूच चर्चा।

2. द्वितीयक तथ्य – पत्र-पत्रिका, समाचार पत्रों, शोध रिपोर्ट, शोध आँकड़े, गजेटियर, एन.जी.ओ. की रिपोर्ट, जर्नल्स, शासकीय-अशासकीय रिपोर्ट आदि से प्राप्त किये गये हैं।

निष्कर्ष :

1. वाणिज्य विषय द्वारा रोजगार प्राप्ति के सम्बन्ध में किये गये प्रश्नों पर 79 प्रतिशत उत्तरदाताओं को इस विषय के अध्ययन उपरान्त रोजगार प्राप्ति सम्बन्धित जानकारी विस्तृत रूप में मिली है।
2. शासकीय सेवा में रोजगार प्राप्ति सम्बन्धित स्वरूपों के विषय में 47 प्रतिशत उत्तरदाता बैंकिंग के क्षेत्र में 29 प्रतिशत सिविल सर्विस में, 19 प्रतिशत उत्तरदाता स्वरोजगार तथा शेष 5 प्रतिशत अन्य क्षेत्र में कैरियर बना रही हैं।
3. अशासकीय क्षेत्र (निजी) में वाणिज्य विषय से रोजगार प्राप्ति सम्बन्धित अध्ययन विश्लेषण में 87 प्रतिशत उत्तरदाताओं को पर्याप्त जानकारी पाई गई है।
4. वाणिज्य विषय द्वारा लघु-कुटीर उद्योगों तथा स्वयं सहायता समूह निर्माण सम्बन्धित अध्ययन प्रश्नों पर 58 प्रतिशत ने पूर्ण सहमति, 33 प्रतिशत ने आंशिक सहमति तथा 9 प्रतिशत ने अपनी असहमति दर्शाई है।
5. वाणिज्य शिक्षितों की वर्तमान प्रस्थिति, सम्बन्धित प्रश्नों पर 69 प्रतिशत ने अपनी प्रस्थिति उच्च, 27 प्रतिशत ने सामान्य तथा शेष 4 प्रतिशत ने निम्न बताई है।
6. अन्य विषयों में अध्ययन-अध्यापन के बजाय वाणिज्य विषय में अध्ययन-अध्यापन सरल विभिन्न महाविद्यालयों में प्रवेश लेने वाले सभी विद्यार्थियों की संख्या में सर्वाधिक पसंदीदा विषय वाणिज्य कोचिंग संस्थानों की उपलब्धता तथा स्वग्राही स्वअध्ययन से तैयार हो सकने के कारण यह विषय सर्वाधिक लोकप्रिय विषय है। इस तथ्य को शत प्रतिशत (100 प्रतिशत) उत्तरदाताओं ने स्वीकारा है।
7. वाणिज्य विषय में अध्ययन से मानवीय जीवन गतिविधियों के विभिन्न क्षेत्रों में रोजगार प्राप्ति के अवसरों की संख्या बढ़ रही है। 89 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपना जवाब हाँ में दिया है। 7 प्रतिशत ने कुछ निश्चित नहीं कहा जा सकता तथा 4 प्रतिशत ने असहमति दर्ज कराई है।
8. 93 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि वाणिज्य विषय अध्ययन से शासकीय क्षेत्रों (बैंकिंग, वाणिज्यिक संस्थानों, शासकीय सेवाओं, पोस्ट आफीस, सोसायटी, संघ लोक सेवा आयोग तथा म.प्र. राज्य लोक सेवा आयोग में) रोजगार प्राप्ति की संभावनाएँ लगातार बढ़ रही हैं।
9. अशासकीय क्षेत्रों - विभिन्न निजी संस्थाओं, संगठनों, कोचिंग संस्थानों, निजी विद्यालयों, महाविद्यालयों में भी रोजगार प्राप्ति की संभावनाऐं, 88 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार धीरे-धीरे प्रगति पथ पर अग्रसर है।
10. वाणिज्य विषय में उच्च शिक्षित की वर्तमान प्रस्थिति एवं भूमिका में सकारात्मक परिवर्तन सम्बन्धित विभिन्न प्रश्न उत्तरदाता छात्राओं से किये गये। कुल 79 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपनी वर्तमान प्रस्थिति एवम् भूमिका में सकारात्मक परिवर्तनों को उच्च, 18 प्रतिशत ने सामान्य तथा 3 प्रतिशत से पूर्व अनुसार (कोई परिवर्तन नहीं) माना है।
11. किस विषय में सर्वाधिक रोजगार प्राप्ति संभव है? प्रश्न पर शत प्रतिशत (100) उत्तरदाताओं ने वाणिज्य विषय पर अपनी स्वीकृति प्रदान की है।
12. आप अपने से जुड़े किसी अन्य व्यक्ति को वाणिज्य विषय में शिक्षा लेने हेतु प्रेरित करने सम्बन्धित प्रश्न पर 96 प्रतिशत ने अपना उत्तर हाँ में दिया है जो इस विषय की लोकप्रियता, श्रेष्ठता का सूचक है।

शोध अध्ययन का महत्व – वर्तमान समय वर्ष-2016 में प्रस्तुत शोध 'वाणिज्य शिक्षा के माध्यम से युवतियों में बढ़ती रोजगार प्राप्ति की संभावनाऐं' महत्वपूर्ण एवं समसामयिक संदर्भ में विशिष्ट विषय है। इसकी वर्तमान समय में प्रासंगिकता एवं महत्व बहुत अधिक है। मध्यप्रदेश शासन उच्च शिक्षा विभाग की रिपोर्ट वर्ष 2012-13 तथा 2013-14 के अनुसार प्रदेश के समस्त शासकीय एवं निजी महाविद्यालयों में विभिन्न स्नातक एवं स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों में प्रवेश लेने वाले विद्यार्थियों में सर्वाधिक संख्या वाणिज्य विषय में प्रवेश लेने वाले विद्यार्थियों की है। कारण स्पष्ट है कि इस विषय में अध्ययन-अध्यापन के बाद रोजगार की संभावनाऐं बहुत अधिक बनती है। लिपिक, लेखापाल, रोकड़िया, अंकेक्षक, मैनेजर, स्कूल वाणिज्य शिक्षक (कक्षा 11वीं, 12वीं) महाविद्यालयीन वाणिज्यिक शिक्षक (असि. प्रोफेसर, प्रोफेसर, रीडर) सी.ए., कराधान अधिकारी तथा म.प्र. लोक सेवा आयोग द्वारा कुछ विशेष विभागों जैसे - वाणिज्यकर, सेल्स टैक्स, इन्कम टैक्स के कुछ निश्चित पदों की पूर्ति वाणिज्य विषय में उच्च शिक्षितों से ही की जाती है। इसके अलावा वर्तमान समय में कम्प्यूटर आपरेटर, निजी सहायक (पी.ए.) रिसेप्शन, आवक-जावक, ऑडिट, वित्त व्यवस्थापक, एकाउटेंट जमाकर्ता आदि के पदों पर निजी संस्थानों में भी वाणिज्य विषय के उच्च शिक्षितों को ही प्राथमिकता दी जा रही है जो इसके बढ़ते महत्व तथा वाणिज्य शिक्षा के माध्यम से युवतियों में बढ़ती रोजगार प्राप्ति की संभावनाओं का सूचक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची : -

1. योजना, कुरूक्षेत्र, इंडिया टुडे, फ्रन्ट लाईन, पत्रिकाओं से प्राप्त अध्ययन सामग्री।
2. विभिन्न समाचार पत्रों के वाणिज्य शोध विषय सम्बन्धित संपादकीय आलेख।
3. कम्प्यूटर, इंटरनेट पर उपलब्ध विषय सम्बन्धित अध्ययन सामग्री।
4. वाणिज्य अध्ययन - रोजगार प्राप्ति की संभावनाऐं, अंतुल प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण-2015।
5. राष्ट्रीय साप्ताहिक समाचार पत्र, रोजगार-समाचार (नई दिल्ली से प्रकाशित) में छपे वाणिज्यिक मुद्दे, शोध विषय अध्ययन सामग्री।
6. वाणिज्य विषय सम्बन्धित-शासन की योजनाऐं एवं कार्यक्रम, वार्षिक रिपोर्ट-2014-15, प्रकाशक-सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
7. समूह चर्चा, अवलोकन, वाद-विवाद प्रतियोगिता से प्राप्त निष्कर्ष।
8. विभिन्न वाणिज्यिक केस स्टडीज का अध्ययन।
9. विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय रिसर्च जर्नल्स से प्राप्त शोध विषय अध्ययन सामग्री।
10. विभिन्न प्रकाशित, अप्रकाशित शोध प्रबंधों से विषय रिपोर्टस सम्बन्धित आँकड़े।

म.प्र. में कृषि विपणन के विकास हेतु संचालित विभिन्न शासकीय नीतियाँ एवं योजनाएँ (एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)

डॉ. आभा सिंह * कविता खत्री **

प्रस्तावना – वैश्विकरण के पश्चात् की अवधि में नवीन कृषि नीतियों, शोध एवं अनुसंधान का प्रयोग खासतौर पर पिछड़े क्षेत्रों में किया गया। जिससे कि पिछड़े क्षेत्रों का संतुलित विकास हो सके। कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था में अब तक (1991 तक) परंपरागत कृषि प्रणाली को ही आधार माना जाता था। किसानों द्वारा पुरानी व प्राचीन हो चुकी कृषि पद्धति का इस्तेमाल किया जाता था। किसानों को उत्पादन तकनीक से लेकर बाजार की स्थिति और विपणन तकनीकों की सही जानकारियाँ प्राप्त नहीं हो पाती थी। अत: सन् 1991 से देश ने घोषित रूप से वैश्वीकरण का रास्ता अपनाया। नई-नई नीतियों की घोषणाएँ की गई वैश्वीकरण के दो दशकों के बाद की स्थिति को देखें तो कहा जा सकता है कि भारतीय कृषि ने विश्व में अपनी एक नई एवं पृथक पहचान कायम की है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत के संतुलित आर्थिक विकास हेतु यद्यपि नियोजन की प्रक्रिया को एक मूलभूत यंत्र के रूप में अपनाने का निर्णय लिया गया था। इसे ठोस रूप देने के लिए भारतीय संविधान में अनुच्छेद 38 और 39 के नीति निर्देशक सिद्धान्त के रूप में प्रावधानों के अनुरूप अपनाने की रूप रेखा बाद में तैयार की गई। इसके अंतर्गत पंचवर्षीय योजनाएँ बनाई गई और इसमें कृषि को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई।

कृषि विपणन के विकास हेतु विभिन्न शासकीय प्रयास :

- कृषि क्षेत्र के विकास हेतु सरकार द्वारा आगामी 5 वर्षो के नियोजन हेतु पंचवर्षीय योजनाऐं तैयार की जाती हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति से लेकर वर्तमान समय तक बारह पंचवर्षीय योजनाऐं लागू की जा चुकी हैं। सामान्यत: प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में कृषि क्षेत्र को विशेष प्राथमिकता देते हुए कुल व्यय राशि का औसतन 22 प्रतिशत से 27 प्रतिशत तक बजट प्रावधान रखा जाता है ताकि कृषि उत्पादन एवं विपणन क्षेत्र को और अधिक विकसित किया जा सके।
- किसानों की सहायता हेतु भोपाल में किसान काल सेन्टर की स्थापना की गई है। यह सेन्टर किसानों को समस्त कृषिगत जानकारियाँ प्रदान करता है। इस हेतु किसानों द्वारा टोल फ्री नम्बर 18002334499 पर कॉल करके जानकारियाँ प्राप्त की जाती है।
- किसानों की समस्याओं का समाधान करने हेतु विदिशा जिले के सिरोंज तहसील में सामुदायिक रेडियो स्टेशन की स्थापना की गई है ताकि समय-समय पर उनकी समस्याओं को रेडियो के द्वारा सुनकर उनका समाधान किया जा सके।
- ATM संदेश, एक मासिक प्रकाशन वाली पत्रिका है जो कि प्रत्येक मास 48 जिले के प्रत्येक क्षेत्रीय कार्यालयों में वितरित की जाती है ताकि प्रत्येक जिले के किसानों व कृषि का विकास हो सके।
- सूचना एवं संचार का समर्थन कृषि उत्पादन कार्यक्रम- नई सूचनाएँ और नवीन कृषि तकनीकी ज्ञान का विस्तार करने हेतु इस योजना के अंतर्गत कृषि मेलों व प्रदर्शनियों का आयोजन किया जाता है। जिससे किसानों को उच्च उत्पादन हेतु नवीन कृषि पद्धतियों व नवीन तकनीकों का प्रशिक्षण व ज्ञान उपलब्ध कराया जा सके।
- म.प्र. में कृषकों को फसल ऋण 3 प्रतिशत ब्याज दर पर उपलब्ध कराने का निर्णय लिया गया है जो देश में न्यूनतम है।
- भारत सरकार द्वारा घोषित समर्थन मूल्य के अतिरिक्त प्रदेश सरकार ने गेहूं व धान की खरीदी पर क्रमश: रू. 100 एवं 50 का बोनस प्रति क्विंटल खरीदी पर घोषित किया है।
- किसान कल्याण तथा कृषि विकास विभाग के अधीन क्रियान्वित योजनाओं में देय अनुदान की राशि कृषकों के बैंक खाते में सीधे जमा कराने का निर्णय लिया गया है।
- मिक्सर उर्वरक 12:32:16 एवं 20:20:0 को म.प्र. में प्रतिबंधित करने की अधिसूचना जारी की गई है।
- कृषकों के हितों के संरक्षण के लिए म.प्र. के पास बीज विनिमय एवं विक्रय मूल्य निर्धारण प्रतिबंधित करने की अधिसूचना जारी की गई है।
- गहरी जुताई को प्रोत्साहित करने के लिए हलधर योजना प्रारंभ की गई, जिसके अंतर्गत रू. एक हजार प्रति हैक्टेयर अनुदान दिया जा रहा है।
- सिंचाई जल के बेहतर उपयोग को बढ़ावा देने के लिए राज्य सरकार द्वारा स्प्रिंकलर एवं ड्रिब सिंचाई प्रणालियों को 30 प्रतिशत टॉपअप अनुदान देने का निर्णय लिया गया है।
- म.प्र. के जबलपुर में कृषि क्षेत्र की विश्वविख्यात सीमिट संस्था, मेक्सिको के सहयोग से अंतर्राष्ट्रीय गेहूँ एवं मक्का अनुसंधान केन्द्र की स्थापना

* प्राध्यापक (वाणिज्य) महारानी लक्ष्मीबाई शास. कन्या स्नातकोत्तर (स्वशासी) महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

कृषि वैज्ञानिक डॉ. बोरलॉग के नाम से किये जाने का निर्णय लिया गया है।

- सरकार द्वारा जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए पृथक से जैविक कृषि खेती नीति तैयार की गई है।
- प्रत्येक कृषक को उनके खेत की मिट्टी का परीक्षण करके स्वाईल हैल्थ कार्ड उपलब्ध कराने का निर्णय लिया गया है।
- दलहन एवं तिलहन की उत्पादकता के बढ़ाने के लिए ट्रेक्टर एवं नवीन कृषि यंत्रों की 250 यूनिटें विभिन्न जिलों में कस्टम हायरिंग के लिये स्थापित की जा रही है।
- मध्यप्रदेश में अनुसूचित जाति एंव जनजाति की संख्या भारत में सर्वाधिक है। इसीलिए उनके रोजगार सृजन हेतु उन्हें विशिष्ट प्रशिक्षण देने, उनकी आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने, रोजगार कौशल के विकास करने हेतु बारहवीं पंचवर्षीय योजना में अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के भूमिहीन किसानों हेतु विशेष प्रशिक्षण की शुरूआत की गई है।
- इस योजना का मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के किसानों को यह प्रोत्साहित करना था कि वे कम उत्पादक बाजारों की खेती के स्थान पर उच्च उत्पादक क्षमता वाली तिलहनों और दालों की खेती को अपनाए। इस योजना के मुख्य घटक इस प्रकार है –

1. बीज उत्पादन
2. बीज विनिमय
3. बीज विपणन

- **अन्नपूर्णा योजना–** इस योजना का मुख्य उद्देश्य भी सूरजधारा योजना के ही समान अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के किसानों को यह प्रोत्साहित करना था कि वे कम उत्पादक बाजरा के स्थान पर उच्च उत्पादन वाले अनाजों का उत्पादन करें। इसलिए इस योजना का नाम अन्नपूर्णा रखा गया था। इस योजना के भी मुख्य घटक उक्त ही है।

उपसंहार – उक्त सभी योजनाएँ केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकार द्वारा समय–समय पर कृषि क्षेत्र के विकास एवं सुविधाओं के विस्तार के लिए नियोजित की गई है। जिससे कृषक एवं कृषि उपज विपणन कर्त्ता अपने ही कार्य को और अधिक आधुनिक एवं सुविधाजनक तरीके से कर सके साथ ही अपनी कार्यक्षमता को भी बढ़ा सके। प्राचीन समय में कृषि कार्य को पिछड़ा एवं अलाभदायक कार्य माना जाता था क्योंकि इसमें शारीरिक श्रम अधिक एवं लाभदायकता कम थी। किन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् कृषि क्षेत्र को प्राथमिकता देते हुए सरकार द्वारा आर्थिक एवं तकनीकि हर प्रकार से प्रोत्साहन दिया गया। फलस्वरूप कृषि क्षेत्र वर्तमान में अधिक लाभदायक हो गया है। फलस्वरूप हमारे देश के नौजवानों का भी इस क्षेत्र में रूझान बढ़ा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. म.प्र. राज्य कृषि विपणन बोर्ड, भोपाल।
2. कृषि मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट।
3. कृषि विशेष, नई दुनिया, दैनिक समाचार पत्र।
4. www.mpmandiboard.com

****

मध्य प्रदेश में पर्यटन उद्यमिता की संभावना

डॉ. छाया मिश्रा * अंतरा किरकिरे **

प्रस्तावना – मेयर और बाल्डविन के अनुसार –जब आर्थिक स्थितियाँ अनुकूल होती है, तो विकास एक प्राकृतिक परिणाम के स्वरुप स्वत: ही नहीं होता बल्कि उसके लिए एक उत्प्रेरक एवं कारक की आवश्यकता होती है और इसके लिए उद्यमिता की गतिविधि की आवश्यकता होती है।

एक उद्योग के रुप में पर्यटन की महत्ता को विश्व में स्वीकार्यता मिल रही है। यह विश्व के सबसे तेज बढ़ते हुए उद्योगों में से एक है। असीम संभावनाओं को समेटे सेवा क्षेत्र में पर्यटन उद्योग एक बेहतरीन विकल्प है।

यदि पर्यटकों को प्रदान की जाने वाली विविध सेवाओं को सम्मिलित किया जाए, तो पर्यटन के क्षेत्र में उद्यमिता की अपार संभावनाए है। पर्यटन उद्यमिता में वे सभी व्यावसायिक गतिविधियाँ सम्मिलित है, जो पूरे पर्यटन क्षेत्र एवं संबंधित क्षेत्र का अंग है। इनमें परिवहन , होटल एवं केटरिंग , ट्रेवल एजेंसी, टूर संचालक, मनोरजंन स्थानो, कला, हस्तशिल्प के कार्यो का उत्पादन/विपणन, उद्यानो ऐतिहासिक महत्व के स्थलो का प्रबंधन शामिल है। मध्यप्रदेश भारत का हृदय स्थली कहलाता है। यह देश का दूसरा सबसे बड़ा राज्य है तथा इसके सात पड़ोसी राज्य है। म.प्र. की भौगोलिक स्थिति , जलवायु अनुकूल है। यहाँ की ऐतिहासिक धरोहर , संस्कृति, आदि समृद्ध है। पर्यटन की दृष्टि से मध्यप्रदेश देश का प्रमुख केन्द्र बनने की क्षमता रखता है।

अध्ययन की आवश्यकता – मध्यप्रदेश में भरपूर प्राकृतिक सौदर्य है। अनेक जलप्रपात नदिया झीलें अभ्यारण्य ऐतिहासिक इमारतें , किले स्मारक, प्राचीन मंदिर महल आदि है जो की पर्यटन की दृष्टि से महत्वपूर्ण है, इसके बावजूद म.प्र. में पर्यटन का पर्याप्त विकास नहीं हो पाया है।प्रस्तुत शोधपत्र में म.प्र में पर्यटन की संभावनाओं पर विश्लेषण किया गया है। म.प्र. राज्य पर्यटन निगम द्वारा वर्ष 2015–16 को पर्यटन वर्ष के रुप में मनाया जा रहा है तथा पर्यटन को प्रोत्साहित करने हेतु संपूर्ण वर्ष विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन किया जा रहा है। इस परिपेक्ष्य में सरकार द्वारा किये जा रहे प्रयासों का पर्यटन पर प्रभाव का अध्ययन पर्यटन उद्योग के लिये सहायक सिद्ध होगा।

उद्देश्य :

1. भारत में पर्यटन की स्थिति तथा म.प्र के योगदान का विश्लेषण करना।
2. मध्य प्रदेश में पर्यटन उद्योग की चुनौतियों एवं संभावनाओं की पहचान करना।
3. मध्य प्रदेश में पर्यटन की स्थिति का अध्ययन।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीय समंकों पर आधारित है।इसमें भारतीय पर्यटन उद्योग में म.प्र. की स्थिति पर अध्ययन केन्द्रित किया गया है।विभिन्न पत्रिकाओं ,शोधपत्रों वेबसाइट एवं इंटरनेट से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर विश्लेषण किया गया है।

पर्यटन उद्योग विश्व के बड़े उद्योगों में से एक है । आर्थिक विकास, रोजगार सृजन, एवं देश के समग्र विकास के लिए पर्यटन उद्योग महत्वपूर्ण है। पर्यटन उद्योग में वह क्षमता है जिससे ऊँची विकास दर हासिल की जा सकती है। अनेक सह उद्योग जैसे होटल उद्योग परिवहन आदि से जुड़े होने के कारण इन उद्योगों का विकास भी सुनिश्चित होता है।भारत में स्वतंत्रता के पश्चात द्वितीय पंचवर्षीय योजना में पर्यटन पर ध्यान दिया गया। छठी पंचवर्षीय योजना में पर्यटन को सामाजिक समरसता , एकता एवं आर्थिक विकास का महत्त्वपूर्ण साधन माना गया। पर्यटन का विकास 1980 के दषक से प्रारंभ हुआ।। पर्यटन हेतु राष्ट्रीय पर्यटन नीति की घोषणा 1982 में की गई। 1997 में नई पर्यटन नीति 1997 में जारी हुई जिसमें केन्द्र सरकार राज्य सरकार सार्वजनिक निकायों उपक्रमों की भूमिका तय की गई साथ ही पंचायती राज संस्थाओं स्थानीय संस्थाओं गैर सरकारी संगठनों युवाओं को आधिकारिक रुप से स्वीकृत किया।1960 में भारतीय पर्यटन विकास निगम की स्थापना की गई जिसका लक्ष्य भारत को पर्यटन गंतव्य के रुप में स्थापित करना है।

भारत में पर्यटन प्राप्तियां

वर्ष	रुपये में शुल्क करोड़ में	बदलाव
2009	53700	4.5
2010	64889	20.8
2011	77591	19.6
2012	94487	21.8
2013	107671	14.0
2014	123320	14.5
स्त्रोत पर्यटन मंत्रालय भारत सरकार		

भारत में विदेशी पर्यटक आगमन

* सहायक प्राध्यापक, श्री क्लाथ मार्केट कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

वर्ष	संख्या मिलियन में	बदलाव प्रतिशत
2009	5.17	-2.2
2010	5.78	11.8
2011	6.31	9.2
2012	6.58	4.3
2013	6.97	5.9
2014	7.68	10.2
स्त्रोत पर्यटन मंत्रालय भारत सरकार		

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि वर्ष 2014 के दौरान 7.68 मिलियन विदेशी पर्यटक आए एवं 10.2 प्रतिशत की वृद्धि दर हुई। यदि भारत की विश्व में स्थिति का आंकलन करे, तो पर्यटन मंत्रालय के अनुसार विदेशी पर्यटक आगमन में भारत की रैंक 41 है। तथा पर्यटन प्राप्तियों में भारत की हिस्सेदारी 1.58 प्रतिशत है।

वर्ष 2014 में भारत में विदेशी पर्यटक आगमन में भारत के शीर्ष दस राज्यों की हिस्सेदारी

क्र.	राज्य	संख्या	प्रतिशत
1	तमिलनाडू	4657630	20.6
2	महाराष्ट्र	4389098	19.4
3	उत्तरप्रदेश	2909735	12.9
4	दिल्ली	2319046	10.3
5	राजस्थान	1525574	6.8
6	पश्चिम बंगाल	1375740	6.1
7	केरला	923366	4.1
8	बिहार	829508	3.7
9	कर्नाटक	561870	2.5
10	हरियाणा	547367	2.4
स्त्रोत पर्यटन मंत्रालय भारत सरकार			

वर्ष 2014 में भारत में घरेलु पर्यटक आगमन में शीर्ष दस राज्यों की हिस्सेदारी

क्र.	राज्य	संख्या	प्रतिशत
1	तमिलनाडू	327555233	25.6
2	उत्तरप्रदेश	182820108	14.3
3	कर्नाटक	118283220	9.2
4	महाराष्ट्र	94127124	7.3
5	आंध्रप्रदेश	93306974	7.3
6	तेलंगााना	72399113	5.6
7	मध्यप्रदेश	63614525	5
8	पश्चिम बंगाल	49029590	3.8
9	झारखंड	33076491	2.6
10	राजस्थान	33076491	2.6
स्त्रोत पर्यटन मंत्रालय भारत सरकार			

यदि उपरोक्त तालिकाओं को देखें तो ज्ञात होता है कि मध्यप्रदेश घरेलू पर्यटक आगमन में सातवें क्रम पर है परंतु विदेशी पर्यटक आगमन में शीर्ष दस राज्यों में नहीं है।

मध्यप्रदेश में अनेक पर्यटन स्थल है। यह पर्यटन स्थल विभिन्न प्रकार के है जैसे ऐतिहासिक स्मारकों एवं मंदिरों के लिए विश्व प्रसिद्ध खजुराहो जिसे यूनेस्को द्वारा मान्यता प्राप्त है।सांची के स्तूप मांडू के महल व किले ग्वालियर व ओरछा के मंदिर जो आकर्षक वास्तुकारी के लिए प्रसिद्ध है।उज्जैन, महेश्वर ओंकारेश्वर अमरकंटक चित्रकूट आदि प्रमुख तीर्थ स्थल है। कान्हा बाधवगढ़ पेंच शिवपुरी आदि अभ्यारण्य है। पचमढ़ी भेड़ाघाट जैसे प्राकृतिक सौंदर्य के स्थान है। ताप्ती चंबल सोन बेतवा नर्मदा आदि प्रमुख नदियाँ है। विंध्याचल व सतपुड़ा पर्वत श्रंखला है।

मध्यप्रदेश में क्षमता होने के बावजूद पर्यटन का विकास अपेक्षाकृत नहीं हो सका है। इसके प्रमुख कारणों में अधोसंरचना का उचित विकास न हो पाना। परिवहन व रेल का अभाव होना है। लोगों को पर्यटन स्थलों की जानकारी नहीं है। पर्यटन स्थलों का उचित प्रचारप्रसार नहीं किया गया।अंर्तराष्ट्रीय स्तर के हवाइअड्डों का अभाव भी एक प्रंमुख कारण है।

हालांकि अब स्थिति बदल रही है। पिछले कुछ सालों में सड़को का निर्माण हुआ है। परिवहन सेवाओं में सुधार हुआ है। अधोसंरचना का विकास हुआ है।

वर्ष 2016 में म.प्र. में उज्जैन जिले में सिंहस्थ मेले का आयोजन हुआ है। यह मेला बारह वर्ष के अंतराल पर होता है। इसका धार्मिक एवं आध्यात्मिक महत्व भी हैं। पर्यटन की दृष्टि से सरकार के लिए यह स्वर्णिम अवसर है।पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए सरकार को हर संभव प्रयास करने चाहिए ताकि पर्यटन उद्योग का विकास हो सके।

पर्यटन उद्योग के विकास हेतु सुझाव :

1. विशिष्ट एवं कम लोकप्रिय स्थानों का प्रचार करना
2. वेबसाइट पर समस्त एवं सटीक जानकारी उपलब्ध कराना।
3. थीम पार्क /मनोरंजन पार्क विकसित करना।
4. आकर्षक टूर पैकैज उपलब्ध कराना।
5. जल स्त्रोतों के निकट वाटर स्पोर्ट की सुविधा विकसित करना।
6. मूलभूत सुविधाएं जैसे आवास परिवहन इत्यादि विकसित करना।

निष्कर्ष - पर्यटन संसार में बहुत बड़े उद्योग के रुप में विकसित हो रहा है। विदेशी मुद्रा अर्जन में सहायक है। अनेक उद्योगों से जुड़े होने के कारण रोजगार सृजन व इन उद्योगों के विकास में सहायक है। अत: पर्यटन विकास सरकार की प्राथमिकता होनी चाहिए। मध्य प्रदेश की अर्थव्यवस्था में पर्यटन की अहम भूमिका हो सकती है। म.प्र. के प्रमुख पर्यटन स्थलों को प्रचार एवं सुविधाओ के जरिए अधिक आकर्षक बनाया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पत्रिका योजना
2. वार्षिक प्रतिवेदन टूरिज्म सर्वे फार मध्यप्रदेश जून2011-मई2012
3. पर्यटन मंत्रालय भारत सरकार की वेबसाइट
4. पर्यटन मंत्रालय म.प्र. सरकार की वेबसाइट

****

कृषि विपणन की कार्यप्रणाली, वैधानिकता एवं प्रबंधन (छिन्दवाड़ा जिले के संदर्भ में)

डॉ. नोखेलाल साहू *

शोध सारांश – कृषि उत्पादन के पश्चात उत्पादित उपज को एकत्रिकरण किया जाता है। छिन्दवाड़ा, सौसर, पाण्डुर्णा तथा चौरई की कृषि उपज मंड़ियॉ सड़कों से जुड़ी हुई है। जिले के 65 प्रतिशत किसान अपनी उपज को मंण्डी प्रागंण में बेचते है, उपज एकत्रिकरण हेतु ट्रेक्टर ट्रॉली का अधिक उपयोग होता है। जिले में ग्रामीण व्यापारी द्वारा कृषि उपजो का लगभग 25 प्रतिशत एवं शेष 10 प्रतिशत घुमता फिरता व्यापारी द्वारा कृषि उपजो का एकत्रीकरण किया जाता है। जिले की मण्डियों में प्राय: व्यवसाय का समय 9 बजे से 12 बजे तथा अपराह् 2 बजे से 6 बजे तक निश्चित किये गये है। मण्डियों में छुटियों की घोषणा पहले से ही कर दी जाती है।

मंडी प्रांगंण में विक्रयर्थ हेतु लाई गई कृषि उपज को निलामी पद्धति से विक्रय हेतु सचिव मंडी समिति के निर्देशानुसार रखने तथा प्रदर्शित करने का प्रावधान किया गया है। कृषि उपज का प्रदर्शन हेतु रखने के पश्चात् उपज का मूल्य नीलामी पद्धती से तय किया जाता है, उपज की नीलामी का मूल्य समर्थन मुल्य से अधिक ही रहता है। नीलामी के वक्त थोक व्यापारी या अन्य किसी पक्षकार के किसी भी प्रकार के इशारे संकेतो के प्रयोग पर प्रतिबंध रहता है। उपज के नीलामी के पश्चात् कृषि उपज के तौर की व्यवस्था की जाती है। तुलाई का कार्य मण्डी प्रांगण में लाइसेन्सी तुलावटियों द्वारा की किया जाता है तुलावटी द्वारा निर्धारित प्रारुप में फसल की कुल तौल मात्रा की प्रविष्टि कर एक प्रति किसान को एवं एक प्रति क्रेता को दी जाती है।

प्रस्तावना – वस्तुत: कृषि विपणन एक व्यापक शब्द है सामान्यत: कृषि विपणन से आशय उन सभी कार्यो एवं सेवाओं के करने से है जिनके द्वारा वस्तु उत्पादक से अंतिम उपभोक्ता तक पहुँचती है इसके अन्तर्गत विपणन की सभी प्रक्रियाऐं – एकीकरण, परिवहन, भण्डारण, श्रेणीकरण, विधियन, जोखिम, वित्त व्यवस्था, विज्ञापन, प्रचार, क्रय विक्रय आदि सम्मिलित है। अर्थात् कृषि विपणन वे सभी क्रियाए अर्न्तनिहित है जो खाद्यान्न एवं कच्ची सामग्री को खतों अंतिम उपभोक्ता तक पहुँचाने में शामिल है।

शोध पत्र के व्यापक योजना में समंकों का संकलन दो प्रकार से किया गया है –

1. **प्राथमिक समंक** – ये वे समंकों है जिन्हें अनुसंधान करने वाला अपने प्रयोग कि लिये पहली बार इक्ठठा करता है हो सकता है कि उस विषय सम्बंध में आकड़े पहले भी एकत्रित किये गये हो भी अनुसंधान कर्ता अपने प्रयोग के लिये आरम्भ से अन्त तक नये सिरे से संमंक एकत्रित है। प्रथम बार संकलित होने के कारण उन्हें प्राथमिक समंक कहा जाता है।

''प्राथमिक तथ्य सामग्री का तात्पर्य इन सूचनाओं व आकड़ों से जिनको पहली बार संकलित किया गया हो तथा जिनके संतुलन का उत्तरदायित्व सर्वेक्षणकर्ता का अपना हो।'' – पी.व्ही. यंग के अनुसार

2. **द्वितीयक समंक –** *ये वे समंक है जिनका संकलन पहले से ही किसी अन्य व्यक्ति या संस्था द्वारा किया जा चुका हो और अनुसंधान कर्ता उन्हे ही अपने प्रयोग में लाता है यहॉ वहॉ संग्रहण नही करता वरन किसी अन्य उद्देश्य के लिये संकलित समाग्री को प्रयोग में लाता है।*

''द्वितीय लक्ष्य वे होते है जिन्हें मौलिक स्त्रोतो से एक बार प्राप्त कर लेने के पश्चात् काम में लिया गया हो एवं जिनका प्रसारण अधिकारी उस व्यक्ति से भिन्न होता है जिसने प्रथम बार तथ्य संकलन को नियत्रित किया था।''

– पी.व्ही. यंग के अनुसार

मंडी का परिचय – प्रचीन काल से ही भारतीय कृषि अर्थ व्यवस्था में कृषि उपजो के विपणन का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के शासन के महान अर्थशास्त्री कौटिल्य ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ अर्थशास्त्र में लिखा है कि राजा का कर्त्तव्य होता है। कि कृषि उपजो की क्रय विक्रय की व्यवस्था एक स्थान पर करवाये। देश में नियमित मंडी की स्थपना की आवश्यकता सर्वप्रथम अंग्रेजी शासन काल के दौरान इंग्लैड की कपडा मिलों को उचित कीमत पर कपास की पूर्ति हेतु हुई वर्ष 1886 में प्रथम मंडी की स्थपना हैदराबाद रेसीडेन्सी आदेश के अनुसार करंजां कपास मडी स्थापित हुई। म. प्र. राज्य के गठन के समय 1956 में कुल 87 उपज मंड़िया थी।

छिंदवाड़ा की तहसील पाण्डुना में कपास उत्पादन को बढ़ावा व संरक्षण देने के उद्देश्य से पाण्डुर्णा में 1964 में कृषि उपज मंडी की स्थपना की गई। इस प्रकार छिन्दवाड़ा जिले में 4 मुख्य उपज मंडिया है जो निम्न प्रकार है –

1. कृषि उपज मंडी पाडुर्णा
2. कृषि उपज मंडी छिदवाड़ा
3. कृषि उपज मंडी सौसर
4. कृषि उपज मंडी चौरई

कृषि उपज मंडी की कार्य प्रणाली एवं वैधानिकता :

1. **एकत्रीकरण –** बिखरी हुई कृषि उपज उत्पादन इकाईयों विभिन्न बाजारो में उचित समय, मात्रा एवं दिशा में पहुँचाने के उद्देश्य से एकत्र किया जाता है।
2. **छिंदवाड़ा जिले की नियंत्रित मंडिया –** छिंदवाड़ा जिले में 4 मंडिया है जो मुख्य सड़कों से जुड़ी हुई है जिसमें 65 प्रतिशत किसान अपनी उपज को मंडी प्रागण में बेचते है

* शासकीय महाविद्यालय, बिछुआ, जिला छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

3. **मंडी प्रागण में व्यवसाय –** जिले की मंडियों मे प्राय: व्यवसाय का समय प्रात: 9 बजे से 12 बजे तक तथा अपराह् 2 बजे से 6 बजे तक निश्चित किये गये है सप्ताह में एक दिन रविवार को अवकाश घोषित किया गया है।
4. **उपज का प्रदर्शन –** मंडी प्रांगण में विक्रय हेतू लाई गई कृषि उपज को नीलाम पद्धति से विक्रय हेतु साफ पक्की भूमि (टीन सेड) पर ढेर के रुप में लगवा देते है उपज को साफ एवं छनाई कार्य नीलामी के पूर्व किसान द्वारा या उसके मजदूर द्वारा किया जाता है।
5. **नीलाम पद्धति –** राज्य सरकार के कर्मचारी द्वारा कृषि उपजो के घोषित समर्थन मूल्य से ऊपर नीलामी की बोली स्पष्ट लगाई जाती है जो विक्रेता को ज्ञात रहता है।
6. **तौल व्यवस्था –** विक्रय के द्वारा कृषि उपज की कीमत निर्धारण हो जाने के पश्चात् कृषि उपज की तौल की जाती है तुलाई का कार्य मंडी प्रागण में लायसेन्सी द्वारा तुलौया द्वारा किया जाता है।
7. **सुपुर्दगी –** कृषि उपज के विक्रय के बाद उपज को जूट के बोरे में प्रमाणित वजन के आधार पर भर्ती कर तौल कर ली जाती है। अनुबंध पत्र एवं तौल की एक प्रति प्रेषक अपने पास रख लेता है और क्रेता व्यापारी को उपज की सुपुर्दगी विक्रेता को भुगतान प्राप्त हो जाने के बाद मानी जाती है।

वैधानिकता – म. प्र. कृषि उपज के क्रय विक्रय का अधिक विनिमय करने के लिये कृषि उपज मंडी की स्थापना एवं इसके उचित प्रशासन के लिये म. प्र. उपज मंडी अधिनियम 1972 पारित किया गया, जिसे 18 अप्रैल 1973 को राष्ट्रपति की अनुभूति प्राप्त हुई। यह अधिनियम 1 जून 1973 से म0 प्र0 में प्रभावशील है।

कमियॉ एवं सुझाव :

1. **प्रमाणीकृत तौल व्यवस्था का अभाव –** इस कमी हेतु सुझाव है कि म. प्र. की प्रत्येक उपज मंडी में प्रमाणित तौल कटा की व्यवस्था की जाय और इस हेतु कठोर से कठोर नियम नियम लागू किया जाय।
2. **परिवहन साधनो का अभाव –** इस कमी हेतु सुझाव यह है कि प्रत्येक गॉव को मुख्य सड़क से जोड़ा जाय। जिससे किसान अपनी उपज को परिवहन के साधनो में आसानी से मंडी ले जाया जा सके।
3. **नियत्रित मंडियों का अभाव–**जिले में जितना उत्पादन उपज का होता है उस अनुपात में कृषि उपज मंडियाँ अपर्याप्त है आवश्यकता है कि बड़े–बड़े कस्बो और शहरो में नियत्रित मडियों की संख्या में वृद्धि की जाए तथा ग्रामों में उप मडियों की स्थापना की जॉय।
4. **विश्व व्यापार संगठन के समझौतों से कृषक वर्ग का अनभिज्ञ होना–**इस कमी के उपाय हेतु कृषको को कृषि संबंधी नई नीतियाँ एवं योजनाओं को अधिकारी एवं कर्मचारी वर्ग के द्वारा समझाया जाय। एवं सरकार द्वारा घरेलू निर्यातको को उचित संरक्षण प्रदान किया जाय।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

म.प्र. सरकार के लोक-ऋणों की प्रवृत्ति का अध्ययन व विश्लेषण

डॉ. चन्द्रप्रकाश पंवार *

प्रस्तावना – राज्यो के वित्त के स्त्रोत केंद्र सरकार की अपेक्षा सीमित होते है। अत: राज्यों की वित्तीय व्यवस्था में लोक-ऋण महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारतीय संविधान की धारा 293 (2) के अनुसार केंद्र सरकार राज्य सरकारों को ऋण अथवा ऋण की ग्यारण्टी देती है तथा बाजार ऋण प्राप्त करने हेतु अनुमति प्रदान करती है। इसी प्रकार केंद्र व राज्यों के बीच मधुर वित्तीय संबंध स्थापित करने हेतु प्रति पाँच वर्ष में एक वित्त आयोग भी गठित करती है। राजकोषीय समेकन को सांविधिक ढाँचें में ढालने हेतु केंद्रीय सरकार द्वारा राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजट प्रबंधन अधिनियम 2003 (Fiscal Responsibility and Budget Management Act 2003/ FRBMA) पारित किया गया जिसके द्वारा निर्धारित सीमा अवधि में राजकोषीय एवं राजस्व घाटों को नियंत्रित करने के लक्ष्य निर्धारित किये गये तथा राज्यों को भी इसके दायरे में लाया गया। इस प्रकार राज्य सरकारें वित्त आयोग द्वारा जारी अनुशंसाओं तथा राजकोषीय लक्ष्यों के अनुसार योजनागत एवं गैर योजनागत व्ययों की आपूर्ति हेतु आवश्यकतानुसार लोक-ऋणों का प्रबंधन करती है।

अध्ययन का उद्देश्य – प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य राज्य सरकार द्वारा प्राप्त किये गये लोक ऋणों की प्रवृत्ति व वित्तीय कार्य कुशलता का राजकोषीय लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए अध्ययन व विश्लेषण करना तथा कुछ ठोस निष्कर्ष निकालना रहा है।

अध्ययन अवधि – शोध अध्ययन की अवधि वर्ष 2009-10 से 2015-16 तक कुल 07 वर्ष की रही ।

प्रयुक्त चल – राज्य सकल घरेलु उत्पाद, राजकोषीय घाटा, राजस्व घाटा, प्राथमिक घाटा, लोक ऋण, ब्याज भुगतान, ब्याज दर आदि।

म.प्र. सरकार के लोक-ऋणों की स्थिति – तालिका 01 म.प्र. सरकार के लोक-ऋणों की सात वर्षो यथा 2009-10 से 2015-16 तक की तुलनात्मक स्थिति को प्रकट करती है। तालिका 1.1 मप्र. सरकार के लोक ऋणों की स्थिति को प्रतिशत के रुप में प्रदर्शित करती है। लोक-ऋणों के प्रवृत्ति प्रतिशत को तालिका 1.2 द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

म.प्र. सरकार के लोक-ऋण के चार स्त्रोत है :- (1) बाजार उधार (2) केंद्र सरकार के ऋण (3) राष्ट्रीय अल्प बचत निधि को जारी विशेष प्रतिभूतियों से ऋण (4) वित्तीय संस्थाओं एवं बैंकों से ऋण। मध्यप्रदेश सरकार की कुल देनदारियों में लोक लेखा दायित्वों को लोक ऋण से पृथक प्रदर्शित किया गया है जबकि भारतीय रिजर्व बैंक से अर्थोपाय अग्रिम/ अधिविकर्ष को इसमें सम्मिलित नहीं किया गया है। तालिका 1.1 लोक ऋण के विभिन्न साधनों (लोक लेखा सहित) का अनुपातिक प्रतिशत प्रदर्शित करती है। वर्ष 2009-10 में मध्यप्रदेश सरकार की कुल देनदारियों में लोक-ऋण 78 प्रतिशत तथा लोक लेखा दायित्व 22 प्रतिशत थे जो वर्ष 2015-16 में क्रमश: 79 प्रतिशत तथा 21 प्रतिशत रहे। लोक ऋणों के प्रमुख घटक बाजार उधार है जिनमें अध्ययनकाल के दौरान 47 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि केंद्र सरकार द्वारा ऋण अल्प बचत प्रतिभूतियों से ऋण तथा वित्तीय संस्थाओं से ऋण के अनुपात में कमी पाई गई जो क्रमश: 26 प्रतिशत, 28 प्रतिशत तथा 38 प्रतिशत तक रही। लोक लेखा देनदारियों में भी 5 प्रतिशत की कमी पाई गई। मोटे तौर पर यह तालिका दर्शाती है कि ऋण साधनों का लगभग 50 प्रतिशत अंतरण केंद्रीय सरकार के ऋणों एवं वित्तीय संस्थानों/ बैंको से निकलकर बाजार ऋण की ओर उन्मुख हुआ जैसा कि रेखाचित्र 1 द्वारा भी प्रदर्शित होता है।

तालिका 01,1.1 व रेखाचित्र 01 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 1.2 लोक ऋणों के प्रवृत्ति प्रतिशत को प्रदर्शित करती है। अध्ययन काल में लोक ऋणों में 1.98 गुना वृद्धि हुई जबकि लोक लेखा दायित्वों में 1.75 गुना वृद्धि हुई। यह तालिका प्रदर्शित करती है कि लोक ऋण के विभिन्न स्त्रोतों में असमान वृद्धि की प्रवृत्ति पाई गई। लोक ऋण के प्रमुख घटक बाजार उधार में सर्वाधिक 2.73 गुना वृद्धि हुई जबकि अन्य साधनों में यह प्रवृत्ति धीमी रही।

तालिका 1.2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 02 विभिन्न ऋण साधनों की पृथक पृथक ब्याज दर को प्रदर्शित करती हैं। सर्वाधिक न्यून ब्याज दर (औसत) 7.38 बैंकों एवं वित्तीय संस्थाओं द्वारा प्रदत्त ऋणों की रही जबकि सर्वाधिक उंची ब्याज दर 9.85 राष्ट्रीय अल्प बचत निधि को जारी विशेष प्रतिभूतियों से ऋणों पर रही। केंद्र सरकार से प्राप्त ऋणों पर अंतिम दो वर्षो में ब्याज दर में वृद्धि पाई गई जो कि क्रमश: 9.26 प्रतिशत व 9.11 प्रतिशत तक रही। बाजार ऋणों पर ब्याज दर औसत रुप से 8.10 प्रतिशत रही जो कि दीर्घकालीन ऋणों पर सबसे न्यून ब्याज दर रही और यही कारण रहा कि ऋण साधनों का लगभग 50 प्रतिशत अंतरण केंद्र सरकार के ऋणों एवं अल्प बचत प्रतिभूतियों द्वारा जारी ऋणों के स्थान पर बाजार ऋणों में प्रवृत्त हुआ।

तालिका 02 व 03 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 3 व 3.1 मध्यप्रदेश सरकार के बजट घाटों की तुलनात्मक स्थिति व प्रवृत्ति को प्रतिशत में प्रदर्शित करती है। राजस्व घाटा, प्राथमिक घाटा तथा राजकोषीय घाटा सरकारों की वित्तीय कार्यकुशलता के मापक है।

राजस्व घाटा राजस्व व्ययों का राजस्व प्राप्तियों पर अधिशेष है। किंतु विगत 2004-05 से निरंतर मध्यप्रदेश सरकार के बजट में राजस्व घाटे के

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) स्वामी विवेकानंद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

स्थान पर राजस्व आधिक्य की स्थिति रही है। अध्ययन के प्रथम तीन वर्षो में पर्याप्त राजस्व वृद्धि रही जबकि अंतिम चार वर्षो में निरंतर गिरावट की प्रवृत्ति पाई गई। इसका प्रमुख कारण राजस्व संग्रहण में कमी रही जबकि राजस्व व्ययों में अपेक्षाकृत वृद्धि की प्रवृत्ति रही जैसा कि तालिका 3.1 के द्वारा भी प्रदर्शित होता है। अंतिम दो वर्षो में आयोजना व्ययो में भी अपेक्षाकृत ऊचीं दरों से वृद्धि हुई जबकि अंतिम वर्ष के राजस्व आधिक्य में न्यून वृद्धि प्रदर्शित हुई। राजस्व आधिक्य में गिरावट की प्रवृत्ति चिंता का विषय है तथा यह प्रदर्शित करती है कि मध्यप्रदेश सरकार राजकोषीय उत्तरदायित्व के पालन में पिछड़ रही है, फलस्वरुप राजस्व आधिक्य की स्थिति राजस्व घाटे की ओर उन्मुख हो रही हैं

राजकोषीय घाटा प्रदर्शित करता है कि सरकार की कुल प्राप्तियां कुल व्ययों से कम है जिसकी पूर्ति सरकार ऋण लेकर करती है। वर्ष 2009-10 में प्रदेश सरकार का राजकोषीय घाटा 6198 करोड़ रुपये था जो वर्ष 2015-16 में 3.42 गुना बढ़कर 21167 करोड़ रुपये हो गया। राजकोषीय घाटे में कुल 3.42 गुना वृद्धि हुई जो अध्ययन काल के अंतिम चार वर्षो में ऊंची दर से रही।

राजकोषीय घाटे का मापन राज्य के सकल घरेलु उत्पाद से एक निश्चित प्रतिशत से किया जाता है। म.प्र. सरकार के राजकोषीय घाटे में अध्ययन के वर्षो में उच्चावचन की प्रवृत्ति रही। अध्ययन काल में प्रथम व अंतिम वर्ष को छोड़कर राजकोषीय घाटा म.प्र. राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजट प्रबंधन अधिनियम 2005 द्वारा निर्धारित राज्य सकल घरेलु उत्पाद की 3 प्रतिशत की सीमा के भीतर रहा जो सरकार के कुशल वित्तीय प्रबंधन को प्रदर्शित करता है। वर्ष 2015-16 के लिये उक्त अधिनियम में राजकोषीय घाटे की सीमा राज्य सकल घरेलु उत्पाद के 3.5 प्रतिशत तक निर्धारित की है। अंतिम वर्ष का राजकोषीय घाटा राज्य सकल घरेलु उत्पाद का 3.49 प्रतिशत है जो कि राजकोषीय लक्ष्यों के भीतर तो है किंतु इसकी बढ़ती हुई प्रवृत्ति वित्तीय संकट की ओर संकेत करती है। रेखाचित्र 03 राज्य सकल घरेलु उत्पाद से राजकोषीय घाटे की बढ़ती हुई प्रवृत्ति तथा राजस्व आधिक्य की गिरती हुई प्रवृत्ति को प्रदर्शित करता है।

लोक-ऋणों पर ब्याज का भुगतान वर्ष 2009-10 में कुल 4454 हजार करोड़ रुपये हुआ जो वर्ष 2015-16 में बढ़कर 8592 करोड़ रुपये हो गया। अध्ययन अवधि में ब्याज भुगतान में 1.93 गुना वृद्धि हुई। ब्याज भुगतान वर्ष 2009-10 में राजस्व प्राप्तियों का 10.76 प्रतिशत था जो कि वर्ष 2015-16 में घटकर 7.73 प्रतिशत रहा। जो यह प्रदर्शित करता है कि सरकार की राजस्व प्राप्तियों की वृद्धि दर ब्याज भुगतान की वृद्धि दर से 1.38 गुना अधिक है। यह स्थिति सरकार की मजबूत ऋण शोधन क्षमता को प्रदर्शित करती है। यह प्रवृत्ति रेखाचित्र 04 द्वारा भी प्रदर्शित की गई।

तालिका 3.1,रेखाचित्र 03 व रेखाचित्र 04 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

प्राथमिक घाटा राजकोषीय घाटे में से ऋणों का ब्याज भुगतान घटाने पर प्राप्त होता है। सरकार का असली वित्त प्रबंधन तो उसका प्राथमिक घाटा ही प्रदर्शित करता है क्योंकि ब्याज भुगतान तो पुराने ऋणों का भार है।

अध्ययनकाल के प्रथम वर्ष को छोड़कर शेष छ: वर्षो में प्राथमिक घाटे की तेजी से बढ़ने की प्रवृत्ति रही। वर्ष 2009-10 में प्राथमिक घाटा 1744 करोड़ रुपये था जो वर्ष 2015-16 में 7.21 गुना बढ़कर 12575 करोड़ रुपये हो गया। प्राथमिक घाटे का नियंत्रण में न रहना यह प्रदर्शित करता है कि सरकार अपने बढ़े हुए व्ययों का भुगतान नये ऋण लेकर कर रही है। प्राथमिक घाटे में तेजी से बढ़ने की प्रवृत्ति सरकार की वित्तीय अक्षमता को प्रदर्शित करती है।

तालिका 04 भारत के तेरह सर्वाधिक देनदारियों वाले राज्यों (एक लाख करोड़ से अधिक) तथा उनके राज्य सकल घरेलु अनुपात की सूची प्रदर्शित करती है। तालिका प्रदर्शित करती है महाराष्ट्र देश में सर्वाधिक ऋण ग्रस्तता वाला राज्य रहा है किंतु उसका राज्य सकल घरेलु उत्पाद अनुपात सर्वाधिक कम 20.1 रहा है जो यह प्रदर्शित करता है कि कर्ज भार अधिक होने पर भी यदि राज्य की विकास दर अच्छी है तो योजनाबद्ध व्ययों तथा पूंजी निवेश के रुप में लिये गये ऋण दीर्घकाल में फायदेमंद साबित होते है। जबकि दूसरे और तीसरे सर्वाधिक ऋणग्रस्तता वाले राज्यों में क्रमष: उत्तारप्रदेश व पष्चिम बंगाल है जिनका राज्य सकल घरेलु उत्पाद अनुपात क्रमश: 30.1 व 32.9 है जो अपेक्षाकृत ऊँचा व विपरीत परिस्थितियो में अथवा मंदी की स्थिति में वित्तीय संकट का कारण बन सकता है। तालिका के अुनसार सर्वाधिक ऋणग्रस्तता वाले राज्यों में मध्यप्रदेश का स्थान ग्यारहवें क्रम पर है जबकि राज्य सकल घरेलु अनुपात की दृष्टि से मध्यप्रदेश की स्थिति दूसरे स्थान पर है। दोनों ही दृष्टि से मध्यप्रदेश की स्थिति संतोषजनक है व कुशल वित्तीय प्रबंधन को प्रकट करती है।

तालिका-04 : सर्वाधिक देनदारियों वाले राज्यों की स्थिति

क्रं.	राज्य का नाम	कुल देनदारियां 2015-16 बजट अनुमान (करोड़ में)	राज्य सकल घेरलु उत्पाद से अनुपात
1	महाराष्ट्र	3793600	20.1
2	उत्तरप्रदेश	3274700	30.1
3	पश्चिम बंगाल	3068000	32.9
4	आंध्रा प्रदेश	2628500	24
5	तमिलनाडु	2352600	21.2
6	गुजरात	2292800	23.3
7	कर्नाटक	1773100	24.1
8	राजस्थान	1664100	26
9	केरला	1602000	28.1
10	पंजाब	1253200	31.4
11	मध्यप्रदेश	1221600	20.3
12	बिहार	1150800	25
13	हरियाणा	1115500	21.3

स्त्रोत: State Finances: A Study of Budgets, April 07 2016, Reserve Bank of India

अध्ययन के निष्कर्ष :

1. म.प्र. सरकार के लोक-ऋणों में वृद्धि दर की अपेक्षा राजस्व प्राप्तियों में वृद्धि दर 1.42 गुना अधिक रही। इसी प्रकार ब्याज भुगतान की वृद्धि दर से राजस्व प्राप्तियों की वृद्धि दर 1.38 गुना अधिक रही जो कि सरकार की भविष्य में मजबूत शोधन क्षमता का परिचायक है।
2. अध्ययन के वर्षो में ब्याज का भुगतान कुल राजस्व प्राप्तियों का 10.76 प्रतिशत से घटकर 7.73 प्रतिशत रहा जो कि चौहदवें वित्त आयोग द्वारा अनुशंसित 10 प्रतिशत की संवहनीय सीमा के भीतर है।
3. अध्ययन के अंतिम वर्ष में राज्य की कुल देनदारियों में कुल लोक ऋणों का हिस्सा 79 प्रतिशत तथा लोक लेखा दायित्वों का हिस्सा 21

प्रतिशत है। कुल लोक-ऋणों में बाजार उधार का हिस्सा 47 प्रतिशत है। शेष लोक-ऋणों में केंद्र सरकार से ऋणों का हिस्सा 27 प्रतिशत तथा बैंक व वित्तीय संस्थाओं का हिस्सा 5 प्रतिशत रह गया है।

4. अध्ययनकाल में मोटे तौर पर ऋण साधनों का लगभग 50 प्रतिशत हिस्सा केंद्रीय सरकार के ऋणों , अल्प बचत प्रतिभूतियों से ऋणों तथा बैंक ऋणों से निकल कर बाजार ऋणों की ओर अंतरित हुआ जिसका प्रमुख कारण बाजार ऋणों की ब्याज दरों का अपेक्षाकृत रुप से कम होना पाया गया।
5. अध्ययन के अंतिम चार वर्षो यथा 2012-13 से 2015-16 तक की अवधि में सरकार के राजस्व आधिक्य में निंरतर गिरावट की प्रवृत्ति दर्ज हुई जो यह प्रदर्शित करती है कि सरकार राजस्व आधिक्य से राजस्व घाटे की ओर उन्मुख हो रही है। राजस्व आधिक्य में गिरावट का कारण कर एवं करेत्तर राजस्व के संग्रहण एवं केंद्रीय सहायता अनुदान में कमी का होना रहा है।
6. अध्ययन काल में राजकोषीय घाटे में 3.42 गुना वृद्धि दर दर्ज हुई जो अंतिम चार वर्षो में सर्वाधिक रही। राजकोषीय घाटा वर्ष 2009-10 में कुल प्राप्तियों का 13.34 प्रतिशत था जो वर्ष 2015-16 में 19 प्रतिशत हो गया, जो यह दर्शाता है कि सरकार के आय साधनों में आशानुरुप वृद्धि नही हुई जबकि राजस्व व्यय व आयोजना व्ययों में अपेक्षाकृत अधिक वृद्धि दर्ज हुई, परिणामस्वरुप सरकार की उधार पर निर्भरता बढ़ी।
7. राजकोषीय घाटा-राज्य सकल घरेलु उत्पाद राजकोषीय लक्ष्य की संवहनीय सीमा के भीतर तो है किंतु वर्ष 2010-11 से निंरतर इस अनुपात की वृद्धि की प्रवृत्ति उदार वित्तीय अनुशासन का संकेत देती हैं।
8. प्रथम वर्ष को छोड़कर शेष छ: वर्षो में राज्य के प्राथमिक घाटे में 7.21 गुना वृद्धि दर्ज हुई। प्राथमिक घाटे में अंतिम चार वर्षो में तेजी से बढ़ती हुई प्रवृत्ति यह प्रदर्शित करती है कि सरकार अपने बढ़े हुए व्ययों की पूर्ति नये ऋण लेकर कर रही है। यह प्रवृत्ति सरकार की वित्तीय अक्षमता को प्रदर्शित करती है।
9. राज्य की कुल देनदारियाँ राज्य के सकल घरेलु उत्पाद अनुपात 37.6 प्रतिशत से कम होकर 20.79 प्रतिशत तक रह गई है जो कि निर्धारित राजकोषीय सीमा 35.30 प्रतिशत के भीतर है व मजबूत आर्थिक स्थिति को दर्शाती हैं।
10. सर्वाधिक देनदारियों वाले राज्यों में मध्यप्रदेश का ग्यारहवाँ स्थान है तथा राज्य सकल घरेलु उत्पाद की दृष्टि से मध्यप्रदेश का भारत में दूसरा स्थान है। दोनों ही स्थितियां अन्य राज्यों की तुलना में प्रदेश की बेहतर वित्तीय स्थिति को प्रकट करती है।

सुझाव :

1. कर एवं करेत्तर राजस्व संग्रहण की प्रक्रिया में सुधार की आवश्यकता है।
2. महंगे ऋण स्त्रोत (अल्प बचत योजनाओं से ऋण) से ऋण लेने की अनिवार्यता को धीरे धीरे कम किया जाये एवं ब्याज दरों का युक्तियुक्तकरण किया जाये।
3. लोक-ऋणों के भुगतान प्रवाह को बनाये रखने हेतु राज्य सरकार द्वारा घाटे में चल रहे सरकारी उपक्रमों एवं बिजली परियोजनाओं को दिये गये उधार वसूलने हेतु एक सशक्त कार्य योजना बनायी जावें।
4. गैर योजनागत व्ययों को नियंत्रित करने हेतु एक युक्तिसंगत व्यय नीति बनायी जाए।
5. सरकार की वित्त-पोषण नीति बाजार उधार की अपेक्षा प्रत्यक्ष निवेश के माध्यम से पूँजी विकास की होनी चाहिये।
6. निजी क्षेत्र की तरह केंद्र सरकार को दीर्घकालीन ऋणों का युक्तियुक्तकरण करके समता पूंजी (Equity Capital) में परिवर्तित करने पर भी विचार करना चाहिये ताकि भारी भरकम ब्याज अदायगी का भार कम हो सके।
7. आयोजना व्ययों में सार्वजनिक-निजी साझेदारी (Public Private Partnership) मॉडल को बढ़ावा देना चाहिये।

उपसंहार – राज्य की राजकोषीय नीति का प्रमुख उद्देश्य समावेशी विकास की अवधारणा को शामिल करते हुए राज्य की राजस्व प्राप्तियों एवं पूंजी व्ययों को बढ़ाना तथा अनुत्पादक आयोजनेत्तर व्ययों पर नियंत्रण करना रहा है। बारहवें वित्त आयोग की व्यवस्थाओं के कारण ऊंची दर वाले ऋणों का अंतरण संभव हुआ और ब्याज भुगतान में भी कमी आयी है। ऋणों का आकार भी निर्धारित राजकोषीय सीमाओं के भीतर रहा है। देश के सर्वाधिक तेरह ऋणग्रस्त राज्यों में ऋणों के आकार व राज्य सकल घरेलु उत्पाद अनुपात की दृष्टि से राज्य की स्थिति बेहतर रही फिर भी वर्ष 2004-05 से निंरतर कायम राजस्व आधिक्य की स्थिति में वर्ष 2012-13 से गिरावट की प्रवृत्ति ने ऋणों पर निर्भरता को बढ़ाया है। प्राथमिक घाटे में भी तेजी से वृद्धि हुई है व राजकोषीय घाटा भी 14वें वित्त आयोग की अनुशंसानुसार 3.5 प्रतिशत के नये राजकोषीय लक्ष्य की उच्चतर सीमा को छू रहा है। यह संकेत इशारा करते है कि राज्य की राजकोषीय नीतियों में सृदृढ़ वित्तीय अनुशासन की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भाटिया, एच.एल. (2013), **'लोक वित्त'**, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा. लिमि.: नई दिल्ली
2. दत्ता एवं सुन्दरम (2016), **'भारतीय अर्थव्यवस्था'**, एस.चांद एण्ड कम्पनी प्रा. लिमि.: नई दिल्ली
3. सिंह रमेश (2013), **'भारतीय अर्थव्यवस्था'**, मेग्राव हिल्स एजुकेशन इण्डिया प्रा. लिमि.: नई दिल्ली
4. डॉ. पन्त, जे.सी. (2014), **'राजस्व'**, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल.: आगरा
5. Statistical Year Book of India, 2015.
6. White Paper on Financial Condition of Madhya Pradesh, Feb 2014.
7. आर्थिक समीक्षा 2012-13 से 2015-16.
8. मध्यप्रदेश सरकार के बजट प्रतिवेदन वर्ष 2008-09 से 2015-16.
9. तेरहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट
10. चौदहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट
11. वित्तीय क्षेत्र विधायी सुधार आयोग की रिपोर्ट 2013, वित्त मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली
12. State Finances: A Study of Budgets, April 07 2016, Reserve Bank of India

तालिका 01 : मध्यप्रदेश सरकार के लोक ऋणों की तुलनात्मक स्थिति

क्रं.	प्रवर्ग	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15	2015-16
1	**कुल लोक ऋण**	**52839**	**58912**	**61368**	**69361**	**81202**	**82259**	**99882**
1.1	बाजार उधार	21620	25148	28043	34321	44542	43149	59095
1.2	केन्द्र से ऋण	10378	11214	11358	12286	13935	13253	14177
1.3	राष्ट्रीय अल्प बचत निधि को जारी विशेष प्रतिभूतियों	14666	16516	16081	16566	16416	19259	19489
1.4	वित्तीय संस्थाओं/बैकों से उधार	6175	6034	5886	6188	6309	6598	7121
2	**लोक लेखा**	**15011**	**15038**	**20386**	**20503**	**20481**	**26426**	**26414**
3	**कुल दायित्व**	**67852**	**73950**	**81756**	**89866**	**101685**	**108687**	**126298**

स्त्रोत: राज्य सरकार के बजट प्रतिवेदन वर्ष 2009-10 से 2015-16

तालिका 1.1 : मध्यप्रदेश सरकार के लोक ऋणों की स्त्रोतवार अनुपातिक स्थिति (प्रतिशत में)

क्रं.	प्रवर्ग	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15	2015-16	वृद्धि/कमी
1	**कुल लोक ऋण**	**77.87**	**79.66**	**75.06**	**77.18**	**90.36**	**75.68**	**79.09**	**1.56**
1.1	बाजार उधार	31.86	34.01	34.30	38.19	49.56	39.70	46.79	46.86
1.2	केन्द्र से ऋण	15.30	15.16	13.89	13.67	15.51	12.19	11.23	(-)26.60
1.3	राष्ट्रीय अल्प बचत निधि को जारी विशेष प्रतिभूतियों	21.61	22.33	19.67	18.43	18.27	17.72	15.43	(-)28.60
1.4	वित्तीय संस्थाओं/बैकों से उधार	9.10	8.16	7.20	6.89	7.02	6.07	5.64	(-)38
2	**लोक लेखा**	**22.12**	**20.34**	**24.94**	**22.82**	**22.79**	**24.31**	**20.91**	(-)5.47
3	**कुल दायित्व**	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**	

स्त्रोत: राज्य सरकार के बजट प्रतिवेदन वर्ष 2009-10 से 2015-16

रेखाचित्र 01 : मध्यप्रदेश सरकार के लोक ऋणों की स्त्रोतवार तुलनात्मक स्थिति

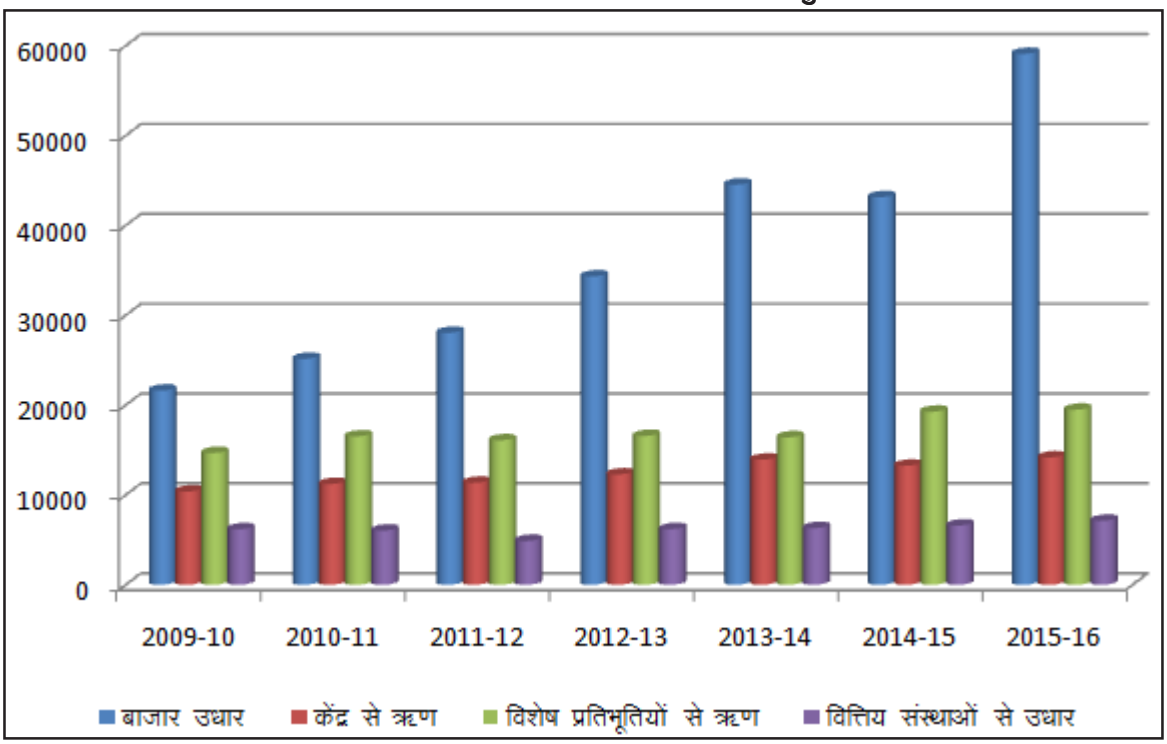

तालिका 1.2 : मध्यप्रदेश सरकार के लोक ऋणों की प्रवृत्ति (प्रतिशत में)

क्रं.	प्रवर्ग	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15	2015-16
1	**कुल लोक ऋण**	100	111	116	131	154	156	189
1.1	बाजार उधार	100	116.32	129.71	158.75	206.02	199.58	273.33
1.2	केन्द्र से ऋण	100	108.06	109.44	118.39	134.27	127.70	136.61
1.3	एन.एस.एस.एफ. को जारी विशेष प्रतिभूतियों	100	112.61	109.65	112.96	111.93	131.32	132.89
1.4	वित्तीय संस्थाओं/बैकों से उधार	100	97.72	95.32	100.21	102.17	106.85	115.32
2	**लोक लेखा**	100	100.18	135.81	136.59	136.44	176.04	175.96

स्त्रोत: राज्य सरकार के बजट प्रतिवेदन वर्ष 2009-10 से 2015-16

तालिका 02 : मध्यप्रदेश सरकार के लोक ऋणों पर ब्याज दरें

क्रं.	प्रवर्ग	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15	2015-16	औसत दर
1	कुल लोक ऋणों की औसत दर	8.56	8.58	8.62	8.59	8.43	8.69	8.20	8.53
1.1	बाजार उधार	7.9	8.1	7.92	8.01	8.2	8.26	8.29	8.10
1.2	केन्द्र से ऋण	8.46	8.47	8.9	8.8	8.39	9.26	9.11	8.77
1.3	एन.एस.एस.एफ. को जारी विशेष प्रतिभूतियों	9.97	9.95	9.88	9.85	9.8	9.75	9.75	9.85
1.4	वित्तीय संस्थाओं/ बैकों से उधार	7.91	7.8	7.77	7.7	7.31	7.49	5.65	7.38
2	लोक लेखा	8	8 8.2		8.8	8.7	8.7	8.7	8.44

स्त्रोत: राज्य सरकार के बजट प्रतिवेदन वर्ष 2009-10 से 2015-16

तालिका 03 : म.प्र. सरकार की राजस्व मदों की तुलनात्मक स्थिति

क्रं.	मदें	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15	2015-16
1	**राजस्व प्राप्तियॉं**	**41394**	**41395**	**51854**	**62604**	**75749**	**88640**	**111131**
2	**पूंजीगत प्राप्तियॉं**	**5043**	**5010**	**18310**	**8535**	**10449**	**18172**	**21283**
2.1	शुद्ध लोक ऋण	6208	4929	3600	5207	5536	10148	17623
3	**कुल प्राप्तियॉं (1+5)**	**46438**	**56864**	**80914**	**78963**	**86198**	**106813**	**132413**
4	आयोजनेत्तार व्यय	29263	35007	51344	48492	53395	66855	75746
4.1	ब्याज भुगतान	4454	*5049*	*5300*	*5574*	*6391*	*7071*	8592
5	आयोजना व्यय	18378	22521	26269	31428	32367	40230	56902
6	**कुल व्यय (7+8)**	**47641**	**57528**	**77613**	**79921**	**85762**	**107086**	**132647**
7	राजस्व व्यय	35896	45012	52694	62969	69870	82372	110693
8	पूंजीगत व्यय	11744	12516	24919	16952	15892	24713	21954
9	राजस्व आधिक्य	5497	6843	9910	7459	5879	6267	437
10	प्राथमिक घाटा	1744	223	561	3847	3490	4580	12575
11	राजकोषीय घाटा	6198	5272	5861	9420	9881	11651	21167
12	राज्य सकल घरेलु उत्पाद	180403	271681	301647	336336	392097	508006	607269
13	राजस्व आधिक्य/राज्य	3.05	2.52	3.29	2.22	1.50	1.23	0.07
14	राजकोषीय घाटा/राज्य स.घ.उ. अनुपात	3.44	1.94	1.94	2.80	2.52	2.29	3.49
15	कुल देनदारियां/ राज्य स.घ.उ. अनुपात	37.6	27.22	27.10	26.71	25.92	21.39	20.79

स्त्रोत: राज्य सरकार के बजट प्रतिवेदन वर्ष 2009-10 से 2015-16

तालिका 3.1 : म.प्र. सरकार की राजस्व मदों की तुलनात्मक स्थिति (प्रवृत्ति प्रतिशत में)

क्रं.	मदें	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15	2015-16
1	राजस्व प्राप्तियॉं	100	100	125	151	183	214	268
2	पूंजीगत प्राप्तियॉं	100	99	363	169	207	360	422
2.1	शुद्ध लोक ऋण	100	79	58	84	89	163	284
3	कुल प्राप्तियॉं	100	122	174	170	186	230	285
4	आयोजनेत्तार व्यय	100	120	175	166	182	228	259
4.1	ब्याज भुगतान	100	113	119	125	143	159	193
5	आयोजना व्यय	100	123	143	171	176	219	310
6	कुल व्यय	100	121	163	168	180	225	278
7	राजस्व व्यय	100	125	147	175	195	229	308
8	पूंजीगत व्यय	100	107	212	144	135	210	187
9	राजस्व आधिक्य	100	124	180	136	107	114	8
10	प्राथमिक घाटा	100	13	32	221	200	263	721
11	राजकोषीय घाटा	100	85	95	152	159	188	342
12	राज्य सकल घरेलु उत्पाद	100	151	167	186	217	282	337
13	राजस्व आधिक्य/राज्य स.घ.उ. अनुपात	100	83	108	73	49	41	2
14	राजकोषीय घाटा/राज्य स.घ.उ. अनुपात	100	56	57	82	73	79	101
15	कुल देनदारियां/ राज्य स.घ.उ. अनुपात	100	72	72	71	69	57	55

स्त्रोत: राज्य सरकार के बजट प्रतिवेदन वर्ष 2009-10 से 2015-16

रेखाचित्र 03 : राज्य सकल घरेलु उत्पाद से राजस्व आधिक्य एवं राजकोषीय घाटे की प्रवृत्ति (प्रतिशत में)

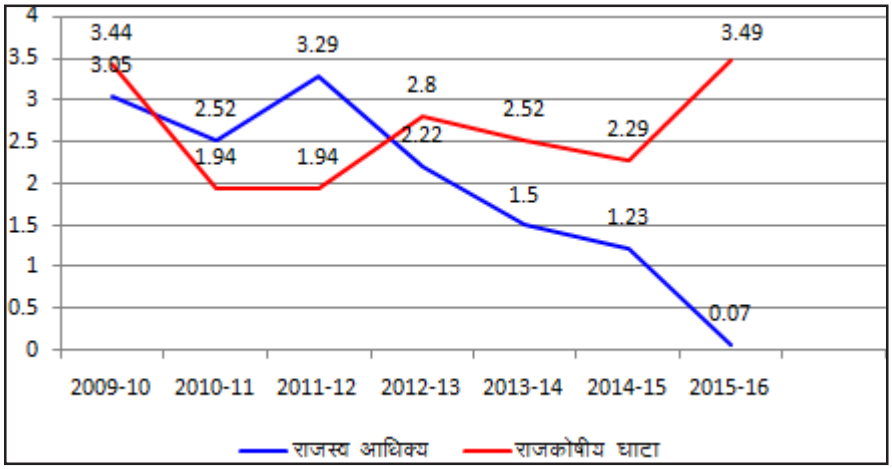

रेखाचित्र 04 : राजस्व प्राप्ति एवं ब्याज भुगतान की प्रवृत्ति (प्रतिशत में)

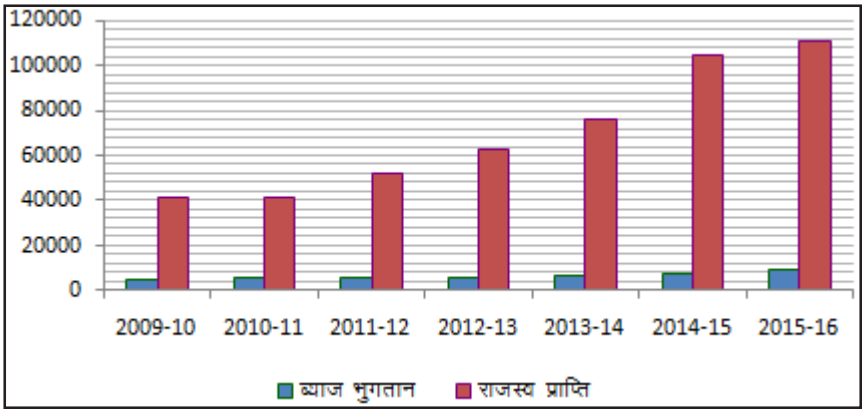

म.प्र. सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में लोक लेखों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. एल. एन. शर्मा *

प्रस्तावना –सरकार की वित्त व्यवस्था एक सार्वभौमिक पहलू है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति सरकार की सेवाओं से कुछ लाभ प्राप्त करता है तथा उन्हें थोड़ा सा अंशदान भी करता है। राजस्व का अध्ययन प्राचीनकाल से होता आया है। आज यह विषय एक विज्ञान के रुप में उभरकर सामने आया है। प्राचीन एक तन्त्रीय शासन प्रणाली में राज्य के कार्य काफी सीमित होने के कारण राज्य के आय–व्यय का ब्यौरा ही राजस्व माना जाता था परंतु आज प्रजातन्त्रीय शासन प्रणाली में कल्याणकारी राज्य की स्थापना एवं मानवीय जीवन का प्रवेश हो चुका है।

राजस्व अर्थशास्त्र का महत्वपूर्ण भाग है, जिसका अभिप्राय सरकार की प्रक्रिया में आयगत व्ययों के चारो ओर जटिल समस्याओं के केंद्रीयकरण से है। प्रो. फिण्डले शिराज का मत है कि 'राजस्व उन सिद्धांतों का अध्ययन जिनके अनुसार राजकीय पदाधिकारियों के कोषों का एकत्रीकरण एवं व्यय होता है'। श्रीमती यू.के. हिक्स के मतानुसार 'राजस्व का मुख्य विषय ऐसी विधियों का अध्ययन एवं परीक्षा करना है, जिनके द्वारा शासन संस्था की मांग की सामूहिक संतुष्टि की व्यवस्था करता है तथा इस उद्देश्य को पूर्ण करने के लिये आवश्यक कोष प्राप्त करता है'। ए.एम. स्मिथ के कथानानुसार 'राज्य व्यय एवं राज्य आय के सिद्धांतों एवं स्वभाव के अनुसंधान को राजस्व कहते है'। निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि सरकार के सभी आय एवं व्यय तथा मौद्रिक व अमौद्रिक राजस्व के अध्ययन को राजस्व में सम्मिलित किया गया है। राजस्व के क्षेत्र में विषय वस्तु के रुप में 1. आय 2. व्यय 3. ऋण 4. राजकोषीय व्यवस्था 5. राजकोषीय नीतियॉ सम्मिलित है।

मध्यप्रदेश सरकार के कुल राजस्व प्राप्तियों के दो भाग है (अ) राजस्व प्राप्तियॉ (ब) पूंजीगत प्राप्तियॉ। पूंजीगत प्राप्तियों के भी दो भाग है (क) लोक ऋण (ख) लोक लेखें । प्रस्तुत शोध पत्र में मध्यप्रदेश सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में केवल लोक लेखों का ही अध्ययन किया गया है।

शोध का उद्देश्य – मध्यप्रदेश सरकार का मुख्य लक्ष्य कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना है। इस लक्ष्य की प्राप्ति में राजस्व के विभिन्न उपकरणों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। सरकार के कुल राजस्व प्राप्ति में सबसे प्रमुख भाग राजस्व प्राप्तियॉ जिसमें (1) कर राजस्व (क) राज्य कर (ख) केन्द्रीय करों में हिस्सा (2) कर भिन्न राजस्व (3) केंद्र से सहायता अनुदान शामिल है परंतु कुल राजस्व प्राप्तियों में पूंजीगत प्राप्तियों की भी अहम् भूमिका होती है। जिसमें (1) ऋण एवं अग्रिम की वसूली (2) लोक ऋण (क) प्राप्तियॉ (ब) भुगतान (3) लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियॉ सम्मिलित है। शोध का उद्देश्य यह ज्ञात करना है कि म.प्र. सरकार के कुल राजस्व प्राप्ति में लोक लेखों की क्या भूमिका है एवं प्रदेश के विकास में कितना योगदान है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र में म.प्र. के बजट अनुमान के कुल राजस्व प्राप्तियों में (1) राजस्व प्राप्तियॉ (2) पूंजीगत प्राप्तियों में केवल लोक लेखों के वर्ष 2012–13, 2013–14, 2014–15 और 2015–16 के प्रकाशित द्वितीयक संमकों का उपयोग किया गया है तथा मध्यप्रदेश सरकार के लोक लेखों की तुलना छत्तीसगढ़ सरकार के लोक लेखों से की गई है।

शोध व्याख्या – मध्यप्रदेश सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में केवल लोक लेखों का छत्तीसगढ़ सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में लोक लेखों की स्थिति इस प्रकार है :–

तालिका क्रं. 1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रं. 01 के निष्कर्ष इस प्रकार हैं :–

1. म.प्र. सरकार के बजट अनुमान में लोक लेखों के भविष्य निधियों में 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 41 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो शुभ संकेत है परंतु 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 80 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।
2. लोक लेखों के आरक्षित निधियों में 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 286 प्रतिशत की कमी हुई परंतु 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 676 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।
3. लोक लेखों के जमा और अग्रिम में 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 316 प्रतिशत की वृद्धि हुई परंतु 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 43 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।
4. लोक लेखों के उचन्त और विविध में वर्ष 2012–13 से 2015–16 तक लगातार वृद्धि हुई है। 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 184 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो शुभ संकेत है परंतु 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में 311 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।
5. लोक लेखों के प्रेषण में वर्ष 2012–13 से 2015–16 तक लगातार वृद्धि हुई है। 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 334 प्रतिशत की कमी हुई परंतु 2013–14 से 2014–15 की तुलना में 2014–15 से 2015–16 में वृद्धि दर में कोई वृद्धि नहीं हुई है।
6. कुल लोक लेखों में 2012–13 से 2013–14 की तुलना में 2013–14 से 2014–15 में वृद्धि दर में 402 प्रतिशत की विशेष वृद्धि हुई

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

जो शुभ संकेत है परंतु 2013-14 से 2014-15 की तुलना में 2014-15 से 2015-16 में वृद्धि दर में 362 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।

तालिका क्रं. 02 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रं. 02 के निष्कर्ष इस प्रकार हैं :-

1. छत्तीसगढ़ सरकार के बजट अनुमान में लोक लेखों के भविष्य निधियों में 2012-13 से 2013-14 की तुलना में 2013-14 से 2014-15 में वृद्धि दर में 03 प्रतिशत की गिरावट रुक गई है।
2. लोक लेखों के आरक्षित निधियों में 2012-13,से 2013-14 की तुलना में 2013-14 से 2014-15 में वृद्धि दर में 54 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। परंतु 2013-14 से 2014-15 की तुलना में 2014-15 से 2015-16 में वृद्धि दर में 42 प्रतिशत की वृद्धि शुभ संकेत है।
3. लोक लेखों के जमा और अग्रिम में 2012-13 से 2013-14 की तुलना में 2013-14 से 2014-15 में वृद्धि दर में 53 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।
4. लोक लेखों के उचन्त और विविध में वर्ष 2012-13 से 2015-16 तक लगातार वृद्धि हुई है। 2012-13 से 2013-14 की तुलना में 2013-14 से 2014-15 में वृद्धि दर में 178 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो शुभ संकेत है परंतु 2013-14 से 2014-15 की तुलना में 2014-15 से 2015-16 में वृद्धि दर में 94 प्रतिशत की गिरावट चिंता का विषय है।

तालिका क्रं. 03 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रं. 03 के अध्ययन के निष्कर्ष इस प्रकार है :-

1. भविष्य निधियों में वर्ष 2012-13 से 2013-14 में मध्यप्रदेश में 05 प्रतिशत, जबकि छत्तीसगढ़ में -03 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 08 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2013-14 से 2014-15 में मध्यप्रदेश में 46 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 00 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 46 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2014-15 से 2015-16 में मध्यप्रदेश में -34 प्रतिशत, जबकि छत्तीसगढ़ में 00 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में -34 प्रतिशत पीछे है।
2. आरक्षित निधियों में वर्ष 2012-13 से 2013-14 में मध्यप्रदेश में -463 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में -96 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 367 प्रतिशत वृद्धि दर में पीछे है। वर्ष 2013-14 से 2014-15 में मध्यप्रदेश में -749 प्रतिशत, जबकि छत्तीसगढ़ में -42 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 702 प्रतिशत वृद्धि दर में पीछे है। वर्ष 2014-15 से 2015-16 में मध्यप्रदेश में -73 प्रतिशत, जबकि छत्तीसगढ़ में 00 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश 2014-15 से 2015-16 में छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में 73 प्रतिशत पीछे है।
3. जमा और अग्रिम में वर्ष 2012-13 से 2013-14 में मध्यप्रदेश में --365 प्रतिशत, जबकि छत्तीसगढ़ में -53 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 312 प्रतिशत वृद्धि दर में पीछे है। वर्ष 2013-14 से 2014-15 में मध्यप्रदेश में -49 प्रतिशत जबकि छत्तीसगढ़ में 00 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 49 प्रतिशत वृद्धि दर में पीछे है। वर्ष 2014-15 से 2015-16 में मध्यप्रदेश में -92 प्रतिशत की कमी हुई जबकि छत्तीसगढ़ में 00 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में 92 प्रतिशत पीछे है।
4. उचन्त और विविध में वर्ष 2012-13 से 2013-14 में मध्यप्रदेश में 312 प्रतिशत, जबकि छत्तीसगढ़ में -84 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 396 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2013-14 से 2014-15 में मध्यप्रदेश में 496 प्रतिशत, जबकि छत्तीसगढ़ में -94 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से 406 प्रतिशत वृद्धि दर में आगे है। वर्ष 2014-15 से 2015-16 में मध्यप्रदेश में 185 प्रतिशत, जबकि छत्तीसगढ़ में 00 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस प्रकार मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़ से वृद्धि दर में 185 प्रतिशत आगे है।

सुझाव - म.प्र. सरकार की कुल राजस्व प्राप्तियों में पूंजीगत प्राप्तियॉ भी अपनी अहम् भूमिका निभाती है। विशेषकर इसमें लोक लेखों पर भी विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। बूंद बूंद से घट भरता है। अत: लोक लेखों में वृद्धि के निम्न सुझाव हो सकते है :-

1. भविष्य निधियॉ वर्ष 2012-13, 2013-14 एवं 2014-15 में लगातार बढ़ी है। परंतु 2015-16 में 34 प्रतिशत की कमी चिंता का विषय है। अत: भविष्य निधियों में लगातार वृद्धि हो ऐसी नीति निर्धारण की आवश्यकता है।
2. म.प्र. में आरक्षित निधियों में वर्ष 2012-13, 2013-14 में अच्छी स्थिति नहीं रही है, परंतु वर्ष 2014-15 में बहुत अच्छी स्थिति रहने के पश्चात् 2015-16 में पुन: गिरावट चिंता का विषय है। अत: 2014-15 की स्थिति को बनाये रखने एवं उसमें वृद्धि के प्रयास किये जाने चाहिये।
3. म.प्र. में जमा एवं अग्रिम में वर्ष 2013-14, 2015-16 में स्थिति ठीक नहीं है, जबकि सबसे अच्छी स्थिति वर्ष 2014-15 की है। अत: इसे बनाये रखने के प्रयाय किये जाने चाहिये।
4. उचन्त एवं विविध की पूंजीगत प्राप्तियों में अहम् भूमिका रही है। अत: वर्ष 2014-15 की वृद्धि को बनाये रखने हेतु नीति निर्धारण की आवश्यकता है।
5. प्रेषण की पूंजीगत प्राप्तियों में लगातार वृद्धि शुभ संकेत है। अत: इसमें तीव्र वृद्धि के विशेष प्रयास किये जाने चाहियें
6. कुल लोक लेखों का पूंजीगत प्राप्तियों में लगातार वृद्धि शुभ संकेत है। फिर भी वर्ष 2014-15 में वृद्धि विशेष उपलब्धि है। अत: वृद्धि दर को बढ़ाने हेतु विशेष उपाय किये जाने चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भाटिया, एच.एल. (2013), **:'लोक वित्त'**, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा. लिमि.: नई दिल्ली।
2. डॉ. पन्त, जे.सी. (2014), **'राजस्व'**, एल. एन. अग्रवाल: आगरा।
3. आर्थिक समीक्षा 2012-13 से 2015-16
4. मध्यप्रदेश सरकार के बजट प्रतिवेदन वर्ष 2008-09 से 2015-16
5. तेरहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट।
6. चौदहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट।
7. वित्तीय क्षेत्र विधायी सुधार आयोग की रिपोर्ट 2013, वित्त मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली।
8. नवीन शोध संसार (अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका)ISSN 2320-8767

9. द्विव्य शोध समीक्षा (अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका)ISSN 2394-3807
10. Chand.S.N., Public Finance, Atlantic Publishers Distributors, New Delhi
11. Pangannavar Arjun.y., Public Finance, Principles, Policies & Practice, Atlantic Publishers Distributors, New Delhi
12. Bhusan, Sidhanshu, Public Finance and Deregulated Fees in India , Higher Education, Bookwell New Delhi.
13. State Finances: A Study of Budgets, April 07 2016, Reserve Bank of India
14. Statistical Year Book of India, 2015.
15. White Paper on Financial Condition of Madhya Pradesh, Feb 2014.

तालिका क्रं. 1 : म.प्र. सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में लोक लेखों का तुलनात्मक अध्ययन

(रू करोड़ में)

क्रं.	लोक लेखों के शीर्षक	2012-13 बजट अनु.	2013-14 बजट अनु.	2014-15 बजट अनु.	2015-16 बजट अनु.	वृद्धि प्रतिशत में		
						2012-13 से 2013-14	2013-14 से 2014-15	2014-15 से 2015-16
1	भविष्य निधियॉ	576	606	887	582	5	46	-34
2	आरक्षित निधियॉ	-19	-107	642	172	-463	-749	-73
3	जमा और अग्रिम	177	-469	-700	-1342	-365	-59	-92
4	उचन्त और विविध	-83	176	1050	2994	312	496	185
5	प्रेषण	-124	297	312	328	339	5	5
6	योग (1 से 5 तक)	527	450	2191	2734	- 15	387	25

स्त्रोत: बजट अनुमान वर्ष 2012-13, 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16

तालिका क्रं. 02 : छत्तीसगढ़ सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में लोक लेखों का तुलनात्मक अध्ययन

(रू करोड़ में)

क्रं.	लोक लेखों के शीर्षक	2012-13 बजट अनु.	2013-14 बजट अनु.	2014-15 बजट अनु.	2015-16 बजट अनु.	वृद्धि प्रतिशत में		
						2012-13 से 2013-14	2013-14 से 2014-15	2014-15 से 2015-16
1	भविष्य निधियॉ	360	350	350	350	-03	00	00
2	आरक्षित निधियॉ	121	237	138	138	-96	-42	00
3	जमा और अग्रिम	83	31	31	31	-53	00	00
4	उचन्त और विविध	64	118	19	19	84	-94	00
5	प्रेषण	00	00	00	00	00	00	00
6	योग (1 से 5 तक)	500	500	500	500	00	00	00

स्त्रोत: बजट अनुमान वर्ष 2012-13, 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16

तालिका क्रं. 03 : मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ सरकार की पूंजीगत प्राप्तियों में लोक लेखों की वृद्धि दरों का तुलनात्मक अध्ययन

(प्रतिशत में)

क्रं.	लोक लेखों के शीर्षक	मध्यप्रदेश			छत्तीसगढ़		
		2012-13 2013-14	2013-14 2014-15	2014-15 2015-16	2012-13 2013-14	2013-14 2014-15	2014-15 2015-16
1	भविष्य निधियॉ	5	46	-34	-03	00	00
2	आरक्षित निधियॉ	-463	-749	-73	-96	-42	00
3	जमा और अग्रिम	-365	-49	-92	-53	00	00
4	उचन्त और विविध	312	496	185	84	-94	00
5	प्रेषण	339	5	5	00	00	00
6	योग (1 से 5 तक)	-15	387	25	00	00	00

स्त्रोत: बजट अनुमान वर्ष 2012-13, 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16

इलाहाबाद शहर के वृद्धों की सामाजिक स्थिति

डॉ. प्रीति श्रीवास्तव *

शोध सारांश – वृद्ध हमारे परिवार व समाज के स्तम्भ है, वे हमारे परिवार के मुखिया है, परन्तु उपभोक्तावाद औद्योगिकरण, शहरीकरण के चलते वृद्धों की सामाजिक स्थिति गिरती जा रही है। जिसके बारे में अच्छी तरह समझने के लिए मैनें इलाहाबाद शहर को चुना, क्योंकि यह सरकारी कर्मचारियों का गण है। यहॉ विभिन्न सरकारी संस्थाऐं है, जिससे सरकारी क्षेत्रों से सेवा निवृत्त वृद्ध जनसंख्या का अच्छा खासा प्रतिशत इस शहर में रहता है। इलाहाबाद शहर का सर्वेक्षण करने के लिए इस शहर को चार भागों में बांटा– पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण और हर दिशा से 75 वृद्ध लोगों का सर्वेक्षण किया। इस तरह कुल 300 वृद्ध लोगों का सर्वेक्षण सन् 2012–13 में कर उनकी सामाजिक स्थिति का आकलन किया। जिससे वृद्ध महिलाओं व पुरूषों की आयु लिंग के आधार पर शैक्षणिक स्तर व पारिवारिक ढाँचे का आकलन किया है। साथ ही रहने की व्यवस्था, जैसे परिवार के साथ या अकेले आधार पर उनकी सामाजिक स्थिति व रहने का स्थान आदि के आधार पर उनकी सामाजिक स्थिति का आकलन किया गया है।

शब्द कुंजी – मुखिया, स्तम्भ, औद्योगिकरण, शहरीकरण, सरकारी संस्थाऐं, सर्वेक्षण, आकंलन, परिवारिक ढाँचा, शैक्षणिक स्तर, संयुक्त परिवार, एकल परिवार।

प्रस्तावना – वृद्धों का हमारे समाज में एक महत्वपूर्ण स्थान है। वे हमारे परिवार व समाज के स्तम्भ है, उनके ज्ञान व अनुभव से हम अपनी जीवन की कठिनाइयों को सहजता से दूर कर सकते है। उन्हें परिवार में मुखिया का दर्जा प्राप्त होता है व घर के कार्य आदि उनकी सलाह से होते है, परन्तु बढ़ते उपभोक्तावाद, औद्योगिकरण और शहरीकरण के कारण हमारे सांस्कृतिक मूल्यों का पतन होता जा रहा है। व्यस्त जीवन शैली के कारण परिवार के सदस्यों के पास उतना समय नहीं की वे उन्हें कुछ समय दे सकें व बढ़ते व्यक्तिवाद के कारण वृद्धों के सम्मान में गिरावट आती जा रही है। इन्हीं सब कारणों हेतु हमने इलाहाबाद के नगरीय वृद्ध जनसंख्या का सर्वेक्षण कर उनकी व्यक्तिगत स्थिति जैसे–वैवाहिक स्थिति शिक्षा, जाति व सामाजिक स्थिति को जानने का प्रयास किया।

शोध विधि का वर्णन – हमने अपने शोध सर्वेक्षण के लिए इलाहाबाद शहर को चुना क्योंकि इस शहर को सरकारी कर्मचारियों का गण कहा जाता है। यहॉ विभिन्न सरकारी कार्यालय जैसे– हाईकोर्ट, ए.जी. ऑफिस, बोर्ड ऑफिस, लोकसेवा आयोग, आबकारी विभाग, उत्तर प्रदेश का पुलिस मुख्यालय, उच्चशिक्षा, निदेशालय, माध्यमिक शिक्षा आयोग आदि। जिस वजह से सेवानिवृत्त व्यक्तियों की संख्या भी अधिक है, जो वृद्धों की सामाजिक स्थिति को जानने में सहायक है। अत: इलाहाबाद शहर को चार दिशाओं में बांटा गया है–पूरब, पश्चिम, उत्तर व दक्षिण और हर दिशा से 75 वृद्ध लोगों को सामाजिक स्थिति जानने का प्रयास किया गया। अत: कुल 300 वृद्ध जनसंख्या का सर्वेक्षण कर उनकी सामाजिक स्थिति का पता लगाया गया। 300 वृद्ध लोगों का सर्वेक्षण कर प्राप्त आंकड़ों को वर्गीकृत एवं तालिका बद्ध करने के पश्चात आंकड़ों का विश्लेषण व परिकल्पनाओं का परीक्षण व सत्यापन कार्ड स्क्वायर सांख्यकीय प्रतिदर्शज विधि द्वारा किया गया।

वृद्धों की सामाजिक स्थिति –

वृद्धों का आयु व लिंग के आधार पर वर्गीकरण –तालिका – 1

आयु	महिलाएं	पुरूष	कुल संख्या
60–64	62 (57.4)	80 (41.7)	142(74.6)
65–69	29 (26.8)	67 (34.9)	96 (32.0)
70–74	11 (10.2)	31 (16.1)	42 (14.0)
75 +	6 (5.5)	14 (7.3)	20 (6.7)
कुल संख्या	**108 (100)**	**192 (100)**	**300 (100)**

नोट – कोष्ठक में दी गयी संख्या लिंग के योग का प्रतिशत है।

वृद्ध जनसंख्या की विभिन्न आयु–वर्ग में कितनी महिलाएँ व पुरूष है को प्रदर्शित करती है। 300 वृद्ध लोगों में 108 महिलायें तथा 192 पुरूष है। अत: तालिका से स्पष्ट है की आयु के बढ़ते क्रम में वृद्ध जनसंख्या की मात्रा भी कम होती गयी, जो की स्वभाविक है।

वृद्ध जनसंख्या का शैक्षिणक स्तर –तालिका – 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका को देखने से यह निष्कर्ष निकलता है की सभी आयु वर्ग में साक्षर और प्राथमिक शिक्षा प्राप्त लोगों में महिलाओं का प्रतिशत पुरूषों से अधिक है परन्तु प्राथमिक व उच्च शिक्षा जैसे इंटरमीडियर, ग्रेजुएट, पोस्टग्रेजुएट व अन्य शिक्षा प्राप्त लागों में परूषों का प्रतिशत महिलाओं से अधिक है।

इसका सम्भवत: मुख्य कारण यह है कि 60 वर्ष व इससे ऊपर के आयु वर्ग के लोगों का जन्म स्वतन्त्रता पूर्व हुआ है और स्वतन्त्रता पूर्व स्त्रियों को उतनी प्रधानता प्राप्त नहीं थी जितनी अब प्राप्त है। इसलिए 60 वर्ष व उससे ऊपर आयु वर्ग की स्त्रियाँ पुरूषों की अपेक्षा कम शिक्षित है व निम्न स्तर तक

* अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र) सजंय गांधी स्मृति महाविद्यालय, गंजबासौदा (म.प्र.) भारत

ही शिक्षित है। इलाहाबाद की शहरीय वृद्ध जनसंख्या में प्रतिदर्श के आधार पर पुरूष वर्ग का शैक्षिक स्तर महिलाओं की अपेक्षा उच्च है। महिलाओं के शिक्षा का स्तर कम होने के और भी कारण है, उनमें जागरूकता का अभाव है और साथ ही उनकी शिक्षा की पूरी सुविधाएं नहीं उपलब्ध हो पाती है। पहले अधिकांशत: परिवार में से माना जाता था कि लड़कियों को दूसरे घर जाना है, इसलिए उनको अधिक पढ़ाकर क्या होगा और साथ ही अधिक पढ़ी लिखी होने पर शादी ब्याह में परेशानी आयेगी। इन सभी कारणों से महिलाओं की शिक्षा पर अधिक जोर नहीं दिया जाता था।

वृद्धों का परिवारिक ढाँचा – तालिका – 3*नोट* – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सारिणी से यह ज्ञात होता है कि हमारे समाज में अधिकांश लोग संयुक्त परिवार में रहते है। संयुक्त परिवार से आशय जहाँ तीन या तीन से अधिक पीढ़ियों के सदस्य साथ–साथ एक ही घर में निवास करते है उनकी सम्पत्ति सामूहिक होती है तथा वे एक ही रसोई में बना भोजन करते है।

एकल परिवार, परिवार का सबसे छोटा रूप है, जो एक पुरूष स्त्री तथा उनके अश्रित बच्चों से मिलकर बना होता है। निष्कर्ष रूप में कह सकते है कि 60–64 आयु वर्ग में एकल परिवार की संख्या व प्रतिशत दोनों अधिक है इसका मुख्य कारण यह पाया गया कि इस आयु वर्ग के लोग अपने दायित्वों से पूरी तरह से मुक्त नहीं हो पाते है और परिवार के सदस्य साथ ही रहते है। बढ़ती आयु के साथ संयुक्त परिवार की संख्या बढ़ती जाती है इसका कारण वृद्ध जनसंख्या का स्वास्थ और आर्थिक कारण है।

लिंग के आधार पर रहने की व्यवस्था का वितरण – तालिका–4 से यह प्रदर्षित होता है कि इलाहाबाद की 300 वृद्ध जनसंख्या समान्यत: किसके साथ रहती है। सबसे अधिक लोग 238 (78%) ऐसे है, जो अपने परिवार के साथ रहते है परिवार के साथ था अर्थ अपने बच्चों व शादी–शुदा बेटे के साथ रहते है अर्थात 3/4 लोग परिवार के साथ रहते है, इनमें से 84 महिलायें व 150 पुरूष है, दूसरे स्थान पर वे लोग है, जो अपने जीवन साथी के साथ रहते है। तीसरे स्थान पर वे लोग है, जो अकेले रहते है। अकेले से अभिप्राय उनके साथ कोई और नहीं रहता।

तालिका–4

क्र.	रहने की व्यवस्था	महिलायें	पुरूष	योग
1	परिवार के साथ	84(77.8)	150(78.1)	234(78)
2	अकेले	6(5.6)	10(5.2)	6(5.3)
3	पति/पत्नी के साथ	14(12.9)	25(13)	9(13)
4	शादी–शुदा लड़की के साथ	3(2.8)	1(5)	4(1.3)
5	अन्य संबंधियों के साथ	1(9)	6(3.1)	7(2.3)
	योग	**108(100)**	**192(100)**	**300(100)**

300 लोग में 16 लोग अकेले रहते है, जिसमें 6 महिलायें व 10 पुरूष है चौथे स्थान पर वे लोग है, जो अन्य सम्बन्धियों के साथ जैसे अपने बड़े या छोटे भाई के साथ या भतीजे व भानजे के साथ रहते है। 7 वृद्ध अपने सम्बन्धियों के साथ रहते है, जिसमें 1 महिला व 6 पुरूष है। ये 1 महिला अविवाहित है और अपने भाई–भाभी के साथ रहती है व 5 पुरूष अविवाहित है, जो अपने भाई के बच्चों के साथ रहते है व 1 विधुर है। पांचवे स्थान पर वे लोग है जो अपनी शादी–शुदा के लड़की साथ रहते है।

निष्कर्ष रूप में कह सकते है कि अधिकांश लोग (78%) अपने परिवार में रहते है व सबसे कम लोग (4) ऐसे है, जो शादी–शुदा लड़की के साथ रहते है। यह एक अपवाद है क्योंकि हमारा भारतीय समाज एक परम्परावादी समाज है, जहाँ पर लोग अपने परिवार के साथ रहते है। चाहे वह परिवार द्वारा अन चाहे व्यक्ति क्यों न हो ये बात सर्वेक्षण में बातचीत से मिली।

वृद्धों के रहने का स्थान –तालिका – 5

रहने का स्थान	महिलायें	पुरूष	योग
निजी/पुश्तैनी भवन	85(78.7)	170(88.5)	255(85)
किराये का मकान	16(14.8)	12(6.2)	28(9.3)
बिना किराये का मकान	4(3.7)	9(4.7)	13(4.3)
वृद्धा–आश्रम	3(2.8)	1(0.5)	4(1.3)
योग	**108(100)**	**192(100)**	**300(100)**

इलाहाबाद शहर की अधिकांश वृद्ध जनसंख्या के पास अपना निजी/पुश्तैनी आवास है, लगभग 85 लोगों के पास रहने को निजी व्यवस्था है , इन 85% व्यक्तियों में से लगभग 20% व्यक्ति ऐसे है, जिनसे सर्वेक्षण में बातचीत से पाया की घर में किसी को उनकी आवश्यकता नही है फिर भी वे साथ रह रहे है । इसका उन्होंने सामाजिक कारण लोक लज्जा बताया। अधिकांश जनसंख्या को वृद्धा आश्रम के सन्दर्भ में जानकारी ही नहीं है और कुछ लोग लोक लज्जा के कारण वहाँ नहीं जाते है।

निष्कर्ष – उपरोक्त विभिन्न तालिकाओं से इलाहाबाद के नगरीय वृद्धों की सामाजिक स्थिति का ज्ञान होता है। उपरोक्त विवेचन से ज्ञात होता है कि संयुक्त परिवार, एकल परिवार की अपेक्षा अधिक है जिस आधार पर कह सकते है कि आज भी हमारी भारतीय संस्कृति में संयुक्त परिवार का चलन है। हमने वृद्धों के रहने की स्थिति के बारे में पूछा तो पाया कि अधिकांशत: व्यक्ति 78% अपने परिवार के साथ अपने पुष्तैनी/निजी मकान में रहते है। परन्तु परिवार में रहने का अर्थ यह नहीं कि वे खुश है। ये सर्वेक्षण के दौरान बातचीत से पता चला।

अत: उपरोक्त विवरण से हमें इलाहबाद के नगरीय वृद्ध जनसंख्या की सामाजिक स्थिति के बारे में पता चलता है।

नीतिगत सुझाव – अपने अध्ययन में बहुत से ऐसे वृद्ध मिले जो अपने घर में अनइच्छित व्यक्ति के रूप में रहते है। वे लोक लज्जा के कारण घर छोड़ कर नही जाते, इसमें महिलाओं की संख्या अधिक है क्योंकि उनमें समाज का भय होता है अत: ऐसे वृद्धों को जागरूक करने की आवश्यकता है व उन्हें प्रोत्साहित करना होगा की वे अपने आत्मसम्मान को न खोए। ऐसे वृद्धों के लिए बहुत से सरकारी व निजी वृद्धाआश्रम बने हुए है, जहॉ वे अपने आत्म सम्मान के साथ स्वतन्त्रता पूर्वक रह सकते है। आज आधुनिक समाज में वृद्धों को इस समस्या के बढ़ने का मुख्य कारण आधुनिककरण, व्यक्तिवाद, उपभोक्तावाद है। युवाओं को प्रोत्साहित करना होगा कि वे अपना समय निकाल कर बुजुर्गो की सेवा करें, युवाओं को यह एहसास कराना चाहिए कि वृद्धों की सेवा से बहुत पुण्य व आशीष मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Amesur, C.A. (1959) welfare services for Aged and the Inform. Indian Journal of Social Work, 29(3), 157-162
2. Ara S. (1997) old Age Homes and the Profill of their Residerts Indian Journal of Medical Research. 106, 409-412.
3. मनुस्मृति– गंगानाथ झा द्वारा सम्पादित पृष्ठ – 79
4. द, जनरल ऑफ इलाहाबाद, हिस्टोरिकल सोसाइटी, इलाहाबाद, खण्ड–ए, 1982

5. Shah., H.C. "Who is an Aged – The necessity of a definition". In National Seminar on Problems of the Aged and of old Age Home. Ramadham. R.K.T.B. Sanstha, Bombey 98. 1992 p.40.
6. Pai, A.M. (1998) Problem of a Senior Citizen Jounal of the indian Medical Association 96 (5), 165.

वृद्ध जनसंख्या का शैक्षिणक स्तर –तालिका – 2

शैक्षणिक स्तर	60–64		65–69		70–74		75 +		कुल		कुल संख्या
	F	M	F	M	F	M	F	M	F	M	
निरक्षर	18(29)	3(3.7)	4(3.7)	5(7.5)	3(27.2)	3(9.7)	–	–	25(23.1)	11(5.7)	36(12)
साक्षर	13 (20.09)	4(5)	7(24.1)	5(7.5)	4(36.3)	1(3.2)	3(50)	–	27(25)	10(5.2)	37(12.3)
प्राथमिक	8(12.2)	2(2.5)	10 (34.5)	2(2.9)	2(18.2)	–	2 (33.8)	2(14.3)	22(20.3)	6(3.1)	28(9.3)
हाईस्कूल	8(12.9)	10(12. 5)	1(3.4)	4(5.9)	–	7(22.6)	–	6(42.8)	9(8.3)	27(14.0)	36(12)
इंटरमीडिएट	8(12.9)	14(17. 5)	4(13.8)	9(13.4)	–	8(25.8)	1 (16.6)	3(21.4)	13(12)	34(17.7)	47(15.3)
स्नातक	3(4.8)	16(20)	1(3.4)	23 (34.3)	–	7(22.6)	–	2(14.)	4(3.7)	48(25)	52(17.3)
स्नातकोत्तर	3(4.8)	13 (15.2)	1(3.4)	11(16. 4)	–	3(9.7)	–	–	4(3.7)	27(14)	31(10.3)
अन्य	1(1.6)	18 (22.6)	1(3.4)	8(11.8)	2(18.2)	2(6.4)	–	1(7.1)	4(2.7)	29(3.7)	33(11)
कुल	62(100)	80(100)	29(100)	67(100)	11(100)	31(100)	6(100)	14(100)	108(100)	192(100)	300(100)

वृद्धों का का परिवारिक ढाँचा – तालिका – 3

परिवार का ढाँचा	60–64	65–69	70–74	75 +	कुल योग
संयुक्त परिवार	67(47.1)	58(60.4)	27(64.2)	15(75)	167(55.7)
एकल परिवार	75(52.8)	38(39.5)	15(35.7)	5(25)	133(44.3)
योग	142(100)	96(100)	42(100)	20(100)	300(100)

नोट – कोष्ठक में दी गयी संख्या आयु वर्ग के योग का प्रतिशत है।

****

कृषि में तकनीकी परिवर्तन एवं आर्थिक विकास (भारत के संदर्भ में)

प्रो. उर्मिला वर्मा * डॉ. आशा साखी गुप्ता **

प्रस्तावना – आर्थिक विकास एक ऐसी अनवरत प्रक्रिया है, जिसके परिणामस्वरूप देश के समस्त साधनों का कुशलतापूर्वक उपयोग होकर राष्ट्रीय आय व प्रतिव्यक्ति आय में निरंन्तर व दीर्घकालीन वृद्धि होती है जिसमें जनता का जीवन स्तर उच्च होकर सामान्य कल्याण बढ़ता है। वर्तमान में व्यावहारिक अर्थशास्त्र कृषि के क्षेत्र में शोध का महत्व बढ़ता जा रहा है।

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है, भारत की 70 प्रतिशत जनता कृषि व्यवसाय पर निर्भर है। जीवन निर्वाह हेतु अन्य क्षेत्रों की तुलना में कृषि का विशेष महत्व है, यहाँ की कुल जनशक्ति का 24 प्रतिशत भाग कृषि श्रमिकों के रूप में तथा 36 प्रतिशत कृषक कृषि से प्रत्यक्ष रोजगार प्राप्त करते है। यद्यपि राष्ट्रीय आय में कृषि का अंश 1950–51 में 56.6 प्रतिशत से घटकर 2013–14 में 13.9 प्रतिशत हो गया है लेकिन फिर भी यह अन्य देशों की तुलना में अधिक है साथ ही देश के 45 करोड़ पशुओं को चारा भी कृषि से ही प्राप्त होता है एवं बड़े एवं लघु व कुटीर उद्योग अपने विकास हेतु कृषि से ही कच्चा माल प्राप्त करते है एवं इनकी निर्मित वस्तुओं की बिक्री भी कृषि क्षेत्र पर ही निर्भर है। कृषि उत्पादन बढ़ने से कृषि से संबंधित क्षेत्र में व्यापार, संचार, संग्रहण, बैंकिग बीमा, यातायात आदि का विस्तार होता है व इनमें रोजगार व आय में वृद्धि होती है। उपभोक्ता की आय का कृषि वस्तुओं के क्रय पर व्यय का अंश लगभग 70 से 80 प्रतिशत होता है। खाद्यान्नों की मांग की व्यय अधिक होने के कारण इनकी कीमतों में होने वाले उतार चढ़ाव उपभोक्ताओं के जीवन स्तर को सीधे रूप से प्रभावित करता है। साथ ही भारत को विदेशी व्यापार का अधिकांश भाग कृषि से प्राप्त होता है।

उद्देश्य :

1. भारत में कृषि तकनीक में परिवर्तन का कृषि विकास पर प्रभाव ज्ञात करना।
2. भारत में नवीन तकनीक अपनाने से कृषि क्षेत्र में व्यावहारिक धरातल पर आने वाली समस्याएं ज्ञात करना।
3. समस्याओं के निराकरण के सुझाव देना।

प्राक्कल्पना :

1. भारत में बड़े पैमाने पर कृषि में नवीन तकनीक का प्रयोग किया जा रहा है।
2. कृषि में नवीन तकनीक के प्रयोग से कृषि का विकास हुआ है। जिसमें भारतीय अर्थव्यवस्था में बड़ी सीमा तक प्रभावित किया है।
3. नवीन तकनीक के प्रयोग से कृषक का जीवन स्तर उन्नत हुआ है।
4. नवीन तकनीक के प्रयोग में कुछ समस्या आ रही है, जिन्हें दूर करना आवश्यक है।

शोध प्रविधि – वर्णात्मक व विश्लेषणात्मक है। द्वितीयक समंको का प्रयोग किया गया है। द्वितीय समंको का एकत्रण विभिन्न सरकारी शोध पत्रिकाओं, समाचार पत्रों, पुस्तकों, नेट आदि से किया गया है।

भारत में कृषि में तकनीकी परिवर्तन व उनका कृषि उत्पादकता पर प्रभाव – आर्थिक विकास के संदर्भ में तकनीकी परिवर्तन से आशय उत्पादन के तरीकों में परिवर्तन से होता है। तकनीकी परिवर्तन में 2 बातें शामिल होती है, एक तो वह तकनीक जो भूमि में उत्पादकता को बढ़ा देती है, जैसे सिंचाई, उर्वरकों का उपयोग, उँची उपज के बीजों का प्रयोग आदि। दूसरी वह तकनीक जिसमें मानवीय रूप में श्रम के स्थान पर मशीनों जैसे ट्रेक्टर, थ्रेसर आदि का प्रयोग किया जाता है। इसे कृषि का यंत्रीकरण भी कहते है।

द्वितीय विश्व युद्ध के समय राकफैलर फाउण्डेशन के सदस्यों विशेषत: नार्मन कोरलग ने मैक्सिको में गेहूँ की नई किस्म खोजने का काम किया व अधिक उपज देने वाले बीजों के प्रयोग को कृषि विकास हेतु पर्याप्त शर्त माना गया। भारत में इस नई कृषि तकनीक को अपनाने का संगठित प्रयास 1960–61 में 'गहन कृषि क्षेत्र कार्यक्रम' का प्रांरभ एक पाइलट परियोजना के रूप में किया गया। तत्पश्चात 1965 में गहनकृषि क्षेत्र कार्यक्रम चालु किया गया। इसके पश्चात हरित क्रांति के रूप में कृषि की यह नई तकनीक संपूर्ण देश में अपनाई गई। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना से देश में उन्नत बीजों, उर्वरकों, कीटनाशकों के साथ साथ मशीनों के प्रयोग जैसे ट्रेक्टरो, पम्पसेटों, थ्रेसरों व हार्वेस्टरों का भी बड़ी संख्या में प्रयोग होने लगा है। पंजाब व हरियाणा जैसे राज्यों के कृषि क्षेत्र में नवीन तकनीक अपनाकर कीर्तिमान स्थापित किये है। जीवन निर्वाह खेती का अब व्यवसायीकरण होने लगा है तथा कृषक अब अपने लाभ को बढ़ाने में लगा है।

कृषकों को नवीनतम तकनीक की जानकारी प्रदान करने हेतु सरकार ने 2050 से भी अधिक प्रशिक्षण संस्थाओं की स्थापना की है। वर्तमान में (जनवरी 2015 तक) देश में 527 कृषि विकास केन्द्र तथा 63 राज्य कृषि विश्वविद्यालय व 5 केन्द्रिय कृषि विश्वविद्यालय विद्यमान हैं।

भारतीय कृषि में तकनीकी परिवर्तन एवं विकास निम्नलिखित है –

1. **यंत्रीकरण –** बहुत तेजी से हुआ है ट्रेक्टर्स का प्रयोग तेजी से बढ़ा है। जो निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट हैं :–

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) श.भी.ना. शास. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) श.भी.ना. शास. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

तालिका क्रमांक 01
ट्रेक्टरों व पावर टिलरों की वर्षवार बिक्री

वर्ष	ट्रेक्टर	पावर टिलर
2007-08	346501	26135
2008-09	342836	35294
2009-10	393836	38794
2010-11	445109	50000
2011-12	535210	60000

स्त्रोत :- इन्टरनेट।

2. सिंचाई की प्रगति – सिंचाई हेतु 2 प्रकार के पम्प सेट लगाये जाते है एवं विद्युत चलित दूसरे डिजलचलित। 1950-51 में 0-77 लाख पम्प सेट लगे हुए थे जिनकी संख्या बढ़कर 2002-03 में 120 लाख हो गई।

3. उर्वरकों में प्रगति – कृषि में एक संपूर्ण परिवर्तन रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग में वृद्धि है। 1960-61 में रासायनिक उर्वरकों का उपभोग 2.9 लाख टन था ।जो बढ़कर 2006-07 में 21.65 मिलियन टन हो गया वर्तमान समय में पूरे देश में उर्वरको की खपत 96.4 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर हैं।

4. अधिक उपज के बीजों का प्रयोग – 1966-67 से अधिक उपज देने वाले बीजों का प्रयोग किया जा रहा है। 196-67 में यह आकड़ा 1.9 कृषि हेक्टेयर था। 2010-11 में बीजो का पंजीकृत क्षेत्र 3.51 लाख हेक्टेयर था व प्रमाणित बीज की मात्रा 26.52 लाख क्विंटल थी।

5 कीटनाशकों का उपयोग – पौध संरक्षण हेतु कीटनाशक दवाओं का प्रयोग किया जाता है। जिसका 2006-07 के दौरान कीटनाशकों का उपयोग 38 हजार टन हुआ था व इसमे लगातार वृद्धि होती गई।

भारत में तकनीकी परिवर्तन व कृषि उत्पादन – भारत में कृषि उत्पादन दो वर्गो में विभक्त किया जा सकता है। खाद्यान्न व गैर खाद्यान्न। भारत में कृषि उत्पादन की प्रकृति निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट है।

तालिका क्रमांक 02 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि उत्पादन में वृद्धि दर खाद्यान्न फसलों (गेहूँ, चावल, गन्ना, कपास) में तिलहन दलहनों की अपेक्षा अधिक है। लेकिन हरित क्रांति के बाद के काल में पूर्व की अपेक्षा प्राय: सभी फसलों में उत्पादन वृद्धि अधिक है।

भारत की राष्ट्रीय आय में कृषि का योगदान निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट है।

तालिका क्रमांक	**03 : भारत की राष्ट्रीय आय में कृषि का योगदान**
वर्ष	भारत की कुल राष्ट्रीय आय में कृषि का प्रतिशत
1950-51	56.6
1960-61	52.3
1970-71	46.0
1980-81	39.9
1990-91	34.0
2000-01	26.2
2009-10	16.2
2012-13	13.9*1
2013-14	13.9*2

स्त्रोत – *1 आर्थिक समीक्षा 2010-11।

*2 प्रतियोगिता दर्पण समसामयिक वार्षिकी 2014 वाल्युम 2 पृष्ठ 230।

तालिका से स्पष्ट है कि राष्ट्रीय आय में कृषि का योगदान कम हुआ है लेकिन यह योगदान अभी भी महत्वपूर्ण है व अन्य देशों की तुलना में अधिक है।

कुल रोजगार में विभिन्न क्षेत्रों का योगदान :- निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट हैं।

तालिका क्रमांक	**04 : कुल रोजगार में विभिन्न क्षेत्रों का योगदान**		
क्षेत्र	1999-2000	2004-05	2011-12
कृषि व संबंधित	59.9	58.5	48.9
क्षेत्र			
उद्योग	16.4	18.2	24.3
सेवाएँ	23.7	23.3	26.9

स्त्रोत – प्रतियोगिता दर्पण समसामयिक वार्षिकी 2014 वाल्युम 2 पृष्ठ 233।

तालिका से स्पष्ट हैं कि कुल रोजगार में कृषि का योगदान क्रमश: घट रहा हैं। लेकिन अन्य क्षेत्रों की तुलना में अभी भी अधिक हैं।

कृषि वस्तुओं के निर्यात से प्राप्त आय तथा उनका देश के कुल निर्यात में अंश निम्न तालिका से स्पष्ट हैं।

तालिका क्रमांक 05 :कृषि वस्तुओं के निर्यात से प्राप्त आय तथा उनका देश के कुल निर्यात में अंश

वर्ष	कृषि वस्तुओं के निर्यात से प्राप्त आय	कुल निर्यात आय में कृषि वस्तुओं के निर्यात का प्रतिशत
1960-61	284	44.24
1970-71	487	31.73
1980-81	2057	30.65
1990-91	6317	19.41
2000-01	28535	14.0
2009-10	85211	9.9

स्त्रोत – आर्थिक समीक्षा 2010-11।

तालिका से स्पष्ट है कि कृषि वस्तुओं के निर्यात से प्राप्त आय में बढ़ने की प्रकृति है लेकिन कुल आय में निर्यात प्रतिशत कम हो रहा है यद्यपि कृषि से निर्यात बढ़ाने की देश में प्रबल संभावनाएँ है।

कृषि में तकनीकी का परिवर्तन कृषि क्षेत्र पर प्रभाव – हरित क्रांति के कारण खाद्यान्नों के क्षेत्र में भारत एक आयातकर्ता से चावल का सबसे बड़ा व गेहूँ का दूसरा बड़ा निर्यातकर्ता देश बन गया है कृषि उत्पादन से आय व बचत दर भी बढ़ी है जिससे पूंजी निर्माण मे वृद्धि हुई है और औद्योगिक विकास के लिये आधार प्राप्त हुआ हैं। कृषि के परम्परागत स्वरूप में परिवर्तन हुआ है, कृषि जो जीवनयापन हेतु की जाती थी अब व्यावसायिक आधार पर की जाने लगी है। कृषि मजदुरों के जिन क्षेत्रों में सिंचित क्षेत्र अधिक है, श्रमिकों की मांग बढ़ने से रोजगार के अवसरो का विस्तार हुआ हैं। अब कृषि व्यापार बढ़ा है कृषि श्रमिकों की मजदूरी में भी वृद्धि हुई है। सबसे बड़ा प्रभाव तो यह हुआ है कि कृषकों का आत्मविश्वास बढ़ा है व वे अब भाग्य के स्थान पर कर्म में विश्वास करने लगे है। यह एक शुभ संकेत हैं।

समस्याएँ – नई कृषि तकनीक अपनाने से पूंजीवादी कृषि को प्रोत्साहन मिला है। बड़े किसान ही लाभान्वित हुए है, छोटे व सीमांत कृषकों को इससे कोई विशेष लाभ नहीं हुआ है। साथ ही संपन्न क्षेत्रों जैसे पंजाब, हरियाणा,

महाराष्ट्र, तमिलनाडु आदि को ही ज्यादा लाभ हुआ है। 'उन्नत बीज ' तकनीक कुछ फसलों तक ही सीमित रही है। संस्थागत परिवर्तन की उपेक्षा की गई है व लगातार रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से खेती की उर्वराशक्ति क्षीण हुई है।

सुझाव – भारत जैसे कृषि प्रधान देश में कृषि का विशेष महत्व हैं, अत: आवश्यकता इस बात कि है कि कृषि उत्पादन को बढ़ाकर विश्व स्तर पर लाया जावे इस हेतु छोटे कृषकों तक को हरित क्रांति क्षेत्र में लाया जावे, मिटटी परीक्षण, शुष्क कृषि तकनीक का विस्तार, निर्यात मूल्य फसलों को प्राथमिकता, तिलहन व दलहन के उत्पादन में वृद्धि, जैविक खादों के प्रयोग पर बल, मोरे अनाजों के उत्पादन में वृद्धि, व्यापक फसल बीमा योजना न्युनतम मूल्यों की ग्यारण्टी, पाठ्यक्रमों में कृषि एक अनिवार्य विषय आदि उपाय आवश्यक है। संवहनीय कृषि के लिए आधुनिक नीतियों के पुनरीक्षण की आवष्यकता हैं। कृषि की सुस्थिरता के लिए व्यापक वृक्षायुर्वेद, अग्निहोत्र कृषि, वैदिक खेती, सहज कृषि, प्राकृतिक खेती, जैविक खेती जैसे विकल्पो की संभावना पर शोध किया जाना आवश्यक हैं। कृषि में महिलाओं की बढ़ रही संख्या को देखते हुए उत्पादको को सरल महिला अनुकुल तथा कम मेहनत वाले टुल्स और मशीनरी विकसित करने की दिशा में गहन विचार करने की जरूरत हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. इन्टरनेट।
2. कृषि अर्थशास्त्र डॉ. एस.जी. जैन।
3. समाचार पत्र :- दैनिकभास्कर, राजएक्सप्रेस, नईदुनिया।
4. शोध जर्नल्स।
5. प्रतियोगिता दर्पण समसामयिक वार्षिकी 2014 वाल्युम 2।
6. क्रानिकल।

तालिका क्रमांक 02

(मिलियन टन में)

फसल	2008-09	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	
						14 फरवरी, 2014 के दूसरे अग्रिम आकलन	16 मई, 2014 के तीसरे अग्रिम आकलन
धान	99.18	89.09	95.98	105.31	105.24	106.19	106.29
गेहूँ	80.68	80.80	86.87	94.88	93.51	95.60	95.85
ज्वार	7.25	6.70	7.00	6.01	5.28	5.53	5.25
बाजरा	8.89	6.51	10.37	10.28	8.74	8.80	9.19
मक्का	19.73	16.72	21.37	21.76	22.26	23.29	24.19
मोटे अनाज	40.94	33.55	43.40	42.04	40.04	41.69	42.68
तुअर (अरहर)	2.27	2.46	2.86	2.65	3.02	3.34	3.38
चना	7.06	7.48	8.22	7.70	8.83	9.79	9.93
उरत	1.17	1.24	1.76	1.77	1.90	1.59	1.50
मूँग	1.03	0.69	1.80	1.63	1.19	1.28	1.40
कुल दालें	14.57	14.66	18.24	17.09	18.34	19.77	19.57
कुल खाद्यान्न	234.47	218.11	244.49	259.32	257.13	263.20	264.38
मूँगफली	7.17	5.43	8.26	6.96	4.69	9.14	9.47
रेपसीड और सरसों	7.20	6.61	8.18	6.60	8.03	8.25	7.83
सोयाबीन	9.91	9.96	12.74	12.21	14.66	12.45	11.95
कुल नौ तिलहन	27.72	24.88	32.48	29.80	30.94	32.98	32.40
कपास*	22.28	24.02	33.00	35.20	34.22	35.60	36.50
जूट, मेस्ता**	10.37	11.82	10.62	11.40	10.93	11.30	11.50
गन्ना	285.03	292.30	342.38	361.04	341.20	345.92	348.38

* मिलियन गाँठें (170 किग्रा की प्रत्येक गाँठ) ** मिलियन गाँठें (180 किग्रा की प्रत्येक गाँठ)

स्त्रोत – प्रतियोगिता दर्पण समसामयिक वार्षिकी 2014 वाल्युम 2 पृष्ठ 186।

****

खेतिहर जनजाति महिला श्रमिकों की आर्थिक स्थिति का विश्लेषणात्मक अध्ययन

गोरेलाल डावर *

प्रस्तावना – भारतीय सामाजिक व्यस्था की मूल इकाई ग्राम है क्योंकि भारत एक ग्राम प्रधान देश है। भारतीय जनसंख्या का 80.13 प्रतिशत भाग गांवों में निवास करती है।[1] जिस प्रकार गांव सामाजिक व्यवस्था का मूल है उसी प्रकार कृषि भारतीय राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार है, ग्रामीण अर्थव्यवस्था का मूल आधार भी कृषि है। लेकिन दुर्भाग्यवश कृषि कार्य में रत इस विशाल जनसंख्या के एक बहुत बड़े भाग के पास न तो अपनी स्वयं की कोई भूमि है और न ही निर्धनता के कारण उसमें भूमि प्राप्त करने कि कोई सामर्थ्य है इसलिए ये कथित कृषक विवश होकर भू-स्वामियों कि भूमि पर श्रमिकों के रूप में कार्य करते है और इस रूप में उन्हें जो कुछ भी पारिश्रमिक प्राप्त होता है उससे वे अपना और अपने परिवार का भरण-पोषण करते है इसी आधार पर इनको कृषि श्रमिक की संज्ञा दी गई है। भारत की कुल जनसंख्या में अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या 8,43,26,240 है, जिसमें पुरूष 4,26,40,929 है व महिलाओं की संख्या 4,16,85,411 है जो देश की कुल जनसंख्या का 8.2 प्रतिशत है।[2]

भारत की श्रमशक्ति में महिला श्रमिकों का एक प्रमुख हिस्सा है, लेकिन रोजगार के स्तर और गुणवत्ता की दृष्टि से वे पुरूषों से पीछे रह जाती है। महिला श्रमिकों की संख्या 25.60 प्रतिशत है, देश में महिलाओं की कुल संख्या 49 करोड़ 65 लाख में से 12 करोड़ 72 लाख 20 हजार महिलाऐं श्रमिक है, अधिकांश श्रमिक महिलाऐं ग्रामीण क्षेत्रों से है, ग्रामीण क्षेत्र की महिला श्रमिकों में 87 प्रतिशत खेतिहर मजदूर है। शहरी क्षेत्र में 80 प्रतिशत श्रमिक महिलाऐं घरेलू उद्योगों ,छोटे-छोटे व्यवसायों और नौकरी तथा भवन निर्माण जैसे असंगठित क्षेत्रों में काम कर रही है।

खेतिहर जनजाति महिला श्रमिक की स्थिति का अध्ययन – प्रस्तुत अध्ययन द्वारा खेतिहर अनुसूचित जनजाति महिला श्रमिकों की सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की जानकारी हेतु व्यक्तिगत विशेषताओं आयु संरचना, वैवाहिक स्थिति, उपजाति, परिवार का स्वरूप, शिक्षा, आय, श्रम का समय, श्रम की दशा, श्रम से परिवार का आर्थिक विकास आदि को आधार मानकर विष्लेषित किया गया है।

प्रस्तुत अध्ययन निर्दशन की सौउद्देश्य-निर्दशन पद्धति पर आधारित है। भगवानपुरा के कुल 107 गाँवों में से 10 गाँवों का चयन अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या के आधार पर अवरोही क्रम से किया गया। जिसमें सर्वाधिक जनजाति वाला गाँव धुलकोट तथा दसवें क्रम वाला गाँव पिपलझोपा है। चयनित 10 गाँवों में से प्रत्येक गाँव से 20-20 अनुसूचित जनजाति खेतिहर महिला श्रमिक को चुना गया। इस प्रकार कुल 200 अनुसूचित जनजाति खेतिहर महिला श्रमिकों को अध्ययन की अन्तिम इकाई के रूप में चयन कर साक्षात्कार सनुसूची से सर्वेक्षण किया गया।

अध्ययन क्षेत्र में सर्वाधिक बारेला उपजाति की महिलाऐं निवासरत होकर खेतिहर है। शिक्षा जैसी मौलिक सुविधा का अभाव है। जिसके कारण जनजाति परिवार निरक्षर होने से मुख्य धारा से जुड़ नहीं पा रहे है। खेतिहर अनुसूचित जनजाति महिलाओं के परिवार का स्वरूप एकांकी है। जबकि के.एम. कपाड़िया संयुक्त परिवार को आदर्श और मजबुत मानते है।म जनजातिय परिवारों में ईंधन हेतु परम्परागत साधनों(लकड़ी) का ही उपयोग किया जाता है।

जो महिलायें बाहर गाँव मजदूरी करने जाती है उनके समक्ष अपने परिवार व बच्चों को छोड़ने को मजबूर हो जाती है क्योंकि मजदूरी से ही उनका व परिवार का भरण-पोषण होता है। अगर वे गाँव में काम ढ़ँढती है या काम की आशा में रहती है, तो उनको काफी हद तक राएन व पारिवारिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। खेतिहर महिला श्रमिकों की अशिक्षा व ज्ञान के अभाव के कारण नियोजकों के द्वारा शोषण किया जा रहा है, वे अपने विवेक के अनुसार कार्य का समय,मजदूरी की राशि निर्धारित कर श्रमिकों से कृषि कार्य करवाते है। 36 प्रतिशत को पुरूषों के समान मजदूरी मिलती है एवं 64 प्रतिशत को पुरूषों के समान मजदूरी नहीं मिलती है। 58 प्रतिशत महिला श्रमिक कृषि मालिकों व साहुकारों से उधार लेकर, 34.5 प्रतिशत पड़ोसी/रिश्तेदारों से उधार लेकर अपना दैनिक खर्च चलाते है।

खेतिहर जनजाति महिला श्रमिक में से 5 प्रतिशत महिलाऐं अपनी मजदूरी की राशि को शिक्षा में, 65.5 प्रतिशत भोजन पर, 7.5 प्रतिशत वस्त्रों पर तथा 22 प्रतिशत अन्य कार्यो पर मजदूरी की राशि को प्राथमिकता से खर्च करती है।

खेतिहर जनजाति महिला श्रमिकों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन :

मजदूरी का स्थान – खेतिहर जनजाति महिला श्रमिकों को गाँव की कृषि भूमि पर काम नहीं मिलने के कारण वे दुसरे गाँवों में मजबुरी वश कार्य करने जाती है। बाहर गाँव जाने से इनको शारीरिक, मानसिक समस्या भी होती है।

मजदूरी कार्य का समय – जो महिला घर में सुबह से उठकर चाय पानी, घर की साफ सफाई,बच्चों को नहलाना ओर खाना बनाने के बाद मजदूरी करने जाती है अर्थात् 24 घण्टों में से उनको 15 से 18 घण्टे तक निरन्तर कार्य करना पड़ता है। इससे उनको शारीरिक थकान भी होती है व उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ता है।

मजदूरी की राशि – मजदूरी में प्रतिदिन आठ से दस घण्टे तक कार्य करने के बाद भी इन्हें कम मजदूरी मिलती है, 64.5 प्रतिशत महिला श्रमिकों को प्रतिदिन 25 से 50 रूपये तक मजदूरी मिलती है। 35.5 प्रतिशत महिला

* शोधार्थी, अर्थशास्त्र अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

श्रमिकों को 50 से 75 रूपये तक अपनी मेहनत का पारिश्रमिक मिलता है।

मजदूरी राशि से संतुष्टी – प्राप्त मजदूरी की राशि से मात्र 38 प्रतिशत महिला श्रमिक संतुष्ट है जबकि 62 प्रतिशत संतुष्ट नहीं है, इससे यह स्पष्ट होता है कि मजदूरी कि राशि कम मिलने से इनको आर्थिक समस्याओं का सामना करना पडता है,फिर जीवन–यापन व अन्य कोई रोजगार उपलब्ध न होने के कारण ये कृषि मजदूरी करने को मजबुर है।

मजदूरी का भुगतान – मजदूरी भुगतान के सम्बन्ध में 17 प्रतिशत महिलाऐं प्रतिदिन मजदूरी प्राप्त करती है, 70.5 प्रतिशत महिलाऐं साप्ताहिक मजदूरी प्राप्त करती है जबकि 12.5 प्रतिशत महिलाऐं मासिक मजदूरी प्राप्त करती है। साप्ताहिक व मासिक रूप से मजदूरी प्राप्त करने वाली महिला श्रमिक का दैनिक खर्च कठिनाई से चलता है। 58 प्रतिशत महिलाऐं दैनिक खर्च जैसे राशन, किराणा सामाग्री खरीदनें के लिये पड़ोसी व कृषि मालिक से पैसे उधार लेती है, जबकि 34.5 प्रतिशत महिलाऐं अपने रिश्तेदारों से पैसा उधार लेकर दैनिक खर्च चलाती है।

शासन द्वारा निर्धारित मजदूरी दर – सर्वेक्षित खेतिहर महिला श्रमिकों को शासन द्वारा मजदूरी राशि के प्रावधानों का ज्ञान नहीं है। 19.64 प्रतिशत महिलाऐं अशिक्षित होने से वे मजदूरी से प्राप्त होने वाली कम मजदूरी की राशि बिना किसी विरोध के प्राप्त कर लेती है, 80.36 प्रतिशत महिलाओं को कृषि नियोजकों द्वारा कम मजदूरी देकर शोषण किया जा रहा है।

खेतिहर महिला श्रमिक की समस्यायें:

1. अशिक्षा खेतिहर महिला श्रमिकों की मुख्य समस्या है, जिसके कारण विकास धारा से टुटी हुई है।
2. ग्रामीण समाज अत्यन्त रूढ़िवादी तथा पिछड़ा हुआ है, यहाँ महिलाओं की स्थिति बहुत दयनीय है बाल विवाह की कुरीति प्रचलित है जिससे कारण महिला अनेक यातनाओं को सहन करती हुई किशोरावस्था में ही माँ बन जाती है।
3. बुनियादि जरूरतें जैसे:– पानी, ईधन, आश्रय, शिक्षा, स्वास्थ, विद्युत उपलब्धता की आपूर्ति में ही इनका ज्यादातर समय व शक्ति चली जाती है उनमे लिंग के आधार पर घरेलू कार्यो का विभाजन न्यूनाधिक रूप में यथावत बना हुआ है। पारंपरिक घरेलू कार्य अधिकांशत: महिला श्रमिकाओं द्वारा ही संपादित किये जाते है निम्न व विशम सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि, संसाधनो का आभाव, दोहरा कार्य बोझ, श्रमसाध्य जीवन शैली के कारण कृषि क्षेत्र में कार्यरत महिला श्रमिक पारिवारिक, सामाजिक आर्थिक कार्यगत तथा स्वास्थ संबंधित समस्याओं से ग्रस्त रहती है।
4. खेतिहर महिला श्रमिक को प्रतिदिन काम न मिलने से परिवार में राशन की समस्या देखी गई है।
5. खेतिहर अनुसूचित जनजाति महिला श्रमिकों को घर और बाहर कुल मिलाकर 15 से 16 घण्टे कार्य करना पड़ता है लम्बी कार्य अवधि के कारण वे तनावग्रस्त तो रहती ही है साथ ही अपने बच्चों का भी ठीक से ध्यान नहीं रख पाती है।
6. खेतिहर महिला श्रमिकों को पूरे साल भर कार्य नहीं मिलता क्योंकि वर्ष भर कृषि कार्य नहीं चलते। अत: उसे खाली समय का सदुपयोग करने के लिए उनके पास कोई साधन नहीं होते है।
7. परिवार की आय में बराबरी और कभी–कभी अधिक योगदान देने के बाद भी उनको अपने परिवार तथा समाज में सम्मान तथा अधिकार प्राप्त नहीं है। दिन–रात कड़ा श्रम करने के बाद भी उनके श्रम का न तो उचित मूल्य मिलता है और न उचित आदर, इससे उनमें स्वालम्बन व आत्मविश्वास की भावनाओं की कमी होती है।
8. खेतिहर महिला श्रमिकों पर कार्यो का दोहरा बोझ रहता है। उनको परिवार के पालन पोषण तथा कृषि कार्य करने की दोहरी जिम्मेदारी होती। इससे उनकी शारीरिक क्षमता पर विपरीत असर पड़ता है तथा कृषि कार्य भी प्रभावित होता है।
9. खेतिहर महिलाऐं जिस वातावरण में कार्य और निवास करती है वह स्वास्थ की दृष्टि से अनुकूल नहीं है। ग्रामीण महिलाऐं कुपोषण का शिकार भी होती है। गर्भावस्था के दौरान न तो इन्हें पर्याप्त खुराक मिलती है और न समुचित आराम मिलता है। इससे वे रक्ताल्पता और अनेक स्त्री रोगों से ग्रसित रहती है।

सुझाव :

1. खेतिहर अनुसूचित जनजाति महिला श्रमिकों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने और इनकी आर्थिक स्थिति को मजबूत बनाने के लिये सबसे अहम बात है शिक्षा की, शिक्षा के द्वारा ही अपेक्षित कार्य सम्भव है। इन जनजाति क्षेत्रों में शिक्षा के व्यापक प्रचार–प्रसार की आवश्यकता है क्योंकि शिक्षा ही समस्याओं का हल है, समाधान है।
2. बाल–विवाह से शरीर कमजोर व स्वास्थ पर बुरा प्रभाव पड़ता है अत: महिला स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता द्वारा महिला श्रमिक के परिवार से सम्पर्क कर बाल–विवाह के दुष्परिणाम बताते हुऐं इसे रोकने का प्रयास करना चाहिऐ।
3. खेतिहर अनुसूचित जनजाति महिला श्रमिकों की स्थिति को प्रभावित करने वाला एक कारण स्वास्थ्य भी है। स्वास्थ्य संबंधी सुविधाएं इन महिलाओं को उपलब्ध कराई जावें ताकि इन्हें सुविधाओं का लाभ मिल सके।
4. खेतिहर जनजाति महिलाओं के लिये खाना बनाने के आधुनिक उपकरणों जैसे धुँआ रहित चूल्हा, गोबर गैस, सोलर कुकर आदि उन्हें उपलब्ध कराये जाने चाहिये।
5. खेतिहर जनजाति महिला श्रमिकों के लिये पीने के पानी की उपलब्धता भी एक बहुत बड़ा विकास का कारक है। अत: प्रत्येक गांव में पीने का पानी सुनिश्चित करने के लिये ग्राम पंचायत के माध्यम से पानी की टंकी का निर्माण कर नल लगवाना चाहिऐं ।
6. सरकार के द्वारा महिलाओं के विकास के लिए अनेक कार्यक्रम चलाये जा रहे है। महिला स्वास्थ, महिला साक्षरता, आत्मनिर्भरता, महिला संरक्षण कानुन तथा महिलाओं को उनके अधिकारों का ज्ञान देने के लिए कार्यक्रम बनाये गये है उनका सही क्रियान्वयन होना आवष्यक है ।
7. खेतिहर महिला श्रमिक की प्रवास प्रवृत्ति रोकने के लिये लघु व कुटीर उद्योग स्थापित किये जाये।
8. खेती के मौसमी स्वरूप के कारण खेतिहर महिला श्रमिकों को पूर्णकालिक रोजगार की सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हो पाती। अत: इस समस्या को दूर करने के लिए श्रम–प्रधान खेती के विकास पर विशेष बल दिया जाना चाहिये। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में दोहरी फसल उगाने की सम्भावनाएँ उत्पन्न होगी और खेतिहर श्रमिकों को वर्ष भर कार्य मिल सकेगा।
9. औद्योगिक महिला श्रमिकों की भांति खेतिहर जनजाति महिला श्रमिकों को भी सम्पूर्ण सुविधायें मिलनी चाहिऐं।

10. भारत के खेतिहर श्रमिकों की आर्थिक दशा को सुधारने तथा उन्हें एक सुदृढ़ धरातल प्रदान करने के लिए न्यूनतम मजदूरी का निर्धारण अपना एक विशिष्ट महत्व रखता है। यद्यपि इस संबंध में भारत सरकार द्वारा न्यूनतम मजदूरी अधिनियम पारित किया जा चुका है तथापि उसके उचित क्रियान्वयन के अभाव में उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो सकी है। अत: कृषि नियोजकों को संगठित कर अधिनियम के अनुसार कार्य करवाने के लिये प्रतिबद्ध किया जाऐ।
11. खेतिहर अनुसूचित जनजाति महिला श्रमिकों को दुर्घटना इत्यादि पर सहायता राशि का प्रावधान किया जाना चाहिऐ।
12. महिला श्रमिकों को मजदूरी का भुगतान दैनिक किया जाऐं।
13 महिला श्रमिकों को भी समान कार्य के लिये समान राशि मिलनी चाहिऐ। समान मजदूरी के लिये कृषि नियोजकों को आदेशित किया जावे।

निष्कर्ष रूप में पूरे सभ्य तथा सुसंस्कृत समाज को इन अनुसूचित जनजाति महिलाओं में रहन सहन, आचार विचार, सर्वांगिण विकास के लिए शोषण और बुराईयों से संघर्ष करने की क्षमता उत्पन्न करनी होगी। इनमें क्षमता तो है, मगर इच्छा नहीं है। इन जनजाति महिलाओं को अपने वजुद को लेकर जायज और जरूरी फैसले लेने की सहुलियत होना चाहिए। इनको विलम्बित न्याय का हक दिलवाया जाना चाहिए ताकि आत्म निर्णय द्वारा वे तमाम सम्भावनाओं को पून: जीवित कर सके इन्हें अन्याय के विरूद्ध लड़ना तो पड़ेगा ही। इनको आरक्षण के साथ-साथ संरक्षण की भी जरूरत है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यवसाय अर्थशास्त्र - हरिशन्द्र सैनी 1971हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल पृष्ट क्र. 289 -290
2. मध्यप्रदेश के आदिवासी - डॉ. शिवकुमार तिवारी 1984 हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल।
3. भारतीय सामाजिक समस्याएँ जी.आर. मदन 1990 विवके प्रकाशन,दिल्ली।
4. वन एवं आदिवासी सामाजिक जीवन - पूनमचन्द्र सिकलीगर 1991 शिक्षा पब्लिकेशन डिस्ट्रीब्यूटर्स उदयपुर।
5. जनजातीय समाज में स्त्रियाँ -कुमारी अरूण सिंह 1991तरूणा एण्टरप्राइजिंग, अनुप मार्केट, दिल्ली।
6. भारत के आदिवासी - प्रकाशचन्द्र मेहता दिल्ली पब्लिकेशन डिस्ट्रीब्यूटर्स, उदयपुर।
7. आदिवासी विकास -प्रो.हीरालालशुक्ल 1997 नई दिल्ली प्रकाशन।
8. महिला श्रमिक: सामाजिक स्थिति एवं समस्याएं -डॉ. लारेन्स जाश्मिन 1999आदित्य पब्लिशर्स,बीना।
9. महिला श्रमिक - सरोज राय,1999 राव पब्लिकेशन जयपुर एव नई दिल्ली।
10. भारतीय कृषि का अर्थशास्त्र -एस.एन.अग्रवाल, 2000 राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी ,जयपुर।
11. श्रमिक विधियाँ -पी.राजेन्द्र अवस्थी,2001 पब्लिशिंग कंपनी, इन्दौर।
12. श्रम समस्यायें एवं सामाजिक सुरक्षा -एस.सी.सक्सेना 1998 रस्तोगी पब्लिकेशन्स शिवाजी रोड़, मेरठ।

****

अनुसूचित जन जाति की आर्थिक समृद्धि (सुद्रता) में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के योगदान (बिलासपुर जिले के विकास खण्ड कोटा के विशेष संदर्भ में)

रूकमणी गेंदले * डॉ. प्रतिमा बैस **

शोध सारांश – भूर्वभूत समेकित कार्यक्रम और सहयोगी योजनाओं की समीक्षा और पूर्नेसंरचना करने के बाद **स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना** 1 अप्रैल 1999 में शुरू की गयी। यह एक मात्र स्वरोजगार कार्यक्रम है। इस का उद्देश्य सहायता प्राप्त स्वरोजगारियों को बैंक ऋण एवं सरकारी अनुदान के जरिये आय सर्जक परिसम्पत्तियों के प्रावधान के जरिए गरीबी रेखा से ऊपर लाना है। यह योजना केन्द्र और राज्यों में 7525 अनुपात की लागत के बंटवारे के आधार पर कार्यान्वित की जा रही है, इस योजना के आरम्भ से वर्तमान तक केन्द्र और राज्यों द्वारा 6734 करोड़ रूपये उपलब्ध कराये गये तथा 5270 करोड़ रूपये उपयोग में लगाये गये। जिससे 5270 लाख स्वरोजगारियों को लाभ हुआ है। 3698 लाख स्व-सहायता समूहों का निर्माण किया जा चुका है। 3089608 करोड रूपये के कुल परिव्यय से 13281 लाख स्वरोजगारियों को सहायता दी जा चुकी है।

प्रस्तावना – भारत में स्वतंत्रता के बाद 6 दशक उपरांत अभी भी करोड़ों व्यक्ति निर्धनता रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे है। योजना आयोग के अनुसार वर्ष 2009-2010 में 372 प्रतिशत जनसंख्या निर्धनता रेखा के नीचे रह रही थी। वर्ष 2011-12 में यह अनुपात घटकर 29.8 प्रतिशत हो गया, फिर भी ग्रामीण क्षेत्र में गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन करने वालों की संख्या 22,09 करोड़ थी। इसमें अधिकांशत कृषि मजदूर, लघु एवं सीमांत कृषक तथा गैर कृषि गतिविधियों में कार्यरत दिहाडी कामगार है, जो कि सामाजिक और वित्तीय बहिष्करण से पीड़ित है। तदानुसार सरकारी नीतियां इन वर्गो के आर्थिक और सामाजिक समृद्धि की ओर लगाई गई है ताकि प्रत्येक को समृद्धि को लाभ लेने में समर्थ बनाया जा सकें और समाज के हॉशिए पर बैठे वर्गो को मुख्यधारा में लाया जा सकें।

भारत में गरीबी रेखा के नीचे जी रहे लोगों की सामाजिक आर्थिक सक्षमता हेतु पूर्व कार्यक्रमों सम्मन्वित विकास कार्यक्रम, ग्रामीण युवा रोजगार प्रशिक्षण कार्यक्रम, ग्रामीण महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम, गंगा कल्याण योजना तथा दस लाख कुंओं की योजना की समीक्षा तथा पुनर्गठन के परिणाम स्वरूप 14.1999 को स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का नये स्वरोजगार कार्यक्रम के रूप में प्रारम्भ किया गया।

अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जनजाति की आर्थिक समृद्धि में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के योगदान का अध्ययन करना है। जिसके लिए निर्धारित उद्देश्य निम्न है:-

1. स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के वित्तीय लक्ष्य एवं उपलब्धियों का अध्ययन करना। (द्वितीयक संमकों के आधार पर)
2. अनुसूचित जनजाति के व्यक्तियों को योजना के अंतर्गत दी जाने वाली विशेष प्राथमिकताओं से होने वाले लाभ, आय सरंचना, उपभोग क्रिया, व्यवसाय की विद्यमानता एवं ऋण ग्रस्तता आदि का मूल्यांकन करना (प्राथमिक समंकों के आधार पर)
3. इस योजना के वर्तमान प्रशासनिक व्यवस्था की कार्य कुशलता, पर्याप्तता और बैंको की भूमिका का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – बिलासपुर जिले के विकास खण्ड कोटा के अंतर्गत कुल 81 ग्राम पंचायतों में से 25 ग्राम का चयन दैव निदर्शन पद्धति से किया गया है तथा चयनित ग्राम पंचायतों के योजना द्वारा लाभान्वित अनुसूचित जनजातियों के 175 हितग्राहियों (स्वरोजगारियों) एवं 175 गैर हितग्राही परिवारों को अध्ययन में सम्मिलित किया गया है। जिससे स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का अनुसूचित जनजाति की आर्थिक उत्थान पर पड़ने वाले योगदान को ठीक-ठीक ज्ञात किया जा सके। प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार एवं अवलोकन द्वारा जानकारियों को प्राप्त कर उनका बिन्दुवार विश्लेषण किया गया है। अनुसूचित जनजाति की आर्थिक समृद्धि में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के योगदान को प्राथमिक समंकों द्वारा वस्तुस्थिति को जानने की कोशिश की गयी है।

परिकल्पना – प्रस्तुत अध्ययन हेतु निम्न शून्य परिकल्पनाओं की जांच की जाएगी-

1. स्वर्ण जयंती ग्रामस्वरोजगार योजना का अनुसूचित जनजातियों की आर्थिक प्रगति में योगदान नहीं के बराबर है।
2. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के अंतर्गत अनुसूचित जनजातियों की समुदाय को विशेष प्राथमिक नहीं प्राप्त हो रही है।
3. इस योजना के अंतर्गत वर्तमान प्रशासनिक व्यवस्था, कार्य कुशलता एवं बैंकों का सहयोग अपर्याप्त है।

अध्ययन की सीमाएं – प्रस्तुत अध्ययन में बिलासपुर जिले के विकास खण्ड कोटा की विभिन्न ग्राम पंचायतों में अनुसूचित जातियों की जनसंख्या

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) डॉ.सी.वी.रामन विश्वविद्यालय, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) डॉ.सी.वी.रामन विश्वविद्यालय, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

को ध्यान में रखकर विकास खण्ड कोटा का चयन किया गया है। शोध प्रबंध को अनुसूचित जाति समुदाय पर केन्द्रित किया गया है। अध्ययन हेतु 2009-10 से 2014-15 के आंकड़ो तथा जानकारियों का प्रयोग किया गया है।

अनुसूचित जाति हितग्राहियों की आर्थिक समृद्धि में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के योगदान – कोई भी समुदाय जो अपने पैरों पर खड़ा नहीं हो सकता, वास्तव में वह आगे नहीं बढ़ सकता, ऐसा समुदाय सहायता के बल पर आगे बढ़ सकता है और उसके रहन-सहन में थोड़ा सुधार आ सकता है लेकिन उसकी प्रगति बीच में ही रूक जाती है और वह हमेशा परजीवी ही बना रहेगा।

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना से अनुसूचित जनजाति के लाभान्वित परिवारों के विभिन्न पहलुओं में क्या परिवर्तन आया ? तथा इन परिवर्तनों का उनके आर्थिक समृद्धि पर प्रभाव कैसा रहा ? इसके लिए अनुसूचित जनजाति के 175 गैर हितग्राहियों का अध्ययन किया गया। विश्लेषण के आधार पर जो तथ्य सामने आये वे निम्नलिखित है:

आय में योगदान – स्वर्ण जंयती ग्राम स्वरोजगार योजना से लाभान्वित परिवारों की आय पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ा है। असामान्य परिस्थितियों को छोड़कर निश्चित ही इनकी आय में वृद्धि हुई है। केवल उन्हीं लोगों की आय स्थिर रही, जिन्होंने प्रदत्त ऋण का दुरूपयोग या अन्य अनुत्पादक कार्यों में व्यय किया। क्षेत्र की अजजा के हितग्राहियों की प्रति परिवार औसत आय 2009-10 में 122000 रूपये थी जो सहायता के पश्चात् 2014-15 में बढ़कर 297000 रूपये हो गयी अर्थात् 175000 रूपये की वृद्धि हुई है। वहीं अजजा के गैर हितग्राहियों की औसत आय में मात्र 67000 रूपये की वृद्धि हुई। इससे स्पष्ट है कि हितग्राहियों की आय वृद्धि में योजना का योगदान सार्थक है।

योजना से अनुसूचित जनजाति के 175 में 173 हितग्राही (9888 प्रति8ात) उच्च आय वर्ग में प्रतिस्थापित हुए, जिसे योजना का उच्च धनात्मक योगदान कहा जा सकता है। 02 हितग्राही (1.12 प्रतिशत) अपने पूर्व आय स्तर पर बने रहे, जिसे योजना का निम्न योगदान कहा जा सकता है। वहीं गैर हितग्राहियों में यह प्रतिशत क्रमश: 49.71 एवं 5029 है।

उपभोग व्यय में योगदान – सर्वेक्षित अनुसूचित जनजाति के हितग्राहियों का प्रति परिवार औसत व्यय 2009-10 में 185800 रूपये था, जो सहायता के पश्चात् 2014-15में बढ़कर 248550 रूपये हो गया अर्थात् 62750 रूपये की वृद्धि हुई। वहीं अनुसूचित जनजाति के गैर हितग्राहियों के औसत व्यय में कुछ कम 45400 रूपये की वृद्धि हुई।

उपभोग व्यय ने भी आर्थिक विकास को दो प्रकार से प्रभावित किया। प्रथम जिन परिवारों ने इसका अच्छी मदों (खाद्यान्न मदों) में व्यय किया, उनका विकास हुआ, द्वितीय जिन परिवारों ने अन्य मदों में व्यय किया, उनका विकास नहीं हो पाया।

बचत में योगदान – सर्वेक्षित अनुसूचित जनजाति के हितग्राहियों की बचत 2009-10 में कुछ भी नहीं थी बल्कि अनुसूचित जनजाति के हितग्राहियों का प्रति परिवार औसत ऋण 63800 रूपया था। स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना से सहायता के पश्चात् वर्ष 2014-15 में अनुसूचित जनजाति के हितग्राहियों की प्रति परिवार औसत बचत 48450 रूपया हो गयी। लाभान्वित परिवारों की बचत में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का योगदान सार्थक रहा।

कृषि विकास में योगदान – स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना से कृषि क्षेत्र में सर्वाधिक हितग्राही लाभान्वित हुए है। जिससे कृषि विकास को बल मिला साथ ही गैर कृषि क्षेत्रों में लाभान्वित होने से कृषि आश्रितता में कमी आयी है, क्षेत्र का मुख्य व्यवसाय कृषि है, जिसका विकास आवश्यक है।

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का कृषि क्षेत्र में योगदान सराहनीय रहा है, लेकिन प्राकृतिक आपदाओं एवं विद्युत की कमी से कुछ विफल रहा। कृषि के संसाधन नलकूप उन्नत बीजों आदि के विकास से फसल अच्छी होगी तो आय भी बढ़ेगी अन्यथा विकास अवरूद्ध हो जायेगा आय कम होने से ऋणग्रस्तता में भी वृद्धि होगी।

आवास में योगदान – स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का आवास में प्रत्यक्ष योगदान नहीं रहा लेकिन आय बढ़ने से अनुसूचित जनजाति के आवास व्यय में वृद्धि हुई है। जिन हितग्राहियों ने इस पर व्यय बढ़ाया उनकी आवासीय स्थिति में सुधार हुआ। हितग्राहियों के आवास की स्थिति वहीं है थोड़ा बहुत सुधार किया गया है। मकानों की संख्या में वृद्धि नहीं हो पायी जबकि जनसंख्या वृद्धि हुई है, जो आवास की समस्या में वृद्धि करते जा रही है, जिसका आर्थिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

स्वास्थ्य में योगदान – अनुसूचित जनजाति के हितग्राहियों की आय वृद्धि के साथ-साथ स्वास्थ्य सेवा पर व्यय बढ़ा है, जबकि मादक पदार्थो पर व्यय कम हुआ है, जिसका स्वास्थ्य पर अनुकूल प्रभाव पड़ा है। स्वास्थ्य का स्तर अच्छा होने पर आय, कार्यक्षमता एवं आर्थिक विकास अनुकूल होगा, बुरा स्वास्थ्य प्रतिकूल होगा। योजना का स्वास्थ्य में योगदान अच्छा रहा है।

शिक्षा में योगदान – अनुसूचित जनजाति के लाभान्वित परिवारों में 2009-10 की तुलना में 2014-15 में शिक्षा पर व्यय बढ़ा है, जो शिक्षा के प्रति जागरूकता को प्रकट करता है, शिक्षा के स्तर में कोई विशेष सुधार नहीं आया है। सरकार पहली से दसवीं तक नि:शुल्क शिक्षा दे रही है, साथ ही भोजन, वस्त्र, पुस्तके भी प्रदान करती है। इस कारण भी शिक्षा व्यय कुछ कम है, शिक्षा ही जीवन का मूल है, अच्छी शिक्षा एवं संस्कार आर्थिक ऋद्धि में सहायक हो।

सांस्कृतिक परम्पराओं में योगदान – सर्वेक्षित क्षेत्र के अनुसूचित जनजाति के लाभान्वित परिवारों में 2009-10 की तुलना में 2014-15 में इस मद में व्यय की वृद्धि हुई है। आय बढ़ने एवं फैशन के कारण व्यय की अधिकता इस क्षेत्र में होने से सामान्य उपभोग व्यय हतोत्साहित होता है। सांस्कृतिक परम्पराओं में अधिक व्यय करने की प्रवृत्ति से वर्तमान उपभोग कम, आय स्त्रोत एवं भावी आय प्रभावित होती है, जिसका आर्थिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

निष्कर्ष – उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार ने क्षेत्र की अनुसूचित जनजाति के लाभान्वित परिवारों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से योगदान दिया है, योजना आय वृद्धि, उपभोग व्यय वृद्धि, कृषि के विकास के साथ-साथ कृषि आश्रितता में कमी, ऋण ग्रस्तता में कमी, शिक्षा के क्षेत्र में वृद्धि के रूप में मुख्य योगदान दिया जो आर्थिक समृद्धि को प्रगट करती है।

सुझाव :

1. स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना के सफल व्यावसायिक क्रियान्वयन के लिए ग्रामीण निर्धन वर्ग में जागरूकता पैदा करना नितांत आवश्यक है। क्योंकि जब तक गांव का निर्धन व्यक्ति स्वयं अपनी समस्याओं के प्रति जागरूक नहीं होगा, तब तक वर्तमान व्यवस्था में उसे योजना का पूर्ण लाभ मिलना असंभव है।
2. योजना सफल क्रियान्वयन के लिए योजना एवं ग्रामीण विकास विशेषज्ञ की नियुक्ति करना अति आवश्यक है, ताकि इनके द्वारा स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना की निगरानी मूल्यांकन तथा नवीनतम तकनीक ज्ञान के प्रचार-प्रसार और योजना का लाभ हितग्राहियों को अधिकाधिक मिल सकें।
3. प्रशासन को चाहिए कि हितग्राहियों द्वारा निर्मित सामग्रियों की सुचित बाजार व्यवस्था करे निर्मित सामग्रियों की खपत हो सके और उन्हे अपनी सामग्रियों का उचित मूल्य प्राप्त हो सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पालीवाल , चन्द्रमोहन (1986), आदिवासी हरिजन विकास, नार्दन बुक सेंटर नई दिल्ली।
2. सिंह आर.जी.(1986), भारतीय दलितों की समस्याएं एवं उनका समाधान (प्रथम संकरण), हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल (मप्र)।
3. सिंह एम.डी.(1988) वैज्ञानिक समाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण के मूल तत्व, संस्करण कमल प्रकाशन इन्दौर।
4. सिसोदिया (1988), भारतीय ग्रामीण समाज शास्त्र, कमल प्रकाशन इन्दौर।
5. सिन्हा, बी.सी. एवं द्विवेदी, आर.एस.(1989), जनांकिकीय सिद्धांत द्वितीय संस्करण, नेशनल पब्लिकेशिंग हाउस, नई दिल्ली।
6. रूद्रदत्त एवं सुन्दरम, के.पी. एम(1990) भारतीय अर्थव्यवस्था, 20वां संस्करण, एस.चन्द्र एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली।
7. वशिष्ठ वी.के.एवं भिण्डा, पी.सी.(1991), विकास एवं नियोजन का अर्थशास्त्र, रमेश बुक डिपों, जयपुर (राजस्थान)।

****

प्राचीन जल स्त्रोतों का पुर्नःसंभरण वॉटर हार्वेस्टिंग द्वारा संभव (ग्वालियर जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. वसुधा अग्रवाल *

प्रस्तावना – घटते भू जल स्तर पर चिंता जताते हुएं शहर के सभी शासकीय एवं अशासकीय भवनों में किस प्रकार वाटर हार्वेस्टिंग हो सकती है। ग्वालियर में सामान्य से कम वर्षा होती है और कम समय होती है। इस स्थिति को देखते हुए वर्षा से पूर्व जल संरक्षण के प्रयास जरुरी हैं। शहर के अंधाधुंध नलकूप खनन किये गये हैं अधिकांश बहुमंजिला इमारतों में ट्यूबवैल खोदे गये हैं। इनसे पानी तो भरपूर लिया जा रहा है, लेकिन इन्हें रिचार्ज करने के लिये कोई प्रबंध नहीं है। शहर में आनंद नगर, बहोड़ापुर क्षेत्र में जहां 5 फुट पर पानी था वहां भी जलस्तर नीचे चला गया है। जल संकट को देखते हुये नगर निगम ग्वालियर व्यापक स्तर पर अभियान चलाने की तैयारी में है। इसके लिये लोगों से क्षेत्र में स्थित कुएं एवं बावड़ियों की जानकारी प्राप्त कर उनकी सफाई और मरम्मत का कार्य कराया जा रहा है। वर्ष 2002 में निगम ने जल संकट के दौरान शहर में व्यापक स्तर पर कुऐ एवं बावड़ियों की सफाई और मरम्मत का अभियान चलाकर 112 कुएं एवं बावड़ियों का उद्धार किया था। जल अभिषेक 2002 में जलशोधन संयंत्रों में मरम्मत की संख्या 73 है। पाइप लाइन के मरम्मत किएं गऐ लीकेज की संख्या 739 है। मरम्मत किये गये स्टैंड पोस्टों की संख्या 427 एवं बदली गयी नल की टोंटियों की संख्या 550 है। कुल हैडपंपों की संख्या 1350, साफ कराये गये कुऐ एवं बावड़ियों की संख्या 82, हैडपंपों की संख्या मरम्मत 474, मरम्मत किये गये कुएं एवं बावड़ियों की संख्या 30 है। शहर में पानी के जलस्तर को ऊँचा करने के लिये करीब 50 लाख रूपये का प्रावधान किया गया था।

बावड़ी व कुएं के पानी को पीने योग्य बनाने तथा उसे आम जन तक पहुंचाने की इस योजना को बावड़ी – कुआ संरक्षण प्रोजेक्ट नाम दिया गया है। प्रोजेक्ट के प्रथम चरण में बारहमासी कुओं एवं बावड़ी में फिल्टर प्लांट लगाकर पानी को पीने योग्य बनाकर उसकी सप्लाई आसपास के क्षेत्रों में की जायेगी। इस प्रोजेक्ट के लिये कुल ढाई करोड़ रूपये का बजट प्रस्तावित किया गया है, जिसमें दो करोड़ रूपये केन्द्र सरकार और पचास लाख रूपये नगर निगम देगा।शहर के सूख चुके कुओं एवं बावड़ियों को पानी से भरने के लिये सबसे पहले उनकी बंद झिरियों को खोला जायेगा ताकि रूका हुआ भूमिगत जल बावड़ी तक आ सके। इसके अलावा पाइप लाइन के जरिये स्थानीय घरों की छतों की कनेक्टिविटी भी बावड़ी से की जायेगी, जिससे बारिश का पानी भी बावड़ी तक आ जाएं। चेतकपुरी स्थित गंगासागर बावड़ी का निर्माण 250 वर्ष पहले सिंधिया राजवंश ने कराया था। लगभग 100 फुट गहरी यह बावड़ी वर्तमान में झाड़ियों से पूरी तरह ढकी हुई है, इसे भी इस प्रोजेक्ट के अंतर्गत साफ कर पीने योग्य जल बनाने की योजना है। वाटर हार्वेस्टिंग के जरिये भूमिगत जल स्तर बढ़ाकर इसका उपयोग पेयजल की जरूरतों को पूरा करने में किया जायेगा।[9] अन्य भी बावड़ियाँ शारदा विहार कॉलोनी की बावड़ी, शराब गोदाम की बावड़ी, खेड़ापति हनुमान मंदिर की बावड़ी, आंग्रे साहब की बगिया की बावड़ी, प्राचीन बावड़ी, प्राचीन बावड़ी लधेड़ी, गोपाचल पर्वत स्थित पत्थर की बावड़ी, महलगाँव की बावड़ी को चुना है। वहीं 9 कुएं भी ग्वालियर की पानी की आपूर्ति बढाने हेतु संरक्षित किये गये हैं, जिनमें माधवनगर मंदिर स्थित कुआ, रंगमहल स्थित कुआ, पत्तलवाली गली स्थित कुआ, आनंद नगर स्थित कुआ, दाल बाजार स्थित कुआ, विवेक विहार स्थित कुआ, रामनगर स्थित प्राचीन कुआ, नबाब साहब का कुआ, पुराना हाईकोर्ट स्थित कुआ स्थानीय लोगों की पेयजल संबंधी समस्या को काफी हद तक पूरा कर सकेगा। पानी की पुरानी धरोहरों को सहेजने के लिए शहरवासियों को जागरूक करने के लिये भी अभियान चलाया जायेगा। शहर में जगह – जगह होर्डिंग्स के जरिएं प्रचार कर आम नागरिकों को इसकी जानकारी दी जायेगी। संरक्षित बावड़ी व कुओं में मूर्ति विसर्जन या पूजन सामग्री को फेंका जाना न केवल प्रतिबंधित किया जायेगा, बल्कि इसके लिये दंड का प्रावधान भी किया जायेगा। संरक्षण के लिये बावड़ी के आसपास लोहे की जाली भी लगायी जायेगी।

ग्वालियर शहर से लगे गाँवों में पेयजल के लिहाज से संकटग्रस्त घोषित मुरार ब्लॉक में सरकारी जल स्त्रोतों पर दबंगों ने अपना कब्जा जमा रखा है, ऐसे स्थान एक, दो नहीं बल्कि पूरे चार सौ से अधिक हैं, किसी भी जल स्त्रोत पर उनका कब्जा गुपचुप नहीं वरन् सरेआम है। पंचायत या सरकारी अमला उन गाँवों में स्त्रोतों को छुड़ाने में नाकाम है। यह अमला दूसरा हैंडपम्प लगवाने को तैयार है, लेकिन बंधन स्त्रोतों को नहीं छुड़वा पा रहे हैं। अधिकतर जल स्त्रोतों पर निजी मोटरें डालकर जरूरत से ज्यादा पानी लिया जा रहा है। ग्राम उटीला में गाँव के मुख्य मार्ग पर एक भी हैंडपम्प व नलकूप चालू स्थिति में नहीं है। ग्राम सौसा में नल जल योजना के तहत टंकी बनी है, लगभग 250 घरों को नल का कनेक्शन है, लेकिन पचास दबंग घरों का कब्जा ही बोर से पानी लेता है। शेष गाँव पानी के लिये तरसता है। करीब पचास हजार लीटर वाली पानी की टंकी कभी भरी ही नहीं गयी। बंधा गाँव में भी पानी की यही स्थिति है। जिले के अधिकतर पानी के भंडारों में कमी देखने को मिल रही है। जिनसे गुजरने वाली सभी नदियों जैसे सांक, सिंध, मुरार, पार्वती की धार टूट चुकी है। शायद ही कोई ऐसी नदी हो जिसकी पांच सौ मीटर भी आधा फीट जल धारा हो, जहां तक पानी के भंडार मसलन जलाशयों का भंडार है, वहां भी कमी देखने को मिल रही है तथा जिन बांधों पर पानी है, वह पेयजल के मतलब का नहीं है। शहर का अब तक का विश्वसनीय जल स्त्रोत तिघरा भी तकरीबन खाली है। केवल जुलाई तक ही इसमें पानी है। भूजल स्तर में रिकार्ड गिरावट और बांधों के सूखने से उम्मीद सिर्फ मानसून से है। किन्तु मौसम विशेषज्ञ इस बार बता रहे हैं कि मानसूनी हवाऐं अब की बार समय पर

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) डॉ.भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

रिमझिम पानी बरसा सकती है।

पेयजल के हिसाब से शहर से जुड़े तालाबों में केवल तीन बांधों मसलन तिघरा, ककैटो और पेहसारी में पानी है। वह भी केवल तीन चार माह के लिये ऐसी स्थिति में पेयजल प्रबंधन बड़ी चुनौती साबित होगा।

तालिका क्रमांक – 1 : ग्वालियर जिले के जलाशयों की वर्तमान जल उपलब्धता

क्र	जलाशय का नाम	पानी की उपलब्धता (एमसीएम में)	28 अप्रैल 2015 पानी की उपलब्धता (एमसीएम में)
1	अपर ककेटो	1.19(इससे शहर के लिए पानी लाना संभव नहीं पानी न के बराबर)	00
2	ककेटो	40.17(डेड स्टोरेज के करीब है जिसे केवल लिफ्ट किया जा सकता है)	43.13
3	पेहसारी	2352(डेड स्टोरेज के करीब है जिसे केवल लिफ्ट किया जा सकता है)	23.99
4	तिघरा	4740(इसके बाद केवल डेड स्टोरेज बचेगा)	
5	रमौआ	00	00
6	हरसी	94 (केवल सिंचाई योग्य है)	102
7	हनुमान बाँध	00	00
8	वीरपुर बाँध	00	00
9	गिरवई बाँध	00	00
10	मामा का बाँध	00	00
11	रायपुर का बाँध	00	00

नोट– इसके अलावा जिले के कुल करीब 40 छोटे मोटे अन्य जलाशय बिल्कुल खाली है।

सूख चुके तालाबों, कुओं, बावड़ियों, बांधों एवं कुंडों को पुनर्जीवित करने के लिये श्रमदान शहर के हृदयस्थल महाराज बाड़े से चंद दूरी पर स्थित गोरखी हायर सेकेण्डरी स्कूल में बनी बावड़ी 205 साल पहले गोरखी ताल निर्माण के दौरान ही खुदवाई गयी थी। सिंधिया सियासत काल में बनी यह बावड़ी महल की पेयजल आपूर्ति के लिये बनवाई गयी थी इस बावड़ी को इस तरह बनाया गया है कि कितनी भी गर्मी पड़े इसका पानी ठंडा ही रहे। पानी की सतह तक पहुंचने के लिये इसमें सीढ़ियाँ भी बनवायी गयीं हैं ताकि साफ सफाई आसानी से हो। लेकिन अब यह टूट चुकी है। लंबे समय तक देखरेख के अभाव में बावड़ी में कचड़ा इकठ्ठा हो गया है। इसके जीर्णोद्धार के लिये 2002 में प्रयास हुए लेकिन सफल नहीं हुए। अगर इसे साफ कर दिया जाऐ तो न केवल स्कूल में पढ़ने वाले 1200 छात्रों की प्यास बुझेगी, बल्कि आसपास के लोगों को भी पानी उपलब्ध कराया जा सकेगा। जेसी मिल मालिकों द्वारा गीता कॉलोनी में बनायी गयी बावड़ी कभी पूरे क्षेत्र की प्यास बुझाती थी। दाल बाजार में खरीदी करने वाले एवं माल बेचने आने वाले भी इसी बावड़ी पर निर्भर थे। तिघरा का पानी मिलते ही यह बावड़ी कचरा घर बन गयी क्योंकि कि यहां पर लोगों की बावड़ी पर निर्भरता खत्म हो गयी। लोगों ने पहले पूजन सामग्री विसर्जित की फिर कचरा घर बना दिया। इस बावड़ी में बाद में मोटर पंप डलवा कर सुरक्षा हेतु एक जाल भी डलवाया था।

ग्वालियर में ही कुम्हारों के मोहल्ले में घनी आबादी के बीच करीब 125 साल पुराना कुआँ है। जिसका निर्माण आसपास के खेती की सिंचाई के लिये करवाया गया था। बाद में इसमें भी कचरा डालना प्रारंभ हो गया। गंदगी अंदर न जाएं तो इसके लिये चेला बाबा की बगिया के महंत ने इस पर अपना जाल लगवा दिया था, परंतु लंबे समय तक सफाई न होने के कारण इसका पानी अब पीने योग्य नहीं है। परंतु कुछ लोगों का दावा है कि यदि इस कुएं की सफाई करवा दी जाएं तो लगभग सात हजार की आबादी की आपूर्ति की जा सकती है। मुरार के नजदीक बसा ग्राम मोहनपुर पिछले एक पखवाडे से पानी के लिये तरस रहा है। दो जगह नलकूल खनन के बाद भी वहाँ एक नलकूप में तो पानी नहीं निकला और दूसरा बोर 500 फीट गहरा होने के बाद भी उसका पानी सूख गया। इसका प्रमुख कारण उसके आसपास कोई बड़ा जल स्त्रोत नहीं है। यहां एक सूखा तालाब है, जिसकी तलहटी में मिट्टी भर चुकी है। ऐसे में बारिश का पानी ओवरफ्लो होकर निकल जाता है। इसके गहरीकरण की आवश्कता है। ऐसा होने पर साल भर बरसात का पानी भरा रहेगा जिससे गाँव के कुओं में पानी आ सकेगा। गाँव की बसाहट के समय यही मुख्य जल स्त्रोत था।

देश दुनिया में वाटर कंजर्वेशन एण्ड मैनेजमेन्ट की कोशिश कई स्तरों पर चल रही है। ताकि दिनों दिन गहराते जल संकट से पार पाया जा सकता है। इसके लिये नदियों और भू जल में बढ़ रहे प्रदूषण को कम करने से लेकर भूजल स्तर सुधारने, परंपरागत जल स्त्रोतों को सुरक्षित रखने तथा आधुनिक तकनीकों के सहारे वाटर हार्वेस्टिंग की विधियाँ विकसित करने व वेस्ट वाटर ट्रीटमेन्ट जैसे अनेक उपायों पर जोर देना आवश्यक है। कम पानी से कृषि की उत्पादकता बनाएं रखने का प्रयास भी इसी मुहिम का हिस्सा है। इस दिशा में ग्वालियर का एक कदम यदि कारगर होता है तो मील का पत्थर साबित हो सकता है। कि देखे कि कहाँ – कहाँ जल स्त्रोत थे। यदि इनको अतिक्रमण करके बंद कर दिया गया है तो उन्हे पुनर्जीवित किया जाये। ऐसे हजारों जल स्त्रोत ग्वालियर में बने हुये हैं जिन्हे पुनर्जीवित कर जल की समस्या हल की जा सकती है। सालाना अरबों घन मीटर पानी बेकार बहतदेखने के बाद भी आज तक किसी तरह की कोई जल संरक्षण प्रणाली विकसित नहीं की गयी है। इसक बावजूद पानी बचाना सामूहिक जिम्मेदारी है। किसी भी सरकार या प्रशासन के पास कोई ऐसी जादू की छड़ी नहीं है, जिसे घुमाकर वह भूजल स्तर को बढ़ा सके। तालाबों, नदियों, बावड़ियों और कुओं अन्य जल स्त्रोतों के सूखने से सचेत होकर वहां भूजल संरक्षण के लिये सोक पिट्स बनाये जा रहे हैं। पानी की कमी से निपटने के लिये जरूरत है वर्ष भर जल प्रबंधन करने की। जल प्रबंधन न होने के कारण ही पीने के पानी की उपलब्धता कम हो गयी है। पीने के पानी के लिये टेंकर एवं अन्य उपाय किये जा रहे हैं। इसके लिये तीन स्तरीय जल संरक्षण मॉडल को अपनाया जाना चाहिएं। पहला छोटी नालियों द्धारा कुओं को रीचार्ज करना, धारा के बीच में बांध बनाकर और नदी की धारा को चौड़ी और गहरी करना। सूखे क्षेत्र में जहां पानी की कमी है वहाँ जल परिवहन किया जाना चाहिएं। गाड़ी धोने, घर धोने, ट्रेनों के धोने, मकान बनाने आदि पानी की बर्बादी करने वालों पर रोक लगायी जानी चाहिएं यदि फिर भी न माने तो उनके ऊपर जुर्माना लगाया जाएं।

जल स्तर ग्वालियर की ही समस्या नहीं है, यह विश्व की समस्या है। विश्व का बहुत बड़ा भाग जहां जल संकट से गुजर रहा है। ऐसे में यह तक कहा जा सकता है कि अगला विश्व युद्ध पानी के लिये लड़ा जा सकता है। जल संचयन मौजूदा समय की सबसे बड़ी मांग है। जल संरक्षण व प्रबंधन पर अब सरकारें व औद्योगिक प्रतिष्ठान भी ज्यादा जोर दे रहे हैं। इन समस्याओं से निपटने के लिये वाटर हार्वेस्टिंग, वाटर ट्रीटमेन्ट, तथा वाटर रीसाइक्लिंग की आवश्यकता है। इसके अलावा वाटर साइंस, वाटर कंजर्वेशन, वाटर रिसोर्स मैनेजमेन्ट की भी आवश्यकता है। पुराने जल स्त्रोतों को जीवित कर भी पेयजल समस्या से निजात पायी जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

जनजातीय विकास में आधुनिक कृषि पद्धतियों का योगदान (खरगोन जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. नाहारसिंह बर्डे *

प्रस्तावना – भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि की अहम भूमिका है। यहाँ प्राचीन काल से ही कृषि कार्य किया जाता रहा है। जनजातियों की जीविका मुख्यत: भू–साधनों पर आधारित है तथा इनमें से 90 प्रतिशत से भी अधिक लोग कृषि और अन्य सहायक कार्यो पर निर्भर है। जनजातियों की अर्थव्यवस्था मूलत: कृषि आधारित है, जमीन ही जनजाति परिवारों की संपत्ति है। जमीन के साथ जनजातियों का भावात्मक संबंध जुड़ा रहता है।

प्राचीनकाल में जनजातियों को एक सीमा विशेष से पहचाना जाता था और यहाँ तक कि उनका नामकरण भी उनके अधिकार तहत् भौगोलिक क्षेत्र पर रखा जाता था। प्रचीन समुदाय भोजन संग्रह तथा शिकार पर जीवन–निर्वाह करते थे। आज भी कई जनजातीय समुदाय इसी रिवाज को अपनाए हुए है। जैसे–जैसे जनसंख्या बढ़ती गई और नई तकनीक अपनाई तो भूमि पर दबाव बढ़ा। अत: आदिवासियों ने जंगलों को साफ कर दिया और जमीन को कृषि योग्य बना लिया।

पूर्व में एक औसत आदिवासी परिवार के पास उसके जीवन निर्वाह के लिए पर्याप्त जमीन होती थी, जिस पर वह खेती के प्राचीन तरीकों से अनाज उपजाकर अपने परिवार का भरण–पोषण आराम से कर लेता था परन्तु समय के साथ स्थिति में परिवर्तन आया और जनसंख्या में तीव्र वृद्धि ने जहाँ खाद्य समस्या उत्पन्न कर दी है, वहीं दूसरी ओर वनों के विनाश के कारण शासन के प्रतिबंध बढ़ा दिऐ जाने से आदिवासियों को अपनी जीवन शैली में बदलाव करने के लिए मजबूर होना पड़ा है। जनजातियों को कृषि में आधुनिक पद्धतियों को अपनाने के लिए वर्तमान में कृषि उत्पाद की बढ़ती माँग ने भी प्रेरित किया। धीरे–धीरे कृषि विकास के लिए देश में सामुदायिक विकास कार्यक्रम,सघन कृषि योजना,उन्नत बीजों का आविष्कार एवं उपयोग,उर्वरकों, कीटनाशकों दवाईयों का उपयोग,कृषि क्षेत्र में आवश्यक ऋण की उपलब्धि हेतु बैंकों का राष्ट्रीयकरण,कृषि बीमा आदि के साथ–साथ कृषि की उन्नत विधियों का आविष्कार अर्थात आधुनिक कृषि पद्धतियों का उपयोग किया जाने लगा।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में अगर देखें तो इन जनजातियों ने शिक्षा, जागरूकता, एवं सरकारी प्रयासों के द्वारा कृषि में आधुनिक तकनीकों का प्रयोग करना प्रारंभ कर दिया हैं। कृषि कार्य में परंपरागत साधनों का उपयोग पूर्णत: बंद तो नहीं किया जा सका है, लेकिन इसके साथ–साथ आधुनिक कृषि पद्धतियों एवं आधुनिकतम साधनों का प्रयोग किया जाने लगा। इस प्रकार कृषि में परंपरागत साधनों से लेकर आधुनिक साधनों तक का उपयोग उत्पादन क्षमता बढानें में सहायक हो सका। सरकारी प्रयासों एवं शैक्षणिक तथा वन आधारित उद्योग धंधे स्थापित करने हेतु प्रेरित किया। इस प्रकार जनजातीय क्षेत्रों में कृषि की आधुनिक पद्धतियों की शुरूआत हुई है। इससे कृषि क्षेत्र में नवीन पद्धतियों का उपयोग होने लगा, जिसे आधुनिक कृषि और उसमें प्रयुक्त पद्धतियों को आधुनिक कृषि तकनीकी कहा गया है।

उद्देश्य :

1. जनजातीय विकास में आधुनिक कृषि पद्धितियों के योगदान का अध्ययन करना।
2. आधुनिक कृषि पद्धितियों से आदिवासियों की व्यावसायिक संरचना में हो रहे परिवर्तनों का अध्ययन करना।

अध्ययन का क्षेत्र एवं शोध–प्रविधि – आदिवासी बाहुल्य तीनों विकासखण्डों से 5–5 गाँवों का चयन सोद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि के माध्यम से किया गया है। प्रत्येक विकासखण्ड 5 तीन गाँवों का चयन किया गया है। तथा प्रत्येक गाँव से 20–20 आदिवासी कृषक परिवारों का चयन किया गया है।

इस प्रकार कुल 15 गाँवों से 300 आदिवासी कृषक परिवारों (15 x 20) का चयन कि अध्ययन की इकाई के रूप में किया गया है।

शोध–व्याख्या :

आधुनिक कृषि पद्धतियों का जनजातीय विकास में योगदान –

आधुनिक कृषि पद्धतियों का जनजातीय विकास में योगदान के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र में आदिवासी इलाकों में आधुनिक कृषि को अपना रहे उत्तरदाताओं की आर्थिक–सामाजिक एवं शैक्षणिक स्थिति से संबंधित महत्वपूर्ण बिन्दूओं को सम्मिलित किया गया है। इन बिन्दुओं के विष्लेषण से प्राप्त व्याख्या इस प्रकार है –

- आदिवासी कृषकों द्वारा कृषि कार्य में आधुनिक कृषि यंत्रों के उपयोग के संबंध में जो तथ्य प्राप्त हुए है उनसे यह स्पष्ट है कि अध्ययन हेतु चयनित सभी आदिवासी उत्तरदाताओं ने यह स्वीकार किया है कि वे कृषि कार्य में आधुनिक कृषि यंत्रों का उपयोग करते है। इस विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र के सभी कृषक किसी न किसी रूप में आधुनिक कृषि यंत्रों का उपयोग करते है।
- 10–15 वर्ष पूर्व आधुनिक कृषि यंत्रों के उपयोग के संबंध में प्राप्त आँकड़ों के अनुसार 62 प्रतिशत से अधिक उत्तरदाता 10–15 वर्ष पूर्व आधुनिक कृषि यंत्रों का उपयोग नहीं करते थे, जबकि शेष (37.70 प्रतिशत) उत्तरदाता 10–15 वर्ष पूर्व भी कृषि में आधुनिक तकनीक यंत्रों का उपयोग करते थे। इस विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि 10–15

* सदस्य, पघम्यिानी वेलफेयर (सोसायटी) फॉर डवलपमेन्ट एण्ड रिसर्च, उज्जैन (म.प्र.) भारत

वर्ष पूर्व की स्थिति एवं वर्तमान स्थिति में काफी अन्तर दिखाई देता है।

- आदिवासी कृषकों को आधुनिक कृषि यंत्रों के उपयोग से प्राप्त लाभ के प्रकारों के संबंध में प्राप्त तथ्यों के अनुसार 45 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया है कि आधुनिक कृषि यंत्रों के उपयोग करने से उनके उत्पादन में वृद्धि हुई है। दूसरी ओर 33.70 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार लागत में कमी आई है जबकि 21.30 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार आधुनिक कृषि यंत्रों के उपयोग से अन्य लाभ जैसे कृषि क्षेत्र का विस्तार होना,कम समय में फसल उत्पादित होना जैसे लाभ प्राप्त होते है।
- आदिवासी कृषकों द्धारा कृषि में कीटनाशकों के उपयोग के संबंध में प्राप्त तथ्यों के अनुसार अध्ययन क्षेत्र के चयनित कुल आदिवासी उत्तरदाताओं में से शत-प्रतिशत उत्तरदाता अपनी कृषि में आधुनिक कीटनाशकों का उपयोग करते है। अत: इस विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि कृषि कार्य में आदिवासी वर्ग के कृषक भी अब आधुनिक कीटनाशकों का उपयोग करने लगे है। जो इनकी जागरूकता का परिचायक है।
- 10-15 वर्ष पूर्व कृषि में कीटनाशकों के उपयोग के संबंध में प्राप्त आँकड़ों से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में 67.30 प्रतिशत आदिवासी उत्तरदाता आज से 10-15 वर्ष पूर्व भी अपनी कृषि भूमि में आधुनिक कीटनाशकों का उपयोग करते थे। वही दूसरी ओर शेष उत्तरदाता (32.70 प्रतिशत) 10-15 वर्ष पूर्व आधुनिक कीटनाशकों का उपयोग नहीं करते थे।
- रासायनिक उर्वरकों के उपयोग के संबंध में प्राप्त तथ्यों के अनुसार अध्ययन क्षेत्र के सभी आदिवासी उत्तरदाता अपनी कृषि में रासायनिक उर्वरक का उपयोग करते है, तथा कोई भी उत्तरदाता ऐसा नहीं है जो अपने खेत में रासायनिक उर्वरक का उपयोग नहीं करता हो।
- आदिवासी कृषकों द्धारा कृषि में कौन से बीजों का उपयोग किया जाता है ? इस संबंध में अध्ययन क्षेत्र से प्राप्त तथ्यों के अनुसार 28.70 प्रतिशत आदिवासी उत्तरदाता अपने खेतों में घरेलू बीजों के माध्यम से ही उपज लेते है। वहीं दूसरी ओर 22 प्रतिशत उत्तरदाता अपने खेत में संकरित बीजो का उपयोग करते है। 49.30 प्रतिशत आदिवासी उत्तरदाता कृषि कार्य में घरेलू एवं संकरित दोनों प्रकार के बीजों का उपयोग करते है।
- आदिवासी कृषकों की ऋण लेने की स्थिति के संबंध में अध्ययन क्षेत्र से प्राप्त आँकड़ों से स्पष्ट है कि चयनित आदिवासी उत्तरदाताओं में से 76 प्रतिशत से अधिक उत्तरदाता ऋण लेते है तथा 23.70 प्रतिशत उत्तरदाता ऋण नहीं लेते है।
- आदिवासियों की ऋणग्रस्तता तथा कृषि भूमि की उपलब्धता के संबंध में प्राप्त तथ्यों के अनुसार 3 एकड़ से कम कृषि भूमि वाले 79.17 प्रतिशत आदिवासी उत्तरदाता ऋण लेते है, वहीं शेष 20.83 प्रतिशत आदिवासी कृषक ऋण नहीं लेते है। 3-6 एकड़ कृषि भूमि वाले लगभग 75 प्रतिशत आदिवासी ऋण लेते ओर शेष (25.33) उत्तरदाता ऋण नहीं लेते है। दूसरी ओर 6-9 एकड़ कृषि भूमि वाले सर्वाधिक (79.75) आदिवासी ऋण लेते है, जबकि 9 एकड़ से अधिक कृषि भूमि वाले कुल कृषकों में से 74.47 प्रतिशत आदिवासी उत्तरदाता ऋण लेते है।
- 10-15 वर्ष पूर्व ऋण लेने की प्रवृत्ति में परिवर्तन के संबंध में स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र के जो आदिवासी उत्तरदाता ऋण लेते है, उनमें से सबसे अधिक 72.93 प्रतिशत आदिवासी उत्तरदाता आज से 10-15 वर्ष पूर्व ऋण लेने की प्रवृत्ति में पवितर्न होने की बात को स्वीकार करते है, वहीं दूसरी ओर 7 प्रतिशत से अधिक उत्तरदाता यह मानते है कि उनकी ऋण लेने की प्रवृत्ति में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं आया है।
- आधुनिक कृषि पद्धति का आदिवासी कृषकों की ऋणग्रस्तता पर प्रभाव पड़ता है या नही ? इस संबंध में प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में ऋण लेने वालें 80.35 प्रतिशत आदिवासी उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया है कि आधुनिक कृषि पद्धतियों के उपयोग के कारण उनकी ऋणग्रस्तता प्रभावित हुई है अर्थात आधुनिक कृषि पद्धतियों के कारण ऋणग्रस्तता पर प्रभाव पड़ा है। वहीं दूसरी ओर लगभग 20 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने यह माना है कि उनकी ऋणग्रस्तता पर आधुनिक कृषि पद्धतियों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा है। इस विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में 80.35 प्रतिशत आदिवासी उत्तरदाताओं की ऋणग्रस्तता आधुनिक कृषि पद्धतियों के उपयोग से प्रभावित हुई है।
- आदिवासी कृषकों की व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन एवं लाभदायकता के संबंध में प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र के जिन आदिवासी उत्तरदाताओं की व्यावसायिक-संरचना में परिवर्तन आया है, उनमें लगभग 71 प्रतिशत उत्तरदाता व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन को लाभदायक मानते है, जबकि 29 प्रतिशत उत्तरदाता इस परिवर्तन को लाभदायक नहीं मानते है।

समस्याएँ एवं सुझाव – उपरोक्त शोध से जनजतीय क्षेत्र में आधुनिक कृषि पद्धतियों के योगदान से सकारात्मक परिणाम देखने को मिल रहे है, साथ ही आदिवासी कृषकों की वित्तिय स्थिति भी सुदृड़ हुई है। अत: जनजतीय क्षेत्र में आधुनिक कृषि पद्धतियों में प्रयोग किया जाने लगा, साथ ही सकारात्मक परिणाम भी आए है किंतु आधुनिक कृषि पद्धतियों के प्रयोग से जहाँ पर सकारात्मक परिणाम आए है, वहीं पर इसके दुष्परिणाम भी है, जिन्हें नजर अंदाज नहीं किया जा सकता ।

प्रस्तुत शोध पत्र में समस्याएँ एवं सुझाव निम्नलिखित हो सकते है :-

1. वर्तमान में भारतीय कृषि में आधुनिक कृषि पद्धतियों के अपनाने से विभिन्न क्षेत्रों में रासायनिक खादो एवं कीटनाशकों के अधिकाधिक प्रयोग करने से अधिक पैदावर बढ़ाने की होड़ में जमीन की उर्वरा शक्ति कम होने लगी है।

   अत: अधिक उत्पादन के लालच में जमीन की उर्वरा शक्ति एवं पर्यावरण को भी नजर अंदाज नहीं किया जाना चाहिए। इस हेतु उत्पाद भी बना रहे एवं रासायनिक खादों के प्रयोग भी कम करने के उपाय खोजे जाने चाहिए, साथ ही खाद कंपनियों को ऐसे निर्देश दिए जाने चाहिए कि वे मिटटी के पोषक तत्वों में संतुलन का ध्यान रखा जा सके।
2. जनजतीय क्षेत्र में अधिकांश मध्यम वर्गीय कृषक परिवार निवासरत है, जो कि कृषि में अधिक लागत की आधुनिक कृषि पद्धतियों का प्रयोग धन के अभाव के कारण नहीं कर पाता है या करे भी तो ऋणग्रस्तता के जाल में फँसने का डर लगा रहता है।

इस संबंध में कृषि की तकनिकों से बदलते कृषि वातावरण ,पर्यावरण ,और इनसे बढ़कर कृषक समुदाय के हित में है कि नहीं इस बात की समीक्षा करे और इनके कारण होने वाली परेशानियों से छुटकारा पाने के उपाय भी करना चाहिए।

3. कृषकों की शैक्षणिक स्थिति देखें तो स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र के आदिवासियों का एक बड़ा वर्ग अशिक्षा जैसे अभिशाप से जूझ रहा है। अशिक्षा के कारण विभिन्न लोगों द्वारा उनका कई प्रकार से शोषण किया जाता है। इस प्रकार वर्तमान में अशिक्षा भी आदिवासियों की सबसे बड़ी चुनौती है।
4. अध्ययन क्षेत्र के एक तिहाई आदिवासी कृषक ऐसे है, जिनके पास सिंचाई के साधन नहीं है। अत: इस दिशा में सरकारी प्रयास करना चाहिए, ताकि कृषकों को रियायती दामों पर सिंचाई के साधन उपलब्ध हो सके।
5. जिन आदिवासी कृषकों के पास सिंचाई के साधन है,वे भी अपनी फसल की सिंचाई नहीं कर पाते है। इसकी सबसे बड़ी बाधा है, बिजली की अनियमितता एवं अपर्याप्त उपलब्धता। अपर्याप्त बिजली के कारण वे अपनी फसलों की समुचित सिंचाई नहीं कर पाते है। सरकार गाँवों में सस्ती एवं निरन्तर बिजली प्रदाय किया जाना चाहिए।
6. अध्ययन क्षेत्र के आदिवासी कृषकों के आर्थिक विकास की एक बड़ी बाधा यह भी है कि वे अपनी उपज को भण्डारण की सुविधा के अभाव में साहूकारों या महाजनों को कम कीमत पर बेच देते है। प्रत्येक गाँवों में सरकार अपना प्रतिनिधि भेजकर उनकी उपज को वाजिब या न्यूनतम मूल्य पर खरीद लें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हसनैन नदीम,(2000); ***'जनजातीय भारत'*** रवि मजूमदार, जवाहर पब्लिर्स एंड डीस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली पृ. सं. 1
2. गुप्ता,एम.एल.,शर्मा,वी.वी.(2005); ***'भारतीय सामाजिक समस्याएँ'*** साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा, पृ.सं.298 -324
3. शाक्य,हरिशचन्द्र (2011); ***'आदिवासी और उनका इतिहास'*** अनुराग प्रकाशन,23,अंसारी रोड़,दरियागंज नई दिल्ली-110002 पृ.सं.75 -83
4. महाजन,अश्विनी (2011); ***'भूमंडलीकरण के दौर में भारतीय कृषि'*** कुनाल प्रकाशन, एल-46 गली नं 5 शिवाजी मार्ग, करतार नगर दिल्ली-110002 पृ.सं. 33 -34
5. स्त्रोत-जिला सांख्यिकीय पुस्तिका खरगोन (म.प्र.)

****

वर्तमान परिप्रेक्ष में बदलते सामाजीकरण में बच्चों पर इंटरनेट का प्रभाव

डॉ. सबलसिंह ओहरिया *

शोध सारांश – वर्तमान परिप्रेक्ष्य में बदलते समाजीकरण में बच्चों की शैक्षणिक यात्रा में आज कम्प्युटर व इंटरनेट, सूचनातंत्र व मनोरंजन के स्त्रोत के रूप में दैनिक जीवन का हिस्सा बन गया है। आधुनिक युग में माता–पिता भी बच्चों के लिए इंटरनेट की उपयोगिता समझते हैं। वहीं इसके दुष्प्रभाव से अभिभावक चिंतित है, क्योंकि इन्टरनेट की कोई सीमा नहीं होती। अनगिनत साइट खोली जा सकती है। इंटरनेट और साइबर कल्चर के कुछ दोष भी है– हिंसा, अश्लीलता, नशा परोसती साइट अल्प आयु वर्ग के बच्चों के बौद्धिक विकास व प्रत्यक्ष संवाद को बाधित करती है। आज इन्दौर,मुंबई, दिल्ली, जैसे शहर में मां–बाप अपने इंटरनेट व्यवसायी बच्चों को क्लिनिक लेकर पहुंच रहे है। अत: प्रस्तुत शोध अध्ययन में यह जानने का प्रयास किया गया है कि इंटरनेट उन्मुख सोसायटी में हमारे प्रत्यक्ष संवाद क्यों दम तोड़ रहे है ? शारीरिक मनोरंजन क्रियाओं से बच्चें क्यों विमुख हो रहे हैं ? पठन–पाठन की तुलना में इन्टरनेट की सोशल वेबसाइट के संवाद क्यों प्रभावी हो रहे है ? इन समस्याओं को किस तरह रोका जा सकता है,और इन समस्याओं को नहीं रोका गया तो किस हद तक खतरनाक साबित हो सकता है , इन बातो को जानने की कोशिश की गई है ?

प्रस्तावना – बदलते समाजीकरण में बच्चों की शैक्षणिक यात्रा में आज कम्प्यूटर उनका हम सफर बन गाया है। सुचनाओं के अथाह भंडार और मनोरंजन के स्त्रोत के रुप में इंटरनेट बच्चों के लिए उनके दैनिक जीवन का हिस्सा है। आज यह बात सही है कि आधुनिक युग में माता–पिता बच्चें के लिए इंटरनेट की उपयोगिता को समझ रहे है, वही इंटरनेट के अधिक उपयोग से होने वाले दुष्प्रभाव से भी बच्चों के अभिभावक चिंतित है। इंटरनेट पर किसी तरह की कोई सीमा नहीं होती, यहाँ कई तरह की अनगिनत साइट खोली जा सकती है। इंटरनेट की ये विशेषता लाभदायक भी है और हनिकारक भी। आज के बच्चे जहाँ बडी आसानी से इंटरनेट – फ्रेंडली हो रहे है, वही वे अनजाने में कई प्रकार के दुष्प्रभावों के वंशीभूत हो जाते है।

इस संबंध में इंटरनेट और साइबर कल्चर के कुछ दोष भी है। बच्चे अनजाने में इंटरनेट पर कई सारी व्यक्तिगत जानकारी दे देते है। टीन एजर्स इस तरह बहुत सी गोपनीय बातें भी कई तरह के प्रलोभन के चलते नेट पर शेयर कर देते है, इसके अलावा नेट पर अपेक्षित साइट्स निश्चित रुप से अल्प आयु वर्ग के बच्चों के बौद्धिक विकास को बाधित करती है। इंटरनेट के इन दूष्प्रभावों ने आज बच्चों के अभिभावकों को चिंता में डाल दिया है, वर्तमान में इंटरनेट की बढती लोकप्रियता व सम्मोहन ने विदेश के साथ–साथ देश में भी बच्चों व युवाओं को तेजी से अपनी पकड में ले रहा है।

हाल ही में ग्रेट ब्रिटेन में किए गए दो सर्वेक्षणों से ज्ञात होता है कि वहां माता – पिता का अपने बच्चों से संवाद इंटरनेट के माध्यम से ही होता है एवं वहां 12 वर्ष से 14 वर्ष के बीच के लगभग 40 प्रतिशत बच्चे मोबाईल अथवा कम्प्युटर के जरिये अश्लील साहित्य के साथ में महिला की तस्वीरें दोस्तों के बीच बिना रोक–टोक के भेज रहे है।

भारत में इटंरनेंट की दुनिया ने यहां के बच्चों व युवाओं को पूरी तरह से अपनी चपेट मे ले लिया है। भारत में नेट सर्चिंग की लत अधिकांश युवाओं एवं बच्चों को लग चुकी है। नेट सर्चिंग की इस लत ने सामाजिक संवाद व प्रत्यक्ष संवाद को काफी हद तक प्रभावित किया है।

मुंबई में ऐसे कई इंटरनेट एडिक्टेड क्लिीनिक की शुरुआत भी हो गई है जहां दर्जनों मां– बाप अपने बच्चों को लेकर ऐसे क्लीनिक पर लगातार पहुंच रहे है। इंटरनेट प्रयोग के मामले में भारत एशिया में तीसरा तथा विश्व में चौथा देश है।

साथ ही इंटरनेट प्रयोग करने वाली 85 फीसदी आबादी यहां 14 से 40 वर्ष के बीच के है। इस संदर्भ में सामाजिक तथ्यों का पता चलता है कि आज कम्प्यूटर व इंटरनेट की दुनिया बच्चों में परिवार, स्कूल व क्रीडा समूह जैसी प्राथमिक संस्थाओं की उपादेयता पर प्रश्न चिन्ह खडा करते है।

इंटरनेट के बढते उपयोग ने आज संवाद के लिए शारीरिक उपस्थिति को खत्म सा कर दिया है। फेसबुक, ट्विटर व आम्रकुट जैसी वेबसाईट्स के सामने हमारे दिमाग का तरोताजा रखने वाली स्वास्थ्य क्रियाएं हमारे प्रत्यक्ष सामजिक जीवन से गायब होती जा रही है। विद्यालयों में पठन– पाठन की क्रिया व शिक्षक की तुलना में इंटरनेट की सोशल वेबसाइट से संवाद प्रभावी क्यों हो रहा है? यह दौर ज्ञानाश्रित सूचना क्रांति का है। निश्चित ही सूचनाओं के तकनीकी संवाद ने परिवार व उसकी सामूहिकता को विखंडित करके बचपन को सबसे अधिक प्रभावित किया है।

आज के मां –बाप को इतनी फुरसत ही नहीं है, ो उसे यह बता सके कि समाज का उसके जीवन में क्या महत्व है तथा उसके सामाजिक जीवन,चयन करने की दिशा क्या होगी ? बच्चों के जीवन में सांस्कृतिक मूल्यों की सीख देने वाले परिवार और स्कूल तक उनके बचपन से दूर हो रहे है। बच्चों का बचपन मनोरंजन व शारीरिक खेलकूद से हटकर संचार माध्यमों की दुनिया तक सिमट रहा है। एक कडवी सच्चाई यह भी है कि परिवारों से बडे–बुढ़े तो निकाल लिए गए है। तथा मां– बाप भी अब बच्चों के बचपन से अनुपस्थित हो रहे है। ऐसे अकेले वातावरण में संचार माध्यम कही ऐसे माध्यम बनते हैं जिनसे बच्चे अपने मनोरंजन की चीजों के चयन के लिए स्वतंत्र हो जाते है।

कम्प्यूटर व इंटरनेट की दुनिया की विशेषता यह है कि ये बच्चों के सामूहिक व मानवीय संवेदनाओं के पक्ष को गायब करके उसके निहायत

* राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत

काल्पनिक, स्वकेन्द्रित व रोमांचक उत्तेजना देने वाले पक्ष को ज्यादा प्रभावी बना देते है। चूंकि बच्चों के सामाजीकरण करने वाले परिवार व स्कूल जैसी प्राथमिक संस्थाएं भी बाजरवाद की जकड में है, इसलिए बच्चे भी सांस्कृतिक शून्यता के दौर से गुजर रहे है। बचपन का सही निवेश जीवन भर मानवीय संवेदनाओं को संभाल सकता है।

वर्तमान का सच यह है कि दैनिक सामाजीकरण का अभाव और मीडिया, कम्प्यूटर व इंटरनेट के यांत्रिक संवादों की प्रचुरता बच्चों के बचपन को विवादास्पद बना रही है। बच्चों के जीवन में व्यसन के रुप में विकसित हो रहा, उत्तेजना का यह स्थायी भाव कभी बाल- हिंसा के रुप में सामने आता है तो कभी आत्महत्या के रुप में।

इंटरनेट से बनने वाली दुनिया के नागरिकों का समाज अब 21 वीं सदी के नेट से पूछे नागरिकों का समाज बन रहा है। इस समाज में पारस्परिकता, प्रेम, बंधुत्व, मनुष्यता, सहानुभूति व मानवीय संवेदना जैसे सनातन मूल्यो का अभाव सा दिखाई दे रहा है। इनके अभाव में सबसे अधिक प्रभावित होने वाला बच्चों का बचपन ही है। बच्चों की इस पीढी में सफलता प्राप्त करने की तीव्र इच्छा तो है, परन्तु जीवन में सफल होने का धैर्य व संयम की मात्रा नहीं है

सुझाव – बच्चे इंटरनेट का उपयोग करें यह भी जरुरी है, लेकिन वे इसके बुरे प्रभाव से बचे इसके उपाय भी जरुरी है। बच्चे इंटरनेट के आदी न हो जाएं,सूचनाओं के विशाल भंडार में से बच्चे वही चुनें, जो उनके सकारात्मक विकास में सहायक हो, यह ध्यान रखना भी आवश्यक है। आज के समय में माता-पिता ही बचें को सही जानकारी दे सकते है। बच्चे अनुपयोगी साइट न देखे इसलिए माता- पित को निम्न बातों को ध्यान रखना चाहिए -

- इंटरनेट पर कई तरह के फिल्टरींग और और ब्लॉकिंग सिस्टम भी है, जिसमें सुविधा है कि आप एंच्छिक साइट्स ही खोल सके और अनचाही एवं अनोपयोगी वेबसाईट्स सर्चिंग ही ना की जा सके। माइक्रोसॉफ्ट इंटरनेट एक एप्लिकेशन पर भी वही सुविधा उपलब्ध है कि आप अपेक्षित विषय पर आधारित साइट पर जा सके।
- इंटरनेट कंटेंट रेंटिग एसोसिएशन का एक वेबसाइट रेटिग सिस्टम है। इसके रेटिंग्स विकल्प का उपयोग कर आप जिस विषय से संबधित साइट्स चाहते है, उसकी सूची देख सकते हैं, इसके अलावा कई इंटरनेट फिल्टरिंग सॉफ्ट्वेयर है। जो अनुपयुक्त साईट्स को चलने नहीं देते। फिल्टरिंग की सुविधा इंटरनेट सर्विस प्रोवाइडर भी प्रदान करते है, जिसका प्रयोग करना चाहिए।
- बच्चे उनुपयुक्त साइट न देखें, इसके लिए जरुरी है कि परिवार के बडे लोग देखरेख मे रखें। वैसे तो छोटी आयु को बच्चों को माता - पिता अथवा अन्य किसी बडे पारिवारिक सदस्य के साथ बैइकर ही सर्चिंग करानी चाहिए। बचे को नेट विशेषज्ञो के परामर्श से वेबाइट की एक सूची निर्धारित करनी चाहिए, जो बच्चो के लिए आवश्यक व उपयोगी हो घर में बच्चों संबंधी वेबसाईट्स और सर्च इंजान के बारे में जानकारी के लिए कई तरह के स्त्रोत है। उदाहरण के लिए एमएसएन किड्स सर्च पर जाकर माता- पिता बच्चों के लिए अलग - अलग विषयों से संबंधित साइट्स के बारे में जानकारी जुटा सकते है।

अभिभावक जब बच्चों को नेट सर्चिंग करते हुए देख नहीं पाते तो वे ब्राउजिंग हिस्ट्री में जाकर ये देख सकते हैं कि बच्चों ने कौन - कौन सी साइट्स सर्च की है। इस संबंध में बच्चों के साथ बैठकर बात भी करनी चाहिए और उन्हें समझाना चाहिए कि क्या सही है क्या गलत।

निष्कर्ष – बच्चे हमारे समाज व राष्ट्र का भविष्य है। इनके बचपन के वात्सल्य, प्रेम, दया व सहानुभूति के साथ अच्छा-बुरा, सच-झूठ व हिंसा-अहिंसा के बीच के अंतर को अच्छे भाव को जीवन में समाहित करने व गलत को जीवन से निकालने के कार्य में परिवार व स्कूल जैसी प्राथमिक संस्थाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। बच्चों के जीवन से अनावश्यक चीज को हटाने के लिए आवश्यक है कि उनके एकाकीपन, तनाव, निराशा, कुंठा को कम करते हुए उनको रचनात्मक व शारीरिक गतिविधियों मे व्यस्त किया जाए। बच्चों में जज्बाती थकान व हिंसक उत्तेजना से जुडे भाव को, माता-पिता और बच्चों के बीच बढे फासलें को कम करते हुएं एवं उनसे निकट का संवाद स्थपित करके कम किया जा सकता है। आज वैश्विक समाज के बढते बाजारीकरण से बचाव मुश्किल है, परन्त बच्चों से प्रत्यक्ष संवाद स्थापित करते हुए उनमें इंटरनेट की दुनिया से उभरने वाले एकाकीपन के स्थायीभाव को कम किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. गुप्ता (2013) विशेष-आपसी दुनिया में गुम बचपन, पब्लिशिंग नई दिल्ली।
2. डॉ. महाजन संजीव (2011) 'आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन' अर्जुन पब्लिशिंग नई दिल्ली।
3. Shivam das and nilesh jain(2003) basics of computer and iformation technology.(UGC) Nakoda pub. Indore.
4. http://www.ebook.com / help /FAQ/asp.

****

नीमच जिले की जनसंख्या की प्रजनन दर की प्रवृत्ति का विश्लेषण

डॉ. ज्ञानचन्द्र खिमेसरा * बाला शर्मा **

प्रस्तावना – किसी स्त्री का माँ बनना उसके जीवन की सबसे महत्वपूर्ण जनांकिकीय घटना समझी जाती है । इस घटना से व्यक्ति तथा परिवार के ढाँचे में महत्वपूर्ण परिवर्तन हो जाता है। जैसे ही किसी परिवार में शिशु का जन्म होता है परिवार के सभी सदस्यों की भूमिका में बदलाव आ जाता है, अधिकार तथा कर्तव्यों की दिशा में नया मोड़ आ जाता है। यद्यपि यह उथल–पुथल सम्पूर्ण समाज में उस तरह नहीं होती जैसे कि एक परिवार में होती है। इसका कारण यह है कि नए व्यक्तियों के आगमन के साथ ही कुछ व्यक्तियों का समाज से बहिर्गमन भी निरंतर होता रहता है। फिर भी, समाज इससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता।

जहाँ एक ओर वंश परम्परा को जीवित रखने तथा समाज एवं देश में श्रमशक्ति की पूर्ति में निरन्तरता बनाए रखने के लिए प्रजनन दर को बनाए रखना उचित समझा जाता है, वहीं ऊँची प्रजननशीलता के परिणामस्वरूप जन समुदाय के कल्याण में कभी भी परिलक्षित होने लगी है, यही कारण है कि धीरे–धीरे सामाजिक सोच में इस तरह के परिवर्तन को प्रोत्साहित किया जाने लगा कि बच्चों की संख्या कम होनी चाहिए। अन्य शब्दों में प्रजननशीलता में कमी आने के लिए लोगों को जागृत एवं प्रोत्साहित किया जाने लगा है। मनुष्य का जन्म उसकी प्रजननशीलता पर निर्भर करता है। प्रजननता का अभिप्राय किसी स्त्री या उनके समूह के द्वारा किसी समयावधि में कुल सजीव जन्में बच्चों की वास्तविक संख्या से है। यदि कभी भी किसी स्त्री ने किसी बच्चों को जन्म दिया है तो उसको प्रजननशील स्त्री कहा जाएगा। प्रजननता की माप किसी समय विशेष में सजीव जन्में बच्चों की आवृत्ति से की जा सकती है।

नीमच जिले में प्रजनन दर – नीमच जिले की प्रजनन दर का अध्ययन किया गया जिसका विश्लेषण प्रस्तुत तालिका एवं रेखाचित्र से स्पष्ट है –

तालिका क्रमांक – 01 :

नीमच जिले में प्रजनन दर (प्रति हजार)

जनगणना	प्रजनन दर
1991	34.4
2001	30.7
2011	25.7

स्त्रोत :– जिला चिकित्सालय, नीमच

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि नीमच जिले में 1991 में प्रजनन दर 34.4 प्रति हजार थी, सन् 2001 में यह घटकर 30.7 प्रति हजार हो गई इसके पश्चात् सन् 2011 में 25.2 प्रति हजार थी सन् 1981 में जन्मदर 38.2 प्रति हजार थी तब 1991 में यह 34.4 प्रति हजार हो गई अर्थात् 1981 से 1991 के दशक में जन्म दर 3.8 की कमी आई है। 1991 से 2001 के दशक में 3.7 प्रतिशत की कमी हुई तथा 2001 से 2011 के दशक में 5.5 प्रतिशत की कमी हुई अर्थात् प्रजनन दर कम हो रही है। इसके मुख्य कारण निम्न है –

1. परिवार नियोजन कार्यक्रम – सन् 1952 से सम्पूर्ण भारत मध्यप्रदेश और नीमच जिले में परिवार नियोजन कार्यक्रम चलाया गया इसी के कारण नीमच जिले में जन्मदर 34.4 प्रति हजार थी जो 25.2 प्रति हजार हो गई। जिसके अन्तर्गत नसबंदी, कॉपरटी, निरोध, गर्भ निरोधक गोलियाँ आदि की सहायता से जन्म नियंत्रण अपनाया गया।

2. साक्षरता में वृद्धि –जैसे–जैसे किसी शहर की साक्षरता में वृद्धि होती है। प्रजनन दर में कमी हो जाती है। नीमच जिले में 1991 में साक्षरता दर 43.3 प्रतिशत थी इसी प्रकार 2001 में साक्षरता दर 66.2 प्रतिशत हो गई और 2011 में यह बढ़कर 70.08 प्रतिशत हो गई।

यहाँ हम यह कहना चाहते है कि साक्षरता दर और प्रजननता में विपरीत संबंध होता है यदि हम नीमच जिले के साक्षरता और प्रजनन दर का अध्ययन करे तो निम्न संबंध स्पष्ट होगा ।

नीमच जिले की तहसीलों में प्रजनन दरें का अध्ययन – नीमच जिले की विभिन्न तहसीलों में प्रजनन दरों का अध्ययन किया गया जिसका विश्लेषण निम्न तालिका में प्रस्तुत है –

तालिका क्रमांक – 02 :

नीमच जिले की तहसीलों में प्रजनन दरों का अध्ययन

क्र.	जनगणना	नीमच	मनासा	जावद	सिंगोली	जीरन
1.	1991	33.2	34.1	34.4	–	–
2.	2001	29.8	30.1	29.9	–	–
3.	2011	24.8	25.1	25.9	26.1	25.2

स्त्रोत :– नीमच नगरपालिका सेम्पल रजिस्ट्रीकरण सर्वे: आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालन, म.प्र. भोपाल ।

नीमच जिले की विभिन्न तहसीलों की प्रजनन दरों की तुलना की जाए तो इस प्रकार निष्कर्ष प्राप्त होते है।

* पूर्व प्राचार्य, राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत

1. नीमच तहसील की बात की जाए तो सन् 1991 में नीमच तहसील में प्रजनन दर 33.2 प्रति हजार थी जो कि 2001 में यह घटकर 29.8 प्रति हजार हो गई तथा 2011 में यह घटकर 24.8 प्रति हजार रह गई अत: यह लगातार घट रही है।
2. मनासा तहसील की बात की जाए तो सन् 1991 में प्रजनन दर 34.1 प्रति हजार थी जो कि 2001 में घटकर 30.1 प्रति हजार तथा 2011 में यह 25.1 प्रति हजार हो गई अर्थात् मनासा तहसील में 1991 में यह 34.1 प्रति हजार से घटकर 25.1 प्रति हजार हो गई।
3. जावद तहसील की बात करे तो सन् 1991 में प्रजनन दर 34.4 प्रति हजार थी जो 2001 में घटकर 29.9 प्रति हजार तथा 2011 में यह 25.9 प्रति हजार हो गई अर्थात् जावद तहसील में 1991 से यह 34.4 प्रति हजार से 25.9 प्रति हजार हो गई।
4. सिंगोली तहसील की बात करें तो सन् 2011 में प्रजनन दर 26.1 प्रति हजार थी। सिंगोली तहसील 2011 की जनगणना में तहसील बनी उसके पहले यह जावद तहसील में शामिल थी।
5. जीरन तहसील की बात करें तो सन् 2011 में प्रजनन दर 25.2 प्रति हजार थी, उसके पहले जीरन तहसील नीमच तहसील में शामिल थी।
6. सन् 1991 में सर्वाधिक जन्मदर वाली तहसील जावद तहसील थी और सबसे कम प्रजनन वाली नीमच तहसील थी।
7. सन् 2001 में सर्वाधिक जन्मदर वाली तहसील मनासा तहसील थी और सबसे कम प्रजनन वाली नीमच तहसील थी।
8. सन् 2011 में सर्वाधिक जन्मदर वाली तहसील सिंगोली थी और सबसे कम प्रजनन वाली नीमत तहसील थी।
9. सभी तहसीलों में प्रजनन दर घटने का कारण साक्षरता में वृद्धि रही।
10. परिवार नियोजन कार्यक्रम के कारण भी प्रजनन दर कम रही।

नीमच जिला मध्यप्रदेश और भारत की प्रजनन दर का तुलनात्मक अध्ययन – नीमच जिले की प्रजनन दर की मध्यप्रदेश और भारत से तुलना की गई जिसका विश्लेषण निम्न तालिका में प्रस्तुत है :–

तालिका क्रमांक – 03 :
नीमच जिला मध्यप्रदेश एवं भारत की प्रजनन दर का तुलनात्मक अध्ययन

जनगणना	नीमच जिला	मध्यप्रदेश	भारत
1991	34.4	35.8	29.5
2001	30.7	31.8	25.4
2011	25.2	26.3	21.4

स्त्रोत :– भारत 2003, मध्यप्रदेश संक्षेप 2001, जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2015

RS Bulletin Registra General India, 20014

1. यदि नीमच जिला मध्यप्रदेश और भारत की प्रजनन दरों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाए तो सन् 1991 में नीमच जिले की प्रजनन दर 34.4 प्रति हजार थी, मध्यप्रदेश की 35.8 प्रति हजार थी और भारत की 29.5 प्रति हजार थी अत: मध्यप्रदेश की प्रजनन दर भारत और नीमच जिले से अधिक थी।
2. सन् 2001 में नीमच जिले की प्रजनन दर 30.7 प्रति हजार थी मध्यप्रदेश की 31.8 प्रति हजार और भारत की 25.4 प्रति हजार थी। यहाँ मध्यप्रदेश की प्रजनन दर भारत और नीमच जिले से अधिक है।
3. सन् 2011 में नीमच जिले की प्रजनन दर 25.2 प्रति हजार थी, मध्यप्रदेश की 26.3 प्रति हजार थी तथा भारत की 21.4 प्रति हजार थी अर्थात् यहाँ मध्यप्रदेश की प्रजनन दर नीमच और भारत से अधिक है।
4. तीनों ही जनगणना में भारत की प्रजनन दर नीमच जिला और मध्यप्रदेश से कम है तथा नीमच की प्रजनन दर मध्यप्रदेश से भी कम है।

प्रजनन दर प्रति 1000 पर है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मिश्र जयप्रकाश जनांकिकी 2000, पृ.128
2. पंत, जीवनचन्द्र: जनांकिकी 1997, पृ. 213
3. मिश्र जयप्रकाश जनांकिकी 2000, पृ.184
4. मिश्र जयप्रकाश जनांकिकी 2000, पृ.129
5. मिश्र जयप्रकाश जनांकिकी 2000, पृ.130
6. पंत, जीवनचन्द्र : जनांकिकी 1997, पृ.213,214

****

भारत में बैंकिंग संस्थाओं की बदलती भूमिका

छगन वसुनिया * डॉ. मनोहर जैन **

प्रस्तावना – किसी भी देश की अर्थव्यवस्था सुचारू रूप से तभी चल सकती है, जब उसका बैंकिंग क्षेत्र सुविकसित एवं दक्ष हो। भारत संसार के दस बड़े उभरते बाजारों में से एक है और उपभोक्ता की बड़ी तादाद् हमारे यहां निवास करती है। बैंकिंग क्षेत्र ने हमारे देश में बहुआयामी प्रगति की है, किन्तु समय के साथ नवीन चुनौतियाँ भी उभरी हैं।

ब्रिटिश शासनकाल से पहले हमारे देश में बैंकिंग का कोई खास विकास नहीं हुआ था। मुगल शासनकाल में बैंकिंग का ज्यादातर कार्य साहूकारों एवं महाजनों द्वारा सम्पन्न किया गया। बैंकिंग की यात्रा में सत्रहवीं शताब्दी इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसी समय ब्रिटिश शासनकाल का हस्तक्षेप हुआ और भारत की साहूकारी वित्त व्यवस्था को गहरा आघात लगा। अठारहवीं शताब्दी में ईस्ट इंडिया कम्पनी ने बंबई तथा कलकत्ता में कुछ एजेंसी गृहों की स्थापना की जो आधुनिक बैंकों की तरह काम किया करते थे। इन एजेंसी गृहों का प्रमुख कार्य ईस्ट इंडिया कम्पनी को सैनिक आवश्यकताओं के लिए रूपये उधार देना, कृषि उपज की ब्रिकी के लिए ऋण प्रदान करना, कागजी मुद्रा का निर्गमन करना तथा लोगों से निक्षेप स्वीकार करना था। यूरोपीय बैंकिंग पद्धति पर आधारित भारत का प्रथम बैंक विदेशी पूँजी के सहयोग से एलेक्जेंडर एंड कंपनी द्वारा बैंक ऑफ हिन्दुस्तान नाम से सन् 1770 ई.में कलकत्ता में स्थापित किया गया। किंतु यह बैंक शीघ्र ही असफल हो गया। इसके बाद देश में निजी अंशधारियों द्वारा तीन प्रेसीडेंसी बैंकों की स्थापना की गई। सन् 1806 में बैंक ऑफ बंगाल, सन् 1840 में बैंक ऑफ बॉबे तथा सन् 1843 में बैंक ऑफ मद्रास अस्तित्व में आए। हालांकि यह तीनों निजी शेयर होल्डरों के बैंक थे। फिर भी इन तीनों बैंकों की शेयर पूंजी में सरकार का भी कुछ हिस्सा था, इसलिए सरकार इन तीनों बैंकों पर अपना नियंत्रण रखती थी।

इस समय बैंकों पर सरकार का नियंत्रण वर्तमान की तुलना में भिन्न था। औपनिवेशीकरण और शोषण की कड़वी सच्चाई के कारण ही हमारी बैंकिंग प्रणाली यूरोप या अमरीका की बैंकिंग प्रणाली से सर्वथा भिन्न व स्थानबद्ध प्रतिमानों का प्रदर्शन करती है। आगे चलकर उपर्युक्त तीनों बैंकों को मिलाकर सन् 1921 में इंपीरियल बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना की गई और जुलाई 1955 में इसका नाम बदलकर स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया रखा गया। सन् 1860 में एक संयुक्त कम्पनी पूंजी अधिनियम (कम्पनी अधिनियम) पारित होने के कारण बैंकों की स्थापना में बहुत मदद मिली थी। परिणामस्वरूप हमारे देश में अनेक संयुक्त पूंजी बैंक स्थापित हो गए। 1906 के बाद बीसवीं शताब्दी में ही हमारे बैंकिंग क्षेत्र का उल्लेखनीय विकास हुआ। उत्तरी भारत में तो बैंकों का जाल ही बिछ गया जिसे कई अर्थशास्त्रियों ने स्वदेशी आन्दोलन के उदय और विकास से संबद्ध किया।

आज यह कहा जा सकता है कि संसार की सभी अर्थव्यवस्थाएँ आपस में जुड़ी हुई है और किसी भी एक अर्थव्यवस्था की तेजी या मंदी का असर पूरी दुनिया के बैंकों व बाजारों पर तुरन्त पड़ने लगता है, दूसरे महायुद्ध के चलते उत्पन्न मुद्रा प्रसार के कारण जनसामान्य की मौद्रिक आय में वृद्धि हो गई अत: सभी बैंकों के निक्षेप (डिपॉजिट) बढ़ गए। युद्ध के दौरान बढ़ती हुई आर्थिक–समृद्धि का लाभ उठाने के लिए पुराने बैंकों ने नयी–नयी शाखाओं की स्थापना की। इसके अतिरिक्त कुछ नये बैंक अस्तित्व में आए। वास्तव में भारत की आजादी के आसपास का समय बैंकिंग विस्तार का समय है। आज वित्तीय संस्थाओं के राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नियमन की जो चर्चा प्रासंगिक रूप से चल रही है, उसकी आवश्यकता कई बार इसलिए होती है कि बैंकों को अधिक दक्ष व समयानुकूल बनाएं जाने की अपेक्षा हैं।

भारत एक कृषि प्रधान देश है और हमारी ज्यादातर आबादी गांवों में निवास करती है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिग सुविधाओं का विकास करने के लिए बैंक ऑफ इण्डिया का जुलाई 1955 में आंशिक राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। सामाजिक क्षेत्र में प्रगति की अनिवार्यता को रेखांकित करते हुए बैंकों को अधिक समाजोपयोगी व समाजोन्मुख बनाने की कोशिश की गई।

भारतीय बैंकिंग क्षेत्र ने अपने बहुआयामी स्वरूप को अधिक सफलतापूर्वक व्यक्त किया है। आज कोई भी विकसित, अविकसित अथवा विकासशील देश हो उसे अपना विकास रथ चलाने, बढ़ाने और उसे रफ्तार देने के लिए पूंजी की आवश्यकता होती है, इसलिए वित्तीय संस्थाओं को महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होगी। बैंकों के राष्ट्रीयकरण से आर्थिक आजादी का नया सूरज उदय हुआ, इससें बैंकिग का उद्देश्य वर्ग बैंकिंग से हटकर जन बैंकिंग हो गया। बैंकों की इस नयी जनप्रिय भागीदारी ने देश के आम आदमी को आर्थिक प्रगति के अवसर प्रदान किए है। भारतीय अर्थव्यवस्था के चहुंमुखी विकास यात्रा में बैंकों का राष्ट्रीकरण विधेयक सबसे बड़ा मिल का पत्थर साबित हुआ है।[1]

आज भारतीय बैंकिंग क्षेत्र ने अपने बहुआयामी स्वरूप को सफलतापूर्वक व्यक्त किया है तथा वित्तीय संस्थाओं ने लोगों की आवश्यकताओं के अनुरूप कार्य कर देश में अपनी वित्तीय स्थिति एवं प्रबंध

* शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, सैलाना (म.प्र.) भारत

के प्रति गहरी प्रतिबद्धता का परिचय दिया है। जिससे देश के सामाजिक–आर्थिक तथा औद्योगिक परिदृश्य में व्यापक परिवर्तन हुए है, विभिन्न वित्तीय संस्थाओं ने देश के संपूर्ण क्षेत्रों में तेजी से विकास करके तकनीकी क्रांति ला दी है। यह कहनाअतिश्योक्ति नहीं होगा कि बैंकिंग व्यवसाय के त्रिभुज में निजी, विदेशी बैंकों और तेजी से विस्तार कर रहे सरकारी बैंकों के सुदृढ़ योगदान ने देश की अर्थव्यवस्था को नयी बुलंदियों पर पहुँचा दिया है। अत: कह सकते है कि बैंकिंग संस्थाओं को पूर्ण पारदर्शिता एवं दक्षता के साथ–साथ स्वयं को पुनर्संगठित करना होगा। तथा तेजी से विकसित हो रहे व्यवसाय को संभालने में आमूल–चूल परिवर्तन करना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. योजना, फरवरी (2010) : 'भारत में बैंकिंग', सूचना और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली
2. सेठी, टी.टी.(1992):, 'मुद्रा बैंकिंग एवं अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार', लक्ष्मीनारायण अस्पताल मार्ग, इलाहाबाद
3. मिश्र, जगदीश नारायण (1999) : 'भारतीय अर्थव्यवस्था', किताब महल, इलाहाबाद
4. सिंघई, जी.सी.(1995): 'मुद्रा एवं बैंकिंग', साहित्य भवन, आगरा
5. अग्रवाल,एएन.(2004) : 'भारतीय अर्थव्यवस्था विकास एवं आयोजन', विश्व प्रकाशन दरियागंज, नई दिल्ली
6. अग्रवाल, एम.डी.(2010) : 'भारत में वित्त प्रबन्ध', पंचशील प्रकाशन, जयपुर
7. मामोरिया चतुर्भुज, जैन एस.सी.(1996): 'भारत में आर्थिक नियोजन एवं विकास', साहित्य भवन, आगरा

****

ग्रामीण विकास में कृषि का महत्व अलिराजपुर जिले के विशेष संदर्भ में

अनिता भाटी * डॉ. ज्ञानचन्द्र खिमेसरा **

प्रस्तावना – मानव सभ्यता के विकास के प्रारम्भ से ही कृषि लोगों की आजीविका का प्रमुख साधन रही है। आज भी कृषि विश्व की अधिकांश जनसंख्या का प्रमुख व्यवसाय है। विकासशील देशों में प्रधान व्यवसाय होने के कारण कृषि रोजगार एवं जीवन-यापन का प्रमुख साधन, औद्योगिक विकास, वाणिज्य एवं विदेशी व्यापार का आधार है। कृषि इन देशों की अर्थव्यवस्था की रीढ़ तथा विकास की कुंजी है। किसी देश का कृषिगत विकास उस देश के संस्थागत स्वरूप पर निर्भर करता है। कृषि के संस्थागत स्वरूप के अन्तर्गत भूमि सम्बन्धी व्यवस्था अर्थात् भू-धारण की पद्धति, भू-स्वामित्व सम्बन्धी कानून, काश्त का स्वरूप, जोतों का आकार तथा लगान सम्बन्धी नियम आदि बातें सम्मिलित रहती हैं। भू-व्यवस्था का कृषिगत विकास से घनिष्ठतम सम्बन्ध है और इसलिए इसका प्रभाव आर्थिक विकास को बढ़ाने अथवा अवरूद्ध करने का हो सकता है। दोषपूर्ण भूमि-व्यवस्था कृषि उत्पादकता को घटाकर आर्थिक विकास को धीमी करती है जबकि सुदृढ़ कृषि - व्यवस्था और भूमि-सुधार कार्यक्रम उत्पादकता में वृद्धि तथा निवेश प्रेरणा के रूप में आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करते है।

भारत के आर्थिक विकास के लिये ग्रामीण विकास आवश्यक है और ग्रामीण विकास तभी संभव होता है, जब कृषि विकास हो। प्राचीन काल से ही भारत को 'सोने की चिड़िया' कहा जाता है। इसे सोने की चिड़िया कहलाने का श्रेय कृषि को ही है। भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का इतना महत्वपूर्ण स्थान होते हुए भी भारत के आदिम जाति क्षेत्रों में कृषि की स्थिति बहुत शोचनीय है। आदिम जाति क्षेत्रों में कृषि प्राचीन काल से चले आ रहे साधनों द्वारा आज भी की जाती है क्योंकि जनजाति क्षेत्र में कृषक खेती व्यवसाय के रूप में नहीं करता है, बल्कि जीविकोपार्जन के लिए करता है। कृषि की पुरानी विधियाँ, पूँजी की कमी, भूमि सुधार की अपूर्णता, विपणन एवं वित्त सबंधी कठिनाइयॉ आदि के कारण भारत के आदिम जाति क्षेत्र में कृषि की उत्पादकता अत्यन्त न्यून है।

2001 की जनगणना के अनुसार 5 हजार से कम जनसंख्याँ जहाँ लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि हो तथा जनसंख्याँ घनत्व 4 सौ व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर से कम हो उसे ग्रामीण क्षेत्र की संज्ञा दी जाती है , यदि जनसंख्याँ 5 हजार से अधिक हो तथा उस क्षेत्र के अधिकाषं लोगों का व्यवसाय खेती हो तो उसे भी गाँव कहेंगे। जहाँ तक विकास शब्द का प्रश्न है। विकास एक सतत् प्रक्रिया है, जिसके अन्तर्गत किसी क्षेत्र विशेष में मात्रात्मक तथा गुणात्मक परिवर्तन के द्वारा लोगों के जीवन-स्तर की वर्तमान परिस्थितियों में अधिक सुधार का प्रयास किया जाता है। विकास में मानव जीवन के सभी पहलुओं आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, पर्यावरण, तकनीकी इत्यादि पहलुओं को सम्मिलित किया जाता है। अत: विकास का सम्बन्ध मानव के सर्वांगीण विकास से है।

कृषि ग्रामीण विकास का एक महत्वपूर्ण तत्व है, कृषि और उसकी सहायक क्रियाओं में मछली पालन, मूर्गा पालन, पशुपालन, डेयरी आदि कृषि की सहायक क्रिया है तथा कृषि की इन सहायक क्रियाओं का विकास कर ग्रामीण विकास सम्भव हो सकता है। ग्रामीण विकास में कृषि को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। भारत एक ग्रामीण प्रधान देश है, ग्रामीण क्षेत्र में निवास कर रही जनसंख्या कृषि को ही अपनी जीविकोपार्जन का साधन मानती है। कृषि विकास के अन्तर्गत उन्नत किस्म के बीज का प्रयोग, मशीनों का प्रयोग, भूमि सुधार कार्यक्रमों को लागू करना, दवाईयों और कीटनाशकों का प्रयोग, और कृषि की सहायक क्रियाओं से संबंधित सुविधाओं को उपलब्ध कराकर कृषि विकास किया जा सकता है, अर्थात कृषि विकास का सीधा प्रभाव ग्रामीण विकास पर पड़ेगा।

अलिराजपुर जिले का संक्षिप्त परिचय – पश्चिमी मध्यप्रदेश में स्थित अलिराजपुर जिला जो कि एक आदिम जाति क्षेत्र है। मध्यप्रदेश में अलिराजपुर जिले का गठन 17 मई 2008 को झाबुआ जिले की तीन तहसीलो (जोबट,आलीराजपूर, भाबरा (चन्द्रशेखर आजाद नगर) से बना है। अलिराजपुर जिला मध्यप्रदेश के इंदौर संभाग में आता है, जिला गुजराज, महाराष्ट्र प्रदेशों की सीमाओं से आलिंगन करता हुआ, 3505 वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में सीधी, सरल तथा निश्चल आदिम आदिवासी संस्कृति को अपने आंचल में समेटे हुएं है। जिला 3505 वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में फैला है। जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 268958 हेक्टेयर है। जिला राज्य के पश्चिम क्षेत्र में $21^0$55'34.3'' से $22^0$38'39'' अक्षांश उत्तर व $74^0$1'47'' के $74^0$44'51.5'' देशांन्तर पूर्व में स्थिति है। उत्तर में माही व दक्षिण में नर्मदा नदी इसकी सीमा को प्रदर्शित करती है।

अलिराजपुर जिले में कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता – अलिराजपुर जिले में कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता के रबी एवं खरीफ फसलो को बताया गया है।

तालिका क्र. 1, 2 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका 1 से स्पष्ट है कि अलिराजपुर जिले में वर्ष 2010-11 में रबी फसलो में गेहूँ का उपादन बड़ा है। इसी तरह अन्य और फसले जैसे- जौ एवं

* शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** पूर्व प्राचार्य, राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत

अन्य, चना, मटर, सरसों में भी क्षेत्रफल के आधार पर वृद्धि व कमी समय-समय पर होती रही है।

तालिका 2 से स्पष्ट है कि अलिराजपुर जिले में वर्ष 2012 में धान, मक्का, ज्वार, बाजरा का उत्पादन बड़ा है। इसी तरह अन्य खरीफ फसलों का भी उत्पादन बढ़ा है।

निष्कर्ष – उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि ग्रामीण विकास में कृषि का महत्वपूर्ण योगदान है। पश्चिमी म.प्र. का अलिराजपुर जिला एक आदिम जाति क्षेत्र है। जिले में ग्रामीण विकास के लिये शासन द्वारा जो प्रयास किये जा रहे है, उन प्रयासों को सफल बनाने के लिये लोगों को जागरूक बनाने की आवश्यकता है। कृषि से सम्बन्धित योजनाओं को सफल बनाने के लिये पारदर्शिता की आवश्यकता है। जिले में कृषि उर्वरकता को बढ़ाने के लिये शासन को महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की आवश्यकता हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. गिरवर सिंह राठौड़ (2004), 'भारत में पंचायतीराज' पंचशील प्रकाशन जयपुर, पेज न. 257।
2. कृषि विभाग अलिराजपुर।
3. जिला सांख्यिकी कार्यालय- अलिराजपुर जिला।

तालिका क्र. 1 : अलिराजपुर जिले में रबी फसलों का क्षेत्र, उत्पादन एवं उत्पादकता
(क्षेत्र 000' हैक्ट., उत्पादन: 000' मीट्रिक टन, उत्पादकता कि.ग्रा./हैक्ट.,)

वर्ष	1			2			3			4			5		
	गेहूँ			जौ एवं अन्य			चना			मटर			सरसों		
	क्षेत्र (A)	उत्पादन (P)	उत्पा. (PDY)	क्षेत्र (A)	उत्पादन (P)	उत्पा. (PDY)	क्षेत्र (A)	उत्पादन (P)	उत्पा. (PDY)	क्षेत्र (A)	उत्पादन (P)	उत्पा. (PDY)	क्षेत्र (A)	उत्पादन (P)	उत्पा. (PDY)
2008-09	13.310	24.025	1805	3.005	2.960	985	8.330	6.331	760	0.063	0.043	690	0.019	0.007	350
2009-10	15.200	27.466	1805	5.100	5.687	1115	11.100	9.202	829	0.100	0.083	834	0.100	0.036	360
2010-11	19.747	37.519	1900	19.747	37.519	1900	12.105	9.030	746	0.092	0.063	565	0.005	0.036	387
2011-12	15.745	34.245	2175	6.301	8.191	1300	10.950	8.213	750	0.048	0.028	580	0.019	0.008	395

स्त्रोत :- कृषि विभाग अलिराजपुर।

सारणी 2 – (देखे अगले पृष्ठ पर)

वर्ष	7			8			9			10			11		
	धान			मक्का			ज्वार			बाजरा			उड़द		
	क्षेत्र (A)	उत्पा (P)	उत्पादक (PDY)	क्षेत्र (A)	उत्पा (P)	उत्पा (PDY)	क्षेत्र (A)	उत्पा (P)	उत्पा (PDY)	क्षेत्र (A)	उत्पा (P)	उत्पा (PDY)	क्षेत्र (A)	उत्पा (P)	उत्पा (PDY)
2007	6.910	5.180	750	12.970	55.170	1525	12.970	9.070	700	14.510	10.150	700	64.490	28.370	440
2008	7.220	3.969	550	37.320	51.133	1370	12.530	10.649	850	15.580	9.034	580	61.320	41.088	670
2009	7.257	4.136	570	37.563	53.264	1418	12.671	11.404	900	15.343	9.206	600	61.205	41.436	677
2010	7.240	8.369	1156	34.150	55.084	1613	13.375	14.873	1112	10.760	7.736	719	55.000	27.500	500
2011	7.445	8.934	1200	38.500	66.413	1725	13.585	16.302	1200	14.325	11.460	800	55.243	41.432	750
2012	7.310	9.028	1235	39.150	68.708	1755	12.850	16.191	1260	16.910	15.557	920	56.900	45.236	795

वर्ष	1 मूंग			2 तिल			3 अरहर			4 मूंगफली			5 सोयाबीन				6 कपास	
	क्षेत्र (A)	उत्पा. (P)	उत्प (Pdy)	क्षेत्र (A)	उत्पा. (P)	उत्पा. (Pdy)	क्षेत्र (A)	उत्पा. (P)	उत्पा (Pdy)	क्षेत्र (A)	उत्पा. (P)	उत्पा. (Pdy)	क्षेत्र (A)	उत्पा (P)	उत्पा (Pdy)	क्षेत्र (A)	उत्पा. (P)	उत्पाद (Pdy)
2007	1.440	0.540	375	0.160	0.040	250	2.720	1.630	600	9.520	8.000	840	5.240	4.320	825	4.310	3.880	900
2008	1.640	0.929	520	0.190	0.068	350	2.640	1.928	730	9.470	9.184	970	6.730	4.842	720	4.200	1.383	320
2009	1.784	0.969	542	0.100	0.036	360	2.580	1.896	735	9.408	9.267	985	10.914	8.731	800	4.432	2.216	500
2010	1.400	0.526	376	0.600	0.320	533	2.752	1.577	573	9.140	11.516	1260	14.390	11.354	789	5.015	0.374	750
2011	1.592	0.995	625	0.456	0.269	590	3.100	2.248	725	9.929	12.610	1270	17.364	17.538	1010	5.524	5.524	1000
2012	1.675	1.080	645	0.070	0.042	600	3.995	3.196	800	10.150	13.195	1300	17.700	19.470	1100	6.232	6.855	1100

****

मध्यप्रदेश का निर्माण एवं पुनर्गठन प्रक्रिया का विश्लेषण

डॉ. चन्द्रमणि प्रसाद मिश्रा *

शोध सारांश – 1 नवम्बर 1956 में गठित मध्यप्रदेश ऐतिहासिक रूप से गौरवशाली प्राचीन संस्कृत का केन्द्र रहा है। मोर्य युग में बने हुए तथा मालवा की पृष्ठिभूमि पर आधारित साँची के स्मारक आज भी विश्व विख्यात है। यहाँ पर 'अनश्वर नगरी' उज्ज्यनी है जहाँ विक्रमादित्य महान ने अद्भुत शैली एवं अपरिमित दान वीरता के साथ शासन किया था। यहीं कालिदास ने कल्पनाओं को संजोकर अमर काव्यों की रचना की थी। खजुराहों के मंदिर प्राचीन वास्तुकला की अनुपम धरोहर है जिसे देखने के लिए बड़ी संख्या में विदेशी पर्यटक प्रतिवर्ष आते हैं। इतिहासविदों के अनुसार मध्यप्रदेश ने आर्थिक, दार्शनिक, साहित्यिक और कला सम्बंधी जीवन को पृष्ठभूमि प्रदान करते हुए राजनीतिक परिवर्तनों को चिन्हित किया है। मध्यप्रदेश जैसी सांस्कृतिक परम्परा भारत के थोड़े राज्यों की है। प्राकृतिक सौन्दर्य, ऐतिहासिक स्मारक, पुरातत्व की सामग्री, वनस्थल, खनिज तथा अन्य प्राकृतिक साधनों की बहुलता जो राज्य को उपलब्ध है वे अन्य क्षेत्रों में कम देखने को मिलती है। इस प्रकार मध्यप्रदेश कला, संस्कृति, इतिहास, संगीत तथा आदिवासी संस्कृति की विरासत बहुरंगी, विलक्षण चकित करने वाली बहुआयामी है, भारत के मध्य में स्थित होने के कारण इसे मध्यप्रदेश नाम दिया गया। मध्यप्रदेश नामकर पं. जवाहरलाल नेहरू ने किया था।

प्रस्तावना – संविधान में भारत के प्रभुत्व सम्पन्न लोकतांत्रिक गणराज्य को 'राज्यों का संघ' घोषित किया गया है, जिसकी निम्नलिखित दो विशेषतायें हैं – 1. भारत का संघवाद संघ की इकाइयों के बीच समझौते का परिणाम नहीं हैं और 2. राज्यों को स्वेच्छानुसार संघ से पृथक होने का अधिकार नहीं दिया गया है। भारत को अपने वर्तमान स्वरूप में लाने के पहले ब्रिटिश भारत तथा देशी रियासतों का एकीकरण किया गया और बाद में भाषायी आधार पर राज्यों का पुनर्गठन किया गया।

स्वतंत्रता के समय भारत राजनीतिक दृष्टि से दो भागों में बटा था। एक भाग प्रत्यक्ष रूप से ब्रिटिश भारत के अधीन था तथा उसमें आधुनिक प्रांतीय शासन व्यवस्था प्रारम्भ हो चुकी थी। दूसरा भाग भारतीय रियासतों का था जहां अलग-अलग प्रकार के राजा-महाराजाओं की प्रशासनिक व्यवस्था प्रचलित थी। 15 अगस्त 1947 को स्वतंत्रता प्राप्त होते ही सम्पूर्ण भारत पृथक राज्य इकाइयों और देशी रियासतों के रूप में लगभग 552 इकाइयों में विभाजित हो गया। ऐसी विकट स्थिति में लगभग समस्त रियासतों को भारत संघ में सम्मिलित करने का ऐतिहासिक कठिन कार्य देश के प्रथम गृहमंत्री सरदार बल्लभ भाई पटेल ने संभव कर दिखाया।

म.प्र. की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि – 1956 में मध्यप्रदेश का जो स्वरूप आया उसे देखकर लोग विस्मित थे। उनकी यह धारणा थी कि क्या इतना बड़ा प्रदेश प्रशासकीय व वित्तीय रूप से सक्षम व स्वावलम्बी बन सकेगा। इन शंकाओं के बावजूद मध्यप्रदेश ने विकास की एक लम्बी यात्रा तय की है। भारत के हृदय-स्थल मध्यप्रदेश का अपना चिर प्राचीन गौरवशाली महत्व रहा है। देश की समस्त प्रमुख राजनैतिक व सांस्कृतिक प्रवृत्तियों से प्रभावित रहा है। अत: मध्यप्रदेश के चार घटक राज्यों महाकौशल, मध्यभारत, विंध्यप्रदेश व भोपाल की पृष्ठभूमि ऐतिहासिक है।

महाकौशल – बौद्ध व जैन काल में उत्तरी जिलों में बौद्ध धर्म और दक्षिण कौशल में जैन धर्म के प्रसार का अनुमान किया जाता है। इस प्रदेश पर चन्द्रगुप्त मोर्य, बिंदुसार व अशोक का शासन रहा। सातवाहन कालीन सिक्के जबलपुर, होशंगाबाद, रायगढ़ आदि जगहों में प्राप्त हुए हैं। महापराक्रमी कर्ण ने अमरकंटक में बहुत से मंदिरों का निर्माण कराया था। कलचुरियों के समय में अनेक मंदिरों का निर्माण कार्य हुआ। इस भाग में गौड़ों के राज्य की बहुलता होने से ही इतिहासकारों ने इसका नाम गोंड़वाना रखा था। महाकौशल का यह समस्त भाग गौड़ शासकों के अधीन रहा। उनके शासन में यहाँ अनेक इमारतें व किले बनवाये गये।

मध्यभारत – ईसा से पूर्व छठी शताब्दी में यह प्रदेश प्रद्योत वंश के अधीन था, जो दशार्ण भी कहलाते थे। चण्डप्रद्योत इस वंश का प्रतापी शासक था जिसने उज्जयिनी को सुख, समृद्धि एवं ऐश्वर्य से सम्पन्न बनाया था। इस क्षेत्र पर कनिष्ठ रूद्रदमन व गुप्तों का शासन रहा। गुप्तों के काल में इस प्रदेश का अच्छा विकास हुआ। पवासा, तमान, बेसनगर व उदयगिरी और बाघ गुफाओं में तत्कालीन अनेक अवशेष प्राप्त होते हैं। जो स्वर्ग युग की महत्ता एवं सुख समृद्धि के प्रतीक हैं। सम्राट हर्ष भोज का शासन भी इस क्षेत्र पर रहा। राजा भोज के समय में कला, साहित्य व संस्कृति की अच्छी उन्नति हुई। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद पूर्व मध्यभारत का निर्माण ग्वालियर, इंदौर, धार, नरसिंहगढ़, सीतामऊ, पिपलौदा, जोबट, काठीबाड़ा, देवास, झाबुआ, बड़वानी, रतलाम आदि 25 क्षेत्रों के एकीकरण से हुआ। जो वर्तमान मध्यप्रदेश का एक भाग बन गया है। शुरू में इसका नाम'यूनाइटेड स्टेट्स ऑफ ग्वालियर', इंदौर और मालवा था लेकिन जब भारतीय संविधान 1950 में लागू हुआ, तब इसका नाम मध्य भारत लिखा गया। इसका कुल क्षेत्रफल करीब 47000 वर्गमील और जनसंख्या कोई 80 लाख थी। इनमें आधे से अधिक 26,000 वर्ग मील से अधिक ग्वालियर राज्य था, और करीब 10,000 वर्ग मील इंदौर, बाकी 20 रियासतें 11,000 वर्गमील में सिमटी थी। 28 मई 1948 को प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने मध्यभारत का जय विलास महल में उद्घाटन किया था।

विंध्यप्रदेश – महाभारत काल में विंध्यप्रदेश के केमूर पर्वत के उत्तर का भाग कारन्ब प्रदेश तथा दक्षिण का भाग विराट राज्य के अधीन था। इस विराट

* अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय श्यामसुंदर नारायण मुशरान महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

राज्य में पाण्डवों ने अपनी गुप्तवास की अवधि पूर्ण की थी। इस काल में अशोक महान के राज्यधीन होने के प्रमाण मिलते हैं। अलग-अलग समयों में यहाँ शुंग, नागवंशियों, वाकाटक वंशियों का शासन रहा। खजुराहों के अमर मंदिर व बुंदेलखण्ड के रमणीय तालाब आज भी चंदेलों की कीर्ति को प्रकाशित कर रहे हैं यह भाग कभी गौड़ों, कभी मुगलों, कभी मराठों द्वारा शासित हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 2 अप्रैल 1948 को रीवा व बुंदेलखण्ड के 34 साधारण क्षेत्रों के विलय से विंध्यप्रदेश का निर्माण हुआ। बुन्देलखण्ड की रियासतों का कुल क्षेत्रफल करीब 12 हजार वर्गमील था और जनसंख्या 17 लाख। रीवा राज्य अकेले ही क्षेत्रफल, जनसंख्या और आमदनी में बुन्देलखण्ड की सब रियासतों की बराबरी का था। इस राज्य का क्षेत्रफल 24,598 वर्गमील और जनसंख्या 35,64,455 थी। इस राज्य का उद्घाटन केन्द्रीय मंत्री एन.व्ही.गाडगिल ने किया।

भोपाल – साधारण तौर पर भोपाल को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम नवाब दोस्त मोहम्मद खान के समय में जो कि भोपाल राजवंश के सूत्रधार थे, द्वितीय ब्रिटिश सरकार के साथ हुई संधि के समय के इतिहास में भोपाल का शासन कई वंशों द्वारा चलाया गया जिसमें मुगल, मराठा, गौड़, अफगान सरदार व राजपूत शामिल हैं। मालवा क्षेत्र के राजा भोज के नाम पर इस राज्य का नाम भोपाल पड़ा पहले भोपाल को भोजपाल के नाम से जाना जाता था। भोपाल राज्य की ब्रिटिश सरकार के साथ संधि होने के बाद सिकन बेगम ने भोपाल की बागडोर संभाली। उन्होंने बड़े अच्छे तरीके से भोपाल का शासन संभाला व भोपाल की सर्वप्रथम महिला शासक थी। उसके बाद 1868 में शाहजहाँ बेगम ने भोपाल पर शासन किया। उन्होंने यहाँ ताजुल मस्जिद, मोती मस्जिद, शाहजहांनाबाद आदि का निर्माण करवाया था। सुल्तान जहां बेगम व उनके पुत्र हमीदुल्ला खां ने भी भोपाल पर शासन किया। उस समय भोपाल की जनता में राजनीतिक जागरूकता आ चुकी थी और ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध आंदोलन शुरू हो गया था तदुपरान्त भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से भोपाल, भारत संघ में शामिल हो गया।

मध्यप्रदेश का निर्माण एवं पुनर्गठन – स्वतंत्रता के बाद भारत में देशी रियासतों और प्रान्तों को मिलाकर एक संघ स्थापित किया गया जिसमें क, ख, ग, श्रेणी को राज्य और घ श्रेणी को केन्द्र शासित प्रदेश माना गया। राज्यों में उत्तरदायी सरकार की स्थापना की गई। भारत में स्वतंत्रता से पूर्व भाषा के आधार पर प्रान्तों के निर्माण की माँग बहुत की गई थी। कांग्रेस ने 1920 के नागपुर-प्रस्ताव में इस प्रकार की माँग का अनुमोदन किया था। स्वतंत्रता के बाद देश के विघटन के भय से प्रारम्भ के कुछ वर्षों तक इस माँग की ओर ध्यान नहीं दिया गया परन्तु मद्रास राज्य में आंध्रप्रदेश की स्थापना के लिए यह आंदोलन तेज होता गया और वहाँ दंगे बढ़ गये। अंत में भारत सरकार को अक्टूबर 1953 में मद्रास राज्य के तेलगु-भाषी भागों को अलग कर आंध्र प्रदेश की स्थापना करनी पड़ी।

आंध्रप्रदेश की स्थापना से पूरे देश में भाषा के आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की माँग बहुत तीव्र हो गई। 29 दिसम्बर 1953 में प्रधानमंत्री द्वारा संसद में घोषणा की गई कि भारत सरकार राज्यों के पुनर्गठन हेतु एक आयोग नियुक्त करेगी। इसके बाद शीघ्र ही एक राज्य पुनर्गठन आयोग नियुक्त किया गया, जिसके अध्यक्ष थे जस्टिस फजल अली और सदस्य थे के.एम.पाणिक्कर और हृदय नाथ कुंजरू। इस आयोग को भाषा तथा संस्कृति के साथ-साथ अन्य महत्वपूर्ण तथ्यों जैसे देश की एकता व सुरक्षा, वित्तीय, आर्थिक और प्रशासनिक हित आदि को ध्यान में रखने का निर्देश दिया गया। 30 सितम्बर 1955 में इस आयोग ने अपना विस्तृत प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जिसमें 16 राज्य एवं 3 केन्द्र शासित क्षेत्रों की सिफारिश की गई थी। आयोग ने अलग महाराष्ट्र और गुजरात की मांगों को स्वीकार नहीं किया जिससे बम्बई राज्य में आंदोलन फैला। संसद ने जुलाई 1956 में राज्य पुनर्गठन अधिनियम स्वीकृत कर दिया। इस अधिनियम के अनुसार भारत में 14 राज्य और 6 केन्द्र शासित क्षेत्र बनाये गये।

भारत के हृदय स्थल के रूप में सुपरिचित किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय सीमा से अछूता, पूरी तरह से भू-आवेष्ठित राज्य मध्यप्रदेश जो देश के ठीक मध्य में स्थित होने के कारण अपने नाम को चरितार्थ करता है। म.प्र. का वर्तमान स्वरूप स्वातंत्र्योत्तार भारत की देन है। ब्रिट्रिश शासनकाल में मध्यप्रांत एवं बरार नामक एक प्रांत अवश्य था किन्तु इसकी सीमाएँ आज के म.प्र. से बिल्कुल भिन्न थी। महाकौशल तथा बरार के जिले इसके अंतर्गत थे। इसके बीचों-बीच छत्तीसगढ़ तथा बघेलखण्ड की रियासतें थी। उत्तर तथा पश्चिम में छोटी-छोटी रियासतें थी, जो सम्मिलित रूप से मध्य-भारत के नाम से जानी जाती थी।

सन् 1947 में मध्यप्रांत (सेंट्रल प्रॉविंस) और बरार में बघेलखण्ड व छत्तीसगढ़ की रियासतों को मिलाकर म.प्र. का राज्य बना, जो कि भाग 'ए' राज्य था और इसकी राजधानी नागपुर थी। उत्तर की 38 रियासतों को मिलाकर विंध्यप्रदेश नामक भाग 'सी' राज्य तथा पश्चिम की 25 रियासतों को मिलाकर मध्यभारत नामक भाग 'बी' राज्य बना। विंध्यप्रदेश की राजधानी रीवा व मध्यभारत की राजधानी छ:-छ: माह के लिए ग्वालियर व इंदौर थी। भोपाल एक पृथक राज्य था, जो भाग 'सी' राज्य था। इसकी राजधानी भोपाल थी। राज्य पुनर्गठन आयोग की सिफारिश के अनुसार 1 नवम्बर 1956 को पुराने म.प्र. के 17 हिन्दी भाषी जिले, मध्यभारत के मंदसौर जिले के सुनेल टप्पा को छोड़कर संपूर्ण मध्यभारत, पूर्व विंध्यप्रदेश, महाकौशल के हिंदी भाषी जिले और राजस्थान के कोटा जिले का सिरोंज (विदिशा में) उपखण्ड मिलाकर नया मध्यप्रदेश बना जिसकी राजधानी भोपाल बनीं।

इस प्रकार वर्तमान में भारतीय उप महाद्वीप के मध्य 18^0 उत्तरी अक्षांश से 26.38^0 उत्तरी अक्षांश तक तथा 74^0 पूर्वी देशांतर से 82.30^0 पूर्वी देशांतर के बीच मध्यप्रदेश की स्थिति है। छत्तीसगढ़ बनने से पूर्व म.प्र. भारत का सबसे बड़ा राज्य था जिसका क्षेत्रफल 4,43,446 वर्ग कि.मी. था, लेकिन छत्तीसगढ़ के अलग हो जाने के कारण इसका क्षेत्रफल 3,08,252 वर्ग कि.मी. हो गया। अत: देश के कुल क्षेत्रफल में इसका हिस्सा 9.98 प्रतिशत है। सन् 1956 में कुल 43 जिले थे जबकि वर्तमान में 51 जिले व 10 संभाव है।

निष्कर्ष एवं सुझाव – राज्यों का पुनर्गठन एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। यह देश की राजनीतिक व आर्थिक व्यवस्था पर प्रभाव डालता है, अत: ऐसा पुनर्गठन स्वीकार नहीं करना चाहिए जो देश में मतभेद या तनाव पैदा करे। राज्यों के पुनर्गठन में निम्न बिंदुओं का ध्यान रखना आवश्यक है।

1. राष्ट्रीय एकता और सुरक्षा की कीमत पर पुनर्गठन नहीं होना चाहिए।
2. पुनर्गठन का मुख्य उद्देश्य प्रशासनिक सुविधा होना चाहिए।
3. संघ की इकाईयों की आत्मनिर्भरता, आर्थिक साधन, व्यापार, व्यवसाय, वाणिज्य और उद्योगों का विकास हो सके।
4. राज्यों के पुनर्गठन में वहाँ की जन-इच्छा का ध्यान रखना चाहिए।
5. यह आवश्यक है कि राज्य का आकार भोगोलिक दृष्टि से सुविधाजनक हो।

6. भारत में राज्यों के पुनर्गठन और नव निर्माण में भाषा का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। भाषायी राज्यों में सामाजिक एकता की सम्भावना अन्य आधारों की तुलना में अधिक रहती है, अत: अन्य आधारों की तुलना में भाषा का आधार उचित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जैन, डॉ. पुखराज एवं डॉ. बी.एल. फड़िया - भारतीय शासन एवं राजनीति (राज्यों की राजनीतिसहित),साहित्य भवन पब्लिकेशन : आगरा, 2007, पृष्ठ 588
2. अवस्थी, प्रो. आनंद प्रकाश - म.प्र. प्रशासन, म.प्र. हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2007, पृष्ठ 06
3. श्रीवास्तव, डॉ. रश्मि - म.प्र. शासन एवं राजनीति, कालेज बुक डिपो : जयपुर-2, 2008 2008, पृष्ठ 02
4. मध्यप्रदेश संदेश (पत्रिका) - जनसंपर्क संचालनालय, जनसंपर्क भवन, वाणगंगा भोपाल, नवम्बर -2005, पृष्ठ 03-05.
5. म.प्र. दर्शन 1956 (म.प्र. विधानसभा के ग्रंथालय से प्राप्त), पृष्ठ 01 एवं 12-14.
6. सिद्धिकी, एस.ए. - म.प्र. सम्पूर्ण अध्ययन, उपकार प्रकाशन :आगरा - 2, पृष्ठ 278-347
7. पाण्डेय आनंद कुमार एवं श्रीमती अर्चना पाण्डेय - मध्यप्रदेश, सामान्य ज्ञान संदर्भ, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथअकादमी, भोपाल, वर्ष 2016, पृ. 44.
8. गौतम राकेश एवं जितेन्द्र सिंह भदौरिया-मध्यप्रदेश एक परिचय, मैग्रा हिल एजुकेशन (इंडिया) प्रा.लिमिटेड, नई दिल्ली, 2014. पृ. 1.26-1.28.

****

वर्तमान संदर्भ में - अम्बेडकर

डॉ. अनिल कुमार जैन *

प्रस्तावना - डॉ. अम्बेडकर के मत में, लोकतंत्र शासन का एकमात्र ऐसा रूप तथा पद्धति हैं, जिसमें बिना रक्त बहाये क्रांतिकारी, सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त होता है। अत: वे राजनीतिक समानता को प्राप्त करने के लिए जनतांत्रिक व्यवस्था के प्रबल समर्थक थे। जनतंत्र बहुसंख्यकों के मतों पर निर्णय लेता है। अत: इस निर्णय प्रक्रिया में परम्परागत उपेक्षित व नकारे गये समाज अर्थात् दलितों को स्थान मिलना असंभव ही है। यह प्रजातंत्र की कमजोर कड़ी हैं। इसलिए स्वतंत्रता के समान्तर दलितों को लोकतंत्र की निर्णय प्रक्रिया में, समान अधिकार प्राप्त करा देने के लिए हिस्सेदारी मांगना जरूरी ही नहीं अपरिहार्य था। अत: स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान ही बाबा साहेब सन् 1917 से लगातार इस निर्णय प्रक्रिया में सामाजिक न्याय के रूप में, दलितों के प्रतिनिधित्व की मांग करते रहे थे। डॉ. अम्बेडकर इस निर्णय पर पहुँच गये थे कि जब तक दलितों को भारत की राजनीति में भागीदारी प्राप्त नहीं होगी, तब तक उनको अपने मानवीय अधिकार प्राप्त नहीं हो सकते है। इसलिये वे राजनीतिक मोर्चे पर दलितों के हक की लड़ाई लड़ रहे थे। इसी कारण वे कांग्रेस के राष्ट्रीय नेतृत्व के साथ-साथ रूढ़िवादी कट्टर धार्मिक हिन्दू नेतृत्व की आँख की किरकिरी भी बन गये थे। हिन्दू समाज के लिये वे सबसे घृणित खलनायक थे।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने राजनीतिक स्तर पर सर्वप्रथम सन् 1930 में लंदन में आयोजित प्रथम गोलमेज सम्मेलन में दलितों का प्रतिनिधित्व किया। दूसरे गोलमेज सम्मेलन में भी अपनी मांगे ब्रिटिश सरकार के समक्ष प्रस्तुत करते हुए दलितों के लिये 'कम्यूनल अवार्ड' प्राप्त कर हिन्दू समाज को खुली चुनौती दी। फलस्वरूप देश के महान नेता महात्मा गांधी को सन् 1932 में अपने प्राणों की बाजी लगाकर पूना में आमरण अनशन पर बैठना पड़ा। बाबा साहेब ने अन्तोगत्वा 'पूना ' द्वारा अछूतों को हिन्दू समाज का अंग मानकर सह्रदयता का परिचय दिया।

डॉ. अम्बेडकर सिर्फ दलितों के मसीहा थे। उनका कथन था 'मेरी दृढ़ प्रतिज्ञा है कि मैं उन दलितों की सेवा व हित में मरूं जिनके बीच मेरा जन्म हुआ पालन पोषण हुआ और मैं रह रहा हूँ।' दलित समस्या मूलत: हिन्दू जाति व्यवस्था की देन है, अत: जाति व्यवस्था को न्यायपूर्ण व्यवस्था में बदलने के लिए चातुर्य वर्ग की श्रृंखलाओं को तोड़ने के लिये उन्होंने अपना जीवन समर्पित कर दिया था।

अत: वे आजीवन अपनी प्रखर बुद्धिमता और तटस्थ संशोधन वृति के सहारे, जाति व्यवस्था, वर्ग व्यवस्था, अस्पृश्यों की उत्पत्ति आदि की खोजकर इनकी निर्थकता को सप्रमाण सिद्ध करते रहे। पहले अंग्रेजों से तथा बाद में भारतीय संविधान परिषद् से भी वे दलितों के राजनीतिक अधिकारों की सतत् मांग करते रहे । साथ-साथ वे विविध प्रतीकात्मक आंदोलनों, सत्याग्रहों, भाषणों, लेखों तथा पुस्तकों आदि के द्वारा दलित तथा सवर्णो के वैचारिक परिवर्तन के लिये प्रयत्न करते रहे।

सन् 1927 में अम्बेडकर ने दलितों के प्रति सामाजिक अन्याय के एक बड़े प्रकरण में, जिसमें महाड़ में पानी जैसे प्राकृतिक संसाधन को अछूतों के लिए निषिद्ध किये जाने के खिलाफ अहिंसक सत्याग्रह किया। चवदार तालाब की ओर 10,000 सत्याग्रही स्त्री पुरूषों के साथ प्रयाण कर अम्बेडकर ने सामूहिक रूप से तालाब का पानी पिया। 25 दिसम्बर 1927 को महाड़ के द्वितीय सम्मेलन में, बाबा साहब के नेतृत्व में मनुस्मृति को चिता पर रखकर, सार्वजनिक रूप से जलाया गया। ये दोनों घटनाऐं दलितों के बहु आयामी उत्थान के संदर्भ में ऐतिहासिक महत्व की है। भारत के इतिहास में, दलित वर्ग के प्रति सदियों से हो रहे अमानवीय आचरण के विरूद्ध, मुखर आक्रोश और विद्रोह के स्वर पहली बार वातावरण में गूंजे। सुधार और सैद्धांतिक आदर्शवाद के आधार पर अब तक भारत में हुए दलित विमर्श ने पहली बार हिन्दू धर्म के आडम्बर को सार्वजनिक रूप से आग लगाकर विद्रोह का बिगुल फूंका। जिसने वस्तुत: सर्वहारा वर्ग के जागरण का शंखनाद किया। मनु स्मृति को चिता पर रखकर जलाने की घटना पर धंनजय कीर ने लिखा है कि यह मार्टिन लूथर के बाद धरती पर स्वार्थी धर्म स्थितियों, परम्परा उन्मादियों तथा परिवर्तन विरोधियों के प्रति महान देश द्रोही धमाकों में से एक था। महाड़ सत्याग्रह के बाद अम्बेडकर हिन्दूओं की आँख की किरकिरी बन गये थे। बाबा साहब ने गांधी द्वारा दलितों को 'हरिजन' शब्द देने का भी विरोध किया था। वे इसे राजनीतिक चाल समझते थे।

बाबा साहब ने संविधान रचियता के रूप में दलितों को समानता का अधिकार तो दिया पर यहां उनका लक्ष्य पूरा नहीं हुआ था। वे कहते है '26 जनवरी के दिन हम अन्तर्विरोधों के एक जीवन में प्रवेश कर रहे हैं। राजनीति में जहां हमें समानता प्राप्त होगी। राजनीति में हम जहां एक मनुष्य, एक मत और एक मूल्य स्वीकार रहे होगें । वहां सामाजिक और आर्थिक जीवन में अपनी धार्मिक व सामाजिक संरचना के कारण एक मनुष्य, एक मूल्य के आदर्श को अस्वीकार करते होगें।'

इस अंतर्विरोध को भारतीय हिन्दू समाज की परम्परागत वर्ण व्यवस्था और जाति व्यवस्था में मिटाना लगभग असंभव था। सामाजिक, आर्थिक असमानता तथा दलितों के प्रति शोषण व अन्याय मिटाने के हमारे संतो, ऋषियों,महात्माओं, समाज सुधारकों यहाँ तक कि भगवान बुंद्ध व महावीर के प्रयास भी नैतिक व आदर्शवादी होने पर भी सफल नहीं हुए थे। ऐसी स्थिति में सामाजिक रोग के मुख्य कारण , हिन्दू धर्म की सामाजिक रचना से मोह भंग होने से बाबा साहब ने बौद्ध धर्म अपनाने का निर्णय लिया, जिससे सांप भी मरे और लाठी भी नहीं टूटे। इस निर्णय से वे हिन्दू धर्म की, दलित संज्ञा से मुक्त होकर भी, भारतीय मूल के बौद्ध धर्म अर्थात् भारतीय संस्कृति और संस्कार से जुड़े रह सके। बाबा साहब ने इस प्रसंग में मुस्लिम व ईसाई धर्म के प्रलोभनों को एक सिरे से खारिज करते हुए अपनी राष्ट्रीय अस्मिता के प्रति प्रबल निष्ठा व मोह का परिचय दिया है।

बाबा साहेब ने 14 अक्टूबर 1956 को विजया दशमी पर्व पर नागपुर में अपने लाखों अनुयायिओं के साथ बौद्ध धर्म की दीक्षा लेकर मानव धर्म

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

अंगीकार किया। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि धर्म परिवर्तन के प्रति समग्र भारतीय जनमानस की अश्रृद्धा व अस्वीकृति की मानसिकता के कारण बाबा साहेब को धर्म परिवर्तन से अपेक्षित परिणाम नहीं मिल पाये। धर्म के लिये प्राण दे देना भारतीय संस्कृति का एक जीवन मूल्य है। हिन्दू धर्म के प्रति विरोध भावना और बौद्ध धर्म ग्रहण कर लेने पर डॉ. अम्बेडकर का दृष्टि कोण मूलत: धर्म निरपेक्ष ही बना रहा। अम्बेडकर ने धर्म परिवर्तन का कार्य दलितों के लिये सम्मान की स्थिति और अलग पहचान स्थापित करने के लिए किया था। मुक्ति या अन्य किसी धार्मिक लक्ष्यों को प्राप्त करना उनका उद्देश्य नहीं था। उनका स्पष्ट मत था कि दलित जब तक हिन्दू है, तब तक सम्मानपूर्ण जीवन जीना उसके लिये संभव नहीं है। अत: यह पहचान बदलने का प्रयास मात्र था।

यह सच है कि भारत में दलितों को हिन्दू धर्म की मनुवादी संरचना ने, गुलामों तथा पशुओं से भी बदतर स्थिति में पहुँचा दिया था। बाबा साहेब स्वयं इस स्थिति के भुक्त भोगी थे। अत: आजीवन हिन्दू धर्म के प्रति उनके मन में तीव्र आक्रोश रहा। अत: दलितों के लिये सत्ता में पृथक प्रतिनिधित्व की अपनी प्रमुख मांग के कारण उन्होंने कांग्रेस तथा महात्मा गांधी का विरोध किया था और कुछ अवसरों पर इस विरोध में उनके मन में कटुता भी रही थी। कांग्रेस और गांधीजी दलित वर्ग को हिन्दू समाज का अभिन्न अंग बनाये रखने के प्रति दृढ़ प्रतिज्ञ थे। गांधीजी व देश का समस्त हिन्दू समाज विघटन के विरूद्ध था। पूना का गांधीजी का आमरण अनशन इसका प्रमाण हैं। कांग्रेस का मुख्य लक्ष्य देश की राजनीतिक स्वतंत्रता था। अम्बेडकर भी राजनीतिक स्वतंत्रता के विरोधी नहीं थे, लेकिन उनकी दृष्टि में दलितों का स्वतंत्रता प्राप्त सत्ता में प्रतिनिधित्व राजनीतिक स्वतंत्रता से अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न था। बाबा साहेब कांग्रेस को शोषक व शोषितों की जमात मानते थे। जो राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए ठीक थी, लेकिन समाज के पुन: निर्माण में इसकी भूमिका अविश्वसनीय तथा नकारात्मक ही थी। अत: इस आधार पर अम्बेडकर के देश प्रेम तथा उनकी स्वतंत्रता के प्रति निष्ठा पर संदेह का कोई औचित्य नहीं है। यद्यपि उन्होंने सन् 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन का भी मुखर विरोध किया था।राजनीतिक पटल पर बाबा साहब का आविर्भाव सिर्फ दलितों के उद्धारक के रूप में था। इसलिये स्वतंत्रता आंदोलन के मध्य गांधी ओर कांग्रेस से टकराकर दलितों के प्रति न्याय का प्रश्न स्वतंत्रता आंदोलन से अलग हटकर उन्होंने उठाया। सामाजिक न्याय के महत्वपूर्ण संदर्भ में 'सत्यमेव जयते' के कारण वे अहिंसक सफलता प्राप्त करने में सफल हो गये। आजादी के बाद उनका नेहरू मंत्रीमण्डल में सम्मिलित होना, कांग्रेस की सहायता से संविधान सभा के लिए निर्वाचन तथा संविधान की प्रारूप समिति का अध्यक्ष चुना जाना इसके प्रमाण है। इस पर भी वे कहते है, 'मैं संविधान परिषद् में क्यों आया ? सिर्फ अछूत वर्ग के हितों के संरक्षण के लिए।' जो काम युगों के अथक प्रयासों के बाद भी भारत के संत, समाज सुधारक तथा महापुरूष नहीं कर पाये थे, वह सहज ही सबकी सहमति से बाबा साहब ने संविधान के कानूनी प्रावधान के दायरे में सभी भारतीयों के लिए समानता के अधिकार के माध्यम से प्रदान कर दिया।

दलितों को मानव अधिकारों की सौगात संविधान के माध्यम से अवश्य प्राप्त हो गयी थी, परन्तु जमीनी सच्चाई में वे आज भी वंचित ही हैं, क्योंकि सामाजिक संरचना के व्यवहारिक धरातल पर लोकतंत्र में भी समता के आर्थिक अधिकारों के अभाव में वे सत्ता में भागीदारी प्राप्त करने में असमर्थ थे। यह सच है कि जाति प्रथा के घोरतम विरोधी बाबा साहेब ने अछूत जातियों के लिए आरक्षण का ऐसा रक्षा ताबिज उपलब्ध करा दिया, जिसने भारतीय लोकतंत्र की दशा और दिशा में आमूल परिवर्तन उपस्थित कर दिया। इस आरक्षण की अपूर्व विशेषता यह है कि इसे हजम करना उतना ही कठिन है जितना इसे अस्वीकार करना। यही कारण है पूरे देश का राजनैतिक नेतृत्व यह स्वीकार करता है कि जो बाबा साहेब के दलितोउद्धार के इस अमृत के साथ छेड़छाड़ करेगा वह स्वयं समाप्त हो जावेगा। सच में वे आधुनिक युग के मनु है। जिस तरह मनु की संरचना का आदर्श कुछ और था और व्यवहार में उसका रूप विकृत हुआ संभव है बाबा साहेब का आरक्षण मंत्र भी समता के सार्वभौम मानवाधिकार के सामने घूटने टेक दे। वस्तुस्थिति यह बन रही है कि भीमराव अम्बेडकर के अकेले प्रयास से जो दलितों को उपलब्ध हो गया है, उसे सही दिशा देने में उनके अनुयायी में कोई विश्वसनीय नाम सामने नहीं आया है। अछूतों के ऊपर युगो-युगो से होते अमानवीय व्यवहारों से अम्बेडकर अकेले चिंतित और व्यथित थे। उन्होंने जिस कर्मठता से साधनहीन और शक्तिशाली संगठन के अभाव में अछूतों की समस्या को सुझ बुझ और उचित समय पर उचित मंच पर उठाया। उसी का फल है आज इस वर्ग की स्थिति से कोई इंकार नहीं कर सकता। शायद अम्बेडकर यदि दूर दृष्टि और पक्के इरादे से अपने पूरे सामर्थ्य को दांव पर नहीं लगाते तो इतने कम समय में इतने पुराने और विकृत मर्ज की यथा शीघ्र उपचार की संभावना नहीं हो सकती थी।

अत: यह प्रश्न किया जा रहा है कि वर्तमान में अम्बेडकर की प्रासंगिकता क्या है ? भारतीय समाज की परम्परा, उसकी संवैधानिक पीठिका तथा उसके व्यवहारिक स्वरूप एवं प्रकार्यात्मक अनुकरण में गहरी खाई है। समाज के एक वर्ग द्वारा शताब्दियों से उपेक्षा, उपहास, निन्दा, तिरस्कार एवं घृणा का दर्द बहुसंख्यक वर्ग से सहा है। उसने कुण्ठा ग्रस्त जीवन व्यतीत किया है। डॉ. अम्बेडकर ने दलित विमर्श के इतिहास में पहली बार इस खाई को समाप्त करने में जहाँ राजनीतिक स्तर पर पूरी तरह तथा सामाजिक, धार्मिक स्तर पर आंशिक सफलता प्राप्त की है। वहीं अब इस वर्ग को शिक्षित करने, संगठित करने तथा सामाजिक आर्थिक अधिकारों के लिए संघर्ष का मार्ग प्रशस्त करने के लिए अम्बेडकर के पुन: आविर्भाव की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर संपूर्ण वाड्मय खण्ड 1-10, नईदिल्ली 1993.
2. सांभरिया रत्नकुमार : डॉ.अम्बेडकर : एक प्रेरक जीवन, डॉ.अम्बेडकर साहित्य अकादमी जयपुर, 1991
3. कीर धनेजय : डॉ. अम्बेडकर : लाईफ एण्ड मिशन, पोप्यूलर नईदिल्ली.
4. अम्बेडकर डॉ. भीमराव जी : बुद्ध और उनका धम्म, नागपुर 2010
5. जाटव डॉ. जी.आर. - राष्ट्रीय आंदोलन में अम्बेडकर की भूमिका, संपदा साहित्य सदन, जयपुर (1996) पृष्ठ 27
6. अम्बेडकर भीमराव : अछूत कौन और कैसे , बहुजन कल्याण प्रकाशन लखनऊ 1989 पृष्ठ 16-40
7. जाटव डॉ. जी.आर. - डॉ. भीमराव अम्बेडकर व्यक्तित्व एवं कृतित्व सयंपदा साहित्य सदन - जयपुर (द्वितीय संस्करण)
8. खिमेसरा डॉ. ज्ञानचंद : डॉ. अम्बेडकर का आर्थिक विकास सिद्धान्त मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल.
9. ठेंगड़ी दत्तोपंत : डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर : लोकहित प्रकाशन लखनऊ, पृष्ठ 15-16
10. वर्मा वी.पी. : आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन : लक्ष्मीनारायण अग्रवाल एण्ड संस आगरा पृष्ठ 346
11. अम्बेडकर डॉ. भीमराव : जाति भेद का विनाश , पृष्ठ 38
12. अम्बेडकर डॉ. भीमराव शुद्र कौन थे, पृष्ठ 70।

जनजातीय आंदोलन एवं विकास

डॉ. महेन्द्र सिंह चौहान *

प्रस्तावना – 'जनजातीय आंदोलन जनजाति समाज अथवा उसके समस्त सदस्यों में परिवर्तन लाने अथवा उसका विरोध करने का सामूहिक प्रयास है।'

– हार्टन एण्ड हण्ट

जनजातीय समाज द्वारा किये जाने वाले आंदोलनों को ही जनजातीय आंदोलन कहा जाता है। आंदोलन सामूहिक व्यवहार का स्वरूप है। आंदोलन का उद्देश्य सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक क्षेत्रों में आंशिक अथवा आमूलचूल परिवर्तन लाना हो सकता है। भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के परिणाम स्वरूप ही वर्ष–1947 में देश आजाद हो सका। बाह्य जगत के सम्पर्क के कारण जनजाति क्षेत्रों में उत्पन्न हुई भूमि पृथककरण जनजातिय विस्थापन, पुनर्वास, निर्धनता, धर्म परिवर्तन आदि के कारण जनजातीय समाज आंदोलन के लिये बाध्य हुआ है। जनजाति समाजों द्वारा अपने पर्यावरण, संस्कृति एवं आर्थिक व्यवस्था के कारण उत्पन्न समस्या के मुक्ति हेतु तथा अपने जल, जंगल, जमीन, जन, जानवर के संरक्षण हेतु समय–समय पर जनजाति समाज आंदोलन करता आ रहा है।

परिभाषाऐं – थियोडोरसन के अनुसार – जनजातीय आंदोलन सामूहिक व्यवहार का एक महत्वपूर्ण स्वरूप है, जिससे परिवर्तन लाने अथवा उसका विरोध करने में सहयोग देने के लिये लोगों को बहुत बड़ी संख्या में संगठित अथवा जागरूक किया जाता है।

केमरून के अनुसार – 'समाज संदर्भ में जनजाति आंदोलन एक सामाजिक क्रिया एवं सामूहिक प्रयास है, जो एक विशिष्ट परिस्थिति की देन है।'

स्पष्ट है कि जनजाति आंदोलन का उद्देश्य जनजाति समाज अथवा संस्कृति में कोई आंशिक अथवा पूर्ण परिवर्तन लाना अथवा परिवर्तन का विरोध करना होता है।

राजनीतिक विज्ञान के विशेषज्ञ श्री सुरजीत सिन्हा ने जनजाति आंदोलनों को 5 भागों में बाँटा है –

- सामाजिक सुधार आंदोलन।
- अलगाववादी आंदोलन।
- भूमि सुधार, शोषण के विरूद्ध आंदोलन।
- नृजातीय, बगावत सम्बन्धी आंदोलन।
- स्वशासन हेतु आंदोलन।

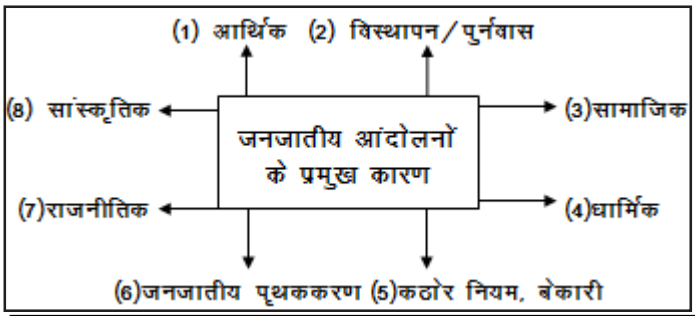

जनजातीय आंदोलन की प्रमुख विशेषताएँ

- सामाजिक परिवर्तन का एक स्वरूप
- निश्चित उद्देश्य
- संकट अथवा तात्कालिक समस्या के कारण
- सामूहिक प्रयास
- नियोजित प्रयत्न
- औपचारिक संगठन
- एक निश्चित विचारधारा, विश्वास, मूल्य, मतों का संग्रहण
- सुधारात्मक प्रकृति का होना।

देश के प्रमुख जनजाति आंदोलन :

1. **संथाल आंदोलन –** बिहार का संथाल परगना। सन् 1875 में 'सिदू–कान्हू' के नेतृत्व में। दिकू (विदेशियों) को मारो प्रमुख नारा था। स्थानीय शोषण के खिलाफ किया गया था। परिणामस्वरूप ब्रिटिश ने सरकार सुधार प्रक्रिया लागू की।
2. **ताना भगत आंदोलन –** धार्मिक आंदोलन वर्ष 1914 में छोटा नागपूर के पश्चिमी क्षेत्र में उराँव जनजाति द्वारा स्थानीय जमीदारों, पुलिस शोषण के खिलाफ किया गया। उराँव भगत प्रमुख नेता था। ताना का अर्थ एक साथ खींचना होता है।
3. **बिरसा मुण्डा आंदोलन –** राँची, संथाल परगना क्षेत्रों में मुण्डा जनजाति द्वारा स्थानीय जमींदारों के शोषण, अत्याचार के खिलाफ किया गया। बिरसा नामक मुण्डा युवक द्वारा विद्रोह की शुरूआत। 1899 में सशस्त्र हमला, गिरफ्तार, जेल में मृत्यु 9 जून 1900 को।
4. **झारखंड आंदोलन –** 20वीं शताब्दी में झारखंड राज्य की पृथक स्थापना, राजनीतिक, असंतुलन, शोषण के विरूद्ध, नवम्बर 2000 में पृथक झारखण्ड राज्य का गठन।
5. **नागा आंदोलन –** पूर्वोत्तर भारत में नागा जनजाति द्वारा पृथक नागालैण्ड राज्य की स्थापना हेतु। 1918 में कोटिमा में नागा क्लब की स्थापना की गई। नागा स्वयं को हिन्दू, मुस्लिम से अलग मानते हैं।
6. **सिधवां आंदोलन –** छत्तीसगढ़ के आदिवासी गौंडों ने जल, जंगल, जमीन के लिये संघर्ष किया। सिघवां क्षेत्र में नेतृत्व सुखराम नागे द्वारा किया गया। शासन ने 1954 में पट्टे बाँटे।
7. **मिजो आंदोलन –** मिजोरम राज्य की लुशाई पहाड़ी का जनजाति समाज मिजो उपनाम नागा, आंदोलन से प्रेरित हुआ। आंदोलन का आधार

*अतिथि विज्ञान (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, भानपुरा, जिला – मंदसौर (म.प्र.) भारत

भाषावाद था। लालिडेंगा के नेतृत्व में आंदोलन हुआ, परिणामस्वरूप 1986 में मिजोरम पृथक राज्य बना।

8. **सतनामी आंदोलन –** छत्तीसगढ़ में सतनामी सम्प्रदाय द्वारा सतू अर्थात् सत्य और नामी ईश्वर आधार पर धार्मिक, किसान विद्रोह किया गया, आर्थिक लगान वसूलने का विरोध इसमें हुआ।

9. **कोया आंदोलन –** दक्षिण भारत में विशाखापटनम् में वर्ष 1862 में कोपा जनजाति द्वारा ताड़ वृक्ष से ताड़ी निकालने पर टैक्स, सूदखोरी, ऋण पर अधिक ब्याज देने के विरूद्ध किया गया।

10. **चिपको आंदोलन –** उत्तरांचल में गढ़वाल/कुमाँऊ क्षेत्र के जनजाति समुदाय भोटिया, जनजाति द्वारा। वर्ष- 1962 में चीन आक्रमण, जंगलों की अवैध कटाई, 1970 में अलकनंदा में भीषण बाढ़ आदि प्रमुख कारण रहे हैं। श्री सुन्दरलाल बहुगुणा का पेड़ों से चिपकना इस आंदोलन का केन्द्रीय तत्व रहा है।

विकास प्रक्रिया – भारत देश में स्वतंत्रता के पूर्व और स्वतंत्रता प्राप्ति के पष्चात् हुऐ विभिन्न जनजाति आंदोलनों ने जनजातीय जीवन के सभी पक्षों यथा सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक, मनोवैज्ञानिक प्रषासनिक, शैक्षणिक, व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामुदायिक, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय आदि सभी को प्रभावित किया है। इन आंदोलनों के द्वारा विकास प्रक्रिया तीव्र गति से आगे बढ़ी है। विकास प्रक्रिया के महत्वपूर्ण परिणाम निम्नवत रहे हैं :-

जनजातीयों में जागरूकता का विकास।
अंधविश्वास, जादू, टोने, टोटकों में कमी ।
वैज्ञानिक दृष्टिकोण का तीव्र विकास।
सही, गलत सोचने समझने की क्षमता का विकास।
जनजाति नेतृत्व को राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त हुई।
जमीनों की खरीद-बिक्री पर रोक, जनजातीय क्षेत्रों में लगी है।
सूदखोरी, बंधुआ मजदूरी, मानव खरीदी-बिक्री अपराध घोषित।

जनजाति आंदोलनों के कारण ही नागालैण्ड, मिजोरम, छत्तीसगढ़, झारखंड, उत्तराखण्ड, तेलंगाना राज्यों का गठन संभव हो सका है।

निष्कर्ष – जंगलों में निवास करने वाले घोटुल, युवाग्रह, धूमकुरिया के निर्माता, वधूधन के समर्थक, प्रकृति प्रेमी, नृत्य संगीत, लोकगीत, लोक पर्व भगोरिया पसंद करने वाले आदिवासी भाई-बहन आंदोलनकारी भी हो सकते हैं, आम लोगों को नक्सली बनकर मार भी सकते हैं। इस बात पर सहसा यकीन नहीं होता है। जरूरी है कि उन कारणों का अध्ययन, विश्लेषण, विवेचन करने की जिसके कारण एक आदिवासी शान्त जीवन जीवनयापन करने वाला युवा आंदोलनकारी बन जाता है। हजारों वर्षों से जनजातीय जीवन जल, जंगल और, जमीन के बीच व्यतीत होता आया है लेकिन वर्तमान समय के तीव्र नगरीकरण, औद्योगिकरण, आधुनिकीकरण प्रक्रियाओं ने सामाजिक, संस्कृति, राजनीतिक परिवर्तनों को बढ़ावा दिया है। आर्थिक उदारीकरण प्रक्रिया ने जनजातीय आर्थिक जीवन में परिवर्तनों को तीव्र कर दिया है। आज आवश्यकता इस बात की है कि जनजातीयों के सर्वांगीण विकास हेतु स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप विकास योजनाओं, कार्यक्रमों, अभियानों को निर्मित कर उनका प्रभावी क्रियान्वयन सुनिष्चित किया जाना जरूरी है। जनजातीय समस्याओं को और अधिक उलझाना नहीं, सुलझाना होगा। जनजातीयों को दुत्कारना नहीं स्वीकारना होगा, तभी भारत माँ की इन संतानों की आँखों से आँसू पोछकर हम इन्हें आंदोलन, नक्सलवाद के मार्ग से हटाकर भारत राष्ट्र के विकास की मुख्यधारा में शामिल कर करने में सफल हो सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वर्मा, रूपचन्द - भारतीय जनजातियाँ अतीत के झरोखे से, पृष्ठ-95।
2. सुमन, संजय - जनजातियाँ, सामान्य ज्ञान, उपकार प्रकाशन, आगरा, वर्ष-2014।
3. योजना, कुरूक्षेत्र मासिक पत्रिका, भारत सरकार, नई दिल्ली का प्रकाषन।
4. सिविल सर्विस क्रॉनिकल पत्रिका, संस्करण-नवम्बर-2015।
5. हसनैन, नदीम - जनजातियों भारत, उपकार प्रकाशन, आगरा (उ.प्र.)
6. इंटरनेट पर उपलब्ध शोध विषय संबंधित जानकारियाँ।
7. रिसर्च जर्नल्स से प्राप्त शोध आँकड़े।
8 केस स्टडी अध्ययन, शोध प्रबंध से प्राप्त शोध अध्ययन सामग्री।

****

विन्ध्य प्रदेश के राजनीतिक नेतृत्व की प्रकृति एवं उसके निर्धारक कारक (सतना जिले के विशेष सन्दर्भ में)

मनोज कुमार रवि *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध का उद्देश्य अनछुए निर्धारक तत्वों को उजागर करना है, जो विन्ध्य की राजनीतिक प्रकृति को निर्धारित करते हैं और प्रभावित करते हैं। इसमें विन्ध्य के राजनीतिक नेतृत्व के स्वरूप को समग्र राष्ट्रीय राजनीतिक प्रकृति से भी जोड़ा गया है। किसी भी राजनीतिक व्यवस्था के आधारभूत चरित्र का निर्माण उसके पर्यावरणीय तत्वों से निर्धारित होता है। इसलिए इसमें विन्ध्य के राजनीतिक नेतृत्व के उन पर्यावरणीय कारकों पर भी प्रकाश डाला गया है, जो इस प्रदेशा के राजनीतिक प्रकृति को प्रभावित करते है। राजनीतिक व्यवस्था सामाजिक व्यवस्था का उपभोग होती है और इस व्यवस्था से घिरी रहती है। अत: इसमें विन्ध्य की सामाजिक व्यवस्था को भी स्पष्ट किया गया है। इसमें विन्ध्य की राजनीतिक प्रकृति में आ रहे अनावशयक अलोकतंत्रीय तत्वों पर भी प्रकाश डाला गया है।

शब्द कुंजी – विन्ध्य की राजनीतिक व्यवस्था प्रकृति व उसके निर्धारक तत्व एवं भावी स्वरूप, संभावनाएँ।

प्रस्तावना – भारतीय राज्य व्यवस्था में 29 राज्य एवं 7 केन्द्रीय शासित प्रदेश हैं, इसके मध्य भाग में म.प्र.राज्य स्थित है, जिसका उत्तरी-पूर्वी भाग विन्ध्य प्रदेश कहलाता है, इसके केन्द्र में सतना जिला है। इस प्रदेश के राजनीतिक परिदृश्य व प्रकृति और भूमिका की झलक हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन में भी दिखती है।[1] विन्ध्य की राजनीतिक संरचनाओं का निर्माण विन्ध्य की सामाजिक संरचनाओं से हुआ है, चूँकि विन्ध्य की सामाजिक संरचना परंपरावादी है। अत: इसकी राजनीतिक संरचनाएँ और राजनीतिक संरचनाओं के अभिनेता, अभिकर्त्ता भी परंपराओं से प्रभावित व संचालित हैं।[2] वैसे तो यहाँ के के मुख्य अभिजन बघेल व ब्राम्हण समाज के नेता हैं,[3] किन्तु जैसे-जैसे हमारा लोकतंत्र आगे बढ़ रहा है, तो इनके स्थान पर छद्म रूप में ये ही या नए-नए किरदार सामने आ रहे हैं और वास्तव में इस प्रदेश के ये किरदार और उनकी राजनीति राष्ट्रीय राजनीति की बानगी है।[4] इस बानगी की दखल राष्ट्रीय आंदोलन के समय से ही राज्य राजनीति और राष्ट्रीय राजनीति में भी रही है।[5]

शोध-प्रविधि – इस शोध के लेखन हेतु अनुभाविक प्रविधि का अपयोग किया गया है और तत्वों का संकलन प्राथमिक व द्वितीय आकड़ों पर आधारित है।

परिणाम- इक्कीसवीं शाताब्दी की विन्ध्य की राजनीतिक प्रकृति वैविध्यपूर्ण और परिवर्तन वादी लक्षणों से युक्त है, इसका कारण यह है कि यहाँ के राजनीतिक नेतृत्व की प्रकृति के निर्धारक तत्व एक नहीं बल्कि अनेक तत्व हैं।[6] ये तत्व हैं-सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक व अलोकतंत्रीक इत्यादि। वर्तमान समय में यहाँ की राजनीतिक गतिविधियों में कुछ अपराधिक तत्व भी समाहित हो गये हैं,[7] क्योंकि विशेषतया संकट की अवस्थाओं में लोकतंत्र में लोकप्रिय समर्पण का भी कुछ अंश प्रवेश पा लेता है।[8] वर्तमान में यहाँ के राजनीतिक नेतृत्व की प्रकृति और स्वरूप का कोई प्रतिमान नहीं है।

कारण यह है कि यहाँ की राजनीतिक संरचनाएँ और अभिकर्ता अभी संक्रमण काल से गुजर रहे हैं। राजनीतिक दृष्टि से विन्ध्य प्रदेश बड़ा उपजाऊ प्रदेश रहा है, इस प्रदेश में यहाँ एक ओर गोविन्द नारायण सिंह जैसे मुख्यमंत्री हुए, वहीं दूसरी ओर अर्जुन सिंह जैसे केन्द्रीय मंत्री भी निर्वाचित हुए।[9] वर्तमान में रीवा जिले से राजेन्द्र शुक्ल जी कई वर्षों से मप्र.सरकार में मंत्री पद को सुशोभित कर रहे हैं। इसी प्रकार नागौद रियासत के नागेन्द्र सिंह (जूदेव) का नाम भी उल्लेखनीय है।[10] रीवा संसदीय सीट से भीम सिंह पटेल एवं सतना संसदीय सीट से सुखलाल कुशवाह जैसे ऐतिहासिक नेता भी उल्लेखनीय हैं। यहाँ के राजनीतिक नेतृत्व में कांग्रेस के वर्चस्व का स्थान भाजपा ने ले लिया है। काँग्रेस के धीरे-धीरे खिसकता जा रहा है जनाधार के क्रमश: ह्रास प्रमुख कारण पिछले काँग्रेस के शाासन के कार्य व्यवहारों का प्रभाव है।[11] अत: म.प्र. की राजनीतिक सत्ता में काँग्रेस शाासन की वापसी की संभावनाएँ आने वाले कुछ वर्षों तक नहीं दिखती है।[12] अत: इस जनाधार की स्थिति में भविष्यगत परिवर्तन पर इक्कीसवीं सदी के विन्ध्य के काँग्रेसी नेतृत्व का भविष्य पर निर्भर रहेगा। वर्तमान समय की राजनीति में मूल्यों का ह्रास हो रहा है और जोड़-तोड़, विशेषकर जातियता व समकालीन समस्याएँ और घोषणाएँ केन्द्रीय तत्व रहे हैं।[13] वैसे तो इस प्रदेश के राजनीतिक दलों की भिन्न-भिन्न नीतियाँ और अपने-अपने नेता हैं, किन्तु चुनाव के समय सभी दलों की चुनावी घोषणाएँ एक जैसी लोक-लुभावन होती है।[14] और अपनी जीत सुनिश्चित करने के लिए सभी नेताओं द्वारा हर प्रकार के हथकंड़ों का उपयोग किया जाता है। इसी प्रकार यहाँ के नेताओं का एक वर्ग विन्ध्य प्रदेश को अलग प्रदेश के रूप में गठन की माँग कर रहा है।[15]

निष्कर्ष एवं सुझाव- उपरोक्त आँकड़ो से स्पष्ट होता है कि विन्ध्य के राजनीतिक नेतृत्व का स्थान राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान से ही महत्वपूर्ण व केन्द्रीय महत्व का रहा है। इसकी राजनीतिक प्रकृति पर सामाजिक व्यवस्था का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। आज इसकी प्रकृति का कोई निश्चित मॉडल नहीं है, और यहाँ की राजनीति राष्ट्रीय राजनीति से प्रभावित रही है और राष्ट्रीय राजनीति को भी प्रभावित कर रही है। यहाँ की राजनीति बड़ी ऐतिहासिक और उथल-पुथल से युक्त है, और इसमें समकालीन तत्वों का समावेशा बढ़ता जा रहा है। अलोकतंत्रीय तत्व, चुनाव में अवैध साधनों का प्रयोग असमाजिक तत्व व भ्रष्टाचार एवं अलग राज्य की मांग आदि तत्व

* शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

प्रमुख है। यह सब इसलिए है कि समय अपने रूप ही नेतृत्व पाता है। यहाँ की जनता जैसा नेतृत्व चाहती है, वैसा नेतृत्व प्राप्त होता रहता है। यही हमारे लेकतंत्र और विकासशील राज्यों की विडंबना और विसंगति और विशेषता है।

आभाररोक्ति– इस शोध के लेखन में हमारे पूज्यगुरू जी डॉ. धीरिन्द्र सिंह एवं प्राचार्य डॉ. सतेन्द्र शर्मा सर, डॉ. ममता शर्मा आदि प्राध्यापकों ने बहुत सहयोग किया है। इसके सुस्पष्ट टाइपिंग में श्री संजय चौधरी ने सहयोग किया है। हम इन सभी प्राध्यापकों व विद्धतजनो के प्रति हार्दिक अभार व्यक्त करते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 31 .6.2013, पृष्ठ –2
2. स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 25.4.2013, पृष्ट–2
3. स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 26.04.2013, पृष्ठ–2
4. स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 31.06.2013, पृष्ठ–2
5. स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 31.06 2013, पृष्ठ–2
6. स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 25.04.2013, पृष्ठ–2
7. स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 27.09.2013, पृष्ठ–3
8. गेना, डॉ.सी.बी, तुल्नात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ, प्रकाशक वर्ष – 1980, प्रकाशक वि.व.हा.साहिबावाद, पृष्ठ–44
– स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 27.09.2013, पृष्ठ–3
– स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 29.11.2013, पृष्ठ–3
9. स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 16.04. 2013, पृष्ठ–3
– स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 09.03.2014, पृष्ठ–3
10. स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक, 29.11.2013, पृष्ठ–3
11. स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 27.09.2013, पृष्ठ–3
12. स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 27.09.2013, पृष्ठ–3
– स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 15.09.2013, पृष्ठ–3
13. स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 07.02. 2016, पृष्ठ–12
14. स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 07.02. 2016, पृष्ठ–12
15. स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 11.04.2014, पृष्ठ–3
16. स्टार समाचार पत्र, सतना, दिनांक 25.04.2013, पृष्ठ–2

****

भारतीय राष्ट्रवाद के आध्यात्मिक पैगम्बर स्वामी दयानन्द सरस्वती

डॉ. अनिल कुमार जैन *

प्रस्तावना – आर्य समाज के संस्थापक, भारतीय राष्ट्रवाद के आध्यात्मिक पैगम्बर, भारत में सामाजिक न्याय के अग्रदूत, विश्व में वेद ज्ञान के प्रामाणिक स्वामी दयानन्द सरस्वती, मूलरूप में भारत में नव–आध्यात्मिक जागृति के मार्टिन लूथर माने जाते है। जिस प्रकार लूथर ने शाश्वत सत्य के आधार पर बाइबिल के सिद्धांतो की व्याख्या की थी, उसी प्रकार दयानन्द ने सनातन सत्य को, वेद ज्ञान के आधार पर उद्घाटित किया। हिन्दू धर्म और हिन्दू समाज में उन्होंने नव क्रांति उत्पन्न की। स्वामी ने भारतीयों को वेदों के माध्यम से न सिर्फ अपने सांस्कृतिक गौरव से परिचित कराया, वरन् वेदों की ओर लौट चलने का आव्हान भी किया।

इसा निर्भय योगी ने भारत में पहली बार विदेशी धर्मो द्वारा हिन्दू धर्म के प्रति किये जाने वाले अनर्गल प्रचार के प्रति, उत्तर में वेदो की सर्वोच्चता प्रमाणित की तथा आक्रान्ताओं की भाषा में ही उन्हें दो टूक शब्दों में उत्तर भी दिया। स्वामीजी ने जोर देकर कहा 'आर्य विशिष्ट' जाति है, वेद विशिष्ट ग्रंथ है, आर्यावर्त विशिष्ट भूमि है। अत: वे भारत में विद्यार्थियों की किसी भी प्रकार की धार्मिक सांस्कृतिक घूसपैठ को सहन करने के लिए बिलकुल तैयार नहीं थे। यहां तक कि उन्होंने निर्भय होकर पुरर्णो,जैन–बौद्ध ग्रंथों, बाइबिल, कुरान एवं नव ब्रह्य समाज आदि की सभी असंगतियों की खुलकर कठोर शब्दों में आलोचना की। रोमा रोला का कहना है कि 'दयानन्द अपने देश अथवा विदेश के प्राचीन या आधुनिक किसी भी उस निवासी के प्रति दया की भावना नहीं रखते थे, जिसने किसी न किसी रूप में, भारत के हजार वर्ष के पतन में योगदान दिया था। वह भारत जो किसी समय विश्व गुरू था।'

स्वामी दयानन्द द्वारा स्थापित संस्था आर्य समाज का मुख्य लक्ष्य यही था कि तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था के अराजक स्वरूप को सुव्यवस्थित संरचना में परिवर्तित किया जावें। सच तो यह भी है कि दयानंद का आर्य समाज इसके साथ ही धार्मिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय पुनर्जागरण का आंदोलन भी बन गया था। आर्य समाज द्वारा देश में स्वराज्य के विभिन्न कार्यक्रमों का प्रमुखता से क्रियान्वयन ही उसकी राष्ट्रवादिता की भावना की सच्ची अभिव्यक्ति है। स्वदेशी प्रचार, बहिष्कार आंदोलन, राष्ट्रीय शिक्षण परम्परा, गुरूकुल प्रणाली, स्त्री शिक्षा को प्रोत्साहन, समाज सुधार, दलितोद्धार, अस्पृश्यता निवारण आदि आर्य समाज के ऐसे अनेक ठोस रचनात्मक कार्यक्रम रहे है, जिनके माध्यम से राष्ट्रीय आंदोलन जन–जन से सीधे जुड़ गया। वास्तविकता यह है कि आर्य समाज आंदोलन मूलरूप में स्वधर्म, स्वदेशी, स्वराज्य और स्वभाषा इन चार स्तम्भों पर ही आधारित है। इस तथ्य मात्र से यह स्वतंत्रता संग्राम का पूरक बन गया। यह स्वीकार करना होगा कि आर्य समाज के स्वदेशी कार्यक्रम ने भारतीय राजनीति में उग्रवादी विचारधारा के उदय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

स्वतंत्रता संग्राम के उत्कर्षकाल में, वेदों के महत्व के प्रचार प्रसार के लिये स्वामी जी ने अप्रैल 1875 में बम्बई में 'आर्य समाज' की स्थापना की थी। इसके पश्चात् ही, संपूर्ण उत्तर भारत तथा पंजाब, राजस्थान तथा गुजरात में इसकी शाखाओं की स्थापना से देश के एक बड़े भाग में आर्य समाज का जाल बिछा दिया गया। आर्य समाज ने हिन्दू धर्म समाज में घर कर गई विकृतियों व कुरीतियों पर उग्र प्रहार किया तथा धार्मिक पुनर्जागरण का शंखनाद किया। साथ ही भारतीयों को अपनी मानसिक गुलामी से मुक्त कर, राष्ट्रवाद की आधारशिला रखी। ?

स्वामी दयानंद सरस्वती ने हिन्दू धर्म के उत्थान के लिये अनेक पुस्तकों की रचना की। इनमें 'सत्यार्थ प्रकाश' तथा 'ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका' मुख्य है। उनका सत्यार्थ प्रकाश एक विशद ग्रंथ है, जो उनके द्वारा स्थापित आर्य समाज की गीता है। इसे आर्य समाज कुरान तथा बाइबिल के समान महत्वपूर्ण ग्रंथ मानते है। इस ग्रंथ में स्वामीजी के धार्मिक, आध्यात्मिक, सामाजिक तथा राजनीतिक विचारों की विवेचना विद्यमान है। इसी तरह 'ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका' में स्वामी दयानन्द ने वेदों के महत्व का प्रतिपादन किया है। वेद का जीवन दर्शन सरल हिन्दी भाषा में आम–जन तक पहुँचाना इसका उद्देश्य रहा है। स्वामीजी ने वेदों में वर्णित जीवन पद्धति की भारत में पुन:स्थापना के लिये ही अपना जीवन समर्पित किया था।

राजा राम मोहन राय द्वारा स्थापित 'ब्रम्ह समाज' की तरह आर्य समाज के पीछे किसी भी प्रकार की विदेशी पश्चिमी प्रेरणा नहीं थी। दयानन्द का दृढ़ विश्वास था कि भारतीय पुनरूत्थान का लक्ष्य तभी प्राप्त किया जा सकता है, जबकि प्राचीन भारतीय सांस्कृतिक गौरव की प्रतीक वेद विहित जीवन पद्धति की पुन:स्थापना की जावें। रोमा रोला ने कहा है कि शंकराचार्य के उपरांत दयानंद जैसा वेद बाद का सिद्ध पुरूष नहीं हुआ। यही कारण है, उनके शिष्य उनका सम्मान एक ईश्वर की तरह करते थे और नि:संदेह वे इस सम्मान के हकदार थे।

मध्य युग से भारत में सच्चे धर्म के स्थान पर लोग कर्मकाण्ड व दिखावे को ही धर्म मान बैठे थे। अत: दयानंद के सामने इस स्थिति में हिन्दू धर्म संस्कार के प्रति लक्ष्य यह था कि धर्म व समाज में व्याप्त आडम्बर, असत्य, अंधकार, अविद्या, अंधविश्वास व कर्मकाण्ड के बादल को हटाकर, धर्म के वास्तविक सार को प्रकट करें, ताकि भारत का अधिक अद्य:पतन न हो सके। संधर्ष दोहरा था एक तरफ विदेशी पश्चिमी प्रभाव से देश को बचाना दूसरी

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

तरफ भारतीय समाज में प्रचलित जड़ जमाये धार्मिक व सामाजिक अंधविश्वासों तथा रूढ़िवाद को समाप्त करना था। इसके लिये ठोस व विश्वसनीय आधार की आवश्यकता थी। दाण्डी स्वामी ने उन्हें वेदों का प्रभावी आधार ज्ञान दिया। बस वेदों पर आधारित ब्रह्मा के स्वरूप की अवधारणा के आधार पर भारत में हिन्दू समाज में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने पहली बार मुखर होकर मूर्ति पूजा, अवतरवाद, बहुदेववाद तथा परम्परागत कर्मकाण्डों का विरोध किया। तर्कपूर्ण तथा वेद समर्थित उनके धर्म दर्शन को चुनौती देने में उनके विरोधी पूरी तरह असफल रहे। अत: घोर ईर्ष्या से कई बार उनकी हत्या के प्रयास भी हुए। अन्तत: उन्हें भोजन में जहर दे दिया गया। उन पर विजय पाना असंभव था। उन्हें वेदों व संस्कृत का अतुलनीय ज्ञान था।

स्वामी दयानंद सरस्वती को एक भारतीय सन्यासी के रूप में देखने वाले प्राय: उन्हें हिन्दू धर्म के सामाजिक-धार्मिक सुधारों तक सीमित रखने का समर्थन करते है। इस कारण मूल्याकंन में उनके राष्ट्रवादी आध्यात्मिक विचारों की उपेक्षा हुई है। संभवत: इसका एक कारण यह है कि समकालीन होते हुए भी उन्होंने सन् 1857 के प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम जिसे अंग्रेजों ने सिपाही विद्रोह की संज्ञा दी थी, के संदर्भ में पूरी तरह मौन रखा है। स्वामी जी को अत्यन्त मुखर और निडर सन्यासी होने का गौरव प्राप्त था फिर भी उन्होंने अपने जीवनकाल में ब्रिटिश शासन के विरूद्ध सीधे-सीधे कुछ नहीं कहा था।

संभव है उस समय तत्कालीन परिस्थितियों में हिन्दू समाज की जागृति राष्ट्रीय चेतना के लिये प्राथमिक आवश्यकता थी। अत: उनका सामाजिक व धार्मिक सुधार भी वस्तुत: राष्ट्रीय शक्ति की पुनर्स्थापना का ही एक साधन था। स्वामी जी का दृढ़ विश्वास था कि सामाजिक व धार्मिक जीवन के अबौद्धिक कर्मकाण्डों के कुचक्र में फंस कर भारत राजनीतिक दृष्टि से पूरी तरह निर्बल हो गया है। अत: स्पष्ट है कि उनका धार्मिक व सामाजिक सुधारों का एक निहितार्थ भारतीयों को कर्मवीर, शूरवीर बनाकर उनमें प्रथम आत्म विश्वास उत्पन्न करता है कि वे अन्याय, अत्याचार व कुशासन का विरोध कर सके।

राष्ट्रवाद के आधार तीन तत्व है - भूमि, जन और जन की संस्कृति। विश्व में आर्यावत् का भूगोल प्राचीनतम है। यहां के जन अतीतकाल से सधर्मी बन्धुत्व के भाव से एकता के सूत्र में बंधे रहे है तथा वेदों द्वारा अपौरूषेय प्रतिपादित संस्कृति ही दैव संस्कृति है। अत: राष्ट्रीय चेतना तो भारतीयों के खून में सृष्टि के प्रारंभ से ही विद्यमान है।

यह निर्विवाद है कि स्वामी दयानन्द सरस्वती तत्कालीन भारत की दासता से व्यथित थे। वे अनुभव करते है कि हमारे अवगुणों के कारण ही विश्व साम्राज्य तो हमारे हाथ से निकल ही गया। स्वयं अपने भू-भाग पर भी आज भारतीयों का शासन नहीं है। स्वराज्य के प्रति उनकी उत्कृष्ट अभिलाषा इन पंक्तियों में स्पष्ट रूप में अभिव्यक्त हुई है 'अब अभाग्य के उदय से और आर्यो के आलस्य, प्रमाद, आपसी फूट और वैमनस्य से, अन्य देशों पर राज्य करने की कथा ही क्या कहनी, अब तो आर्यावर्त में भी आर्यो का अखण्ड, स्वतंत्र, स्वाधीन तथा निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है वह भी विदेशियों से पराक्रान्त हो रहा है। कुछ थोड़े राजा स्वतंत्र है। जब दुर्दिन आता है, तब देशवासियों को अनेक दु:ख भोगने पड़ते है। कोई कितना भी करें परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है। मत मतान्तर के आग्रह से रहित, अपने व पराए के भेदभाव से शून्य प्रजा पर माता-पिता के समान कृपा, न्याय व दया के साथ भी विदेशियों का राज्य सुखदायक नहीं है।' (सत्यार्थ प्रकाश: समु 8 पृष्ठ 153) यहां स्पष्ट रूप में स्वामीजी पूर्ण स्वाधीनता की आवश्यकता का प्रतिपादन करते है। स्वामी जी द्वारा स्थापित संस्था 'आर्य समाज' भारतीय स्वाधीनता संग्राम की पूर्व पीठिका के रूप में, राष्ट्रीय पुनर्जागरण का आन्दोलन ही था। यह इतिहास द्वारा स्वीकृत सच्चाई है। अत: डॉ. बी.पी.वर्मा के शब्दों में 'दयानन्द की भारत में आध्यात्मिक राष्ट्रवाद के महान पैगम्बर के रूप में अलग से ख्याति है।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मेहता जीवन : भारतीय राजनीतिक चिन्तक : एस.बी.डी. पब्लिशिंग हाउस आगरा (2014-15) पृष्ठ 87-101
2. खत्री हरीशकुमार : आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन : कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल (2015) पृष्ठ 91-100।
3. सिंह उपेन्द्रसिंह : भारतीय राजनीतिक विचारक : ग्रंथ विकास जयपुर (2009) पृ.-133-161
4. सरस्वती स्वामी दयानन्द : सत्यार्थप्रकाश : आर्य साहित्य प्रचार ट्रस्ट नईदिल्ली (2006) पृष्ठ 148.।
5. त्यागी पी.के. : भारतीय राजनीतिक विचारक (भाग-1) : विश्व भारती पब्लिकेशन्स, नईदिल्ली (2006) पृष्ठ 86-98।
6. सिंह विजेन्द्रपाल : भारतीय राष्ट्रवाद और आर्य समाज लोकतांत्रिक समीक्षा, नईदिल्ली (अप्रैल-जून 1974) पृ. 273।
7. वर्मा वी.पी. माडर्न - इण्डियन पोलिटिकल पॉट (1986) पृष्ठ 40।
8. चतुर्वेदी डॉ. मधुकर श्याम : प्रमुख भारतीय राजनीतिक विचारक, पृष्ठ 548।

****

प्राकृतिक व्यवस्थागत सिद्धांत और मानव जीवन

प्रो. जी. एस. वास्कले *

प्रस्तावना – रुसो–'विज्ञान और कला की प्रगति ने मनुष्य का नैतिक पतन किया हैं, अत: यदि उसे अपना सरल, सुखी और सद्गुणी जीवन प्राप्त करना है तो उसे प्राकृतिक जीवन अपनाना चाहिए।'
'हमें फिर से अज्ञान, भोलापन और निर्धनता दे दो केवल वे ही हमें सुखी बना सकते हैं।'

मनुष्य का जीवन सदियों से प्रकृति प्रेमी रहा है और प्रकृति से लगाव एवं प्रकृति के सानिध्य में ही मनुष्य का जीवन सुखी रह सकता है। प्रकृति प्रदत्त प्रत्येक वस्तु अपनी विशेषता के साथ सौन्दर्ययुक्त है जिसे मनुष्य सदियों से अचरज भरी निगाहों से निहारता रहा है।

इस संसार में ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के संबंध में विचारकों, वैज्ञानिकों, आविष्कारकों ने अपने–अपने सिद्धांतों एवं विचारों के माध्यम से इसकी उत्पत्ति की व्याख्या की है। इसमें यह धरती, यह आकाश, यह चन्द्रमा यह सूर्य, यह समय अपने–अपने कार्यो को अपनी प्रकृति के अनुरुप व्यवस्था में रहते हुऐ, जो उनकी गति है से चलते रहते है, एवं करते रहते हैं। जैसे–रात और दिन। दुनिया में चाहे कितनी ही बड़ी उथल–पुथल हो जाए, चाहे जैसी कैसी भी घटना घटित हो जाए, रात के बाद दिन और दिन के बाद रात का आना निश्चित है। यह वैज्ञानिक एवं प्राकृतिक सत्य है। इस प्राकृतिक सत्य के पागल मनुष्य भी स्वीकारता है, उसका भरोसा उसका विश्वास कभी डगमगाता नहीं भले ही हम यह कहे कि कल सूरज नहीं निकलेगा। विज्ञान एवं प्रकृति के संबंध में मनुष्य को सम्पूर्ण विश्वास रहता है कि प्रकृति सत्य है।

विज्ञान वाले एवं पर्यावरण वाले हमेशा जनता को भय दिखाते रहते हैं कि प्राकृतिक पर्यावरण खराब हो रहा है, दुनिया के राष्ट्रों में गंदगी बढ़ रही है, तापमान घट–बड़ रहा है। ग्लोबल वार्मिंग हो रहा है बर्फ पिघल रही हैं, धरती रेगिस्तान बन रही हैं, दुनिया के देशों में सूखा पड़ रहा है, नई–नई बीमारियाँ उत्पन्न होकर आ रही हैं। वाइरस फैल रहा है। भीड़ बड़ रही हैं, पेड़ कम हो रहे हैं, आदि–आदि। ये लोग जनता को भय के साये में देखना चाहते हैं, भय के साये में रखना चाहते हैं।

प्रकृति अपने व्यवस्थागत सिद्धांत पर चलते हुऐ अपना संतुलन खुद बनाये रखती हैं। मनुष्य को शिक्षाविदों को प्रकृति की प्राकृतिकता के सिद्धांत को ध्यान में रखना चाहिए। गंदगी फैल रही हैं। नदियों में गंदा पानी हो गया है ठीक है, बारिश ठीक है, बारिश होगी, सूखा गायब हो जाएगा। सूनामी भी आएगी, भूकम्प भी आएँगे, ज्वालामुखी भी आग उगलेंगे। तपन भी होगी, तपस्या भी होगी क्योंकि प्रकृति है, यह किसी मनुष्य के बस बात नहीं है। मनुष्य सिर्फ और सिर्फ उसके नजारे देखकर अपना जीवन उसके सानिध्य में रखकर व्यतीत करता रहे।

सूर्य के पास जाना मानव के बस की बात नहीं है, सम्पूर्ण अंतरिक्ष को जानना मानव के बस की बात नहीं हैं, सितारों की गणना करना मानव के बस में नहीं हैं। मनुष्य को मनुष्य बनकर जीवन व्यतीत करना है। प्रकृति के व्यवस्थागत सिद्धांत से व्यवस्था में रहकर उसे अपनाकर प्रकृति से सामंजस्य बनाकर और प्राकृतिक व्यवस्थानुसार अपना जीवन व्यतीत करना चाहिए।

मानव जीवन भी माता–पिता द्वारा तथा प्रकृति द्वारा दिया गया जीवन है। जिनके स्वभाव की कल्पना करना बड़ा मुष्किल कार्य है, परन्तु हाब्स ने मानव स्वभाव को क्रूर, हिंसक और कपटी माना है, लेकिन रुसों का कथन है कि मानव स्वभाव ऐसा क्रूर और हिंसक होता तो मानव जाति दो पीढ़ियों से अधिक नहीं चल सकती थी। लॉक ने मानव स्वभाव को सदी सद्गुणों से पूर्ण और नैतिक माना है। लेकिन रुसों का मत है कि प्राकृतिक अवस्था के व्यक्तियों का जीवन बुद्धि द्वारा चालित न होकर भावनाओं द्वारा चालित था। और ये भाव मुख्यतया दो प्रकार के थे:

1. आत्मरक्षा तथा सुख की प्रकृति
2. दया।

रुसो द्वारा मानव जीवन की प्राकृतिक अवस्था–'रुसो द्वारा चित्रित प्राकृतिक अवस्था न तो हाब्स के सद्ध्य सभी के विरुद्ध युद्ध की थी और न ही लॉक की शांति व सद्इच्छा की अवस्था जैसी थी। यह ऐसी दशा थी कि जिससे व्यक्ति पशु जैसा अकेला जीवन जीता था।'

'प्राकृतिक अवस्था वर्तमान मनुष्य की सभ्य सामाजिक अवस्था से कहीं अधिक अच्छी थी। वह एक आदर्श अवस्था थी, आदिम मनुष्य एकांकी जंगली जीवन, उसकी इच्छाएँ और आवष्यकताएँ बहुत अधिक सीमित थी और **वह पूर्णतया स्वतंत्र, संतुष्ट व सुखी था। प्रत्येक मनुष्य अन्य के समान था और बड़े–छोटे का कोई भेद न था तथा न ही कोई चिन्ता थी। उसमें सभ्य मनुष्यों वाले दुर्गण नहीं थे। इस प्रकार मनुष्य की आदिम प्राकृतिक अवस्था आदर्श थी।** इसीलिए रुसो कहता है कि अब हमें प्रकृति की ओर लौट जाना चाहिए। आओ अब हम प्रकृति की ओर लौट चलें।'

प्रकृति द्वारा प्रदत्त दिन के उजाले और रात के बिजली में भी अन्तर होता है, दोनों के प्रकाश में व्यक्ति की आंखे चकाचौंध हो जाती हैं। प्रकृति प्रदत्त कभी रात के अंधेरे में रोशनी से दूर निकलकर देखिए–आसमान के

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा (म.प्र.) भारत

सितारे और चन्द्रमा की चाँदनी से कभी व्यक्ति की आंखे चकाचौंध नहीं होगी, बल्कि व्यक्ति के सुकून भरा आनंद का एहसास व खुशी महसूस होगी। किसी ने ठीक ही कहा है कि–'रात के अंधेरे में भी उजाले नजर आते हैं, सितारों की चमक से अंधेरे भी रोशन हुआ करते हैं।'

यह प्रकृति की ही देन है इस भागती हुई दुनियाँ में मत भाग इतना तेज ओर मनुष्य मात्र इंसान की तरह पैदल ही चले ले तो जिंदगी रोशन हो जावेगी। डॉ. राधाकृष्णन ने भी कहा है कि 'पक्षियों की तरह हवा में उड़ना हमनें सीख लिया, मछलियों की तरह पानी में तैरना सीख लिया, पर इंसान की तरह धरती पर चलना सीखना हैं। निश्चित ही यह वाक्या वैज्ञानिक प्रगति व इंसानियत के लिए कहे गये वाक्य है। मानव जीवन को रोशन करने के लिए इंसानियत का रास्ता ही काफी है तथा एक अच्छे इंसान की तरह धरती पर पैदल चलना ही इंसानियत है। प्रकृति ने मनुष्य को दो पैर चलने के लिए ही दिये है, न कि हवा में उड़ने के लिए, इस बात को मनुष्य को सदैव याद रखना चाहिए।

प्राकृतिक व्यवस्था में रहकर ही दुनियाँ के राष्ट्रों की सरकारों को अपने–अपने राष्ट्रों की सभी व्यवस्थाएँ करना चाहिए न कि प्रकृति के खिलाफ जाकर। शासकीय नियम, कानून व्यवस्थाएँ आदि सभी प्रकृति से तादम्य रखते हुऐ ही स्थापित करना चाहिए, हमें रुसों के कथन को हमेशा याद रखना चाहिए, कि अब हमें प्रकृति की ओर लौट जाना चाहिए। वर्तमान समय में मानव में स्वास्थ्यगत समस्याएँ क्यों आ रही है? इसका सबसे बड़ा कारण लोग दिन–रात एक कर रहे है, रात को रात और दिन को दिन समझ रहे है, जानबुझकर ऐसा कर रहे है, फिर स्वास्थ्यगत समस्याओं से घिर रहे है, यह क्यों भूल रहे है कि मनुष्य इस धरती पर बिन बुलाये मेहमान की तरह है और बिना मुहर्त के किसी भी समय मनुष्य की डोली उठने वाली है। जितने समय की यह प्राकृतिक जीवन रहे, व्यवस्थित एवं इंसानियत का जीवन, शासकीय व्यवस्थागत जीवन व्यतीत करना चाहिए। प्रकृति व शासन अपनी तरफ से पूरी क्षमता के साथ अच्छे से अच्छा करना चाहते है। इसलिए यह भी कह सकते है कि इस धरती में सभी का पेट भरने की क्षमता है। इस सूर्य में इतनी गर्मी व रोशनी है कि ब्रह्माण्ड का हर कोना रोशन है। रात के चमकते सितारों में इतनी चमक है कि हर रात को रोशनी में चमकाते रहते है। शासक व शासन में इतनी क्षमता है कि वे चाहे तो प्रत्येक व्यक्ति को चांद तक पहुंचा सकते है। इसलिए प्रकृति की प्राकृतिक व्यवस्था एवं शासन की शासकीय व्यवस्था में मनुष्य को इंसानियत का जीवन व्यतीत करना शुभ होगा। यह हिन्द। जय भारत।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रतिनिधि राजनीतिक विचारक : डॉ. पुखराज जैन
2. पाश्चात्य राजनीतिक चिंतन : डॉ. बी. एल. फड़िया
3. राजनीति सिद्धांत : डॉ. पुखराज जैन
4. राजनीति विज्ञान के मूल तत्व : डॉ. ओम नागपाल
5. दर्शन पर आधारित स्वचिंतन।

****

देश की वर्तमान परिस्थिति में जरूरी है विकास - पथ का पुनर्मूल्यांकन

डॉ. नितिन सहारिया *

प्रस्तावना - भूमंडलीकरण नाम के चमत्कारी शब्द के मायने व्यापारिक है या सामरिक अथवा फिर सांस्कृतिक ? वैसे मायने जो भी हों, लेकिन आज, कल के शब्द को विकास के साथ जोड़ने की बड़ी जोरदार मुहिम छिड़ी हुई है। राजनेता हो या अर्थशास्त्री, सभी इस शब्द की जोरों से चर्चा कर रहे है। बात मनुष्य सभ्यता की शुरूआत से करें तो व्यापार और युद्ध अभियान, सभ्यताओं और देशों के बीच संपर्क सेतु का काम करते आए हैं। विश्वयात्राएँ, संस्कृति, शिक्षणयात्राएँ भी सशक्त माध्यम बनी है, जिनकी शुरूआत और विस्तार **सा प्रथमा संस्कृति विश्ववारा** वाले देश भारत ने की, क्योंकि स्वस्थ्य आचरण **शिक्षरेण पृथिव्यां सर्व मानवा:** (मनुसंहिता) को यहाँ के निवासियों ने अपना उद्देश्य बना लिया था। **वसुधैव कुटुंबकम्** को भूमंडलीकरण का आधार बना लेना भारत देश को ही अपनी मौलिक विशेषता थी और है।

भारत की इस विशेषता के अलावा दुनिया भर के अन्वेषण व अनुसंधान यही कहते हैं कि सभ्यता के विकास के साथ आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आदान-प्रदान और व्यापार विकसित हुआ। इसके विपरीत युद्धों व लड़ाईयों ने भी अपने नए-नए रूप प्रकट किए। परिणाम में दुनिया की शक्ल बदलती चली गई। आज भी दुनिया में जो खींच-तान है, उसके मूल में या तो व्यापार है अथवा युद्ध। इन दोनों की जड़ में धरती के समस्त संसाधन है। जहाँ तक सांस्कृतिक संवेदनशीलता की बात है तो इसके सही व मूल रूप को लोग अभी भी भूले हुए हैं। भारत में प्रारंभ हुई इस विधा का सही स्मरण अभी भारत देश भी सही ढंग से नहीं कर पा रहा।

इस बीच दुनिया न केवल पूरब और पश्चिम में बँटी, बल्कि उत्तर व दक्षिण में भी बँट गई। सभी दिशाएँ एकदूसरे के विपरीत जाने की कोशिश कर रही हैं, जबकि ऐसा होना नहीं चाहिए था। पिछले ढाई-तीन हजार साल के इतिहास के पन्नों को पलटें तो पाएँगे कि 326 ई. पूर्व सिंकदर ने पूरब विजय के लिए नहीं, बल्कि विश्व विजय के लिए अभियान चलाया था। सही कहें तो यूनान के पश्चिम में ऐसा था ही क्या, जिसके लिए कोई अभियान रचा जाता। सारी दुनिया तो उस समय पूरब में ही खुलती थी, फैलती और बढ़ती थी। अपने इस अभियान में सिकंदर ने कितने ही राजवंशों को रौंदा, कितने ही साम्राज्यों का विनाश किया। ऐसा करते हुए वह भारत आ पहूँचा। यहीं उसका भारत की संस्कृति, बौद्धिक एवं भौतिक वैभव से वास्तविक साक्षात्कार हुआ। यहाँ उसका पौरस के पराक्रम से सामना हुआ, जिसे बाद में उसने मित्र बना लिया।

हालाँकि पश्चिम का पूरब से यह पहला संपर्क नहीं था। तथ्यपरक अनुसंधान हमें बताते है कि सिंधु सभ्यता काल में भी भारत के मेसोपोटामिया एवं मिस्र से गहरे व्यापारिक व सांस्कृतिक संबंध थे। बाद में भले ही सिंकदर विजय की कामना से भारत आया, परंतु भारत ने सिंकदर व यूनान को ज्ञान-विज्ञान के अनेकों उपहार दिए। इसके बाद रोमन साम्राज्य का आविर्भाव व उत्थान हुआ। इतिहास बताता है कि रोमन साम्राज्य पहली सदी ईसा पूर्व से पाँचवी सदी ईसा पूर्व तक पश्चिमी सभ्यता का केन्द्र बना रहा। यही वह काल था, जब पश्चिम पर पूर्व का गहरा प्रभाव पड़ा। इसका असर न केवल अभी तक है, बल्कि समय के साथ इसमें मजबूती भी आई है। मध्य पूर्व यहूदी-ईसाई और बाद में इसलाम धर्म के अभ्युदय का केन्द्र बना। यहूदी व ईसाई धर्म पूर्व की ओर उतना ही फैले, जितना कि पश्चिम की ओर। शुरूआत में तो रोमवासियों ने ईसाईयत का विरोध किया, लेकिन बाद में उसे स्वीकार कर लिया।

इसके बाद छठवीं शताब्दी में इसलाम जब उभरा तब रोमन साम्राज्य का पतन हो रहा था। इसके पश्चिमी भाग का तो पतन हो चुका था, लेकिन साम्राज्य का पूर्वी भाग फिर से खड़े हो जाने की कोशिश में था। बाइजैन्टाइन साम्राज्य के रूप में यह कोशिश उभरी, जिसकी राजधानी बनी कौन्सटैनटिनोपोल। शायद यही वजह थी कि इसलाम पश्चिम की ओर बढ़ने के बजाय पूरब की ओर बढ़ा। ईसाई व इसलामी सत्ताओं के बीच हुए लंबे धर्मयुद्ध का भी संभवत: यही कारण रहा। यूरोप पर पूर्वी रोमन साम्राज्य या बाइजैन्टाइन साम्राज्य का प्रभाव पंद्रहवीं शती तक रहा। इस समय तक इसलाम एशिया व अफ्रीका के बड़े हिस्से का प्रमुख धर्म बन चुका था।

इससे बहुत पहले - तकरीबन ढाई हजार साल पहले बौद्ध धर्म भारत में जन्मा और बाद में विश्व भर में इसका प्रसार हुआ। यह घटना ईसा के भी पाँच सौ साल पहले घटित हुई। हालाँकि इसका प्रचार-विस्तार भी पूर्वाभिमुख हुआ। पश्चिम की ओर अफगानिस्तान तक ही यह प्रसारित हुआ। एक जमाने में अफगानिस्तान बौद्ध धर्म का बड़ा केन्द्र था, बाद में यह इसलाम के प्रभाव में आया। बौद्ध धर्म चीन, वियतनाम, कंबोडिया और जापान तक फैला, लेकिन पश्चिम एशिया व यूरोप को अपने प्रभाव में नहीं ले पाया, फिर भी यह सुनिश्चित रूप से कहा जा सकता है कि अमेरिका समेत समस्त यूरोप की जो धर्म में आस्था है, उसकी जडें क़हीं न कहीं पूरब की जमीन में ही हैं। इसे पूरब की पश्चिम को देन के रूप में भी जाना जा सकता है।

यह पूरब व पश्चिम का मिलन बिंदु भी है। इस प्रकरण में सबसे बड़ा अचरज तो इस बात का है कि यह सब सत्य व तथ्य प्रामाणिक होने के बाद भी पूरब के प्रति पश्चिम की दृष्टि हमेशा औपनिवेशिक रही। हमेशा पश्चिम ने पूरब को हीन दृष्टि से देखने की कोशिश की। विशेष रूप से पाँच सौ सालों से तो यही बात सामने आ रही है। यह कौन नहीं जानता कि गणित व विज्ञान के सूत्रों का आदि देश भारत है, बाद में इसे अरबवासियों ने जाना व सीखा। उसी के आधार पर आज की दुनिया का भौतिक एवं वैज्ञानिक परिवेश बनाया जा सका है।

* शासकीय एम.एम. महाविद्यालय, कोतमा, जिला - अनूपपुर (म.प्र.) भारत

हाँ ! यह सच है कि आधुनिक ज्ञान-विज्ञान का विकास ज्यादातर पश्चिम की देन है। यंत्र शक्ति का उपयोग करके उद्योग पर आधारित एक नई सभ्यता का निर्माण पश्चिम ने किया है। पश्चिम में दर्शन व चिंतन की अनेकों प्रणालियां भी विकसित हुई है। शिक्षा, कला, स्थापत्य, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, चिकित्साशास्त्र, अंतरिक्ष विज्ञान, समुद्र विज्ञान जैसी कितनी ही युगांतरकारी स्थापनाएँ पश्चिमी दुनिया ने की है। आज के दौर का यही सच है। पश्चिम में कितने ही शास्त्र व ज्ञान-विज्ञान की शाखाएँ जन्मी है।

इस सच के साथ एक महत्वपूर्ण सवाल भी जुड़ा है, क्या पश्चिम यह सब अपने बूते कर सकता है? तो इसका जवाब स्पष्ट व साफ-सुथरी न में है। यह सब करने में उसने न केवल भारत, बल्कि सारी दुनिया के देशों के संसाधनों का भरपूर शोषण व दोहन किया है। अपनी सभी कुशलताओं का उपयोग उसने उपनिवेश बनाने में किया। यथार्थ में यह एक नई दासता की शुरूआत थी। पूरब व पश्चिम का पिछले पाँच सौ सालों से जो संबंध बना, उसकी नींव इसी लूट नीति पर रखी गई। उपनिवेशवाद में सभ्यता और आधुनिकता के नाम पर स्थानीय शासन व प्रजा को अपने आधीन करने की कुटिल चाल चली जाती रही। स्थिति अभी भी लगभग वैसी ही है। पहले यह उपनिवेशवाद राजनीतिक अधिक एवं आर्थिक कम था, पर अब आर्थिक ज्यादा और राजनीतिक कम है। जिन पश्चिमी शक्तियों ने उपनिवेश स्थापित किए उन्होंने स्थानीय लोगों को यही बताया कि तुम्हारा अतीत त्याज्य, वर्तमान दयनीय है। हाँ ! यदि तुमने हमारी आर्थिक दासता स्वीकार कर ली तो तुम्हारा भविष्य अवश्य सुखमय हो सकता है।पश्चिम के इसी चिंतन व दृष्टिकोण ने पूँजीवाद को जन्म दिया। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद विकास का भारी हो-हल्ला मचाया गया। इसके पीछे भी उपनिवेशवादी सोच ही थी। सच की तह में जाएँ तो विकास ही एक ऐसा चमत्कारी शब्द था, जिसके बलबूते औपनिवेशिक शासक अभी भी भारत सहित एशिया, अफ्रीका व अन्य देशों के संसाधनों का दोहन-शोषण कर सकते थे। इस नए मकसद के लिए विकास को पश्चिम व पूरब के बीच पुल की तरह इस्तेमाल किया गया। जो सोच सकते हों, वे सोंचे, जो देख सकते हों, वे देखें, यह नवउपनिवेशवाद जिसका नया नाम भूमंडलीकरण है, विकास की काल्पनिक ईंटों से ही बनाया गया है।

आज सभी अमेरिका व यूरोप के दिखाए रास्ते पर चलने के लिए विवश हो रहे हैं। जो वे कहें, वही सही, बाकी सब व्यर्थ। आखिर मशाल तो उन्हीं के हाथों में है, हम सब अँधेरे में जो ठहरे। कहने को दुनिया एक हो रही है, दूरियाँ समाप्त हो रही है, लेकिन यथार्थ में इस विश्वव्यवस्था का हिस्सा एकाधिकार व भेदभाव से भरा-पूरा है। मुक्त बाजार की आड़ में इसे प्रोत्साहित किया जा रहा है। इसके लिए तरह-तरह के तर्क हैं। राजनैतिक संस्थाएँ कठपुतली की तरह किन्हीं के इशारों पर नाच रही है, जनता की राजनीति की इसमें कोई जगह नहीं बच रही है। एक तरह से यह निषिद्ध व निष्कासित है।

जो देश लोकतांत्रिक है, वह अपना देश भारत हो या फिर कोई और देश, वहाँ के नीतिनिर्माता, बड़े अधिकारी, औद्योगिक घराने, राजनीति का कारोबार करने वाले, सभी ने मिल-जुलकर जनता की राजनीति को विकास की राजनीति से विस्थापित कर देने का सफल प्रयास किया है। विकास के नाम पर मायावी मारीच स्वर्णमृग बनकर सभी को लुभा रहा है। अब तो यह राष्ट्रीय उद्देश्य व लक्ष्य बन चुका है।अपने चिंतन के सूत्रों को तनिक देश के पहले के इतिहास से जोंड़े तो कहना यही पड़ेगा कि आज जो कुछ भी हो रहा है, वह सब पहले के औपनिवेशक काल का विस्तार है, फैलाव है। कहने को तो भूमंडल मिल रहा है, लेकिन यहाँ वसुधा कुटुंब नहीं बन पा रही है, बल्कि विकसित कहा जाने वाला पश्चिम अपना वैभव बढ़ाने के लिए अविकसित पूरब को, विकास के रास्ते ले जाने के लिए पुरजोर कोशिश कर रहा है। इससे पर्यावरण की क्षति, मानवीय क्षति होती है, तो हुआ करे, इसकी उसे कोई परवाह नहीं है। नकली, सतही सरोकारों से इनसान को परिभाषित करने की कोशिश हो रही है। भोग-विलास को जीवन मूल्य एवं मानव मुक्ति के साधन के रूप में स्थापित किया जा रहा है। इन कोशिशों के परिणामस्वरूप मानव जीवन प्रकृतिद्रोह, आत्मद्रोह की सीमाएँ पार करता हुआ अब ईश्वरद्रोह के द्वार तक आ पहुँचा है।खोखली होती दुनिया ने अपने माया जाल में सभी को समेट लिया है। भारत हो या चीन, दक्षिण अफ्रीका या ब्राजील, सभी इसकी भँवर में है। ऐसी विश्व-व्यवस्था को बचाने की अपेक्षा करें भी तो किससे ? हाँ, इस अँधियारे में भारत के नन्हें पड़ोसी भूटान ने अपनी तरह से इस मायावी बुद्धि एवं विकास को अस्वीकारा है। इस छोटे से देश भूटान ने अपने देशवासियों के जीवन की खुशहाली नापने के लिए सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता को मानक बनाया है। यह बात बड़ी है यह पहल अनुकरणीय है, जिसमें मानव जीवन की कुशलता, समृद्धि एवं सुख के लिए भौतिक उपलब्धियों को एकमात्र पैमाना नहीं स्वीकार किया गया है।इस देश भूटान में पर्यावरण व मनुष्य के बीच सहज स्वाभाविक संबंध को स्वीकारा गया है। आत्मनिर्भरता को जीवन की सार्थकता के रूप में मान्यता दी गई है। हिमालय की गोद में बसा यह नन्हा सा देश, जिसके अधिकांश जन भगवान बुद्ध के अनुयायी है, दुनिया को एक अनूठा संदेश देने में लगा है। अभी हाल में ही इसने लोकतंत्र को स्वीकारा है। भले ही इसकी आवाज क्षीण लगे, फिर भी इतना तो कहना ही होगा कि यह पश्चिमी दुनिया को पूरब का सटीक उत्तर है। साथ ही इसमें इस बात का आव्हान भी है कि आज मानव जीवन व इसके उद्देश्यों को नए सिरे से परिचित कराने व परिभाषित करने की आवश्यकता है।

भारत को अपने विकास पथ के पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता है। यहाँ के जन-मन एवं राजनीतिक व्यवस्था को फिर से स्वामी विवेकानंद के विचारों पर मनन करना चाहिए, जिन्होने आडंबर, झूठ के विकल्प में सत्य, शोषण व दमन के विकल्प में सत्याग्रह सुझाया था। जिन्होंने स्वावलंबन, स्वरोजगार का मार्ग दिखाया। ग्राम स्वराज्य उनकी कल्पना थी, जिसकी आज जरूरत है। महात्मा गांधी के अनुयायी, सहयोगी एवं सहकर्मी रहे युगऋषि परमपूज्य गुरूदेव ने अपने विचारों में देश व देशवासियों को बताया कि विश्व को परिवार बनाएँ न कि विश्व को बाजार में बदल दें, भूमंडलीकरण अवश्य हो, लेकिन उसका आधार सांस्कृतिक संवेदना बने न कि आर्थिक साम्राज्य का उपनिवेशवाद। इस सत्य पर चिंतन आवश्यक है, मायावी मारीच को स्वर्णमृग समझने की भूल न की जाए, अन्यथा संस्कृति की सीता को फिर से निर्वासित होना पडेग़ा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अखण्ड ज्योति - मासिक पत्रिका, मई 2013, पृष्ठ - 6-7, संपादक - डॉ. प्रणव पंड्या प्रकाशक - अखण्ड ज्योति संस्थान, धीयामंडी, मथुरा (उत्तरप्रदेश)
2. सुरेन्द्रनाथ गुप्त - सोने की चिड़िया लुटेरे अंग्रेज, पृष्ठ - 10, प्रकाशक - ग्रंथ अकादमी, नई दिल्ली, वर्ष - 1996
3. डॉ. विद्याधर शर्मा गुलेरी - संस्कृति में विज्ञान, संस्कृति भारती - नई दिल्ली, वर्ष 2000
4. हिन्दू संस्कृति अंक (कल्याण) संकलन - गीता प्रेस, गोरखपुर, 1950
5. युग निर्माण योजना - मासिक पत्रिका, फरवरी 1988, पृष्ठ - 13, प्रकाशक - युग निर्माण योजना प्रेस, तपोभूमि मथुरा
6. अखण्ड ज्योति - मासिक पत्रिका, जनवरी 2010, पृष्ठ - 17, संपादक - डॉ. प्रणव पंड्या प्रकाशक - अखण्ड ज्योति संस्थान, धीयामंडी, मथुरा (उत्तरप्रदेश)

महात्मा गाँधी की सिवनी यात्रा एवं उसका राजनैतिक प्रभाव 'असहयोग आंदोलन के विशेष संदर्भ में'

डॉ. संकेत कुमार चौकसे *

शोध सारांश – महात्मा गाँधी न केवल भारत अपितु विश्व के महान विचारक थे। उन्होंने ऐसी समाज रचना, राजनीतिक व्यवस्था, आर्थिक प्रणाली और नैतिक दृष्टि को विकसित किया जो मानवता को स्थायी शांति और समृद्धि की ओर ले जाने में सहायक है। उन्होंने विश्व के समक्ष यह नवीन दृष्टिकोण रखा कि किसी राष्ट्र की समस्त समस्याओं का निराकरण प्रेम, सत्य और अहिंसा से भी किया जा सकता है। भारत में गांधीयुग का विधिवत सूत्रपात 1920 ई. के नागपुर कांग्रेस अधिवेशन से माना जा सकता है। इसमें असहयोग आंदोलन के प्रस्ताव को पारित किया गया तथा कांग्रेस के संविधान एवं संरचना में भारी परिवर्तन किये गये। इसकी समाप्ति के पश्चात् महात्मा गाँधी ने मध्यप्रांत का व्यापक भ्रमण किया और जनता को कांग्रेस के निर्णयों से अवगत कराया। इस दौरान 20 मार्च 1921 को उनका सिवनी आगमन हुआ, जिसका जनता पर अनुकूल प्रभाव पड़ा और यहाँ असहयोग आंदोलन सुचारू रूप से संचालित होने लगा। प्रस्तुत शोधपत्र में महात्मा गाँधी की सिवनी जिले की यात्रा, भाषणों और विचारों का क्षेत्रीय जनजीवन पर पड़ने वाले प्रभाव का विश्लेषण किया गया है। साथ ही भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की मुख्य घटना असहयोग आंदोलन के साथ सिवनी जिले की आंचलिक राजनीतिक घटनाओं एवं गतिविधियों को मुख्य धारा से जोड़कर एकीबद्ध करने का प्रयास किया गया है।

शब्द कुंजी – असहयोग आंदोलन ।

प्रस्तावना – भारतीय स्वाधीनता संघर्ष के इतिहास में महात्मा गाँधी का अवदान नि:संदेह प्रथमकोटी का है। उन्होंने स्वाधीनता संघर्ष का संचालन ही नहीं किया वरन् उसे एक नवीन विचारधारा, एक आधारभूत संहिता तथा कार्यप्रणाली प्रदान की। उन्होंने व्यवहारिक राजनीति में ऐसे उच्चतम नैतिक आदर्शों का समावेश किया जिसकी उस युग में कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। महात्मा गाँधी का भारतीय राजनीतिक रंगमंच पर पदार्पण उस समय हुआ जब भारत पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था। यद्यपि उस समय तक भारत में राष्ट्रीय चेतना का उदय हो चुका था तथापि जनसाधारण की व्यापक भागीदारी के अभाव में यह प्रयास जन आंदोलन का बृहत स्वरूप धारण नहीं कर सका था। इस समय महात्मा गाँधी का दक्षिण अफ्रीका से सफल सत्याग्रही की ख्याति प्राप्त कर भारत भूमि पर आगमन हुआ। भारतीय राजनीति में प्रवेश करते ही महात्मा गाँधी ने चम्पारन, खेड़ा एवं अहमदाबाद में सफल सत्याग्रह किया किन्तु इस समय तक उनकी भूमिका शासन के सहयोगी के रूप में रही क्योंकि अन्य भारतीयों के समान ही महात्मा गाँधी भी यह आशा कर रहे थे, कि प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति के पश्चात् ब्रिटिश सरकार उनके हितों को ध्यान में रखते हुए सुधार कार्य करेगी लेकिन रौलेट एक्ट, जलियांवाला बाग हत्याकाण्ड और पंजाब में मार्शल लॉ इत्यादि घटनाओं ने उनकी सारी आशाओं पर तुषारापात कर दिया। अत: उनके समक्ष विदेशी शासकों के विरूद्ध अहिंसात्मक असहयोग की नीति का सहारा लेने के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग शेष न बचा।

असहयोग आंदोलन आरंभ करने से पूर्व महात्मा गाँधी को कांग्रेस की स्वीकृति प्राप्त करना आवश्यक था। अतएव असहयोग आंदोलन पर विचार विमर्श करने के उद्देश्य से कलकत्ता में कांग्रेस के विशेष अधिवेशन का आयोजन सितंबर 1920 में किया गया।[1] इस अधिवेशन में महात्मा गाँधी के नेतृत्व में कांग्रेस ने पहली बार भारत में अंग्रेजी शासन के विरूद्ध सीधी कार्यवाही करने तथा असहयोग की नीति अपनाने की घोषणा की। असहयोग कार्यक्रम का अनुमोदन दिसंबर 1920 के नागपुर कांग्रेस के पैंतीसवें ऐतिहासिक अधिवेशन में किया गया। इस अधिवेशन में महात्मा गाँधी के असहयोग विषयक प्रस्ताव के कट्टर विरोधी चितरंजनदास अपने साथ बंगाल से लगभग 100 प्रतिनिधियों का एक बड़ा जत्था लाये थे। स्थिति की गंभीरता के कारण महात्मा गाँधी के समर्थक असमंजस में थे कि उन्हें बाहर से प्रतिनिधि तो एकत्र नहीं करने पड़ेगें, परंतु गाँधीजी के राजनैतिक एवं नैतिक प्रभाव से चितरंजनदास ही असहयोग विषयक प्रस्ताव के प्रस्तावक बन गये।[2] इस प्रकार 1920 ई. का नागपुर कांग्रेस अधिवेशन एक युग प्रवर्तक घटना बन गयी।

सिवनी जिला नागपुर–जबलपुर राष्ट्रीय राजमार्ग पर स्थित है। मध्यप्रांत एवं बरार की पूर्व राजधानी नागपुर एवं राजनीतिक शक्ति के केन्द्र जबलपुर दोनों से ही इसका जीवंत संपर्क रहा है। अतएव 1920 के कांग्रेस के ऐतिहासिक नागपुर अधिवेशन का प्रभाव इस जिले पर पड़ना स्वाभाविक ही है। इस अधिवेशन की समाप्ति के पश्चात् महात्मा गाँधी ने मध्यप्रांत का व्यापक भ्रमण किया और जनता को कांग्रेस के निर्णयों से अवगत कराया। इस दौरान 20 मार्च 1921 को उनका सिवनी आगमन हुआ।[3] गाँधीजी को नगर में दुर्गाशंकर मेहता के बंगले पर ठहराया गया। उस समय तक दुर्गाशंकर मेहता ने वकालत को नही त्यागा था किन्तु महात्मा गाँधी के आग्रह पर उन्होंने वकालत त्यागकर आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया। इसके कुछ समय पश्चात् ही दुगाशंकर मेहता को गिरफ्तार कर एक वर्ष की सजा दी गई।[4]

* अतिथि विद्वान (इतिहास) शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

सिवनी में एक जनसभा को संबोधित करते हुए महात्मा गाँधी ने भाषण प्रस्तुत करते हुए कहा **'भगवानदीन जी यहाँ भाषण देने आये एवं यही गिरफ्तार कर लिये गये। इसी से मेरे मन में यहाँ रूकने की विशेष इच्छा हुई। निरपराध व्यक्तियों को सरकार पकड़ती है और यहीं हमारी जीत की पक्की निशानी है। इस तरह की गिरफ्तारी को हमें अपना लाभ मानना चाहिए और उसमें आनंद मनाना चाहिए।'**[5] उल्लेखनीय है कि नागपुर अधिवेशन के तत्काल पश्चात् भगवानदीन एवं अर्जुनलाल सेठी का सिवनी नगर आगमन हुआ। इस अवसर पर शुक्रवारी में आयोजित एक जनसभा में उन्होंने ब्रिटिश सरकार एवं उसकी नीतियों के विरोध में प्रभावपूर्ण भाषण दिए जिससे जनता अत्यधिक प्रभावित हुई। प्रतिक्रिया स्वरूप शासन द्वारा इन्हें इस प्रकार का उत्तेजक भाषण देने के आरोप में बंदी बना लिया गया।[6] इन नेताओं की गिरफ्तारी के विरूद्ध इस क्षेत्र में हड़ताल का आयोजन किया गया एवं एक जुलूस निकाला गया जिसका नेतृत्व कुंजबिहारी खरे ने किया।[7]

महात्मा गाँधी के साथ अलीबंधुओं का भी सिवनी नगर आगमन हुआ था। इन नेताओं ने भी असहयोग एवं खिलाफत आंदोलन के समर्थन में जनता से सहयोग करने एवं तिलक स्वराजकोश के लिए मुक्तहस्त से दान देने का आव्हान किया। जिसका जनता पर अनुकूल प्रभाव पड़ा[8] और यहाँ राष्ट्रीय आंदोलन सुचारू रूप से संचालित होने लगा। प्रभाकर धुंडीराज जठार ने वकालत त्यागकर स्वयं को राष्ट्रसेवा में अर्पित कर दिया, वे अपनी धर्मपत्नी राधाबाई और दो पुत्रों मनोहरराव एवं पदमाकर के साथ असहयोग आंदोलन में शामिल हो गये।[9] उन्होंने महात्मा गाँधी के संदेश को जिले के कोने-कोने में पहुँचाया। बाद में प्रभाकर जठार एवं जब्बार खां को बंदी बनाकर भंडारा जेल भेज दिया गया, जहाँ उन्हें दो वर्ष की सजा सुनाई गई।

असहयोग कार्यक्रम के अंतर्गत शासकीय शिक्षण संस्थाओं का देशभर में बहिष्कार एवं राष्ट्रीय शिक्षण संस्थाओं की स्थापना की गई। इस संदर्भ में सिवनी के कुछ स्वतंत्रता प्रेमियों ने महात्मा गाँधी के नाम से गाँधी राष्ट्रीय विद्यालय की स्थापना की।[10] कुंजबिहारी खरे के नेतृत्व में अनेक छात्रों ने शासकीय विद्यालयों का बहिष्कार कर राष्ट्रीय विद्यालय में प्रवेष लिया। [11] इस विद्यालय को संचालित करने में प्रभाकर धुंडीराज जठार, शिवप्रसाद वर्मा, गिरजानंद, कमलाकर जठार, ठाकुर मोहनसिंह, सुंदरलाल मिश्रा, मुरलीधर शुक्ला, बालाजी टोले, प्रेमशंकर पण्डया, भीमसेन इत्यादि की महत्वपूर्ण भूमिका रही। इस विद्यालय को संचालित करने में जनता द्वारा सहयोग प्रदान किया जाता था। इसी तारतम्य में डालचंद द्वारा 100 रू. माहवार की आर्थिक सहायता दी जाती थी। इसके अतिरिक्त यहाँ राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत नाटकों का मंचन करके प्राप्त आय से भी इस विद्यालय का व्यय किया जाता था।[12]

असहयोग आंदोलन के इस प्रवाह में अनेक शासकीय कर्मचारियों ने अपनी-अपनी नौकरियों से त्यागपत्र दे दिया और स्वाधीनता के लिए प्रयासरत हो गये।[13] इसके साथ ही जिले में एक राष्ट्रीय पंचायत तथा खादी का एक भंडार स्थापित किया गया। घर-घर में चरखों का प्रयोग किया जाने लगा तथा अनेक लोगों ने खादी के वस्त्र धारण करना प्रारंभ कर दिया।[14] इस दौरान नेहरू रोड पर गिरिजाकुण्ड के पास सड़क के दोनों ओर खादी तथा सूत के वस्त्रों की दुकाने लगायी जाने लगी। शुक्रवारी चौक (गाँधी चौक) में प्राय: स्थानीय एवं बाहरी नेताओं के राष्ट्रीय विचारों को अभिव्यक्त करने वाले भाषण हुआ करते थे। सत्याग्रहियों द्वारा विदेशी वस्त्रों की दुकानों पर धरना दिया जाता था तथा विदेशी वस्त्रों की होली दहन का कार्यक्रम भी संपन्न किया जाता था।

सिवनी जिले में शराबबंदी आंदोलन भी तीव्रगति से संचालित किया जा रहा था। महात्मा गाँधी ने सिवनी नगर में आयोजित जनसभा को संबोधित करते हुए मद्यनिषेध हेतु कहा था कि **'शराब पीने से आत्मा मलिन हो जाती है।'**[15] उनके इस वाक्य का यहाँ की जनता पर व्यापक असर हुआ यहाँ मद्यनिषेध की भावना जागृत हुई। जिले में असहयोग आंदोलन की गति तीव्र होते देख शासन ने दमनचक्र की गति भी बढ़ा दी। इसके अंतर्गत अनेक सत्याग्रहियों को गिरफ्तार कर दंडित किया गया किन्तु इससे जनता के उत्साह में कोई कमी नहीं आई और आंदोलन निरंतर जारी रहा।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि महात्मा गाँधी की सिवनी यात्रा, उनके भाषणों एवं विचारों का स्थानीय लोगों के मन मस्तिष्क पर गंभीर प्रभाव पड़ा जिससे वह न केवल असहयोग आंदोलन निरंतर गति से संचालित हुआ अपितु इस यात्रा के दूरगामी प्रभाव भी रहे तथा सिवनी की जनता ने भावी आन्दोलनों जैसे झण्डा सत्याग्रह, वन सत्याग्रह, व्यक्तिगत सत्याग्रह एवं भारत छोड़ो आन्दोलन इत्यादि में अपनी सशक्त भागीदारी की अंकित की।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मिश्रा, डी.पी. ; मध्यप्रदेश में स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास, स्वराज संस्थान संचालनालय, भोपाल 2001 पृ. 297
2. सीतारमैया, पट्टाभि ; कांग्रेस का इतिहास (हिन्दी अनुवाद) खण्ड एक पृ. 161
3. खिरवड़कर एस.जी. मध्यप्रदेश संदेश स्वाधीनता आंदोलन विशेषांक 15 अगस्त 1987 जनसंपर्क संचनालय भोपाल, पृ. 106
4. पाठक, जे.पी. ; सिवनी कल आज और कल कोणार्क कम्प्यूटर्स, सिवनी, 2004 पृ. 12
5. मध्यप्रदेश और गाँधी जी, गाँधी शताब्दी समारोह समिति के लिये सूचना प्रसारण संचालनालय द्वारा प्रकाषित 1969 पृ. 17
6. मध्यप्रदेश के स्वतंत्रता संग्राम सैनिक जबलपुर संभाग, सूचना प्रकाशन विभाग, 1978 पृ. 220
7. पाठक, जे.पी. वही, पृ. 12
8. गुरू, एस. डी. ; मध्यप्रदेश डिस्ट्रिक्ट गजेटियर सिवनी, 1989 पृ. 39
9. पाठक, जे.पी. वही
10. मध्यप्रदेश के स्वतंत्रता संग्राम सैनिक, वही
11. शर्मा, एस.एन. ; सिवनी प्राचीन एवं अर्वाचीन,दिवाकर प्रिंटर्स, सिवनी, 1960 पृ. 13
12. खिरवड़कर एस.जी. वही,पृ. 106
13. गुरू, एस. डी. ;वही
14. शर्मा, एस.एन. ;वही पृ. 14
15. मध्यप्रदेश और गाँधी जी, वही पृ. 17

****

प्राचीन भारत में ध्वनि तथा वाणी विज्ञान

डॉ. नितिन सहारिया *

प्रस्तावना – देश के सर्वसाधारण लोगों में यह धारणा प्रचलित है कि विज्ञान के क्षेत्र में प्रकाश की प्रथम किरण पश्चिम में आकाश में ही फूटी थी और इस कारण समूचे विश्व में विकास चक्र गतिमान हुआ। पूर्व के आकाश में विज्ञान के क्षेत्र में अंधकार व्याप्त था। इस धारणा के कारण मात्र पश्चिम का अनुकरण करने की वृत्ति देश में दिखाई देती है। परिणामस्वरूप हमारी कोई वैज्ञानिक परम्परा थी, विज्ञान दृष्टि थी इसका कोई ज्ञान न होने से आज के विश्व में हमारी कोई भूमिका हो सकती है, इस विश्वास का अभाव आज चारों ओर दिखाई देता है। इसका कारण यह है कि विदेशियत के प्रभाव और अपने बारे में हीनता बोध की मानसिक ग्रंथि से देश के बुद्धिमान लोग ग्रस्त हैं और यह मानसिकता देश के लिए सबसे बड़ी बाधा है।

सृष्टि की उत्पत्ति की प्रक्रिया नाद के साथ हुई। जब प्रथम महास्फोट हुआ (बिग बैंग) तब आदि नाद उत्पन्न हुआ। उस मूल ध्वनि को जिसका प्रतीक ॐ है उसे नादब्रह्म कहा जाता है। पातंजलि योगसूत्र में पातंजलि मुनि ने इसका वर्णन 'तस्य वाचक प्रणव:' उसकी अभिव्यक्ति ॐ के रूप में है, ऐसा कहा है। माण्डूक्योपनिषद् में कहा है–

ओमित्येतदक्षरमिदम् सर्वं तस्योपव्याख्यानं
भूतं भव्द्धविष्यदिति सर्वमोकांर एव।
यच्चान्यत् त्रिकालातीतं तदप्योकांर एवं ।। माण्डूक्योपनिषद्– 1।।

अर्थात् ॐ यह अक्षर अविनाशी स्वरूप है। यह संपूर्ण जगत् उसका ही उपव्याख्यान हैं जो हो चुका है, जो है तथा जो होने वाला है, यह सब का सब जगत् ओंकार ही है तथा जो ऊपर कहे हुए तीनों कालों से अतीत अन्य तत्व है, वह भी ओंकार ही है।

यही आदि नाद भिन्न रूपों में सृष्टि में अभिव्यक्त होता है। वही मानव में वाणी के रूप में अभिव्यक्त होता है।

वाणी का स्वरूप – हमारे यहाँ वाणी विज्ञान का बहुत गहराई से विचार किया गया। ऋग्वेद में एक ऋचा आती है–

चत्वारि वाक् परिमिता पदानि तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिण:
गुहा त्रीणि निहिता नेगंय्न्ति तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति।।

अर्थात् वाणी के चार पाद होते हैं, जिन्हें विद्वान् मनीषी जानते हैं। इनमें से तीन शरीर के अंदर होने से गुप्त हैं, परन्तु चौथे को अनुभव कर सकते हैं। इसकी विस्तृत व्याख्या करते हुए पाणिनी कहते हैं। वाणी के चार पाद या रूप हैं–

1. परा
2. पश्यन्ती
3. मध्यमा
4. वैखरी

वाणी की उत्पत्ति – वाणी कहाँ से उत्पन्न होती हैं, इसकी गहराई में जाकर अनुभूति की गई। इस आधार पर पाणिनी कहते हैं, आत्मा वह मूल आधार है, जहाँ से ध्वनि उत्पन्न होती है। वह इसका पहला रूप है। यह अनुभूति का विषय है। किसी यंत्र के द्धारा सुनाई नहीं देती। ध्वनि के इस रूप को परा कहा गया।

आगे जब आत्मा बुद्धि तथा अर्थ की सहायता से मन: पटल पर कर्ता, कर्म या क्रिया का चित्र देखता है वाणी का यह रूप पश्यन्ती कहलाता है, जिसे आजकल Pictorial कहते हैं। हम जो कुछ बोलते हैं, पहले उसका चित्र हमारे मन में बनता है। इस कारण दूसरा चरण पश्यन्ती है।

इसके आगे मन व शरीर की ऊर्जा को प्रेरित कर न सुनाई देने वाला ध्वनि का बुद्धुद् उत्पन्न करता है। वह बुद्धुद् ऊपर उठता है तथा छाती से नि:श्वास की सहायता से कण्ठ तक आता है। वाणी के इस रूप को मध्यमा कहा जाता है। ये तीनों रूप सुनाई नहीं देते हैं। इसके आगे यह बुद्धुद् कंठ के ऊपर पाँच स्पर्श स्थानों की सहायता से सर्वस्वर, व्यंजन, युग्माक्षर और मात्रा द्धारा भिन्न–भिन्न रूप में वाणी के रूप में अभिव्यक्त होता है। यही सुनाई देने वाली वाणी वैखरी कहलाती है और इस वैखरी वाणी से ही सम्पूर्ण ज्ञान, विज्ञान, जीवन व्यवहार तथा बोलचाल की अभिव्यक्ति संभव है।

वाणी की अभिव्यक्ति – यहाँ हम देखते हैं, कितनी सूक्ष्मता से उन्होंने मुख से निकलने वाली वाणी का निरीक्षण किया तथा क से लेकर ज्ञ तक वर्ण किस अंग की सहायता से निकलते हैं, इसका उन्होंने जो विश्लेषण किया, वह इतना विज्ञान सम्त है कि उसके अतिरिक्त अन्य ढंग से आप वह ध्वनि निकाल ही नहीं सकते हैं।

क,ख,ग,घ,ड.–कंठव्य कहे गये,क्योंकि इनके उच्चारण के समय ध्वनि कंठ से निकलती है।

च,छ,ज,झ,ञ –तालव्य कहे गये क्योंकि इनके उच्चारण के समय जीभ तालू में लगती है।

ट,ठ,ड,ढ,ण –मूर्धन्य कहे गये, क्योंकि इनका उच्चारण जीभ के मूर्धा से लगने पर ही सम्भव है।

त,थ,द,ध,न –दंतीय कहे गये, क्योंकि इनके उच्चारण के समय जीभ दांतों से लगती है।

प,फ,ब,भ,म, –ओष्ठ्य कहे गये, क्योंकि इनका उच्चारण ओठों के मिलने पर ही होता है।

स्वर विज्ञान – सभी वर्ण, संयुक्ताक्षर, मात्रा आदि के उच्चारण का मूल 'स्वर' है। अत: उसका भी गहराई से अध्ययन तथा अनुभव किया गया। इसके निष्कर्ष के रूप में प्रतिपादित किया गया कि स्वर तीन प्रकार के हैं।

उदात्त–उच्च स्वर

* शासकीय एम.एम. महाविद्यालय, कोतमा, जिला – अनूपपुर (म.प्र.) भारत

अनुदत्त–नीचे का स्वर
स्वरित –मध्यम स्वर

इनका और सूक्ष्म विश्लेषण किया गया, जो संगीत शास्त्र का आधार बना। संगीत शास्त्र में सात स्वर माने गये जिनहें सा रे ग म प ध नि के प्रतीक चिन्हों से जाना जाता है। इन सात स्वरों का मूल तीन स्वरों में विभाजन किया गया।

उच्चैर्निषाद्, गांधारौ नीचै ऋषभधैवतौ।
शेषास्तु स्वरिता श्रेया:, षड्ज मध्यमपंचमा:।।

अर्थात् निषाद तथा गांधार (नि ग) स्वर उदात्त हैं। ऋषभ और धैवत (रे, ध) अनुदात्त तथा षड्ज, मध्यम और पंचम (सा,म,प) ये स्वरित हैं।

इन सातों स्वरों के विभिन्न प्रकार के समायोजन से विभिन्न रागों के रूप बने और उन–उन रागों के गायन में उत्पन्न ध्वनि तरंगों का परिणाम मानव, पशु, प्रकृति सब पर पड़ता है। इसका भी बहुत सूक्ष्म निरीक्षण हमारे यहाँ किया गया है।

विशिष्ट मंत्रों के विशिष्ट ढंग से उच्चारण से वायुमंडल में विशेष प्रकार के कंपन उत्पन्न होते हैं, जिनका विशेष परिणाम होता है। यह मंत्र विज्ञान का आधार है। इसकी अनुभूति वेद मंत्रों के श्रवण या मंदिर के गुंजब के नीचे मंत्रपाठ के समय अनुभव में आती है।

हमारे यहाँ विभिन्न रागों के गायन व परिणाम के अनेक उल्लेख प्राचीन काल से मिलते हैं। सुबह, शाम, हर्ष, शोक, उत्साह, करूणा भिन्न–भिन्न प्रसंगों पर भिन्न मिलते हैं। वर्तमान में भी कुछ उदाहरण मिलते है।

कुछ अनुभव :

1. प्रसिद्ध संगीतज्ञ पं.ओंकार नाथ ठाकुर 1933 में फ्लोरेन्स इटली में आयोजित अखिल विश्व संगीत सम्मेलन में भाग लेने गये। उस समय मुसोलिनी वहाँ का तानाशाह था। उस प्रवास में मुसोलिनी से मुलाकात के समय पंडित जी ने भारतीय रागों के महत्व के बारे में बताया। इस पर मुसोलिनी ने कहा, मुझे कुछ दिनों से नींद नहीं आ रही है। यदि आपके संगीत में कुछ विशेषता हो, तो बताइये। इस पर पं. ओंकार नाथ ठाकुर ने तानपुरा लिया और राग पूरिया (कोमल धैवत का) गाने लगे। कुछ समय के अंदर मुसोलिनी को प्रगाढ निद्रा आ गई। बाद में उसने भारतीय संगीत की भूरि–भूरि प्रशंसा की तथा रॉयल एकेडेमी ऑफ म्यूजिक के प्राचार्य को पंडित जी के संगीत के स्वर एवं लिपि को रिकार्ड करने का आदेश दिया।

आजकल पाश्चात्य जीवन मूल्य, आचार, व्यवहार का प्रभाव पड़ने के साथ युवा पीढ़ी में पाश्चात्य पॉप म्यूजिक का भी आकर्षण बढ़ रहा है। संगीत के परिणाम किस–किस प्रकार के होते है? पाश्चात्य पॉप म्यूजिक का भी आकर्षण बढ़ रहा है। संगीत के परिणाम किस–किस प्रकार के होते हैं? पाश्चात्य पॉप म्यूजिक आन्तरिक व्यक्तित्व को कुंठित और निम्न भावनाओं को बढ़ाने का कारण बनता है, जबकि भारतीय संगीत जीवन में संतुलन तथा उदान्त भावनाओं को विकसित करने का माध्यम है। निम्न अनुभव प्रयोग इसे स्पष्ट कर सकते हैं।

2. पांडिचेरी स्थित श्री अरविंद आश्रम में श्री मां ने एक प्रयोग किया। एक मैदान में दो स्थानों पर एक ही प्रकार के बीज बोये गये तथा उनमें से एक के आगे पॉप म्यूजिक बजाया गया तथा दूसरे के आगे भारतीय संगीत। समय के साथ अंकुर फूटा और पौधा बढ़ने लगा। परन्तु आश्चर्य यह था कि जहाँ पॉप म्यूजिक बजता था, वह पौधा असंतुलित तथा उसके पत्ते कटे–फटे थे तथा जहाँ भारतीय संगीत बजता था, वह पौधा संतुलित तथा उसके पत्ते पूर्ण आकार के और विकसित थे। यह देखकर श्री मां ने कहा, दोनों संगीतों का प्रभाव मानव के आन्तरिक व्यक्तित्व पर भी उसी प्रकार पड़ता है जिस प्रकार इन पौधों पर पड़ा दिखाई देता है।

3. हम लोग संगीत सुनते हैं तो एक बार का सूक्ष्मता से निरीक्षण करें। इससे हो सकता है। जब कभी किसी संगीत सभा में पं. भीमसेन जोशी, पं. जसराज, या अन्य किसी का गायन हो और उस शास्त्रीय गान में जब श्रोता उसमें एकाकार हो जाते हैं तो उनका मन उसमें मस्त हो जाता है, तब प्राप्त आनन्द की अनुभूति में वे सिर हिलाते हैं। दूसरी और जब पाश्चात्य संगीत बजता है, कोई माइकेल जेक्सन, मेडोना का चीखते–चिल्लाते स्वरों के आरोह–अवरोह चालू होते हैं तो उसके साथ ही श्रोता के पैर थिरकने लगते हैं। अत: ध्यान में आता है कि भारतीय संगीत मानव की नाभि के ऊपर की भावनाएँ विकसित करता है और पाश्चात्य पॉप म्यूजिक नाभि के नीचे की भावनाएँ बढ़ाता है जो मानव के आन्तरिक व्यक्तित्व को विखंडित कर देता है।

ध्वनि कम्पन (Sound Vibration) - किसी घंटी पर प्रहार करते हैं तो उसकी ध्वनि दूर तक सुनाई देती है। इसकी प्रकिया क्या है, इसकी व्याख्या में वात्स्यायन तथा उद्योतकर कहते हैं कि आघात से कुछ ध्वनि परमाणु अपनी जगह छोड़ कर और संस्कार जिसे कम्प सन्तान संस्कार कहते हैं, से एक प्रकार का कम्पन पैदा होता है और वायु के सहारे वह आगे बढ़ता है तथा मन्द तथा मन्दतर इस रूप में अविच्छिन्न रूप से सुनाई देता है। इसकी उत्पत्ति का कारण स्पन्दन है।

प्रतिध्वनि (Echo) - विज्ञान भिक्षु अपने प्रवचन भाष्य अध्याय 1 सूत्र 7 में कहते हैं कि प्रतिध्वनि क्या है? इसकी व्याख्या में कहा गया कि जैसे पानी या दर्पण में चित्र दिखता है, वह प्रतिबिम्ब है। इसी प्रकार ध्वनि टकराकर पुन: सुनाई देती है वह प्रतिध्वनि है।जैसे जल या दर्पण का बिम्ब वास्तविक चित्र नहीं है, उसी प्रकार प्रतिध्वनि भी वास्तविक ध्वनि नहीं है।

रूपवत्वं च न सामान्य त: प्रतिबिम्ब प्रयोजकं शब्दास्यापि
प्रति ध्वनि रूप प्रतिबिम्ब दर्शनात् विद्धान भिक्षु, प्रवचन भाष्य अ.1
सूत्र–87

Pitch Intensity and Timbre & वाचस्पति मिश्र के अनुसार 'शब्दस्य असाधारण धर्म:'– शब्द के अनुक असाधारण गुण होते हैं। गंगेश उपाध्याय जी ने 'तत्व चिंतामणि' में कहा – 'वायोरेव मन्दतर तमादिक्रमेण मन्दादि शब्दोत्पत्ति:' वायु की सहायता से मन्द तीव्र शब्द उत्पन्न होते हैं।

वाचस्पति, जैमिनी, उदयन आदि आचार्यों ने बहुत विस्तारपूर्वक अपने ग्रंथों में ध्वनि की उत्पत्ति, कम्पन, प्रतिध्वनि, उसकी तीव्रता, मन्दता, उनके परिणाम आदि का हजारों वर्ष पूर्व किया विश्लेषण आज भी चमत्कृत करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ऋग्वेद 1–164–45
2. माण्डूक्योपनिषद्–1
3. विद्धान भिक्षु, प्रवचन भाष्य अ.1 सूत्र–87
4. गंगेश उपाध्याय –तत्व चिंतामणि
5. डॉ.प्रदीप कुमार दीक्षित–संगीत मार्तंड पं. ओंकार नाथ ठाकुर, – पृ.17
6. बृजेन्द्रनाथ सील– दी पॉजीटिव साइंसेज ऑफ दी एनशियेन्ट हिन्दूज–पृ.159
7. वहीं – पृ.161
8. वही–163
9. डॉ.मुरली मनोहर जोशी–भारत वर्ष में विज्ञान व प्रौद्योगिकी की स्थिति, आर.एस.चितलांग्या फाऊण्डेशन–कलकत्ता,पृ.13
10. धर्मपाल –इण्डियन साइंस एण्ड टेक्नालॉजी इन दी एटीन्थ सेन्चुरी– पृ.211 प्रकाशक–अदर इण्डिया प्रेस–2000

चांदवड का ऐतिहासिक महत्व

प्रो. कैलास कारभारी खैरनार *

प्रस्तावना – ब्रिटिशकाल में इ.स. 1869 में नाशिक जिले की निर्मिती हुई आज नाशिक जिले में 15 तहसील है। उसमें से ऐतिहासिकता की दृष्टि से चांदवड तहसील को ज्यादा महत्व है। मुंबई आगरा महामार्ग पर नासिक से 65 कि.मी. दूरी पर 20.20° उत्तर अक्षांश और 74.16 पूर्व रेखांश सहयाद्री शिखर पर खान्देश दख्खन की सीमा पर यह गांव है। चांदवड तहसील के मध्युगीन और आधुनिक ऐतिहासिकता की महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मध्युगीन काल में अलग–अलग सत्ताधारियों को पर्वत किलो की मदद हुई।

चैत्र महात्म्य में चांदवड गांव का चंद्रवड ऐसा वर्णन किया है। प्राचीन जैन साहित्य में इस गांव को चंद्रदिव्यापुरी कहा गया है। चांदवड चंद्रहास्य नाम के राजा की नगरी थी। यह राजा माहूर की रेणुका देवी का भक्त था। यह राजा रेणुकादेवी के दर्शन के लिए चांदवड से माहूर जाता आता था। लेकिन आगे बुढ़ापे की वजह से राजा हर बार माहूर नहीं जा सकता था। इसलिए चंद्रहास्य राजा ने सात दिन अन्न जल छोड़ दिया। और देवी उन पर प्रसन्न होकर चांदवड चली आयी और तांबडका नाम के पर्वत पर रूक गयी। उस जगह याने चांदवड गाव के ईशान्य भाग में पत्थर काम किया हुआ और बहुत ही मजबूत किस्म का मंदिर बनाया गया है।

चांदवड गाव यादव वंश के पन्नार राजा ने ई.स. 9 और 10 वीं शताब्दी में बसाया है, ऐसा कहा जाता है। इसी से यादव राजा के चंद्रपुर गांव यही होगा। ई.स. 12 वीं शताब्दी में खान्देश और दख्खन में सत्ता होने की वजह से यादव राजा ने चालूक्य सत्ताधिश के स्वामित्व (मांडलिकत्व) स्वीकार किया था। फिर भी खान्देश के ऊपर (शेउनदेश) यादव राजा ने चालूक्य सत्ता अलग राजा जैसी थी। जिन्होंने जिक्र की हुई राजधानी चंद्रदिव्यापुर यह नाशिक जिले के चांदवड (चांदोर) गाव ही होगा।

रेणूका देवी मंदिर के पूर्वे में पहाडों पर हजारों साल पहले का श्री चेंद्रश्वरजी (महादेव) का मंदिर है। विक्रम राजा की साडेसाती अस्त होने के बाद उस समय का राजा चंद्रसेन ने अपनी कन्या चंद्रकला की शादी (विवाह) कर दी थी। विक्रम राजा और चंद्रकला मध्यप्रदेश उज्जैन चले गये थे। उन्होंने ही इस मंदिर का निर्माण ई.स.16 वीं शताब्दी में किया ऐसा शिलालेख से पता चलता है ।

पेशवा बालाजी बाजीराव (नानासाहेब) के ई.स. 1740 के समय का संदर्भ मिलता है। वो ऐसा की भाउसाहेबजी नासिक में थे उस समय मल्हारारावजी होलकर ने उनको विनती कर चांदवड का महल (परगणा) रहने के लिए दिया था। उस समय से चांदवड महल (परगणा) होलकर को मिला था। मल्हारारावजी होलकर के मृत्यु के बाद राज्य का कारोबार अहिल्याबाई होलकर के पास आया था। उस समय से अहिल्याबाई होलकर का संबंध चांदवड से जोडा गया था। अहिल्याबाई होलकर धार्मिक–सहिष्णु होने के कारण उनकी रेणूका देवी पर अपार श्रद्धा थी। इस वजह से वह हमेशा चांदवड में ठहरती थी। इसने ही इस शहर में ई.स. 1750–1765 के दरम्यान के काल में रंगमहल (होलकरवाडा) बनवाया था। यह वास्तु चांदवड गाव के बीचों बीच है। रंगमहल (होलकरवाडा) बहुत बड़ा और विशाल है। इसमें नक्षीकाम (नकाशी) अप्रतिम खूबसूरत तरीके से बनाया गया है। विशाल सभागृह बड़े मीनार है। रंगमहल का मुख्य प्रवेश द्धार उत्तर की तरफ है। बड़े लकड़ी के दरवाजे को विशेष तरीके से बैठाया गया था। इस दरवाजे के 10–15 फुट ऊँचाई पर लोहे की नोकदार सुली है। रंगमहल की दीवारे पत्थर और इटों से बाँधी गई है। शत्रु (दुश्मन) की तरफ से हमला हुआ तो उस पर गोलोबारी करने के लिए जगह–जगह पर खास छोटी जगह तैयार की गयी है। महल के प्रमुख दिवारों के दोनों तरफ ऊँचे बुरूज है। रंगमहल का प्रमुख दरवाजो को पार करने के बाद खुली जगह है और वहाँ पर मारूती (हनुमान) मंदिर है। उसके बाद प्रमुख (मुख्य) इमारत है। उनके अंदर दर्शनी 60–65 फुट आकार का चौक हैं। वहीं पर अहिल्याबाई होलकर की राजगद्दी है। अहिल्याबाई होलकर ने 28 वर्ष तक राज किया। उनकी महेश्वर पर बहुत श्रद्धा थी। इसलिए वह हमेशा सफेद वस्त्र परिधान करती थी। वैराग्य के प्रति वह सफेद कंबल पर बैठकर अपना कारोबार चलाती थी। रंगमहल के चारों बाजू इमारत की भूलभुलैया की रचना की गयी है। रंगमहल के दक्षिण में एक चौक है, उसमें एक तल मंजिला बनाया गया है। इस तल मंजिल में एक भुयारी रास्ता (मार्ग) हैं। वह रास्ता रेणूका देवी के मंदिर तक जाता है। यही रास्ते से अहिल्याबाई होलकर रेणूका देवी के दर्शन के लिए जाती थी। ऐसा कहा जाता है।

मल्हारारावजी होलकर ने ई.स. 1759 में एक पुरोहित (ब्राह्मण) आदमी को टकसाल (नाणी/पैसा बनाने की जगह) सुरू करने की आज्ञा दी थी। ई.स. 1759 के बाद यहाँ के टाकसाल की (नाणी/पैसा) चलन में आने की सबूत मिलते है। यहाँ की टकसाल में बनाये गये रूपयों को चांदोरी, चांदोडी, चांदवड नाम से जाना जाता था। यहाँ का रूपया कुछ काल तुरा चांदवड रूपया नाम से पहचाना जाता था। लेकिन ई.स. 1769 में यहाँ की टकसाल बंद हो गयी थी। यहाँ की टकसाल से दस घन्टों में 20000 रूपये की नाणी बनाई जाती थी। यहाँ की टकसाल में नाणी बनाने के काम में 300 सोनार (सुवर्णकार) काम करते थे। उनके काम की देखभाल करने वाले अधिकारी को पोतदार कहा जाता था।

* कला महाविद्यालय, सौदाणे (महाराष्ट्र) भारत

निष्कर्ष – चांदवड शहर में तैयार किया गया रंगमहल (होलकरवाडा) वास्तु बडी आकर्षक है। उसमें की गयी चित्रकारी भिती चित्र (दीवार चित्र) ऐतिहासिक संस्कृति के कला के नमुने है। लेकिन पुरानी होने के कारण उनकी दुरूस्त करने की आवश्यकता है। चांदवड गांव में मिले शिलालेख का अभ्यास होने की आवश्यकता है। यहाँ की रेणूकादेवी का मेला जब होता है, उस समय भारतीय संस्कृति मिलन का दृश्य देखने को मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुलकर्णी वि.म. कुलकर्णी अ.रा. देशपांडे प्र.न. (संपादक) पेशव्यांची बखर, पुणे1963
2. कुलकर्णी अ.रा.खरे ग.ह. (संपादक) मराठयांचा इतिहास खंड-3, कॉन्टीनेन्टल प्रकाशन,पुणे 1984
3. कुंटे ग.भ. स्वातंत्रय सैनिक कोश (महाराष्ट्र राज्य) खंड- 1 दर्शनिका विभाग, मुंबई 1979
4. जामदाडे ए.पी.पुणे विद्यापीठ इतिहास अध्यापक परिषद स्मरणिका 1991
5. जोशी महादेव शास्त्री (संपादक)- भारतीय संस्कृति कोश खंड-9 महाराष्ट्र राज्य साहित्य व संस्कृति मंडल, मुंबई

****

स्वाधीनता संग्राम की क्रीड़ास्थली नीमच

डॉ. शालिनी गुप्ता *

प्रस्तावना – मंदसौर जिले की नीमच तहसील का 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में अपना विशिष्ट स्थान रहा है। तत्कालीन सेन्ट्रल इण्डिया और राजस्थान के रजबाडों की व्यवस्था बनाये रखने के लिये भौगोलिक दृष्टि से अंग्रेजों में मेजर जनरल आक्टोलोनी को नीमच में छावनी बनाने का काम सौंपा। मेजर जनरल आक्टोलोनी नसीराबाद और महू में भी छावनी डाल चुके थे। सैकड़ों रजबाडों और हजारों जागीरदारों पर नियंत्रण रखने के लिये ब्रिटिश शासन को फौंजे रखना आवश्यक हो गया था, सभी पिण्डारियों के दमन की आड़ लेकर सन् 1819 में यहाँ किले का निर्माण कार्य आरम्भ हुआ। किला बन जाने के बाद गौरों ने यहाँ पर फौजी ताकत बढ़ाने की ओर ध्यान दिया। सन् 1857 में गदर के प्रारंभ तक मिलिट्री की संख्या बढ़ाने का काम जारी रखा और धीरे–धीरे छावनी नगर भी बसने लगा। यहाँ की गतिविधियों पर नजर रखने के लिये ले. कर्नल एबोट और ले. कर्नल मिलर की नियुक्ति की गयी।

मेवाड़ के पोलिटिकल एजेन्ट कप्तान की शार्बास की पुस्तक 'ए मिसिंग चेप्टर ऑफ इण्डियन म्यूटिनी' के अनुसार मई 1857 के अंतिम दिनों में मुहम्मद अली बेगनायक एक सवार ने नीमच की भारतीय सेना को बहका दिया और इस प्रकार स्वाधीनता संग्राम का श्री गणेश हुआ। पहली बम्बई केवलरी के बागी सैनिकों ने 28 मई 1857 को विदेशी शासन के विरूद्ध विद्रोह उन्मुख किया। विद्रोहियों सैनिकों ने 3 जून 1857 की रात को आक्टरलोनी हाल पर धाबा बोल दिया।

विद्रोह से भयभीत अंग्रेज अधिकारियों ने आत्मरक्षा का कोई उपाय न देखकर नीमच के किले में शरण ली परन्तु बागियों ने उन्हें वहाँ से भी भगा दिया। भागे हुए आंग्ल अधिकारियों ने समीपवर्ती ग्राम कैसूदा में शरण प्राप्त की और तत्कालीन महाराणा से रक्षा की प्रार्थना की। कैसूदा ग्राम में कुछ लोगों ने उन्हें अपने मकानों में छिपा लिया। इसकी सूचना बागियों को मिली और वे कैसूदा पहुंचे परन्तु मेवाड़ी सिपाहियों और पटेलों ने सामना करके बागियों को मार भगाया। कुछ समय बाद केप्टन लायड और मेवाड़ के सेनापति अर्जुन सिंह के नेतृत्व में अंग्रेजों को एक बार फिर नीमच दुर्ग पर कब्जा करने में सफलता मिली। इस संघर्ष में बंदी बनाये गये कुछ वीरों को तोपों से बांधकर उड़ा दिया गया तथा कुछ के सिरों को घोड़ों की टापों से कुचल दिया।

नीमच की रक्षा के लिये केप्टन लायड और सेनापति अर्जुन नीमच में रह गये। नीमच से निराश हो विद्रोही क्रान्तिकारियों ने जीरन के किले को घेरा और उसे केन्द्र स्थल बनाकर अपना संघर्ष जारी रखा। धीरे–धीरे वे पुन: संगठित होने लगे। इसी बीच बम्बई और कोटा के कुछ वीर सिर पर कफन बांधकर इस ओर आ निकले। इन विद्रोही सैनिकों में भी अनुदार चिन्ह दृष्टिगोचर होने लगे। फलस्वरूप मुखियाओं को पकड़कर उन्हें तोप से उड़ा दिया गया जितना उन्हें दबाने का प्रयत्न किया गया, यह आग उतनी ही तेजी से भड़की।

23 अक्टूबर 1857 को निम्बाहेड़ा का बागी हाकिम मंदसौर पहुंचा। हाकिम वहाँ के बागीदल को साथ लेकर जीरन के क्रान्तिकारियों की सहायता करने के उद्देश्य से वहाँ पहुँच गया। विद्रोहियों और ब्रिटिश सेना के बीच जमकर लड़ाई हुई। कई सेना अधिकारियों की मौत के बाद अंग्रेजों को हार माननी पड़ी। इस लड़ाई में कई बागी सैनिक भी मारे गये, परन्तु उनके आगे खाने का कोई प्रश्न नहीं था, अपितु स्वतंत्रता प्राप्ति का पुनीत लक्ष्य था। बचे हुऐ बागियों ने मिलकर करीब चार हजार सैनिकों की एक सेना तैयार की।

नवम्बर 1857 के प्रथम सप्ताह में उन्होंने नीमच पर चढ़ाई कर दी। वर्तमान 'मोहन की बेटी' नामक स्थान पर जमकर मुकाबला हुआ। जोरदार लड़ाई के बाद अंग्रेजी सेना को पीछे हटकर किले में घुसना पड़ा। किले की व्यवस्था ठीक न होने के कारण विद्रोही सीढ़िया लगाकर किले में घुस गये, हालांकि पहली बार वे खदेड़ दिये गये थे। किले में मालवा फील्ड फोर्स में विद्रोह फैल जाने के कारण बागियों को उनका सहयोग भी मिला। इस भयंकर लड़ाई में लेफ्टीनेंट ब्रेट तथा सार्जेण्ट मारे गये। नीमच पर बागियों का कब्जा हो गया। यह खबर जैसे ही भारतवर्ष में फैली, तत्कालीन गर्वनर जनरल नीमच विजय करने के लिये एक बड़ी भारी सेना अपने बड़े अफसर के नेतृत्व में भेजी, परन्तु वे असंगठित और मनमौजी देशभक्त संगठित सेना के सामने टिक नहीं सके। अंग्रेजों ने पुन: नीमच को अपने कब्जे में कर लिया।

विद्रोही कहे जाने वाले वीर पकड़े गये और नीमच के आसपास बडे–बडे वट वृक्षों पर उनके शरीर लटका दिये गये। उनके शरीरों को जिन वट वृक्षों पर लटकाया गया था, वे इस घटना के गवाह के तौर पर आज भी मौजूद हैं। वर्तमान माध्यमिक शाला नीमच नगर, जहाँ अंग्रेजों के समय जेल थी, उसके सामने वट वृक्ष पर कई देशभक्तों को फॉसी दी गयी।

स्वाधीन भारत में नीमच क्षेत्र के उन अज्ञात शहीदों के यह बलिदान युग–युग तक प्रेरणा देते रहेंगे, जिन्होंने 1857 के स्वाधीनता संग्राम में सक्रिय भाग लेकर देश को दासता की बेड़ियों से मुक्त कराने का असफल प्रयास किया था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. स्मारिका मध्यप्रदेश स्वतंत्रता संग्राम सेनानी सम्मेलन इंदौर सन् 1991 पृष्ठ 17
2. मध्यप्रदेश संदेश/15 अगस्त 1987/अ–41
3. कप्तान शार्वास – 'ए मिसिंग चेप्टर ऑफ इण्डियन न्यूटिनी'

* गल्ला मण्डी रोड, वार्ड नं. 2, लहार, जिला- भिंड (म.प्र.) भारत

ग्रामीण समाज में जनसंचार के स्वरूप एवं बदलाव लेती हुई सामाजिक संरचना

डॉ. संजय जोशी *

प्रस्तावना – जनसंचार के माध्यम संस्कृति में क्रांति लाते हैं और विज्ञान, इलेक्ट्रॉनिक का अद्यतन ज्ञान इसे विश्वस्तरीय प्रसंग बोध प्रदान कर रहा है। किसी भी राष्ट्र के सांस्कृतिक परिष्करण में जनमाध्यमों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती हैं, क्योंकि जनमाध्यम ही सांस्कृतिक मूल्यों का इस तरह प्रकाशन एवं प्रसारण करते हैं कि जन सामान्य उन्हें न केवल स्वीकार कर लेता है, वरन अपने आचरण में भी उतार लेता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् जनमाध्यमों का तेजी से विस्तार हुआ है, जिसने हमारे समाज में संपर्क के नए साधन उपलब्ध करा दिए हैं, तथा आपसी समझ एवं सहमति को बढ़ावा दिया है। प्रत्येक मीडिया का अपना एक स्वभाव होता है और उसे स्वभाव के अनुरूप ही वह समाज से अपने लिए कथानक तैयार करता है, इस क्रम में वह अंजाने में ही एक रूढ़ संस्कृति में गतिशिलता का वाहक बन जाता है।

संचार क्रिया संस्कृति का एक विशिष्ट अंग है, क्योंकि संचार द्वारा ही सांस्कृतिक मूल्यों का संरक्षण व्यापक स्तर पर संभव होता है। संचार साधनों में तेजी से हुए विकास के कारण सांस्कृतिक परिदृष्य में भी परिवर्तन दिखायी दे रहा है। प्राचीन काल में संचार साधनों की गति धीमी एवं एक छोटे भू–भाग तक ही सीमित थी। जिसके कारण एक छोटा समुदाय ही अपने सामाजिक परिवेश के प्रति प्रतिबद्ध था। लेकिन कालान्तर में जैसे जैसे उद्योगों का विकास हुआ और मशीनी उपकरणों का अविष्कार हुआ , विभिन्न समुदायों के बीच सूचना समाचारों के आदान प्रदान के कारण एक विस्तृत सामाजिक परिवेश का विकास हुआ। 16 वीं शताब्दी तक आते – आते मशीनी उपकरणों और वाष्प संचालित उपकरणों के कारण संचार सुविधाओं में अभूतपूर्व परिवर्तन हुआ। इस दिशा में छापेखानों के विकास एवं कागज उद्योगों के विकास के कारण संचार की परम्परागत विधाओं में अभूतपूर्व परिवर्तन हुआ। वाष्प शक्ति की सीमाओं के कारण बाद में विद्युत चलित मशीनों का विभिन्न उद्योगों में चलन प्रारंभ किया गया।

ग्रामीण समाज – ग्रामीण समाज भारतीय सामाजिक संरचना का प्रमुख आधार है। सदियों से ग्रामीण समाज , जनसंख्या का एक प्रमुख अंग रहा है। आज संपूर्ण देश व प्रदेश में विकास एक महत्वपूर्ण मुद्दा बना हुआ है। संचार व्यवस्था का आधुनिक स्वरूप वृहद समाज की स्थापना के जनसंचार के रूप में दिखाई देता है। यद्यपि मानव समूह में पारंपरिक दृष्टि से संचार का वही स्वरूप उपलब्ध है, लेकिन समय की गति वैज्ञानिक प्रगति और निरंतर विकास के आधारों ने प्रारंभिक संचार व्यवस्था के स्थान पर एक नई व्यवस्था प्रस्तुत की है। ग्रामीण समाज की एक प्रमुख विशेषता है कि यह अपेक्षाकृत स्थिर एवं परम्परात्मक होते हैं। ये परिवर्तन को शीघ्र स्वीकार नहीं करते हैं, परन्तु बीसवीं सदी के अंतिम दौर में संचार और सूचना के क्षेत्र में नई तकनीकी का विस्फोट हुआ जिसने मानव के सभी समाजो को किसी न किसी रूप में प्रभावित किया है। समाजशास्त्रीय अध्ययनों का मुख्य विषय समाज में नवीन तकनीकी या प्रोद्योगिकी से उत्पन्न क्रियाओं एवं प्रतिक्रियाओं का मूल्यांकन करना होता है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह विषय और भी महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि संचार का मानव के संबंधो एवं अन्तर्क्रियाओं पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है, जो कि समाजशास्त्रीय अध्ययन का मुख्य विषय है। प्रस्तुत आलेख का मुख्य **उद्देश्य** ग्रामीण समाज में जनसंचार माध्यमों से उत्पन्न होने वाले बदलावों पर ध्यान केन्द्रीत करना है।

विकास के आयाम – विकास प्रक्रिया में लोगों की भागीदारी जुटाने के लिए सूचना, शिक्षा और संचार संबंधी क्रियाकलाप निर्णायक होते हैं। अब इस बात को अधिक महसूस किया जाता है कि सामाजिक रूपान्तरण एवं बदलाव के विभिन्न कार्यक्रमों के उद्देश्य प्राप्त करने के लिए विकास प्रक्रिया में लोगों की इच्छापूर्वक भागीदारी अनिवार्य है। बदलाव प्रक्रिया में लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करने में प्रमुख बाधाओं में से एक बाधा लोगो में जानकारी का अभाव हुआ करता था। किन्तु सूचना प्रौद्योगिकी में हुए तीव्रतर विकास ने इस बाधा पर काफी हद तक विजय प्राप्त कर ली है। सूचना और संचार प्रणाली में 21 वीं सदी में हुई अभूतपूर्व प्रगति ने विकास एवं बदलाव को भी गति प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि जनसंचार माध्यमों के नवीनतम संस्करणों के साथ यह सहज ही प्रत्येक घर में प्रवेश कर गई है। सूचना प्रौद्योगिकी की इस दस्तक से अब ग्रामीण समाज भी अछूता नहीं रहा है।

सूचना प्रौद्योगिकी एवं सामाजिक रूपातंरण – संचार मनुष्य की मूलभूत आवश्यकता प्राचीन काल से रही है। पहले इसका संसाधन प्राकृतिक रूप में पक्षियों,मेघो, चांद–तारों से था। परन्तु विकास के साथ वैज्ञानिक प्रकृति ने आज पूरे विश्व को एक ग्लोबल विलेज बना दिया है इंटरनेट के संजाल ने एक बटन के नीचे सारे संसार को पारदर्शी बना दिया है। साईबर स्पेस ने आज समस्त विश्व को अपने आगोश में ले लिया है। यद्यपि यह क्रांति 70 व 80 के दशक में यूरोप तथा अमेरिका में हुई थी। सूचना तकनीक ने एक नई सांस्कृतिक अवधारणा को जन्म दिया है। जिसमें उपभोक्ता संस्कृति का विस्तार और संरक्षणवादी प्रकृति का उभरना शामिल है। पश्चिम के विकसित समाज कम्प्यूटर नेटवर्क के साथ जुड़कर 'टैक्नेट्रॉनिक' संस्कृति में रूपांतरित

* सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (समाज शास्त्र) स्वामी विवेकानन्द शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

हो रहे हैं । विशिष्ट संस्कृतियों और समुदाय बहुस्थानिक, बहुजातीय, बहुसांस्कृतिक संकुल के भीतर समाहित हो रहे हैं तथा द्वितीयक महत्व के हो रहे हैं । प्रेस, रेडियो, फिल्म, टेलीविजन, साईबरनेटिक ओर इन्फारमेटिक्स आज सम्पूर्ण वैश्वीकरण संबंध संकुल का नियन्त्रण कर रहे हैं। सूचना प्रौद्योगिकी और दूरसंचार की व्यवस्थाएं अंक और अक्षर के साथ जुड़कर मानव ज्ञान के व्यापक परिवेश को अपने संकेतो के भीतर समाहित कर रहे हैं। टैक्नोलॉजी और इलेक्ट्रानिक विद्या संकेतबद्ध संरचना प्रस्तुत कर रहे हैं जो कम्प्यूटर वेबसाईट की फ्लापी में अवस्थित है। सूचना प्रौद्योगिकी क्रांति वैश्वीकरण की ही देन हैं ।

परन्तु भारत जैसे परम्परामूलक समाज में जहां संस्कार, सामाजिक प्रतिमान, अध्यात्म तथा संयुक्त परिवार की व्यवस्था रही है वहां इस संस्कृति ने इन्द्रिय सुख, संग्रहवादिता तथा एंकाग्री जीवन दर्शन को बढ़ावा दिया है। हिंसा, अश्लीलता से भरे नित्य नए टीवी चैनल अपसंस्कृति प्रसार, विदेश मीडिया की भागीदारी, बढ़ता आतंकवाद, सामाजिक विघटन के नए आयाम वैयक्तिक विघटन, श्वेतपोश अपराध, बेरोजगारी आदि तत्व इसी सूचना प्रौद्योगिकी के नए उत्पाद या प्रतिउत्पाद हैं ।

आज सूचना प्रौद्योगिकी के लाभो को नकारा नहीं जा सकता । सूचना तथा संचार प्रौद्योगिकी ने मनुष्य के जीवन के हर क्षेत्र में क्रांति ला दी है । भौतिक दृष्टि से मनुष्य सबल हुआ है, उसके दैनिक कार्यकलाप आसान हो गए है । उसकी कार्यक्षमता में विकास हुआ है । यह क्रांति अब केवल नगरों तक ही सीमित नहीं रह गई, अपितु गांवो में भी इसकी लोकप्रियता बढ़ी है । वे सूचना व संचार साधनों से लाभ उठा रहे हैं ।

सूचना प्रौद्योगिकी समाज की विभिन्न आवश्यकताओं का आधार बनती जा रही है । विश्व विकास रिपोर्ट के अनुसार भारत में वर्ष 1998 तक प्रति हजार व्यक्ति 2.7 कम्प्यूटर और वर्ष 2000 तक प्रति दस हजार लोगों के बीच 0.23 इन्टरनेट कनेक्शन थे । नवगठित सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय ने इस प्रौद्योगिकी का लाभ भारत की विकास प्रक्रिया को दिलाने के लिए पिछले कुछ वर्षो में उल्लेखनीय कार्य किए हैं तथा कई प्रौद्योगिकी विभाग भी खोले है ।

जनसंचार साधनों की परिवर्तन एवं विकास में भूमिका ।

1. **समाचार पत्र** – भारत में सर्वप्रथम प्रेस का आगमन गोवा में हुआ, जहां सबसे पहले 1557 में बाइबिल का मुद्रण किया गया । यद्यपि समाचार – पत्रों के प्रकाशन में मुद्रण मशीनों का उपयोग हमारे देश में 1780 के आसपास ही संभव हो सका । 1780 में सबसे पहला अखबार 'बगांल गजट' के नाम से कलकता में प्रकाशित हुआ । भारतीय समाज का ढांचा इतना जटिल एवं दुरूह है कि किसी एक नीति या किसी एक अधिनियम द्वारा नहीं सुलझाया जा सकता। फिर भी पत्रकारों के अथक प्रयास और भारतीय पत्रकारिता के जुझारूपन के कारण आज देश हर क्षेत्र में आगे बढ़ रहा है ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात देश के समक्ष जो समस्याएं मुंह बाए खड़ी थी,उनमें साम्प्रदायिक कट्टरता, जातिगत भेदभाव, छुआ–छुत की भावना , गरीबी, अशिक्षा, महामारियों का प्रकोप आदि प्रमुख थी । जनता तक पहुंचने के लिए समाचार पत्रों के अलावा और कोई विकसित माध्यम नहीं था । निजी क्षेत्र में होते हुए भी समाचार पत्रों ने राष्ट्र की उन्नति के लिए तात्कालीन सरकार को अपना पूरा सहयोग प्रदान किया ।

भारतीय समाज को आधुनिकता की ओर प्रेरित करने, अंधविश्वास और रूढ़ियों से मुक्त करने आर्थिक प्रग्रति में सहभागिता के लिए समाचार पत्रों ने प्रचार प्रसार के अभियानों को महत्व दिया । सरकार और जनता के बीच में एक सेतु का कार्य करते हुए समाचार पत्रों ने जन आकांक्षाओं को अपनी पत्र पत्रिकाओं में स्थान दिया । जो समाचार पत्र केवल राष्ट्रीय मुद्दो या बड़े नेताओं और उद्योगपतियों तक सीमित थे । वे अब जनधारणा की और उन्मुख होने लगे एवं आम आदमी की तकलीफो का भी ब्यौरा इन समाचार पत्रों में प्रकाशित होना प्रारंभ हुआ ।

कला साहित्य की अभिव्यक्तियों उनकी सूचना प्रकाशित करने में समाचार पत्रों का महत्वपूर्ण स्थान है । विशेष परिशिष्टों के माध्यम से खेल, विज्ञान, व्यापार, कृषि और राजनैतिक मुद्दों पर खोजपूर्ण सामग्री के प्रसार से सामान्य पाठक वर्ग की जानकारी में न केवल वृद्धि हुई है, अपितु उनके बौद्धिक स्तर और निर्णय लेने की क्षमता में भी विकास हुआ है । अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय समाज एवं संस्कृति को सम्मानपूर्ण स्थान दिलानें में भी समाचार–पत्रों की महत्वपूर्ण भूमिका है । सभी समाचार – पत्र समाज में व्याप्त नकारात्मक शक्तियों के विरूद्ध अपनी लेखनी का उपयोग करते हैं । अनेक सामाजिक अंधविश्वासों, परंपराओं, रीतियों का विरोध समाचार–पत्रों में दिखाई देता है ।

संस्कृति से मुख्य आशय आम नागरिक को व्यक्तिगत और सामाजिक दुर्गुणो से मुक्ति दिलाना है । ताकि वह चरित्रवान और जिम्मेदार नागरिक बन सके । इस दिशा में समाचार पत्रों ने धर्म और दर्शन संबंधी सामग्री को भी स्थान दिया है । भारतीय ग्रामीण परिवेश से जुड़ी लोक संस्कृति पर भी पर्याप्त सामग्री समाचार–पत्रों में मिल जाती है । आदिवासी समुदाय की संस्कृति की झांकी उनके परिधान उनके गीत संगीत, आभूषण और रहन सहन को केन्द्र में रखकर तथा महिलाओं व बालकों व युवाओं के लिए उपयुक्त सामग्री प्रकाशित होती रहती है । जो हमारी सांस्कृतिक विरासत की अभिव्यक्ति है । पिछले कुछ वर्षो में पल्स पोलियों अभियान, परिवार नियोजन अभियान,दहेज विरोध अभियान, जागो ग्राहक जागो अभियान, स्वच्छ भारत अभियान आदि समाचार– पत्रों के ही कारण सफलता पूर्वक क्रियान्वित हो पाए हैं ।

2. **रेडियो** – जन–माध्यमों में मुद्रण माध्यमों के पश्चात रेडियो का स्थान सर्वोपरि रहा है । समाचार पत्रों के साथ जो सबसे बड़ी कठिनाई थी वह यह कि समाज के कुछ लोगों या बहुत ही सीमित क्षेत्र तक ही इसकी पहुंच थी, उसे रेडियो ने दूर करते हुए सर्वव्यापक व सर्वउपयोगी बनाया । समाचार पत्रों के साथ सबसे बड़ी मुश्किल यह थी कि यह समाज के केवल शिक्षित वर्ग के लिए ही उपयोगी था तथा यातायात के साधनों की कमी के कारण यह दूरस्थ ग्रामीण व आदिवासी अंचलों तक नहीं पहुंच पाता था । भारत में बहुत बड़ी आबादी के लंबे समय तक निरक्षर रहने के कारण समाचार पत्र एक बहुत ही छोटी आबादी के लिए ही उपयोगी रहा । रेडियो वाचिक माध्यम होने के कारण अशिक्षित दूरस्त स्थानों तक प्रसार क्षमता के कारण देहात व आदिवासी अंचलों के निवासियों के लिए भी उपयोगी बन सका ।

हमारे देश के संदर्भ में रेडियो की उपयोगिता इसलिए भी महत्वपूर्ण रही है क्योंकि यहाँ की संचार संस्कृति भी श्रुति एवं स्मृति की संस्कृति है । हमारा पूरा वैदिक वांड्मय मौखिक परम्परा का ही प्रतीक रहा है । हमारे श्रोताओं की मानसिक स्थिति पढ़े हुए शब्द की अपेक्षा बोले गए शब्द के प्रति अधिक आस्थावान है । इसको आकाशवाणी नाम देना इसलिए भी सार्थक लगता है, क्योंकि आकाशवाणी देवताओं की वाणी समझी जाती थी और उसके ऊपर श्रोता स्वंय विश्वास कर लेता था । जब श्रोता का विश्वास अन्य माध्यमों से डगमगा जाता है, तब वह आकाशवाणी का ही स्मरण करता है ।

हमारे देश में रेडियो का शुभारंभ 23 जुलाई 1927 को विधिवत प्रारंभ हुआ, लेकिन शुरू के कुछ वर्षो में रेडियो की प्रगति बहुत संतोषजनक नही रही।

खेलों की साक्षरता में वृद्धि के कारण ग्रामीण तथा छोटे कस्बों से भी युवा प्रतिभाएं उभर कर आई एवं राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर की प्रतिस्पर्धाओं में अच्छा प्रदर्शन कर रहे है। स्वतंत्र भारत के प्रथम सूचना प्रसारण मंत्री सरदार वल्लभ भाई पटेल ने यह निर्णय लिया कि 555 देशी रियासतों के एकीकरण की प्रक्रिया को रेडियो प्रसारणों के माध्यम से इस प्रकार संयोजित किया जाए कि एकीकरण हमारी राष्ट्रीय एकता का प्रतीक बन सके। इस सांस्कृतिक एकीकरण में भारतीय रेल और रेडियो ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया।

भारतीय संविधान में जिन आदर्शो और नीतियों का उल्लेख किया गया है, आकाशवाणी के कार्यक्रम उन्हीं आदर्शो और नीतियों को चारितार्थ करने का उपक्रम करते हैं। जनकल्याण और समाज कल्याण से संबंधित अनेक प्रसारण आकाशवाणी ने समय समय पर सम्पन्न किए हैं। युवाओं, महिलाओं,बच्चों एवं किसानों से संबंधित कई ज्ञानवर्धक, रोचक एवं विकासोन्मुख कार्यक्रम रेडियो की पहचान रहे हैं इसमें विविध भारती से प्रसारित होने वाले सखी-सहेली, हेल्थ, हवामहल,जयमाला तथा आकाशवाणी केन्द्र इंदौर से कृषकों के लिए नंदाजी और भैराजी, युववाणी तथा प्रति रविवार बच्चों के लिए बालसभा इत्यादि प्रमुख हैं।

रेडियो कार्यक्रम में भारतीय सांस्कृतिक परिदृष्य को आकर्षक बनाकर प्रसारित किया जाता है ताकि भारतीय समाज को संवारा भी जा सके और निखारा भी जा सके। सांस्कृतिक उन्नयन आकाशवाणी का मुख्य गुण है। यह ग्रामीण समाज के भदेसपन और भौडेंपन को शिष्ट रूप में प्रस्तुत करती है। यही इसकी आधुनिकता की परिभाषा है। आकाशवाणी समाज को बदलने में तो विश्वास रखती है, लेकिन इस बदलाव को वह बदला लेने की स्थिति तक नहीं पहुंचने देती है। रेडियो के कार्यक्रमों की यह विशेषता रही है कि उसने कामकुंठाओं व अश्लीलता के नग्न प्रदर्शनों तक नही जाने दिया। मानवीय संवेदना और सांस्कृतिक शालीनता आकाशवाणी कार्यक्रमों का प्राण है। सत्य का जैसा उद्घाटन आकाशवाणी करती रही है, वैसा अन्य माध्यमों में आज तक सुलभ नहीं हो पाया है। आकाशवाणी हमारे देश की सांस्कृतिक चेतना का न केवल दर्पण है, बल्कि उस चेतना की संवर्धक व संरक्षक भी है।

3. टेलीविजन – भारत में टेलीविजन का आरंभ 15 सितम्बर 1959 को हुआ। कार्यक्रमों का चित्रमय सजीव प्रसारण जनमाध्यमों एवं संचार के क्षेत्र में एक क्रांतिकारी घटना सिद्ध हुई। दूरदर्शन ने विभिन्न विषयों व विभिन्न वर्गो की रूचि व आवश्यकतानुसार कार्यक्रम व एपिसोंडो का प्रसारण कर जनमानस को जागरूक व उनके विकास को सरल बनाने में सहायक व प्रेरक की भूमिका अदा की है। रामायण, महाभारत, बुनियाद, हमलोग आदि दूरदर्शन पर प्रसारित अब तक के सार्वधिक लोकप्रिय कार्यक्रमों मे रहे हैं। ग्रामीणों के लिए अब पृथक से 24 घण्टे प्रसारित होने वाला चैनल कृषि दर्शन प्रारंभ हो चुका है। इसी प्रकार से धार्मिक, हेल्थ, मंनोरजन, सिनेमा, महिलाओं व रोचक व डिस्कवरी, पशुओं, वाईल्ड लाईफ से संबंधित पृथक निजी चैनल्स भी समाचार चैनलों के साथ-साथ समाज के सभी वर्गो का मनोरंजन ज्ञानवर्द्धन व विकास में महत्ती भूमिका निभाते हुए दिखाई दे रहे हैं।

4. इंटरनेट – सूचना क्रांति के मुख्य घटक के रूप में कम्प्यूटर को महत्व दिया जाता है, लेकिन इंटरनेट के कारण ही कम्प्यूटर की सार्थकता है। इंटरनेट एक ऐसा जनमाध्यम है, जो अपने त्वरित सम्प्रेक्षण के लिए जाना जाता है। ब्रॉडबैंड की सुविधा ने इसकी स्पीड को इतना बढ़ा दिया है कि एक सेंकेण्ड में असीमित जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

इस नए माध्यम के कारण हमारी सांस्कृतिक और कला संबंधी गतिविधियों को दूरस्थ स्थानों देहातो व ग्रामीण क्षेत्रों तक भेजने में हमे अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई है।

सांस्कृतिक, ज्ञानवर्द्धक व ऐतिहासिक घटनाक्रमों के प्रचार प्रसार व संयोजन में इंटरनेट का महत्वपूर्ण योगदान है। किसी भी देश की संस्कृति का विकास उसकी अभिव्यक्ति क्षमता और सम्प्रेषण गति पर निर्भर करता है। हमारे देश में ग्रामीण अंचलो में समृद्ध संस्कृति होते हुए भी उसका प्रचार-प्रसार एक क्षेत्र विशेष तक ही सीमित रहा है।

इंटरनेट की सेवाओं ने राष्ट्रों की सीमाओं को लांघकर ऐसे विश्व गांव की रचना की है कि हजारों मील दूर बैठे व्यक्ति से घर- परिवार के समान बातचीत की जा सकती है। यह सुविधा व्यक्ति के दृष्टिकोण में एक व्यापक विकास की संभावना को जन्म देती है।

इंटरनेट सायबर कैफे के माध्यम से ग्रामीण किसान अब अपनी कृषि संबंधी परेशानियों, मंडी में खाद्यान्नों के भाव, ट्रांसपोटेशन की सुविधा ऑनलाईन कृषि उत्पादों की बुकिंग करवा सकते हैं। सायबर कैफे का उपयोग विशेषकर शहरो में युवक युवतियों को करते हुए देखा जा सकता है। इंटरनेट चैटिंग, सोश्यल नेटवर्किंग साईट, फैसबुक, औरकुट, ट्विटर, माई स्पेस आदि का उपयोग किया जा रहा है।

मीडिया के इन सकारात्मक परिणामों के साथ साथ नकारात्मक परिणाम भी समाज में परिलक्षित हो रहे हैं। जनसंचार के आधुनिकतम माध्यमों ने सांस्कृतिक,भौगोलिक सीमाओं को तोड़ने के साथ साथ मूल्यगत वर्जनाओं को भी शिथिल करने का कार्य किया है। इंटरनेट की सुविधाओं का दुरूपयोग भी बड़े पैमाने पर होने लगा है।वेबसाईट को हैक करना, बैंक खातों में से अवैध तरीके से रकम निकाल लेना, व्यक्तिगत जानकारी का दुरूपयोंग करना, अवैध संबंधो में वृद्धि एवं अन्य अनेक साईबर क्राईम में वृद्धि हो रही है। कुछ अश्लील वेबसाईट युवको को गुमराह भी कर रही है। सोश्यल नेटवर्किंग साईट के माध्यम से महानगरों में युवक युवतियों के ऐसे क्लब चर्चा में हैं, जो अपनी पार्टियों में ड्रग्स का सेवन करते हैं और अश्लील व्यवहार के लिए प्रसिद्ध है।

इन सेवाओं क सद्उपयोग के लिए आवश्यक है कि समाज वैज्ञानिक, नीति निर्माता, सूचना व प्रसारण मंत्रालय के अधिकारी व पुलिस विभाग साथ बैठकर एक ऐसी नीति बनाए, जिससे नकारात्मक गतिविधियों पर कारगर रोक लगाई जा सके। इस प्रकार हम इंटरनेट जो सांस्कृतिक परिवर्तन में एक वरदान है उसका समुचित सदुपयोग कर सकेंगे व विकास को सार्थक अमली जामा पहनाने में कामयाब हो पाऐंगे।

5. मोबाइल – संवाद की दुनिया में टेलीफोन सेवा ने अपना प्रमुख स्थान बना लिया है। जितने क्रांतिकारी परिवर्तन टेलीकम्यूनिकेशन के क्षेत्र में हुए है, उतने आज तक किसी अन्य क्षेत्र एवं सेवा में देखने को नहीं मिले हैं। मोबाइल ने आज हर एक व्यक्ति के पास अपनी पहुंच बना ली है एवं इस पंक्ति 'कर लो दुनिया मुठी में' को चरितार्थ कर दिया है। मोबाइल ने अपन पहली पीढी को पीछे छोड़ते हुए तीसरी एवं चौथी पीढ़ी की सेवाएं उपलब्ध कराना प्रारंभ कर दिया है। अब मोबाइल के अंतर्गत दृश्य, श्रव्य, इंटरनेट, टैक्स्ट, आदि किसी प्रकार की सूचना को संप्रेषित किया जा सकता है। देश में इस समय 90 करोड़ से अधिक मोबाइल उपभोक्ता है, जो इस बात का प्रतीक है कि ग्रामीण क्षेत्रो में भी मोबाइल टेलीफोन की आवश्यकता मानव जीवन के लिये कितनी महत्वपूर्ण हैं। आज समाज में मोबाइल संस्कृति के जन्म का दृश्य इस रूप में दिखाई देता है कि हर व्यक्ति के हाथ में मोबाइल है। यह

व्यक्ति के सशक्तिकरण का प्रतीक है । मोबाइल के द्वारा जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण लाभ समाज को प्राप्त हुए हैं उनमें संकट के समय परिवार के सदस्य एक दूसरे से संपर्क कर संकट का सामना कर सकते हैं। पुलिस प्रशासन को सूचना दे सकते है , आपात कालीन सेवाओं जिसमें अग्निशमन व एम्बुलेंस सेवाएं उपलब्ध करा सकते है । जिससे जन और धन की हानि से त्वरित बचाव होता है। नकारात्मक पक्ष के रूप में युवक–युवतियां इसका दुरूपयोग व अनुचित उपयोग भी कर रहे हैं, जो सामाजिक मूल्यों एवं मर्यादाओं को नुकसान पहुंचाते हुए समाज एवं परिवार की वर्जनाओं को नुकसान पहुंचा रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ओझा, डी.डी., सत्यप्रकाश, **दूरसंचार सूचना प्रौद्योगिकी**, ज्ञानगंगा दिल्ली,2001 ।
2. सिंह, देवव्रत, **भारतीय इलेक्ट्रानिक मीडिय**ा, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007 ।
3. सक्सेना, गोपाल**, भारत में दूरदर्शन –परिवर्तन एवं चुनौतियां**, विकास पब्लिकेशन, दिल्ली, 1996 ।
4. लूथरा,एच.आर**, इण्डियन ब्राडकास्टिंग**, प्रकाशन विभाग भारत सरकार, 1986 ।
5. शर्मा, राधेश्याम, **जनसंचार, (तृतीय संस्करण)**, हरियाणा साहित्य, अकादमी, पंचकूला, हरियाणा 1999 ।
6. पचौरी, सुधीष**, टेलीविजन समीक्षा : सिद्धांत और व्यवहार**, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली , 2006 ।
7. नटराजन, जे**., भारतीय पत्रकारिता का इतिहास**, प्रकाशन विभाग सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार 2006 ।
8. जमलोकी,ओमप्रकाश, **आकाशवाणी एवं दूरदर्शन : उद्भव एवं विकास**, अरावली बुक्स इंटरनेशनल प्रा.लि., नई दिल्ली 2002 ।

****

कुंभ – सिंहस्थ महापर्व (समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)

डॉ. सुधा सुरेश सिलावट* डॉ. मनीष कुमार कलवार **

प्रस्तावना – 'उज्जैन में आयोजित सिंहस्थ हिन्दू धर्म, संस्कृति, अध्यात्म का अद्भुत संगम है।'

– स्वामी श्री अवधेषानंद गिरिजी

समाज, सामाजिक सम्बन्धों का जाल है। अनादिकाल से भारतीय समाज, सभ्यता, संस्कृति, उत्सवप्रिय, धर्म–कर्म में आस्थावान रही है। भारतीय समाज की आस्था और विश्वास के महापर्व सिंहस्थ का आयोजन मध्यप्रदेश राज्य के उज्जैन जिले में संपन्न हुआ है। इस महापर्व का आयोजन– 12 वर्ष के अंतराल पर होता है। वर्ष–2016 में विक्रम संवत–2073 चल रहा है। इस महापर्व का आयोजन भारत में निम्न 4 स्थानों पर होता है –

1. **उज्जैन – क्षिप्रा नदी – मध्यप्रदेश**
2. **हरिद्वार – गंगा नदी – उत्तराखण्ड**
3. **इलाहाबाद – गंगा यमुना संगम – उत्तरप्रदेश**
4. **नासिक – गोदावरी – महाराष्ट्र**

आयोजन तिथि	22 अप्रैल 2016 से 21 मई 2016।
शाही स्नान	22 अप्रैल, 9 मई, 21 मई 2016।
आयोजन स्थन	क्षिप्रा नदी के तट पर भगवान महाकाल की नगरी उज्जैन में।
समय अंतराल	12 वर्ष के समय अंतराल पर।
गणना	बृहस्पति ग्रह जब सिंह राशि में 1 वर्ष के लिये आते हैं तब सिंहस्थ महापर्व का आयोजन होता है।

आयोजन का कारण – देवासुर संग्राम में जब देवताओं के राजा इन्द्र की पराजय तथा दानवों के राजा बलि की जीत हुई। तब सभी देवगण ब्रह्माजी, विष्णु जी के पास गये, तब उन्होंने समुद्र मंथन करने को कहा जिससे अमृत निकलेगा। वासुकी नाग को रस्सी, मंदराचल पर्वत को मथनी बनाया गया। भगवान विष्णु ने कछुऐ का रूप धर अपनी पीठ पर इसे रखा। देवताओं ने सर्प की पूंछ पकड़ी तथा दैत्यों ने मुँह की ओर से पकड़ा। समुद्र मंथन से शुद्ध कुल 14 सामग्री (रत्न) निकले। अंत में भगवान धनवंतरी अमृत कलश लिये हुये प्रकट हुये। इसे इन्द्र के पुत्र जयंत ने ले लिया, राक्षस छीनने दौड़े, जयंत आकाश मार्ग से भागा, परिणामस्वरूप पृथ्वी के 4 स्थलों पर अमृत कलश की बूँदें छलकी, यहीं पर कुंभ महापर्व का आयोजन प्रति 12 वर्ष के अंतराल पर होता है।

आदर्श वाक्य : 'क्षिप्रा के तट पर अमृत का मेला'

प्रभारी मंत्री : श्री भूपेन्द्र सिंह, परिवहन मंत्री, मध्यप्रदेश शासन।

छत्तीस साल में बढ़े सवा करोड़ श्रद्धालु :

क्र.	वर्ष	जनसंख्या
1	1980	2 लाख
2	1992	5 लाख
3	2004	20 लाख
4	2016	1.60 करोड़

बौद्धिक गतिविधियाँ – विभिन्न विषयों पर शोध, विचार विमर्श, धर्म संस्कृति, अध्यात्म, मानव जीवन की अग्रशीलता पर आयोजित हुये। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने भी ग्राम निनोरा में आयोजित वैश्विक महाकुंभ, सांस्कृतिक, बौद्धिक सम्मेलन में भाग लिया तथा अपना उत्कृष्ट संबोधन दिया। श्रीलंका के राष्ट्रपति श्री मैत्रीपाल सिरीसेना ने भी अपना सारगर्भित उद्बोधन दिया।

अध्यात्म, आस्था, विश्वास के अद्भुत इस समागम में देश–विदेश से करोड़ों संतों, महात्माओं, आम जनमानस का आगमन सिंहस्थ महापर्व में हुआ है। विभिन्न स्थानों से आकर जनसमुदाय ने एक लघु भारत का दृष्य प्रस्तुत किया है। अमृत कलश से छलकी अमृत की बूँदों का पान करने एवं अपने मानव जीवन को धन्य करने देश–विदेश से बहुत बड़ी संख्या में हिन्दू धर्मावलंबियों का आगमन हुआ है। इसे ग्रीन सिंहस्थ, डिजीटल सिंहस्थ, पर्यावरण हितैशी सिंहस्थ नाम भी दिया जा रहा है। भारतीय सभ्यता, संस्कृति के इस महान पर्व, आयोजन में हम युवा भारतीयों ने बढ़–चढ़ कर हिस्सा हिस्सा लिया। अपनी सक्रिय सहभागिता दर्ज कराई है क्योंकि हम युवा भारतीय एक श्रेष्ठ सांस्कृतिक भारत राष्ट्र का निर्माण करने में सक्षम भूमिका निभाना चाहते हैं।

उज्जैन प्रमुख स्नान तिथियाँ :

क्र.	पूर्व स्नान	निर्धारित तिथि (दिन)
1	पर्व का आरम्भ शाही स्नान	चैत्र शुक्ल 15, 22 अप्रैल, 2016 शुक्रवार
2	व्रत पर्व वरूथिनी एकादशी व्रत	वैशाख कृष्ण 11, 3 मई, 2016 (मंगलवार)

* प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, साँवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.), पोस्ट डॉक्टोरल रिसर्च गाइड (समाजशास्त्र) इण्डियन काउँसिल ऑफ सोशल साईन्स एण्ड रिसर्च, जे.एन.यू. केम्पस, नई दिल्ली, भारत

** पोस्ट डॉक्टोरल रिसर्च फैलो (समाजशास्त्र) इण्डियन काउँसिल ऑफ सोशल साईन्स एण्ड रिसर्च, जे.एन.यू. केम्पस, नई दिल्ली, भारत

3	स्नान पर्व	वैशाख कृष्ण 30, 6 मई, 2016 (शुक्रवार)
4	शाही स्नान पर्व अक्षय तृतीया	वैशाख शुक्ल 3, 9 मई, 2016 (सोमवार)
5	शंकराचार्य जयंती	वैशाख शुक्ल 5, 11 मई, 2016 (बुधवार)
6	वृषभ संक्रान्ति पर्व	वैशाख शुक्ल 5, 11 मई, 2016 (बुधवार)
7	मोहिनी एकादशी पर्व	वैशाख शुक्ल 11, 17 मई, 2016 (मंगलवार)
8	प्रदोश पर्व	वैशाख शुक्ल 13, 19 मई, 2016 (बुधवार)
9	नृसिंह जयंती पर्व	वैशाख शुक्ल 14, 20 मई, 2016 (शुक्रवार)
10	अंतिम शाही स्नान	वैशाख शुक्ल 15, 21 मई, 2016 (शनिवार)

कुँभ प्रमुख विशेषताऐं :

1. पवित्र नगरी उज्जैन में श्रद्धा और विश्वास का अनूठा समागम सिंहस्थ कुंभ, आपको एक कभी न भूलने वाली स्मृति देकर गया है।
2. मेला क्षेत्र एक आधुनिक नगर की भाँति था, जहाँ बेहतर यातायात, सुरक्षा और स्वास्थ्य रक्षा के सारे प्रबंध किये गये थे।
3. मेला क्षेत्र पर्यावरण मित्र और हरित सिंहस्थ की अवधारणा पर आधारित बनाया गया।
4. सिंहस्थ-2016 पवित्रता के अद्भुत समागम के साथ-साथ सर्वश्रेष्ठ आधुनिक प्रबंधन का भी उदाहरण सिद्ध हुआ है।

कुँभ महापर्व शुरूआत – जूना अखाड़े की परम्परागत पेशवाई (प्रवेश-आई) के साथ ही सिंहस्थ-2016 का शंखनाद हो गया। मंगलवार दिनांक 05 अप्रैल, 2016 को अखाड़े के 5 हजार से अधिक संतों ने छावनी (मेला क्षेत्र स्थित पंडाल) में प्रवेश किया। जूना अखाड़े के आचार्य महामंडलेश्वर अवद्येशानन्द गिरीजी, म.प्र. के मुख्यमंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान, काशी सुमेरपीठ के शंकराचार्य नरेन्द्रानंद सरस्वती, अखिल भारतीय अखाड़ा परिषद् के अध्यक्ष महंत नरेन्द्र गिरीजी, महासचिव हरिजी, महंत नारायण गिरी ने नीलगंगा तालाब पर सुबह 11 बजे पूजन किया। इसके बाद पेशवाई शुरू हुई। ढोल, नगाड़े, शंख की मंगल ध्वनि और जय महाकाल के उद्घोषों के बीच नागा संत नृत्य करते चल रहे थे। यात्रा का समापन शाम 6:20 पर हुआ।

कुँभ महापर्व : उज्जैन के खास दार्शनिक स्थल :

1. श्री महाकालेश्वर मंदिर,
2. श्री चिंतामण गणेश,
3. हरसिद्धि मंदिर,
4. बड़े गणेशजी का मन्दिर,
5. श्री रामजनार्दन मंदिर,
6. नगरकोट की रानी का मंदिर,
7. त्रिवेणी नवग्रह मंदिर,
8. गढ़कालिका मंदिर,
9. श्री गोपाल मंदिर,
10. मंगलनाथ मंदिर,
11. सांदिपनी मंदिर,
12. श्री कालभैरव मंदिर,
13. श्री सिद्धेश्वर मंदिर (शक्तिभेद तीर्थ),
14. चारधाम मन्दिर,
15. श्री ऋणमुक्तेश्वर महादेव मन्दिर,
16. श्री अंगारेश्वर महादेव मन्दिर।

प्रमुख निर्माण कार्य :

क्र.	क्षिप्रा नदी पर ब्रिज	रेल्वे ओवर ब्रिज	फ्लायओवर ब्रिज
1	नृसिंहघाट	चिंतामण रेल्वे क्रासिंग	चिंतामण रोड (इनर रिंग रोड पर)
2	बड़े पुल के समानांतर पुल	एम.आर. 10 विक्रम नगर	बड़नगर रोड (इनर रिंग रोड पर)
3	ऋणमुक्तेश्वर	एम.आर. 5 डालड़ा फैक्ट्री	
4	ओखलेश्वर	जीरो पाईंट (फ्रीगंज से आगर रोड)	
5	मंगलनाथ मंदिर के पीछे	मंगरोली के पास से	

6. प्रत्येक श्रद्धालू का 2 लाख रूपये का दुर्घटना बीमा।
7. आपदा प्रबंधन के व्यापक इंतजाम।
8. खाद्य सामग्री वितरण हेतु अस्थायी राशन कार्ड जारी।
9. 550 मेडिकल आफीसर तैनात।
10. आईटी बेस्ट हेल्प सेन्टर।
11. सिंहस्थ 2016 का पोर्टल भी निर्मित किया गया है।
12. जियोग्राफिकल इंफार्मेशन सिस्टम (GIS) की सहायता से मेला क्षेत्र की प्लानिंग।
13. 134 पाइंट पर 650 सी.सी.टी.वी. कैमरे।

सिंहस्थ-2016 के आयोजन में आईटी की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। सम्पूर्ण क्षेत्र वाईफाई रहा है। साथ ही एक मोबाईल एप भी तैयार किया गया जिसमें सिंहस्थ के पर्व स्नानों की जानकारी, अखाड़ों की जानकारी, दर्शनीय स्थलों की जानकारी उनके नक्शे आदि तो हैं ही साथ ही महिलाओं की सुरक्षा के लिये एक नया इमरजेंसी बटन भी इसमें डाला गया है। आपातस्थिति में इस बटन को दबाने से उनकी लोकेशन, फोन नम्बर सीधे सुरक्षा एजेन्सियों को पहुँच जायेगा और त्वरित रूप से उनको सहायता पहुँचाई जा सकेगी।

प्रशासनिक प्रयास : सिंहस्थ-2016 के लिये राज्य सरकार के मुखिया मुख्यमंत्री श्री शिवराजसिंह चौहान के निर्देश पर राज्य खजाने के द्वार खोल दिये हैं। गत सिंहस्थ-2004 में जहाँ 262 करोड़ रूपये का व्यय सिंहस्थ पर किया गया था और गिने चुने स्थायी प्रकृति के काम हुए थे वहीं इस बार अनेक काम ऐसे हो रहे हैं जो उज्जैन नगर की दशा और दिशा दोनों को बदल देंगे। कस्बानुमा उज्जैन शहर अब महानगर की तर्ज पर विकसित हो गया है जो लोग लम्बे समय बाद उज्जैन को देखेंगे, वे इसके परिवर्तित रूप से इसे बदला हुआ पायेंगे। वेदों एवं उपनिषदों में भी उज्जयिनी का धार्मिक दृष्टि से अनेक स्थानों पर वर्णन किया गया है।

1. 362 करोड़ रूपये की सड़कें मैट्रो सिटी का अहसास करायेगी।
2. 450 बिस्तर का महिला एवं शिशु अस्पताल।

3. क्षिप्रा नदी में नहीं मिलेगा खान का प्रदूषित पानी। खान नदी का डायवर्शन किया गया है।
4. 34 हजार शौचालय बने, स्वच्छता के लिये 117 करोड़ रूपये आवंटित किये गये हैं।

आमंत्रण पत्र : प्रिय भाईयो, बहनों,

यह मेरा सौभाग्य है कि मैं मध्यप्रदेश के साढ़े सात करोड़ नागरिकों की ओर से आपको सिंहस्थ-2016 के अवसर पर आमंत्रित कर रहा हूँ। श्रद्धा एवं विश्वास का यह महापर्व म.प्र. के उज्जैन में 22 अप्रैल से 21 मई 2016 तक आयोजित होगा। सिंहस्थ जीवन का यह एकमात्र अवसर है जहाँ स्वयंभु महाकालेश्वर ज्योर्तिलिंग के दर्शन, मोक्षदायिनी क्षिप्रा में स्नान तथा अद्भुत आध्यात्मिक संगम का आनंद सब कुछ एक साथ संभव हो पाता है। सिंहस्थ में अनेक देशों तथा पूरे भारत से श्रद्धालु आते हैं। आपके लिये यह अविस्मरणीय अनुभव होगा।

प्रस्तुत शोध अध्ययन का महत्व – वर्तमान समसामयिक संदर्भ में प्रस्तुत शोध अध्ययन का बहुत अधिक महत्व एवं प्रासंगिकता है। देशभर के अनेक विश्वविद्यालयों के शोध छात्र-छात्राऐं, प्रबंधन के विद्यार्थी, भूगोल के विद्यार्थी, भीड़ मैनेजमेंट, समाजशास्त्रीय अध्ययनों के लिये उज्जैन आये हैं। समाजशास्त्रीय संदर्भ में इस पर्व का बहुत अधिक सामाजिक महत्व है। विभिन्न धर्म, सम्प्रदाय, भाषा, जाति-वर्ग, समूह, संस्था के लोग यहाँ एकत्रित हुये हैं। अलग-अलग राज्य की संस्कृति को देखा, समझा, उत्कृष्टता, सामाजिकता, भाईचारे को गहराई से महसूस किया है। सिंहस्थ-2016 में उज्जैन नगरी के समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से अध्ययन ने इसके सौंदर्य को और अधिक निखार दिया है। वर्तमान में यह नगरीय अनेक विलक्षण शक्तियों के फलस्वरूप अलौकिक अनुभूति कराती है। यहाँ सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक गतिविधियों की अनुगूँज वर्षभर प्रतिध्वनित होती रहती है। इस नगरी का सामाजिक-समन्वित स्वरूप, महत्व इसे पर्यटन नगरी के रूप में परिवर्तित कर रहा है। भविष्य में यह नगरी अपने सामाजिक-सांस्कृतिक महत्व को बनाये रखते हुए विश्व का आध्यात्मिक केन्द्र बनने की ओर अग्रसर है। इस उज्जैन नगरी का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से अतीत, वर्तमान एवं भविष्य सदैव की तरह सुंदर बना रहेगा। अपनी अनेक विलक्षण समाजषास्त्रीय विशेषताओं के कारण कल भी पहचानी जाती थी, आज भी पहचानी जा रही है और आने वाले कल में भी पहचानी जाती रहेगी।

अंतत: निष्कर्ष के रूप में यही कहा जा सकता है कि धर्म, अध्यात्म, विश्वास और आस्था का प्रतीक सिंहस्थ-2016 का कुशल आयोजन सम्पन्न हो गया है। व्यवस्था, स्वच्छता, कुशल प्रबंधन और आत्म अनुशासन का अभूतपूर्व उदाहरण प्रस्तुत किया है। महाकाल की नगरी उज्जैन में सिंहस्थ के रूप में हम सबको अपनी महान सनातन संस्कृति के सामाजिक परिदृष्य की एक विराट झलक देखने को मिली है। यह 12 साल बाद आया मंगल, सुखकारी प्रसंग था, जब देश-दुनिया से आए करोड़ों श्रद्धालुओं के स्वागत का अवसर मध्यप्रदेश के जनमानस को मिला है। भगवान महाकाल के दर्शन, पवित्र क्षिप्रा में स्नान और संत महात्माओं के आशीर्वाद हमें लंबे समय तक स्मरण रहेंगे। आस्था-विश्वास के इस आयोजन में समाज के हर वर्ग ने दिन-रात व्यवस्था जुटाने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। उज्जैन जिले की पवित्र धरती पर पधारने के लिये समस्त संत समाज और श्रद्धालु समुदाय का वंदन, स्मरण, अभिनंदन समस्त मध्यप्रदेशवासी सदैव करते रहेंगे। महान भारतीय समाज-समुदाय में होने वाले क्रान्तिकारी बदलाव और धर्म के प्रति बढ़ती आस्था, विश्वास का यह सनातन सिलसिला सदियों से निर्बाध रूप से चलता आया है और अनादिकाल तक चलता रहेगा।

'सहस्र कार्तिक स्नानं, माघे स्नानं शतानिच।
वैशाखे नर्मदा कोटि, कुंभ स्नानेन तत्फलम।।'

अर्थात : कार्तिक माह में हजारों स्नान, माघ में सैकड़ों स्नान, किए हों और वैशाख में करोड़ों नर्मदा स्नान किये हों, लेकिन कुंभ पर्व में एक स्नान से ही उनके बराबर पुण्य प्राप्त होते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश संदेश, सिंहस्थ-2016 विशेषांक, अंक-04, अप्रैल-2016, प्रकाशन - मध्यप्रदेश शासन, भोपाल-462003।
2. जोषी, नम्रता - सिंहस्थ-सामाजिक समरसता का महाकुँभ।
3. ठक्कर, सुमित - सिंहस्थ-2016, दैनिक भास्कर समाचार पत्र 26 अप्रैल, 2016।
4. कालीधार, प्रशांत - समरसता स्नान, दैनिक भास्कर समाचार पत्र 7 मई, 2016
5. शाह, प्रकाश - क्षिप्रा का जल, भास्कर रविवार 24 अप्रैल, 2016।
6. गिरि, स्वामी सत्यमित्रानंद - सिंहस्थ कुँभ महापर्व, नईदुनिया विशेषांक-22 अप्रैल, 21 मई, 2016, पृष्ठ क्रमांक-02।
7. उपाध्याय, नर्मदा प्रसाद - क्षिप्रा-अमरता का आव्हान, नईदुनिया समाचार पत्र, 2 मई, 2016।
8. डब्बावाला - पं. अमर ज्योतिषाचार्य - पुण्य अर्जन का शंखनाद, नईदुनिया, 22 अप्रैल, 2016, पृष्ठ क्रमांक-01।
9. विभिन्न समाचार पत्रों, पत्रिकाओं, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय, रिसर्च जर्नल्सों, वेदों, पुराणों, धर्मग्रंथों में उपलब्ध शोध विषय सम्बन्धित अध्ययन सामग्री।

****

उच्च शिक्षा के क्षेत्र में रिसर्च की सम्भावनाएँ

डॉ. ज्योति मेहता *

प्रस्तावना – विज्ञान के क्षेत्र में शोध और अनुसंधान के लिए बेहद कम राशि खर्च करने के बावजूद शोध के क्षेत्र में रत का तेरहवें स्थान पर आना एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। इतिहास पर नज़र डाले तो आर्यभट्ट,सुश्रुत शंकराचार्य,चरक ,पाणिनी आदि रतीय शोध कर्त्ताओं ने दुनिया को जो सौगात दी वह आज भी हमारे लिए अनमोल है। प्राचीन दौर में तक्षशिला और नालंदा सरीखे विश्वविद्यालय में विदेशी छात्रों के आने में भी बड़ा कारण यहाँ बिखरा ज्ञान ही रहा है। बीते लम्बे दौर में शोध के नाम पर कोई ऐसा अविष्कार भारतीयों के नाम पर दर्ज नहीं हो पाया है, जिस पर हम गर्व कर सके। आबादी के मामले में हम दूसरे स्थान पर है। सामरिक व अंतरिक्ष क्षेत्र में भी देश ने अपनी उपलब्धि दर्ज की है। यह सच है कि अमरीका और यूरोपीयन देशों के समान शोध पर हम उतना पैसा खर्च नहीं कर सकते हैं, लेकिन इसका बजट बनाए जाने की ज़रुरत आवश्यक है।

यूनाइटेड नेशंस यूनिवर्सिटी ने रत में इनोवेशन को प्रोत्साहन देने में सरकार की भूमिका पर शोध किया है। उन्होंने अपनी रिपोर्ट में कहा है कि रत में रिसर्च के लिए सरकार द्वारा दिया जाने वाला अनुदान नगण्य है, इनोवेशन में सदा रिस्क रहती है। करोड़ो रूपये लगाने के बाद भी असफलता हाथ लग सकती है। ऐसे में बड़े कार्यक्रमो को सरकार की कुछ समसामयिक महत्व के विषयों को चुने जिनमें इनोवेशन की जरुरत है। उदाहरण के लिए भारत में फिलहाल जितनी ऊर्जा की खपत की जा रही है, 50 वर्ष बाद हमें उससे 10 गुना अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होगी। जनसंख्या की अधिकता और संसाधनो की कमी को देखते हुए इस आवश्यकता की पूर्ति सिर्फ न्यूक्लियर और सोलर एनर्जी के जरिए की जा सकती है। अत: इस समय जी.ई. पावर इलेक्ट्रानिक्स बनाने के लिए अगली पीढ़ी की सामग्री सिलिकान कार्बाईड पर रिसर्च करने की आवश्यकता है। हमें ऐसे उपायो की खोज करना है, जिनसे पावर इलेक्ट्रानिक्स को कम लागत पर बनाया जा सके और जो पवन और गैस टर्बाइन, सोलर इनवर्टरो और ऊर्जा प्रबंध की क्षमताओं को बढ़ा सके। रिसर्च में लम्बा समय लग सकता है। सफल आविष्कारों पर पुरस्कार देने के साथ ही इनोवेशन के लिए जरुरी संसाधन बड़ी मात्रा में अनुदान उपलब्ध कराया जाना आवश्यक है। रत में काउंसिल आफ साइंटिफिक एंड इंडस्ट्रीयल रिसर्च द्वारा कई रिसर्च संस्थानो की स्थपाना की गई है। युनाइटेड नेशन यूनिवर्सिटी ने रत में अपने शोध रिर्पोट में बताया है कि इन संस्थानों की पूर्ण निर्भरता सरकारी अनुदान पर रहती है। इनके द्वारा अपनी चहारदीवारी से बाहर उद्योगों से कम ही ताल मेल बैठाया जाता है। ये शोध कम करते है क्योंकि सरकारी व्यवस्था पर खर्च करने पर जोर होता है,न कि परिणाम मापने पर। यदि उन्होंने कोई अविष्कार कर लिए तो उसे निजी उद्योग को हस्तांतरित करने की कोई रूची नहीं है। अत: रिसर्च इन्सटीट्यूट इंडस्ट्री से सीधे जोड़ते हुए इन रिसर्च के प्रोडक्ट्स में तब्दील करके आम जन तक पहुँचाने की आवश्यकता है। विदेशों में इंडिया को आइड़िया का पर्याय माना जाता है। हमारे देश में सबसे नए आइडिया जनरेट होते है। इसके बावजूद भी यदि हम दुसरे से टेक्नोलाजी लेने के बाद उसे अपनाऐंगे तो हमारे देश नम्बर दो पर है। नम्बर एक तक पहुँचने के लिए हमें अपने देश में ग्राउंड लेबल क्वालिटी रिसर्च को बढ़ावा देना होगा। वर्तमान में रिसर्च एक बहुआयामी साइंस बन गया है। अब कोई भी प्रोजेक्ट एक क्षेत्र में सीमित नही होता बल्कि वह एक दूसरे से जुड़ा होता है। रिसर्च को साइंस के किसी क्षेत्र में विशेषज्ञता रखने के साथ दूसरे क्षेत्र में भी काम करने और उसे सीखने में रूची आवश्यक है। वर्तमान में कोई व्यक्ति रिसर्च टीम में कोने में चुपचाप बैठ जोड़ घटाव करने तक सीमित नहीं रह सकता। वर्तमान में रिसर्च करने वालो को दूसरे लोगो के साथ मिल–जुलकर काम करने और कुछ नया कर दिखाने की जरुरत है। इस हेतु भारत में विश्वविद्यालयो द्वारा दुनिया में अनेक शैक्षणिक संस्थानो से अनुबंधन किए जाने चाहिए. ताकि इसके छात्र विदेशों में विश्वस्तरीय शिक्षण व शोध का लाभ पा सकें। वर्तमान उद्योग जगत ऐसे लोगों की मांग करती है जो सभी क्षेत्रो में काम कर सकें। वें ऐसे लोगो को अन्य क्षेत्रो में कुछ सीखने और करने के उद्येष्य से एडवांस टेक्नोलाजी मैनेजमेंट प्रोग्राम आयोजित कर सिखने और करने का मौका भी देती है। दूसरे शब्दों में कहे तो जब अलग अलग क्षेत्रों के विशेषज्ञ एक साथ मिलकर काम करते है। तो वे समाज के हित के लिए कुछ बेहद मुल्यवान टेक्नोलाजी का विकास करते है। यह सर्वविदित है कि कोई भी शिक्षा संस्थान उसके शिक्षक विद्यार्थियों से जाना एवं माना जाता है। भारत में आने वाले विदेशी छात्रो की संख्या बेहद कम रही है। केन्द्रीय ग्रह मंत्रालय की और से जारी रिपोर्ट के मुताबिक अमेरिका, जर्मनी, फ्रांस दक्षिण कोरिया, आस्ट्रेलिया, चीन, सींगापुर से आने वाले छात्रो की तुलना में 73% की गिरावट हुई है। 2013 में जहाँ 13,961 छात्र भारत आये थे वही 2014 में इनकी संख्या कुल 3,737 थी। जबकी साल 2012 की तुलना में 2013 में छात्रो की संख्या बढ़ी थी। 2012 में कुल 12,424 छात्र भारत आए थे।

दुनिया की टाप 100 इंस्टिट्यूशन में शामिल भारत के इंस्टिट्यूट आफॅ साइंस (आई.आई.एम.सी.) जैसे इंस्टीट्यूट में वर्ष 2014 में केवल 25 फुलटाइम विदेशी छात्र थे। ऐसा नहीं है कि यह गिरावट सिर्फ भारत से बेहतर

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

देशों से आनेवाले छात्रो की संख्याओं में हुई है,जिन देशों की स्थिति भारत से बेहतर नहीं हैं, जैसे अफगानिस्तान,बांग्लादेश और अफ्रीकी देशों व छात्रो की संख्या में भी कमी आई है।

आई.आई.टी बॉम्बे में पिछले 3 सालो में रिसर्च/एम.टेक में प्रवेश लेने वाले दस छात्रो में से नौ छात्र ने बीच में ही अपनी पढ़ाई छोड़ दी। यही नहीं 2012-13 में आई.आई.टी दिल्ली में कुल 548 ड्रापआउट मात्र 11 छात्र ही रेंक के थे। एक मिडिया रिपोर्ट के अनुसार पिछले 3 वर्षो में आई.आई.टी बॉम्बे से पढ़ाई छोड़ने वाले 90% छात्र पी.एच.डी से जुड़े थे। 2012 के बाद उच्च तकनीकी संस्थान छोड़ने वाले 350 छात्रो 2012-13 में 132 , 2013-14 व 2014-15 में 109-109 में 333 एम.टेक. और पी.एच.डी से जुड़े थे।

एम.टेक और पी.एच.डी छोड़ने वाले छात्रो की संख्या 2013-14 में 104 , 2014-15 में 105 व 2012-13 में 124 थी। 2014-15 में कुल 169 ड्रापआउट में से मात्र छ: बी टेक छात्र थे। 2013-14 में कुल 249 ड्रापआउट में एक छात्र बी.टेक पाठ्यक्रम से जुड़ा था। आई.आई.टी खड़गपूर व आई.आई.टी. रूड़की में ड्रापआउट की दर ऊँची है। 2014-15 में रूड़की में 228 छात्र और आई.आई.टी खड़गपूर से 209 छात्रो ने अपनी पढ़ाई बीच में ही छोड़ दी है। काउंसिल ऑफ साइंटिफिक इंडस्ट्रियल रिसर्च के पूर्व निदेशक का कहना है कि छात्रो को इसका कोई भरोसा नहीं है कि पी.एच.डी. पुरी होने पर कैसी नौकरी मिलेगी। यही कारण है कि नौकरी के लोभ में आई.आई.टी जैसे उच्चशिक्षण संस्थान के छात्र उच्चशिक्षा और शोध कार्यो से दूरी बना रहे है। प्रो. रघुराम का कहना है कि आई.आई.टी. में एम.टेक या पी.एच.डी. पाठ्यक्रमो में इन उच्च संस्थानो के अलावा अन्य इंजीनियरिंग संस्थानो के भी छात्र प्रवेश लेते है। अधिकांश छात्र अपने केरियर ग्राफ में आई.आई.टी. टैग जोड़ना चाहते है। उनका लक्ष्य निजी कंपनियो में नौकरी पाना होता है, जो आई.आई.टी. छात्रो को प्राथमिकता देती है।

यह सर्वविदित है कि कोई भी शिक्षा संस्थान उसके शिक्षकों, विद्यार्थियों से जाना एवं माना जाता है। अत: रतीय विश्व विद्यालयों के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि वह अपने शिक्षक, शिक्षण और शोध को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति एवं स्थायित्व दे। शैक्षणिक गुणवत्ता ऐसी हो जो देश विदेश के विद्यार्थियों को ज्ञानार्जन के लिए इस शिक्षा संस्थान की और आकर्षित कर सके और हमारे विद्यार्थियो को गर्व हो कि वह एक कर्मठ संस्थापक के विश्वविद्यालय से शिक्षित है। ग्लोबल रेंकिंग एजेंसियो का हमारे संस्थानो के लिए एक निश्चित मापदण्ड है। जैसे किस स्थान का अंतर्राष्ट्रीयकरण इन संस्थानो के लिए काफी महत्वपूर्ण है। हमारे संस्थानो में देश के विद्यार्थियों में भी शोध के प्रति रुचि में कमी आ रही है, साथ ही साथ अन्तराष्ट्रीय विद्यार्थियों का अभाव है। शिक्षा के मानक बढ़ाने के प्रयास होने चाहिए। जिससे कि ज्यादा से ज्यादा संख्या में देश व विदेशी छात्र हमारे यहाँ के संस्थानों में प्रवेश लेने में रुचि रखे।

हमारे संस्थानो में विदेशी छात्रो के लिए AICTE ने 15% सीटो का प्रस्ताव दिया है। अगर हम रैंकिंग में अच्छा स्थान हासिल करना चाहते है तो हमें उद्योग जगत से सबंधता पर ध्यान केन्द्रित करना होगा। उद्योग के साथ गठजोड़ रखने वाले संस्थानों को ये ऐजेन्सिया अच्छी रैंकिंग देती है। दूसरा बेहतर उपाय अनुसंधान और विकास पर ध्यान देने का है। रत को सुपर पावर बनने के लिए खुद की टेक्नोलॉजी तैयार करनी होगी। देश में जितने भी बड़े ख्याति प्राप्त रिसर्च इंस्टिट्यूट और लैब है,उन्हें हर वर्ष अनिवार्य रुप से ऐसी टेक्नोलॉजी डेवलप करनी चाहिए,जो वर्ल्ड में कही मौजूद नही है। उसे देश को हर वर्ष कम से कम 20 खुद की डेवलप नई टेक्नोलॉजी मिलेगी जो, कि विकास की रेस में हमें वर्ल्ड की दूसरी कंट्रीज़ से आगे ले जाएगी। नई कंपनियें में इन्वेस्टमेंट के मामले में रत विश्व में चौथे स्थान पर है, जो अच्छा संकेत है। हमे इसका लाभ उठाना चाहिए।

वर्तमान में ज्यादातर रिसर्च इंडस्ट्रीयल इंटरनेट और साफ्ट वेयर एनालिटिक्स पर केन्द्रित है। उसके लिए विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञ की ज़रुरत है, जो मटीरियल साइंस और सिस्टम के आधुनिकीकरण आदि की जानकारी रखते हो। ऐसे ही कुछ क्षेत्रो में पावर इलेक्ट्रानिक्स मैनेजमेंट और तेल तथा गैस टेक्नोलॉजी शामिल है। उनमें से किसी भी क्षेत्र में अध्ययन के लिए रत में भी विश्वविद्यालयों में पाठ्यक्रम कोर्स उपलब्ध है। जिन्हें पूर्ण कर छात्र रिसर्च के रूप में सफल होने के लिए जानकारी एवं योग्यता अर्जित कर सकते है।

निष्कर्षत: उपरोक्त समस्त सकारात्मक एवं विकारात्मक प्रयास विश्वविद्यालय के शिक्षकों अधिकारियों, कर्मचारियों एवं विद्यार्थियों के साथ ही सरकार की नीति एवं अनुदान देने की प्रतिबद्धता एवं सहयोग से ही संभव है। देश में प्रतिभाओं की कमी नहीं है ज़रुरत है, तो उसे निखारने की विश्व में भारत ज्ञान के क्षेत्र में फिर गुरु बन सके, उसके लिए हमें मानसिकता बदलनी होगी और आज की धारा के अनुरूप आगे बढ़ाना होगा। सरकार वैज्ञानिकों की एक समिति बनाकर उस दिशा में उनसे सुझाव भी मांग सकती है। इस बात के उपाय किए जाने चाहिए ताकि हमारे देश की प्रतिभाएं विदेश जाने के बजाए अपने देश में रहकर ही शोध करने को तैयार हो। इसके लिए ज़रुरी माहौल बनाने की ज़िम्मेदारी सरकार की ही बनती है। हाँ इस पहल में शीर्ष औद्योगिक घरानो की मदद ली जा सकती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दैनिक भास्कर जुलाई-2013
2. इंडिया टुडे फरवरी-2014
3. इंडिया टुडे अप्रैल-2014
4. साईस इंडिया दिसम्बर-2014

****

दलित एवं बौद्ध धर्म में धर्मान्तरण : एक अध्ययन

निलेश वासनिक * डॉ. अर्चना गौर **

शोध सारांश – बौद्ध धर्म में दलितों का धर्मान्तरण आधुनिक भारत में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है, जिसका दलितों पर व्यापक प्रभाव पड़ा है। दलितों के धर्मान्तरण के सन्दर्भ में धर्मान्तरण का अध्ययन करना एवं बौद्ध धर्म में धर्मान्तरण के परिणामस्वरुप बौद्ध धर्म के आचार–विचार अपनाने के कारण दलित बौद्धों के सामाजिक जीवन में आए इन परिवर्तनों को, विशेषत: महाराष्ट्र राज्य के दलित बौद्धों के विशेष सन्दर्भ में आधार बनाकर प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

शब्द कुंजी – दलित, बौद्ध, बौद्ध धर्म, धर्मान्तरण, परिवर्तन, आदि।

प्रस्तावना – भारतीय समाज के परिप्रेक्ष्य में धर्म एवं जाति व्यवस्था हमेशा चर्चा के विषय रहे हैं। धर्म के अध्ययन को समाजशास्त्र में विशिष्ट स्थान प्राप्त हैं क्योंकि धर्म के समाजशास्त्रीय अध्ययन के माध्यम से हम धर्म की विशिष्टताएँ, धर्म की मानव समाज में आवश्यकता व महत्व आदि बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित कर धर्म के व्यापक प्रभावों पर मनन करते हैं।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत जाति व्यवस्था अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जाति–व्यवस्था के अन्तर्गत दलितों कि सामाजिक स्थिति सबसे निम्न हैं। भारतीय संविधान में इन्हें 'अनुसूचित जाति' के नाम से संबोधित किया गया है। दलितों का बौद्ध धर्म में धर्मान्तरण 14अक्टूबर सन् 1956 में डॉ. अम्बेडकर के नेतृत्व में हुआ था एवं धर्मान्तरित दलितों के जीवन में व्यापक परिवर्तन देखने में आये है, इन्ही परिर्वतनों को शोध पत्र में प्रमुखता से दर्शाया गया है।

बुद्ध धर्म ग्रहण करने के बाद दलित बौद्धों में कौन–कौन से परिवर्तन हुए, इस संबंध में माननीय अरूण साधू 1975 में अध्ययन किया था 'न्यू बुद्धिस्ट इन महाराष्ट्र कन्वर्शन हेस हेल्पड्' यह अध्ययनपूर्ण लेख 'टाईम्स ऑफ इंडिया' में 15 नवम्बर, 1975 को प्रकाशित हुआ था। साधू ने अपने अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला कि, 'पूर्वनियोजित भाग्य या प्राचीन कर्मकांड पर बौद्धों का बिल्कुल भी विश्वास नहीं रहा। 'उन्हें पूर्ण विश्वास हो गया हैं कि केवल कठोर मेहनत, शिक्षा और तर्कसंगत बातों के कारण ही प्रगति हो सकती हैं। हिन्दू धर्म के उच्च जाति के युवकों के साथ तुलना करने पर, उनका दृष्टिकोण पक्का, सुधारवादी तथा वैज्ञानिक दिखाई पड़ता हैं।'

बुद्ध धर्म ग्रहण करने के बाद पूर्व के अछूतो कि एक स्वतंत्र पहचान बनी। वे स्वयं की पहचान बौद्ध के तौर पर करते हैं। उनके अनुसार, हमने बौद्ध दर्शन को स्वीकार किया है।

बिहार(बौद्ध पूजा स्थल) में धार्मिक कार्य के लिए पुजारी नहीं होता। बुद्ध को लोग ईश्वर नहीं मानते। बौद्ध लोग बुद्ध की प्रतिमा के समक्ष हाथ जोडकर वंदना करते हैं और बुद्ध धम्म के विचारों के अनुसार आचरण करने की प्रतिज्ञा लेते हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि बुद्ध विहार बौद्ध समुदाय के धार्मिक और सांस्कृतिक गतिविधियों के केंद्र हैं। विहार में प्रमुखता से सभी बौद्ध उपासक एकत्रित होते हैं और विविध प्रश्नों पर गंभीरतापूर्वक विचार–विनिमय करते हैं। डॉ. झेलिएट ने महाराष्ट्र के बुद्ध विहारों के संबंध में अपने विचार स्पष्ट करते हुए लिखा हैं, 'कई विहारों का उपयोग धार्मिक उद्देश्यों के साथ ही शैक्षणिक और सामाजिक उद्देश्यों के लिए भी किया जाता हैं।बौद्धों की मीटिंग और सभा का एकमेव स्थान बुद्ध विहार ही हैं।'

बौद्ध धम्म में 'शादी' अथवा 'विवाह' कहने के स्थान पर 'मंगल परिणय' शब्द का प्रयोग किया जाता हैं। भावी वर–वधू की कुंडली, पत्रिका पंचांग और मुहूर्त नहीं देखी जाती हैं। बौद्ध लोग ज्योतिष्यफल पर विश्वास नहीं करते, ऐसा विश्लेषण महापात्रा ने प्रस्तुत किया है।

'विवाह' अथवा 'शादी' के बदले 'मंगल परिणय' शब्द का ही प्रयोग किया जाता हैं। 'मंगल परिणय' लगाने की पारंपरिक पद्धति को 1956 में धर्मांतर के समय से ही त्याग दिया गया। 'मंगल परिणय' संस्कार विशुद्ध बौद्ध–पद्धति द्वारा सम्पन्न की जाती है। 'मंगल परिणय' ब्राह्मणों के द्वारा नहीं कराया जाता हैं। भिक्खु श्रामणेर या कोई भी उपासक त्रिशरण, पंचशील का उच्चारण कर 'मंगल परिणय' संस्कार सम्पन्न कराता हैं। वर्तमान में कुछ महिलाएं भी 'मंगल परिणय' विधि सम्पन्न करवाने लगी हैं।

सांस्कृतिक परिवर्तन – बुद्ध धम्म स्वीकार करने के कारण पूर्व के अछूतों के धार्मिक विचार और आचार में अत्याधिक मात्रा में परिवर्तन हुआ है। उन्होंने अपना स्वयं का बुद्ध धम्म पर आधारित सांस्कृतिक विश्व का निर्माण किया हैं। इस संबंध में डॉ. एलिनार झेलिएट ने स्पष्ट किया है कि, 'आज बौद्ध लोग बौद्ध परंपरा और बौद्ध इतिहास को अपनी विरासत होने का दावा करते है। बुद्ध धम्म हिन्दू धर्म का भाग है, इस बात को वे स्वीकार नहीं करते।'

बुद्ध धम्म ग्रहण करने के बाद लोग अपने बच्चों के नाम बौद्ध संस्कृति के अनुसार स्वयं ही रखने लगे है। मिलिंद, राहुल, आनंद, सिद्धार्थ, नागसेन, गौतम, प्रज्ञावंत, आम्रपाली, सुजाता, वैशाली आदि बौद्ध नाम रखने का प्रचलन बढ़ रहा हैं। कुछ लोगों ने अपने सरनेम (उपनाम) भी बदल दिए है। गौतम, बौद्ध, सारीपुत्र, कश्यप, कोसंबी इस प्रकार के नए सरनेम लोगों ने धारण कर लिए हैं। विशेष बात यह है कि बौद्धों की इमारतें, घर, बंगला, इत्यादि पर अशोक चक्र, स्तूप, पीपल का पत्ता अथवा बुद्ध धम्म से संबंधित

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.) भारत

अनेक सांस्कृतिक प्रतीक होते है। इस कारण दूर से ही इस घर अथवा इमारत की यह पहचान हो जाती है कि यह किसी बौद्ध का घर है। इस प्रकार बौद्ध लोगों की नई पहचान का युग आरंभ हो चुका है।

गीतांजली महापात्रा के अध्ययन के अनुसार, 'बौद्ध लोगों ने तार्किक और बौद्ध धम्म का निरीश्वरवादी स्वरूप स्वीकार किया है।'

शाम तागड़े ने भी स्वीकार किया हैं कि, बुद्ध धम्म के कारण उनमें वैज्ञानिक और तर्कसंगत दृष्टिकोण बड़े प्रमाण में विकसित हुआ हैं।

मानसिक परिवर्तन – डॉ. एलिनार झेलिएट के अनुसार, 'महारों में बसी हीन भावना के अवशेष नष्ट करने में धर्मांतरण कामयाब हुआ हैं। बौद्ध हमेशा कहते हैं कि, हमें मानसिक स्वतंत्रता प्राप्त होने का अचानक अनुभव हुआ।'बौद्धों के अध्ययन के आधार पर डॉ. झेलिएट ने स्पष्ट किया है कि, एक दूषित व्यक्ति (अछूत) की इस भावना से मानसिक मुक्ति हुई। यह बुद्ध धम्म ग्रहण करने की बहुत बड़ी उपलब्धि है।' बौद्ध धम्म के कारण अछूत मानसिक रूप से स्वतंत्र हुए, इस बात को डॉ. झेलिएट ने स्पष्ट रूप से रखा हैं।

बौद्ध समाज के मानसिक परिवर्तन के बारे में मानवीय अरूण साधू ने स्पष्ट किया है, कि बौद्ध धम्म ग्रहण करने के कारण उनकी हीन भावना दूर हो गई। उनकी स्वयं की नई पहचान बनी और नया स्व–विश्वास प्राप्त हुआ। सबसे महत्वपूर्ण बात युवकों ने पुरानी अंधश्रद्धा का पूरी तरह से त्याग कर दिया और जीवन विषयक तर्कसंगत दृष्टिकोण स्वीकार किया।

बुद्ध धम्म के कारण बौद्धों का मानसिक परिवर्तन हुआ ऐसा मत माननीय वी.वी. दाते ने भी रखा। उनके अनुसार, 'धर्मांतरण के कारण नवबौद्धों को मुख्य रूप से मानसिक लाभ हुआ। हिन्दू धर्म की जाति संरचना के कारण निर्माण की गई हीन भावना से बहुसंख्यक बौद्ध अब पीड़ित नहीं रहे' उनमें से अधिकांश अंधश्रद्धा पर विश्वास नहीं रखते।'

शैक्षणिक परिवर्तन – '1961 में बौद्ध समाज में शिक्षा का स्तर 15.69% था। जबकि महाराष्ट्र में साक्षरता दर 29.82 % थी। इसका अर्थ यह हुआ कि 1961 में अन्य लोगों की अपेक्षा बौद्धों में साक्षरता की दर कम थी। बुद्ध धम्म ग्रहण करने के कारण बौद्ध समाज अधिक मात्रा में शिक्षा लेने लगा। उसके फलस्वरूप अर्थात् 2001 में बौद्ध समाज शिक्षा क्षेत्र में अग्र में है। 2001 की जनगणना के अनुसार महाराष्ट्र में बौद्धों में शिक्षा का प्रतिशत सबसे अधिक है। बौद्ध समाज में शिक्षा का प्रतिशत 72.7% है। इससे स्पष्ट होता हैं कि बौद्ध समाज में बहुत विशाल पैमाने पर शैक्षणिक परिवर्तन हुआ हैं।'

व्यवसाय की विविधता – आज बौद्ध लोग विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत दिखाई देते हैं। मुम्बई, पुना, नागपूर, औरंगाबाद इत्यादि शहरो में बौद्ध लोगों का उच्च मध्यम वर्ग विकसित हुआ है। ये लोग आधुनिक विविध व्यवसायों में कार्यरत हैं। उनके व्यवसाय में विविधता दिखाई देती हैं।

'एक विशिष्ट व्यवसाय में बौद्ध लोग न होकर आधुनिक विविध व्यवसायिक क्षेत्र में वे नौकरी अथवा व्यवसाय कर रहे है। संगणक, सूचना प्रौद्योगिकी, बिजनेस एक्जिक्यूटिव, इंटीरियर डिजाईन, सौंदर्यशास्त्र, फैशन डिजाईन, विज्ञापन, शोधकर्ता इन आधुनिक व्यवसायों में वे बड़ी संख्या में दिखाई देते हैं। आधुनिक काल में व्यवसाय के नए –नए क्षेत्र खुल गए हैं। इन नए क्षेत्रों में भी बौद्धों ने प्रवेश किया हैं। विशेषकर बौद्ध महिलाएं भी पुरुषों की ही तरह आधुनिक व्यवसाय में दिखाई देती हैं और उनके व्यवसाय में भी विविधता दिखाई देती हैं।'

इससे यह स्पष्ट होता हैं कि, पचास वर्ष पूर्व गांवो में परंपरागत काम करने वाले पूर्व के अछुतों के बौद्ध बनते ही उनमें आर्थिक परिवर्तन आ गया। वर्तमान में वे उच्च शिक्षा और प्रशिक्षण प्राप्त करके आज नए–नए व्यवसायिक क्षेत्रों में कार्यरत हैं।

निष्कर्ष : – प्रस्तुत अध्ययन से यह निष्कर्ष सामने आया हैं कि, बौद्ध लोग पारंपरिक धार्मिक विधियों को महत्व न देते हुए वैचारिकता को विशेष महत्व प्रदान करते हैं। दलितों के बौद्ध धर्म में धर्मान्तरण के परिणामस्वरुप उनके जीवन में सामाजिक ,सांस्कृतिक, मानसिक, शैक्षणिक, व्यवसाय की विविधता आदि क्षेत्रों में विकास देखने को मिलता हैं जिसे देखा व महसूस किया जा सकता हैं। अत: यह स्पष्ट कहा जा सकता है कि बौद्ध धर्म में धर्मान्तरण से दलित समुदाय में निश्चित रूप से सकारात्मक परिवर्तन आये है एवं उन्हें नई पहचान मिली है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. धम्मचक्र प्रवर्तन के बाद के परिवर्तन, डा. प्रदीप आगलावे, सम्यक् प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010
2. धर्मान्तरण और दलित, जय प्रकाश कर्दम, सूरज प्रकाशन, दिल्ली, 2008
3. डॉ. अंबेडकर , बुद्धिज्म एण्ड सोशल चेंज, ए.के. नारायण एवं डी.सी. अहीर, बुद्धिस्ट वर्ल्ड प्रेस, दिल्ली, 2010
4. महार बुद्धिस्ट एवं दलित, जोहानस् बेल्टज्, मनोहर पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2005
5. बद्धिज्म इन माडर्न इण्डिया, डी.सी. अहीर, भिक्खु निवास प्रकाशन, दीक्षा भूमि, नागपुर, 1972
6. बुद्धिज्म इन इण्डिया : चैलेंजिंग ब्राम्हणिज्म एवं कास्ट, ओम्वेदत् गेल, सेज पब्लिकेश न्स, नई दिल्ली, 2003
7. 'धर्म परिवर्तन क्यों ?', एस.एल.सागर, सागर प्रकाशन, मैनपुरी (उ.प्र.), 2002

****

भारत में बढ़ता नक्सलवाद (वर्तमान संदर्भ में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)

सुमन सिंह *

प्रस्तावना – नक्सलवाद क्या है ? – नक्सलवाद, वर्तमान भारत देश की एक प्रमुख सामाजिक समस्या के रूप में उभर रहा है। नक्सलवाद के पितामह चारू मजूमदार, कानू सान्याल और जंगलों में रहने वाले संथाल जनजातीय लोगों ने स्थानीय जमींदारी व्यवस्था के खिलाफ जिस वाद की शुरूआत 1968 में की थी उसे ही वर्तमान 'भारत में नक्सलवाद' के नाम से जाना जा रहा है। नक्सलवाद की अवधारणा चीन से भारत में आई पर इसके पनपने के पीछे भारत में पहले से ही विद्यमान सामाजिक असंतुलन तथा आदिवासी शोषण की स्थितियाँ काफी जिम्मेदार रहीं है। वर्तमान समय में नक्सलवाद हमारे राष्ट्र की आंतरिक सुरक्षा के लिए एक गंभीर चुनौती बनता जा रहा है। केन्द्रीय गृह मंत्रालय के अनुसार देश के 630 जिलों में से 170 जिलों में नक्सली गतिविधियाँ अपने पांव पसार चुकी हैं। प्रमुख रूप से छत्तीसगढ़, आन्ध्रप्रदेश, पश्चिम बंगाल, बिहार, झारखंड, उड़ीसा तथा म.प्र., महाराष्ट्र सहित देश के 16 राज्यों में नक्सलवाद ने अपनी दस्तक दी है।

हाल ही में हुई नक्सली हमलों की बड़ी घटनाऐं –

- 4 जून 1992, बस्तर जिले में पुलिस वाहन उड़ाया, 17 जवान शहीद,
- 8 अक्टूबर 1998, बारसागुड़ा में हमला, 16 जवान शहीद,
- 20 फरवरी 2000, नारायणपुर के समीप विस्फोट, 23 जवान शहीद,
- 3 सितंबर 2005, बीजापुर के समीप नक्सली हमला, 20 जवान शहीद,
- 15 मार्च 2007, रानीबोदली में हमला, 55 जवान शहीद,
- 11 मई 2009, सिंहावा में नक्सली हमला, 13 जवान शहीद,
- 12 जुलाई 2009, राजनांदगाँव में एस.पी. व 29 जवान शहीद,
- 6 अप्रैल 2010, दंतेवाड़ा में नक्सली हमले में 76 सी.आर.पी.एफ. के जवान शहीद,
- 8 मई 2010, छत्तीसगढ़ के बीजापुर जिले में बुलेट प्रुप वाहन उड़ाया, 8 सी.आर.पी.एफ. जवान शहीद,
- 17 मई 2012, दंतेवाड़ा में यात्री बस उड़ाई, 36 लोग मारे गये,
- 28 मई 2014, पं. बंगाल में ज्ञानेश्वरी सुपर डिलक्स एक्सप्रेस ट्रेन पर नक्सली हमला, 103 मृत, 200 व्यक्ति घायल,
- 29 जून 2015, छत्तीसगढ़ के नारायणपुर जिले में ज्ञात लगाकर हमला, 27 जवान शहीद।

भारत में नक्सलवाद फैलने के प्रमुख कारण – नक्सलवाद की समस्या मुख्यत: प्राकृतिक संसाधनों के असमान वितरण एवं विकास तथा जनकल्याण की योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन के अभाव का परिणाम है। अन्य प्रमुख कारणों में शामिल हैं – 1. जमींदारों, साहूकारों द्वारा जनजातियों का आर्थिक शोषण, 2. अशिक्षा, 3. बेरोजगारी, 4. अज्ञानता, 5. राजनैतिक कारण, 6. आर्थिक भौगोलिक परिस्थितियाँ, 7. सामाजिक असमानता, 8. गरीबी, 9. प्रशासनिक कमियाँ, 10. मनोवैज्ञानिक कारण।

नक्सलवाद को दूर करने के उपाय/सुझाव – 1) शिक्षा का अत्यधिक प्रचार, 2) जनजातीय असंतोष को दूर किया जाना, , 3) भ्रष्टाचार की पूर्णत: समाप्ति, 4) कृषि उपजों व वनोपजों की सहकारी माध्यम से खरीदी, 5) रोजगार के उचित अवसरों का निर्माण, 6) सामाजिक–आर्थिक सभी प्रकार के शोषणों की समाप्ति, 7) महिला व पुरूषों स्वयं सहायता समूहों का निर्माण व विकास, 8) लघु व कुटीर उद्योगों का बढ़ावा, 9) स्थानीय लोगों की आवश्यकता के अनुरूप योजनाओं का निर्माण, 10) साहूकारिता का पूर्णत: उन्मूलन, 11) 'वन अधिकार अधिनियम–2006' का दृढ़ता से पालन, 12) गैर सरकारी संगठनों का सहयोग लेना, 13) विस्थापन एवं पुनर्वास संबंधी प्रकरणों का समाधान करना, 14) केन्द्र तथा राज्य सरकारों द्वारा कम दरों पर कृषि ऋण, 15) राष्ट्रीय ग्रामीण मजदूर अधिनियम के तहत वर्ष भर का रोजगार मुहैया कराना, 16) नक्सलियों की मानसिकता में परिवर्तन हेतु सम्मेलन एवं संगोष्ठियों का आयोजन करना। भूख, बेरोजगारी, शोषण, विस्थापन और परियोजनाओं में होने वाली क्षति, जल, जंगल और जमीन के मानवीय अधिकारों से वंचित किये जाने वाले अदूरदर्षी राजनीतिक सिस्टम की वृहद खामियों तथा जिम्मेदार राजकीय व्यवस्था और गैर–जिम्मेदार अधिकारियों के कारण नक्सल समस्या आज अपने चरम बिन्दु पर पहुँच चुकी है। राज्य और केन्द्र सरकार अविलम्ब नक्सल प्रभावित राज्यों के आदिवासी क्षेत्रों के सम्पूर्ण विकास की योजनाएँ निर्मित करें तथा इन योजनाओं को लागू करने के लिए ईमानदार अधिकारियों को तैनात किया जाए और समय–समय पर सरकार के मंत्री जायजा लें, ताकि स्थानीय लोगों के मन में जो व्यवस्था के प्रति नाराजगी है, वह खत्म हो जाए। आदिवासियों की भावनाओं के अनुरूप कार्यक्रम बनाए जाएँ और बातचीत के माध्यम से इसे नियंत्रित करने की कोशिश करें। पिछले कुछ वर्षों से बढ़ती नक्सली हिंसा को देखते हुए केन्द्र सरकार ने एक स्पेशल नक्सल विरोधी पुलिस बल 'कोबरा बटालियन' के गठन की घोषणा की है। 10 हजार पुलिस बल वाली यह विशेष फोर्स सी.आर.पी.एफ. के नियंत्रण में कार्य करेगी तथा नक्सल प्रभावित राज्यों में इसकी दस क्षेत्रीय इकाईयाँ कार्यरत होंगी। केन्द्रीय गृह मंत्रालय के **'नक्सल प्रबधंन विभाग'** ने नक्सल प्रभावित सभी राज्यों को एक ऐसा प्रस्ताव भेजा है, जिसमें इन प्रभावी क्षेत्रों में ऐसे प्रशासनिक अधिकारियों की नियुक्ति के लिए सिफारिश की गई है। जो सक्षम, दृढ़ निश्चयी, समर्पित एवं इच्छुक हों। 'वीरप्पा मोईली समिति' ने नक्सल प्रभावित राज्य सरकारों को एक ऐसी स्थानान्तरण नीति तैयार करने को कहा है, जो सामान्य स्थानान्तरण नीति से अलग हो।

विश्लेषण – आज हमारा भारत राष्ट्र नक्सल समस्या से जूझ रहा है। क्या साठ साल पुरानी इस समस्या का कोई हल नहीं है? इस प्रश्न पर हमें चिंतन मनन करना होगा। अधूरे विकास की बाँट जो रहे गाँव नक्सलवाद जैसी सामाजिक समस्याओं को जन्म दे रहे हैं। हमारे शहर सुविधा सम्पन्न होते जा

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

रहे हैं, और भारतीय गाँव अभी भी बुनियादी समस्याओं से जूझ रहे हैं। 'केन्द्रीय गृह मंत्रालय' के अनुसार नक्सलवादी **ए.के.47** सहित अन्य आधुनिक हथियारों का प्रयोग कर रहे हैं। सबसे अधिक चिंताजनक पहलू यह है कि नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में 18 से 25 वर्ष के युवाओं को तथा महिलाओं को इनमें शामिल किया जा रहा है। **भारतीय खुफिया सूत्रों, गृह मंत्री श्री राजनाथ सिंह तथा गृह सचिव जी.के. पिल्लई** समेत सभी वरिष्ठ अधिकारियों का मानना है कि अब वह समय आ गया है, जब केन्द्र सरकार तथा नक्सली प्रभावित समस्त राज्य सरकारों को आपस में मिलजुलकर एक संमन्वित नीति नक्सली समस्या को जड़ मूल से उखाड़ फैंकने हेतु बनानी होगी। यह भी सही है कि नक्सली सुरक्षा जवानों की हत्या करके हमारे सुरक्षा बलों के मनोबल को कमजोर करना चाहते हैं। हाल ही में **रक्षा मंत्री श्री मनोहर पर्रिकर** ने तीनों सेना के प्रमुखों से विचार विमर्श करके नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में सेना की तैनाती पर भी विचार किया है। हमें यह ध्यान रखना होगा कि नक्सलवाद किसी एक राज्य की या कानून-व्यवस्था की समस्या नहीं है, बल्कि यह हमारे राष्ट्र भारत के अस्तित्व की समस्या है। इसके सम्पूर्ण निराकरण हेतु भारत के समस्त राजनीतिक दलों को मिल जुलकर साझी रणनीति व कार्यक्रम बनाना होंगे। स्थानीय पुलिस प्रशासन व सुरक्षा बलों के बीच मतभेद तथा समन्वय की कमी को दूर किया जाना जरूरी है। हॉल ही में कांग्रेस महासचिव राहुल गांधी ने रायपुर में कहा कि **'जहाँ सरकार नहीं है, वहाँ नक्सलवाद है।'** नक्सलवाद देश की जटिलतम समस्या बनती जा रही है। आंतरिक सुरक्षा विषय नई दिल्ली में आयोजित मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन में छत्तीसगढ़ सरकार ने केन्द्र सरकार से आग्रह किया है कि छत्तीसगढ़ में चल रही नक्सली हिंसा को **'राष्ट्रीय आपदा'** की श्रेणी में रखा जाए। द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग ने नक्सलवाद की समस्या के समाधान हेतु इन क्षेत्रों में प्रशिक्षित प्रशासनिक व तकनीकी अधिकारियों की नियुक्ति की सिफारिश की है। वीरप्पा मोईली की अध्यक्षता वाले इस आयोग ने केन्द्र सरकार को प्रस्तुत रिपोर्ट में इस बात पर विशेष बल दिया है कि नक्सलवाद की समस्या के समाधान का एकमात्र उपाय इन क्षेत्रों में सेना एवं अर्द्धसैनिक बलों की नियुक्ति ही नहीं है, बल्कि सरकार के जनकल्याण एवं विकास कार्यक्रमों को लागू करने वाली प्रमुख एजेंसी होने के नाते प्रशासनिक अधिकारों को भी इसमें प्रमुख भूमिका हो सकती है। मोईली समिति ने प्रशासनिक अधिकारियों के चयन के पश्चात लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासनिक प्रशिक्षण अकादमी मसूरी (उत्तराखण्ड) में ही ऐसे अधिकारियों की प्रशिक्षित करने तथा नियुक्त होने वाले राज्यों में वहाँ की सरकारों को इनके लिए विशेष सुविधा पैकेज उपलब्ध कराने की सिफारिश की है। केन्द्रीय गृह मंत्रालय के 'नक्सल प्रबधंन विभाग' ने नक्सल प्रभावित सभी राज्यों को एक ऐसा प्रस्ताव भेजा है, जिसमें इन प्रभावित क्षेत्रों में ऐसे अधिकारियों की नियुक्ति के लिए सिफारिश की गई थी, जो नक्सली प्रभावित क्षेत्रों में जाकर अपनी पूर्ण लगन तथा स्थानीय लोगों से सहयोग करते हुए कार्य करना चाहते हैं।

छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा बस्तर एवं दंतेवाड़ा जिलों के आदिवासियों को 'सलवा-जुडूम' के तहत संगठित कर नक्सलियों के विरूद्ध आंदोलन आरंभ किया गया था। इसमें उन्हें सरकार की ओर से भोजन, भत्ता एवं हथियार उपलब्ध कराये जाते थे तथा जंगलों एवं राजमार्गों के किनारे बनाये गये तंबुओं में रखा जाता था। सर्वोच्च न्यायालय में दायर याचिकाओं के परिणाम स्वरूप इस 'सलवा-जुडूम' व्यवस्था को वर्तमान में खत्म कर दिया गया है। नक्सल प्रभावित राज्यों के मुख्यमंत्रियों की बैठक में **प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी** ने इस समस्या से निपटने के लिए एक व्यापक 'योजना' प्रस्तुत की है। इस योजना में नक्सल प्रभावित क्षेत्रों के सामाजिक-आर्थिक विकास पर विशेष जोर देने के साथ-साथ राज्य सरकारों को भूमि-सुधार में तेजी लाने तथा कानूनों की दृढ़ता से लागू करने की बात कही गई है। नक्सली संगठनों का ढ़ाँचा कोई पिरामिड समान नहीं है कि शीर्ष हटा दें तो नीचे का हिस्सा खुद सूख कर खत्म हो जाएगा। इस संदर्भ में यह ज्यादा गंभीर विषय है कि **'कोबाल गांधी'** जैसी काबलियत रखने वाले 10 हजार से ज्यादा बौद्धिक वामपंथी नक्सली विचारधारा समर्थक इंग्लैण्ड के हावर्ड और दिल्ली के जे.एन.यू. विश्वविद्यालय से लेकर बस्तर तथा दंतेवाड़ा के बियाबान जंगलों तक में अपनी जड़ जमाये सक्रिय हैं। प्रसन्नता की बात यह है कि केन्द्र सरकार ने निश्चय किया है कि वह नक्सलियों की गोली व हिंसा का जवाब आदिवासियों के लिए ज्यादा से ज्यादा स्कूल खोल कर देगी। मानव संसाधन विकास मंत्री **श्रीमती स्मृति ईरानी** के अनुसार छत्तीसगढ़ व झारखण्ड, मध्यप्रदेश और दूसरे नक्सल प्रभावित राज्यों के आदिवासी इलाकों में केन्द्र सरकार 107 नए केन्द्रीय विद्यालय खोलने जा रही है। यह सही है कि आज नक्सलवाद पूरी तरह से आतंक, हिंसा और अराजकता की लड़ाई में परिवर्तित हो गया है और भारत के लिए सबसे बड़ा आंतरिक सुरक्षा खतरा बनकर उभरा है। नक्सली वर्ष-2050 तक भारत की सत्ता पर काबिज होना चाहते हैं। सुरक्षाकर्मियों को लगातार मारकर यह लोग भारतीय संविधान को चुनौती दे रहे हैं।

निष्कर्ष -आज नक्सलवाद की समस्या बेहद गंभीर हो चली है। इसका प्रभावी हल करने के लिए राजनीतिक एकता और दुरगामी सामरिक रणनीति बनाने की जरूरत है। इस मामले पर राजनीतिक बहस करने और कराने की भी आवश्यकता महसूस की जा रही है। जरूरत इस बात है कि भारतीय सेना की देखरेख में आतंकवाद और गुरिल्ला लड़ाई लड़ने के प्रशिक्षण शिविर खोले जाएँ - जहाँ पर अर्द्धसैनिक बलों और राज्यों की सशस्त्र पुलिस बलों का सघन प्रशिक्षण हो। यह सही है कि नक्सलवाद रूपी इस सामाजिक समस्या को समूल नष्ट करने के लिए अभी बहुत अधिक प्रयास किये जाने बाकी हैं, केन्द्र सरकार, राज्य सरकार, जिला प्रशासन, गैर सरकारी संगठनों तथा स्थानीय आम जनमानस को मिलजुल कर समन्वित सामूहिक कार्रवाई करना होगी। एक तरफ नक्सलियों की हिंसा को काबू में करने के लिए सुरक्षाबल अपना दबाव बनाते रहेंगे, वहीं दूसरी तरफ नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में शिक्षा का विस्तार करके शोषित, वंचित तबकों के लोगों को राष्ट्र के विकास की मुख्यधारा से जोड़ा जाना संभव हो सकेगा क्योंकि **हमारा लक्ष्य है 'विकसित भारत, अग्रिम पंक्ति में भारत, उच्च शिखर पर भारत।'**

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हसनैन, नदीम - जनजातीय भारत, उपकार प्रकाशन, आगरा (उ.प्र.)
2. आहूजा, राम - सामाजिक समस्याऐं, रावत पब्लिकेशन, जयपुर (राजस्थान)
3. भारत, 2014
4. नईदुनिया, हिन्दुस्तान, पत्रिका समाचार पत्र।
5. योजना मासिक पत्रिका (योजना आयोग) भारत सरकार - फरवरी 2007
6. वर्मा, रूपचंद - भारतीय जनजातियाँ अतीत के झरोखे से।
7. सिविल सर्विसेस क्रानिकल - जुलाई 2008, नवंबर 2008।
8. समूह चर्चा, अवलोकन, वाद-विवाद, प्रतियोगिता से प्राप्त निष्कर्ष रिपोर्ट।
9. विभिन्न केस स्टडीज का अध्ययन।
10. इंटरनेट पर उपलब्ध विषय संबंधी अध्ययन सामग्री, विभिन्न जर्नल्स तथा शोध रिपोर्टस संबंधी आँकड़े।

Land, Water And Human Resources Management During Simhastha -2016 (A Geographical Case Study of Ujjain Kumbh 2016)

Mohini Jadon *

Introduction - नास्तिवन्स महीपृष्ठे, शिप्राया: सदृशीनदी।
यस्यास्तीरे क्षणान्मुक्ति: किंचिता सेवितेन वै।।

Explanation - It is said in the Skandpuran – In the whole Geosphere, there is no other river like Kshipra. It takes away all the pains and agonies of human being and give them salvation.

Introduction - Simhastha festival is celebrated on the holy bank of river Kshipra at Ujjain. It is extremely auspicious due to rare planetary conjunction that occur after a long interval of time i.e. 12 years. The last planetary in Ujjain was in 2004 and the auspicious period was between April 05 and May 05. The present Simhastha was April 21- May 22 and the next Simhastha at Ujjain is due in the year 2028.

Simhastha -2016 was a confluence of spiritual sublimity, human faith and managerial test, where during a period 30 days about 5 crore devotee visited the city and on the third Shahi Snan about 1.5 crore took a holy dip in Kshipra. Crore of rupees were spent to manage the Simhastha -2016.

The paper describes the various dimensions and interventions of planning cater the land and water demaned during a huge religious congregations. Different development activities like – construction bridges, ghats, roads, facilities related to accommodation like camping, drinking water, toilet, sewage line etc.

श्लोक – कुशस्थली तीर्थवांर देवानामपि दुर्लभम्।
माधवे धवले पक्षे सिंहे जीवे अजे खो।।
तुलाराशौ–क्षापानाथे – स्वातिभे पूर्णिमा तिथो।।
व्यतिपाते तु सम्प्राप्ते चन्द्रवासरे संयुते।।

The Explanation is - 1) Avantika area 2) Vaishakh Month 3) Shukla Paksh 4) Singh Rashi Mein Guru 5) Mesh Rashi Ka Surya 6) Tula Rashi Ka Chandra 7) Swat Nakshatra 8) Purnima Tithi 9) Vaytipath yog 10) Monday.

Avantika Mahaparv, Chaith Purnima, Monday 22 April 2016 Sein Vaiskha Shukla Purnima, Shanivaar 21 way 2016 ended.

When Jupiter outer the Leo sign of zodiac, known as Sinha Rashi. Ceremonial bathing in the holy water of Kshipra begin with the full moon day of Chaitra and continue in different intervals throughout the successive month of Vaiskha Culminating on the full moon day.

Religion Flag Map.

Ideal Sentence "Kshipra Ke Tath Par Amrut Ka Mela"

Starting of Ujjain Simhastha-2016 :- "Simhastha Kumbh Mahaparv" is one of the four "Kunbh Mela" celebrated as largest spiritual gathering on planet earth. Simhastha Kumbh Mahaparv is rejoiced by taking holy drip on the bank on river Kshipra in Ujjain city of Madhya Pradesh state in India. Simhastha Kumbh Mahaparv events is based on the celestial line-up of planets and the signs of the zodiac which occur in every 12 years. The Ujjain Simhastha -2016 was started on 22 April 2016 (Friday) and ended on 21 May 2016 (Saturday). The holy dip dates (Shahi and Parv Holy dip dates) were –

1. 22 April 2016 – Pratham Shahi Snan
2. 03 May 2016 – Vraparv Varuthini Ekadashi
3. 06 May 2016 – Vaishakh Kshipra Amavasya
4. 09 May 2016 – Dwitiya Shahi Snan
5. 11 May 2016 – Shankaracharyta Jayanti
6. 15 May 2016 – Vrishabh Sanskranti
7. 17 May 2016 – Mohini Ekadashi
8. 19 May 2016 – Pradosh
9. 20 May 2016 – Narsimha Jayanti
10. 21 May 2016 – Tritiya Shahi Snan

The next Simhastha in Ujjain will be organised from 9 April 2028.

Arrangements made before Simhastha 2016 - M.P. Transport Minister and Incharge of Ujjain district Shri

* Research Scholar (Geography) D.A.V.V. Indore (M.P.) INDIA

Bhupendra Singh claimed that the Ujjain Simhastha is the first Simhastha Mahakunbh of the country where in all the development work done are permanent from last few years the development of Ujjain was on progress for the Simhastha Ujjain is developed as an metropolitan city for this development, the minister Incharge commenting over the ongoing construction works to the turns of over Rs. 3000 crore said after reviewing progress of all departments on the instruction of Chief Minister the area for ther fair was prepared in the area 3016 hectare and was developed in the way of township with the facilities of electricity, sewage, water, construction of roads (about 100's of road). About 14 bridges are constructed from which 7 are Bridge, 5 are Railway over and 2 are flyover.

Infrastructure prepared for Ujjain Simhastha 2016 :

1. Activity plan and land used plan,
2. Camp,
3. River front development along Ghat,
4. Drinking water,
5. Bathing and other general purpose,
6. Pedestrian Movement,
7. Traffic Movement,
8. Parking,
9. Outer Cordor Connectivity,
10. Disaster Management,
11. Medical Facilities

Role of Information Technology in Ujjain :

1. Mobile App – The most user friendly app to guide, city of temples known as Ujjain and it will be helpful to guide those peoples who are coming Ujjain for the Simhastha Kumbh Mela. The app included the information about - Simhastha Mela, Timing of Shahi Snan, Peshwai, Different Akhadaas, Tour & Travel, Hospitals, Police, Control Room, Fire Brigade, Electricity Board, Police, Divisional Commissioner.

2. GIS Map – The GIS help making the Simhastha fair a smart Simhastha . A multilayer map of the whole fair area will be prepared, which will provide details of road, drainage, supply pipelines and electricity lines. The GIS survey mapping will help the agencies and administration to ease the Simhastha Fair Management. The work was on tandem with the ongoing Digital India Framework project.

3. Portal – For Simhastha -2016 a portal was also prepared, and these portal can be easily accessed on desktop, laptop and mobile on portal the information can be accessed like – when and where are the officers on duty, so that the orders can be given to them and reports can be received from them.

Dial 1100 – This was the first call centre of Simhastha. Anyone who want to collect information of Simhastha Fair area, Transport facility, zone, sector, Departmental work etc. can dial 1100 and can access full information about it.

Executive of Ujjain Simhastha 2016 Water – Many efforts were made to purify the water of Kshipra river. Many facilities have been provided by the government and other organizations are also helping to provide maximum support for the purpose sewage treatment, organizations are also planned for performing activities for cleaning of water of Kshipra. To keep the water of Kshipra. For this program 80 crore has been sanctioned by the government. In order to maintain the purity of Kshipra river, Ujjain has sanctioned amount of Rs. 59 crore to Municipal Corporation, Indore for establishment of sewage treatment plan. During the Simhastha to keep water clean, work of ozonization is also in progress.

Narmada-Kshipra Simhastha link project is an excellent initiative of the M.P. Government. The primary objective of this link project is to provide Narmada water for Simhastha activities. If any devotee coming to the festival pollutes the water by the rowing garbage in the river they must inform the control room to remove polluted item.

Human – To manage the crowd, we have worked on broadening the road networks in and around Ujjain, also to improve and control the traffic. The local administration has acquired 3000 hectares of land for managing Simhastha activities. They have constructed more ghats on Kshipra. Approximately 30000 crore is hte expected overall expense for this Simhastha and also 2400 crore are expended or infrastructure development.

To provide drinking water to the people, the installation of almost 1000 public and in the Simhastha are and other parts of city has also progressed. Also private agencies help us to provide quality water to the visitors.

Sewage – About 46000 toilets were established in the entire Simhastha area. The government has worked 24 x 7 to complete. This massive construction work. We have also made all arrangement to dispose the solid waste. Solid waste management plan is for total area of Simhastha -2016 Mela. Comprehensive Mela plan of Simhastha -2016, is being prepared by EPCO (Environmental Planning & Coordination Organization). The main objective of solid waste management plan were to effectively manage huge quantity of Municipal Solid Waste, to ensure safe disposal of waste, to provide quality urban environment, to reduce air pollution, to promote public and private partnership to successfully implement the management plan.

Green Simhastha 2106 :

1. Use of plastic in Mela zone during Simhastha would be banned – Biofuel vehicle would be run to control pollution.
2. Dera Sachha Sauda would be requested to take care of cleanliness of 'Simhastha '.
3. Before Simhastha -2016 there were about 2000 plants to be planted in Ujjain, so that Ujjain Simhastha can also be known as Green Simhastha .

Lets come together for "Clean India Mission" 2019 initiate the first chapter of the mission "Clean Ujjain, Beautiful Ujjain 2016" to make Ujjain – Pollution Free, Eco-friendly, clean, beautiful in order and safe for our guests. Before Simhastha Kumbh Mahaparv-2016 begins.

International Summit in Ninora Village, Ujjain - On a part of 500 Bighas of land temporary acquired in Ujjain Ninora

Village for the three days International Seminar to spread the message of Simhastha Kumbh, which was inaugurated by P.M. Shri Narendra Modi and President of Srilanka Maithripala Sirisena and both delivered their speeches on religion, culture, prosperity in human life.

For this farmers have to give their fertile land to build roads, helipads, toilets and this will ruined their crops.

This International Conference was attended by Prime Minister Shri Narendra Modi and Srilanka President Shri Maithripala Sirisena and told about the importance of Kumbh Aayojan and develop Ujjain as huge religious tourism.

Importance - In Simhastha-2016, the development work increased the beauty of th holy city. In the Simhastha, this city is known as a "Piece of Heaven". At present, in this city people feel unearthly because of many supernatural powers. Here it everywhere in every year the voice of religious, spritual and cultural activities. The importance of this city is developing it into a religious tourist spot. This city is on the path of becoming a world spiritual centre for its cultural importance in future. History of this will remain beautiful forever. This would be remembered for its unique qualities yesterday, so it is today and will be recognise in future also.

Conclusion - It is clear with the above description that the Simhastha Mahakunbh that held in April-May 2016 in Ujjain is the symbol of Indian faith, believe, tradition, culture and unity. In Simhastha Mahakumbh when saints and their followers together take a holy dip in the river Kshipra and a large number of congregations visits their Akhadas and also follow their preachings thus they make their life meaningful.

In Simhastha-2016 Ujjain Indian government organized an International Conference. In it our Prime Minister Honourable Shri Narendra Modi attended this conference and proved its superiarity in Hindu religion. The continous cycle of the inreasing human faith towards religion is ongoing from past and will be continued forever.

References :-

1. www.researchgate.net
2. www.simhasthaujjain.in
3. www.simhastha ujjain.in / about Simhastha 2016
4. www.dailypioneer.com
5. www.ujjain.nic.in
6. www.indiawaterportal.org
7. www.apnaujjain.com
8. www.epco.in
9. Dainik Bhaskar, Nai Duniya, Patrika, Jagran Newsaper
10. Times of India, The Hindu
11. Madhya Pradesh Sandesh, April 2016, Publication by Govt. of M.P. (Bhopal)

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

म.प्र. के ग्रामीण क्षेत्रों में बाजार विकास एवं संसाधन – एक भौगोलिक अध्ययन

डॉ. एस.एस. बघेल *

प्रस्तावना – भारत ग्रामों का देश है, यहाँ देश की उदरपूर्ति के लिए गाँवों पर निर्भर रहना पड़ता है। नगरीय क्षेत्र भी स्वयं विकसित नहीं होते है। वेअपनी आवश्यकता की वस्तुऐं ग्रामीण क्षेत्रों से प्राप्त करते है तथा बदले में उन्हें खुद (स्वंय) सेवाऐं प्रदान करते है। भारत गावों का देश है और वह इसलिए कि यहां की अधिकांश जनसंख्या गांवों में बसती है।

म.प्र. में ग्रामीण क्षेत्रों में बाजार का विकास एवं संसाधानों की आवश्यकता महत्वपूर्ण भूमिका रहती है तथा प्राकृतिक व मानवीय विकास में मानव की भूमिका बाजारों के ऊपर निर्भर रहती है। ग्रामीण क्षेत्रों में बाजार प्राय: दैनिक, अर्द्ध साप्ताहिक, साप्ताहिक एवं धार्मिक मेलों में लगे तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमोंआदि तथा विक्रेता एवं क्रेता एकत्रित होकर समान की बिक्री एव खरीद करते है।

मनुष्य ने जब तक कृषि करना नहीं सीखा था तब तक उसका जीवन स्तर घुमक्कड़ था। वह खाने पीने की वस्तुओं की खोज में भटकता फिरता और किसी स्थान पर जमकर नहीं रहता था।

गांव एक लघु समुदाय के रूप में एवं परिभाषा –

1. सैन्युसन के के शब्दों में – 'वास्तविक समुदाय वह जिसमें सामान्य हितों और उद्धेश्यों के प्रति भक्ति तथा जीवन के मुख्य कार्यो को एक साथ मिलकर करने की क्षमता हो।'
2. एक अन्य लेखक अनुसार – 'ग्रामीण समुदाय से अभिप्राय व्यक्तियों के उस समूह से है जो आवश्यकताओं की पूर्ति के हेतु स्व: या अनजाने में स्थापित हो जाता है।'

समय के आधार पर :

1. **अति अल्पकालीन बाजार –** ये दैनिक भी कहते है – दूध, पनीर, दही, सब्जी आदि
2. **अल्पकालीन बाजार –** अल्पकालीन बाजार में अति अल्पकालीन बाजार की तुलना में समय अधिक लगता है।
3. **दीर्घकालीन बाजार –** दीर्घकालीन बाजार के अन्तर्गत पूर्ति कर्ताओं को समय अधिक मिल जाता है।
4. **अति दीर्घकालीन बाजार –** आयात व निर्यात

बाजार के विस्तार को प्रभावित करने वाले कारक :

1. वस्तु की सर्वव्यापक मांग,
2. वहनीयता,
3. टिकाऊपन,
4. पूर्ति की पर्याप्तता,
5. यातायात व संचार साधन,
6. श्रम विभाजन,
7. शान्ति एवं सुरक्षा,
8. व्यापार का वैज्ञानिक तरीका,
9. सरकार की व्यापार नीति।

बाजार की विशेषताएं –

1. एक स्थान या क्षेत्र,
2. क्रेता व विक्रेता एक वस्तु ,
3. स्वतंत्र प्रतियोगिता,
4. एक मूल्य ,
5. बाजार का ज्ञान,
6. भौगोलिक विस्तार

बाजार का वर्गीकरण :

क्षेत्र के आधार –

1. **स्थानीय बाजार –** स्थानीय बाजार से तात्पर्य उस बाजार से है जो एक छोटे से क्षेत्र में सीमित होता है, जैसे – दूध, दही, अण्डा, सब्जी या रेत, ईट, पत्थर, लकड़ी पर।
2. **प्रादेशिक बाजार –** इसे प्रान्तीय बाजार भी कहा जाता है या मालवा प्रदेश व नर्मदा घाटी , सतपुड़ा पर्वतीय प्रदेश, बुन्देलखण्ड, आदि।
3. **राष्ट्रीय बाजार –** जब किसी वस्तु की मांग पूरे देश में होती है तब उसे राष्ट्रीय बाजार में मांग बढ़ जाती है।
4. **अन्तर्राष्ट्रीय बाजार –** जब किसी वस्तु के क्रेता/ विक्रेता पूरे विश्व में फैले होते है जब उसे अन्तर्राष्ट्रीय बाजार/ व्यापार कहते है, सोना, चांदी, कपास, गेहूँ, चाय आदि।

ग्रामीण विकास में बाजार तथा संसाधन :

1. घरेलू दैनिक आवश्यकता की पूर्ति – ग्रामीण क्षेत्रों में बाजार छोटे होते है अत: उनमें उपभोक्ताओं की दैनिक आवश्यकताओं की वस्तुऐं प्राप्त हो जाती है तथा मण्डी, उपमण्डी।
2. लोगों से मेल–मिलाप (सांस्कृतिक कार्यक्रम)
3. ग्रामीण क्षेत्र में कृषक बाजारों के माध्यम से कृषि नवाचार हेतु ।
4. ग्रामीण बाजारों से कृषक – रासायनिक उर्वरक बीज, छोटे–छोटे कृषि उपकरण ।
5. ग्रामीण क्षेत्र मेंपरिवहन के साधनों की आवश्यकता।
6. ग्रामीण क्षेत्रों मण्डियों की आवश्यकता।

* विभागाध्यक्ष (भूगोल) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

7. ग्रामीण क्षेत्रों में बाजार की भौगोलिक विस्तार साप्ताहिक (रवि, सोम, मंगल, बुध गुरू, शुक्र, शनि)
8. अधोसंरचना विकास, बाजारों के माध्यम से अधोसंरचना का विकास होता है। जहां बाजार होते है, सर्वप्रथम सड़क, कच्ची सड़क, बैलगाडी, पगडंडी, पैदल, वर्तमान प्रधानमंत्री सड़क योजना एवं राष्ट्रीय सड़क एन.एच.।
9. सामाजिक विकास व आर्थिक विकास।
10. व्यापारिक एवं वाणिज्य क्रिया कलापो का विस्तार।
11. फल व सब्जियों का विपणन।
12. विपणन सूचना सेवाएं।
13. भण्डारण व्यवस्था एवं संग्रहण।
14. गांव के हाट में बिक्री।
15. सरकार द्वारा खरीदी।
16. कृषकों उत्पादकों का उद्धेश्य।
17. उपभोक्ता के उद्धेश्य।
18. सरकार का उद्धेश्य।

निष्कर्ष – वस्तुओं एवं सेवाओं को उत्पाद में से उपभोक्ताओं को उपलब्ध कराना है। यह वस्तु अथवा वस्तुओं का आदान प्रदान एक अथवा उससे अधिक नगरीय, ग्रामीण क्षेत्रों, क्षेत्रीय राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के बीच तथा भौगोलिक विस्तार से है। म.प्र. के ग्रामीण क्षेत्रों बाजार का विकास एवं संसाधन का महत्वपूर्ण है।आयात व निर्यात के परिवहन व संचार तथा व्यापार महत्वपूर्ण संबंध रहता है, जिससे मनुष्य दैनिक जीवन के उपयोग का उपभोग या प्राथमिक क्रियाए, द्धितीय क्रिया तृतीय व चतुर्थ क्रियाओं तथा सांसाधनों का उपयोग करता है। व्यापार के दो अंग है, आयात महत्वपूर्ण वस्तुओं का बाहर से आना आयात कहते है तथा निर्यात वस्तुओं को बाहर भेजना उसे निर्यात कहते है।

व्यापार के नियम राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का आधार एक ही है और वह उत्पादन में दक्षता और श्रम विभाजन है फिर भी दोनों तरह के व्यापार के अंतर को कहा जाता है कि राष्ट्रीय व्यापार हममें आपस में होता है, परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार उनके और हमारे बीच होता है अर्थात राष्ट्रीय व्यापार एक देश की सीमाओं के अन्दर ही लोगों के बीच होता है और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार विभिन्न देशों के बीच होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ग्रामीण स्थानीय प्रशासन डॉ. प्रभुदत्त शर्मा पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष राजनीति विज्ञान विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर रिसर्च पब्लिकेशन त्रिपोफिया बाजार जयपुर (राजस्थान)
2. मानव व आर्थिक भूगोल डॉ. एस. डी. कौशिक।
3. मानव भूगोल डॉ. माजिद हुसैन, रावत पब्लिकेशन्स जयपुर व नईदिल्ली।
4. म.प्र. का भूगोल डॉ. शिवअनुराग पटैरया निर्देशक नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया, नईदिल्ली।
5. म.प्र. का भूगोल डॉ. कमल शर्मा हिन्दी अकादमी ग्रंथालय (म.प्र.)
6. म.प्र. का भूगोल डॉ. शिवानंद गौतम, रामप्रसाद एण्ड संस, भोपाल–आगरा।

****

Innovative Applications of Positive Psychology in the Community through Lifelong Learning

Dr. Bharti Joshi *

Introduction - Human being has been learning since its appearance on this mother earth. We learnt how to survive in the toughest of conditions. We learnt to eat fruits & vegetables available in nature to satisfy our hunger. We learnt to make tools for hunting using stone & wood. We then learnt to hunt & eat animals. Then we learnt to tame animals & use them for agricultural purposes. We then learnt to create fire by rubbing stones against each other. After this we learnt to wrap & cover our bodies with leaves or animal skin. We have been learning so much since ancient times that it is sometimes amazing to think about the learning potential of a human being. Still our modern science says that we use only 1% to 5% of our brains which means we can learn even more & even better than we are doing right now & that too for the whole of our lives.

Here comes in the concept of lifelong learning. It is said that no individual or society can continue to exist without having this learning capacity which has been given to us naturally & inherently. The way an individual or a society or an ethnic group for that matter, would learn will definitely & has to be different. Some would like to write & learn while the others would like to listen & learn. Still others would like to do & learn. The manner in which people learn would also depend on the faith they follow, the physical conditions of the place, the economic & financial status, the social status, the resources available, the age & gender, the political status, the technological status and so on & so forth.

Limitations of formal learning - The kind of learning that has been prevalent in the Indian context especially post independence is through schools, colleges & institutions of higher & professional education. These institutions have a very formal & predetermined approach towards making the masses learn. They have been highly dominated by the British way of learning. They would have a set age of learners, set norms of admission & set prerequisites for engaging these learners. A child aged 4 would be given admission in Nursery & they would advance to higher classes. Once they are done with this schooling part they can go ahead with the university education & the prerequisite condition being that they should have completed 12 standard or higher secondary with required number of marks. This means that somebody who hasn't got the chance to complete his/her schooling (due to financial or personal constraints) but who is literate enough to take a college level course will unfortunately not be allowed to continue. Similarly unless & until a person completes the specified course in college say graduation or post graduation he/she will not be admitted to any professional courses. This means that once a person misses the chance to complete the schooling he/she will have very little options of progressing. In India, quite a large number of people are outside the formal system of education.

Agreed that some amount of prerequisites is always required to learn something but we have also seen people & our ancestors starting from the scratch & reaching the top. Though, this is not true with the skills that an individual learns from peers, family or community. Somebody interested & inclined towards learning carpentry can do so by observing/ assisting his father in the same work & he/she can gain those skills which will make this individual financially independent even if he did not have any formal education
So, what we see is a huge gap between formal & informal education & the need to align both of them in the present social & economical context so that learning, earning & development can be hurdle free.

Again, if we continue the discussion from the college/ university level learning to engaging oneself in a profession, we still have lot of hurdles in learning. Firstly, most of this college education hasn't equipped the individual with a particular skill or competency that can be directly applied in an organization or a revenue generating unit. Secondly, even if an individual is able to somehow make entry into such an organization & start earning for himself he/she is type casted in that particular industry. These individuals will have chances of progress only in their particular industry which was not chosen by them according to their passion or aptitude but because they just somehow managed to land with a job in that industry. Hence you will find that people who are not technocrats or professionals (doctors, lawyers, engineers, chartered accountants etc.) will hardly have options of changing their industry.

There are a third set of people who are called mid-term professionals. It is still more painful for these people who

* Head & Associate Professor (Department of Lifelong Learning) Devi Ahilya University, Indore (M.P.) INDIA

after having spent a few years in a particular industry realize that they are not meant for this job or that they are not left with any interest/ inclination towards this industry. These individuals find it extremely difficult to swap their industry. A person working in a BPO will hardly ever get a chance to shift to banking, pharmaceutical, insurance, retail or FMCG unless & until he/she has some very good transferable skills.

Scope of Lifelong Learning - Now, here is where lifelong learning can be practically put to use. The term itself is self explanatory & suggests that it is a concept where every individual is given the provision of learning for a life time. They are allowed to learn constantly to improve. The improvement does not necessarily specify the financial improvement in their lives but also their overall approach towards living life. Hence this term 'lifelong learning' is used to indicate a 'learning society'.

A learning society indicates a continually changing society which knows the importance of attitudinal change. It says that it is never too late or too soon for learning & that 'one can and should be open to new ideas, decisions, skills or behaviors'. It is not confined to the institutions of formal education but also extends to the workplace, community based locations, libraries, trade unions etc.

It provides learning opportunities to all citizens at all ages so that it is useful for them at their workplaces, in the market, in exercising their consumer rights against unfair trade practices, support for good governance, raising the quality of public life, at home and in their leisure activities. Lifelong learning is based on assumptions and philosophy of self directed learning. It is also a form of pedagogy which is imparted institutionally through channels like correspondence courses offered by universities, distance learning or e-learning, continuing education, home schooling, etc.

Lifelong learning will hold good differently for different individuals. For somebody who is far away from literacy, a lifelong learning program would mean functional literacy to help improve their awareness, competence, skill, self confidence & participation. For a skilled labor like a carpenter it would mean learning of new tools & techniques of carpentry. For a woman who was forced to abandon studies early in her life, it may mean opportunity to learn a new skill which would in turn help her to open a new source of earning. For woman in general either of the oppressed class or the affluent class, a course on gender equity would mean accumulating confidence to fight against injustice or sexual harassment. Lifelong learning is not only applicable to the illiterates & lower income strata of the society but is also equally beneficial for the already educated class of people. For example, in the European countries, retired folks opt for lifelong learning programs to quench their thirst of more knowledge and inner peace.

These programs can be taken up by adults who may want to get a better qualification, update the present information on topic of their choice or learn an entirely new skill to change their line of work. This is particularly true with the mid career professionals that we discussed about earlier in this paper, who are looking forward to change their industry.

Such programs can be taken up by other educated adults of the society may be teachers, politicians, social workers, bureaucrats who further want to hone their skills in the larger interest of the society.

We at Department of Lifelong Learning, Devi Ahilya Vishvidyalaya ,Indore have conducted lot of short duration programs during the year 2013-2014. The duration of these courses ranged from 3 days to 30 days. The different courses were Clay art and mural making, Integrated modern vastu and interior, Poster making, Internet training for senior citizens and home makers, Doll making, Basic elementary sketching for interior design, Mural with thermocol, Art & Craft teaching – a) Kundan art b) Drawing & Painting c) Paper cutting art , Mural with waste material, Mural with clay, Fabric painting and pebble art, Eco-friendly Ganesh creation, Glass painting, Advanced fabric painting on different medium, Spiritual healing & self defense.

Till date approximately 450 students, homemakers & senior citizens have benefited from these workshops. We have been able to reach to a substantial section of the society. It was a pleasure to have more than 30 deaf & dumb students in one of our workshops of " Eco friendly Ganesh making". They thoroughly enjoyed the workshop & did create Ganeshji on their own. Some of them have used the learning to advance their prior knowledge, the others were beginners, still others were professional who used the skills learned in the programs to earn extra income for themselves & gain more profit in their respective businesses.

Testimonials of few of the candidates those who have attended the various trainings -

Workshop - Internet training for senior citizens & home maker

Candidate - Mr. Satish Chandra Tiwari (68yrs)(Manager admin –MPFC) - This kind of training is extremely helpful for senior citizens. I got to know new things which have increased my confidence.

Candidate - Mr. Balasaheb Sathe (70 yrs) - In today's modern world it is extremely important to stay connected with new thoughts & new works. This workshop has been extremely helpful in doing the same.

Candidate - Mr.Madhu Sudan Gupta(70 yrs) (Mechanical Engineer) - The course was very inspiring & well monitored. It covered major part of the subject in a short duration. I enjoyed the course since Internet is an amazing library on finger tips.

Candidate- Mr. Sunil Agrawal (69yrs) - We, senior citizens have a big time phobia of technology. This workshop was extremely useful to overcome this phobia.

Candidate - Mrs. Megha Singh(36yrs) - This workshop has been extremely useful. I came to know, how I could pay my phone & electricity bill online. I also came to know about railway ticket booking & mails.

Workshop - Poster Making

Candidate - Ms.Padma Lodhwal(30yrs) - I enjoyed being a part of this workshop. I plan to work for women and child development & through posters it becomes easy to make them understand the vital issues of life.

Candidate - Mrs. Savita Rathore(69 yrs) - I enjoyed the workshop. It has helped me to improve confidence. It helps to express myself better.

Workshop - Clay art &Mural Making

Candidate - Mrs. Pankaja Kane(49yrs) - Pursuing art is my hobby but I kept my hobbies on hold because of family responsibility.

Workshop - Eco friendly Ganesh Creation

Candidate - Mrs. Aarti Singh Tomar - This workshop was extremely useful. Through this we can save our environment because synthetic Ganesh idol is a cause of pollution of our sacred rivers.

Workshop - Mrs.Vandana Parashar (Retd. Deputy collector-68 years) - Pursuing art & hobbies is like meditation for me. I was suffering from serious neuro problem & was in coma for few months. I could only recover so fast because of my involvement in different arts.

Conclusion - Many corporate & transnational organizations arrange in house or outsourced training programs to enhance the present skills of their employees. They have similar goals as that of the lifelong learning program. In fact the concept of behavioral skills , soft skills, language and communication skills, cross cultural, cross functional and technical trainings in these organizations originate from the very concept of lifelong learning which boils down to the fact that adults in today's highly competitive world need to keep themselves abreast with new happening & changes in the society and the workplace.

It has hence become an urgent necessity of institution-alization of lifelong learning education.

We plan to conduct a lot more outreach programs in the coming years so as to impart lifelong learning in it truest sense.

References : -

1. UNESCO (1972) Learning to be - the world of education today and tomorrow - Report to the International Commission on the Development of Education chaired by Edgar Faure, Paris - UNESCO Publication.
2. UNESCO/National Literacy Mission (99/2000) Towards Life Long Learning, New Delhi - State resource centre Jamia Millia Islamia Edited by Werner Mauch/ Renuka Narang (1998) Lifelong Learning And Institutions of Higher Education In The 21st Century - Report on the Preparatory meeting for the world conference on Higher Education, Paris of the International Working group on University-based Adult Education, Mumbai - Department of Adult & Continuing Education & Extension University of Mumbai.

****

A Study of Role-Conflict Among Married Working Women in Relation to Income

Dr. Mamta Barman *

Abstract - The Indian work place is rapidly changing in accordance with the economic conditions, corporate employment practices and demographic trends of the country. Globalisation has strong implications on the attitudes of women, their work, social role and health. The present investigation is a modest attempt to find out how males and females perceive the role and status of women today and their expectations for women in all spheres of life. 75 married working women were selected to investigate the effect of income on role conflict. Role conflict scale for married working women (Verma P. and Vinayak S. 1999) was used. Findings of the study reveal that role conflict is affected by income.
Keywords - Role-conflict, working women.

Introduction - Today's world is rapidly changing. The profound social changes have affected women much more than man among the middle class urban educated population.

To seek a career or to accept service outside the home was not considered respectable for a middle or upper class married women, in the traditional Indian society. Now a majority of husband do not mind their wives taking up jobs or to continue to be in job after marriage, through mainly because of the economic gains that it entails. Primarily because of the economic strains of the times, society's attitude towards a married women's employment has also changed.

Women began to establish themselves as a visible presence in fields such as education, services, organization, industries, offices and administration. The Indian reality is completely different from the west. Many examples of working women told that how women are not able to stay on top after reaching there because they wanted to take care of their families. Many women even giving up their jobs, putting family needs first. With multiplicity of roles, her behavior becomes very complex in terms of 'expected' and 'actual' conduct and she faces the major part of confusion with regard to her status and role.

The major objective of the study is to discuss the effect of income on role conflict of married working women. It was hypothesized that, "there will be no impact of income on role conflict of married working women".

Method - 75 married women working in sales tax department were selected for the study Role conflict scale for married working women developed by verma, P and Vinayak S. (1999) was administered individually. High scores on the scale indicates high role conflict.

Table : Comparative results of Role Conflict of Sales-Tax employees in relation to Income

Income	N	Mean	S.D.
<15000	62	50.92	8.45
15000-20000	10	43.90	6.26
>20000	3	48.67	8.96

Summary ANOVA table

Source of Variation	d.f.	Sum of Squares	Mean Squares	F-Ratio	'P' Value
Between Groups	2	428.98	214.49	3.17	<0.05
Among Groups	72	4872.16	67.67		

Degrees of freedom – 2,72

Minimum value at 0.05 level- 3.13

Minimum value at 0.01 level – 4.92

Result and Discussion - From the results presented in the above table it is clear that there is impact of income on role conflict of married working women working in sales tax department. The value of 'F' ratio is 3.17 which is greater than 3.13 the minimum value for significance at 0.05 level. Hypothesis is rejected here.

Thus, from the above results it may be concluded that there is an impact of income on role conflict of married working women of sales-tax department. Those having income of less than 15000 have greater role conflict than of other higher income groups.

Men still have double set of values – one for themselves and another for women. More young men want now that there would be wife should be educated an preferably gainfully employment. They desire that she should work for the

* Asst. Professor (Psychology) Govt. P.G. College, Narsinghpur (M.P.) INDIA

advantage of the additional income to the family, but expect that she should at the same time remain traditional in her attitudes towards husband-wife rights and obligations and should neither demand nor expect even the right over her own earned money. She should be a perfect cook and an "ideal wife" to look after all the comforts of the husband at home without demand or expecting privileges as an equal partner in marriage. Changed context has created a role confusion for the working wife, as the new role of working outside the home and earning a salary has been added to her established roles of a wife and mother. Tension and conflict is created between her roles as a worker and as a house wife and mother, because of the absence of fit between her old and new roles. **Satyanand** (1973) observes, in a larger number of instances of status of the working women vis-à-vis her husband is that of a second partner and not of a co-partner. Though her status is improved at home, her husband is still quite not prepared to relinquish his patriarchal privileges. He expects the same behavior and looking after as he would from a full-time wife, still wants to control the money earned by his wife, and insists on her giving more importance to her wife's and mother's role than to her working women's role. Sharma and Wellington (1988) reveal that husbands of employed as well as non-employed wives expect the major part of the roles related to children, housekeeping, recreation and entertainment and religion should be performed by the wives and major part of the roles related to money matters should be performed by them alone.

References :-

1. Bansal, V (1988); "Gender as a Source of Variation in Perception of Autonomy of Women" Prachi Journal of Psycho-Cultural Dimensions; PP CRA Meerut Vol. 14(1); 21-24.
2. Chandola T. (2004); "Conflict between home and work…. International Journal of Epidemiology, Vol. 33(4)' 884-893.

****

फौजी एवं गैर फौजी युवाओं में शक्ति अभिप्रेरणा का तुलनात्मक अध्ययन

ज्योत्स्ना झारिया*

प्रस्तावना – अभिप्रेरणा– अभिप्रेरणा एक उपकल्पनात्मक प्रक्रिया है, जो व्यवहार के निर्धारण से सम्बन्धित होती है। अभिप्रेरणा शब्द से प्राणी की सभी प्रकार की प्रेरणात्मक प्रक्रियाओं का बोध होता है। प्राणी में अभिप्रेरणाओं का प्रत्यक्ष निरीक्षण संभव नहीं है; केवल इसके प्रभावों का निरीक्षण ही संभव है। प्रेरणा से तात्पर्य एक विशेष आंतरिक कारक से होता है, जो व्यक्ति को कार्य प्रारंभ करने तथा उसे लक्ष्य पर पहुंचने तक क्रियाशील बनाये रखने के लिये निर्देशित करता है। वास्तव में अभिप्रेरणा प्राणी की एक मनोशारीरिक अवस्था होती है जिसकी उत्पत्ति किसी तरह का अभाव या प्राणी के भीतर होने वाले रासायनिक एवं भौतिक परिवर्तनों के फलस्वरूप होती है। जिसके परिणाम स्वरूप व्यक्ति लक्ष्य निर्देशित व्यवहार करता है। लक्ष्य प्राप्त होने पर प्राणी में उत्पन्न असंतुलन एव तनाव समाप्त हो जाता है और प्राणी में शारीरिक एवं मानसिक रूप से समायोजन संभव हो पाता है। मैक्डोनल्ड (1968) के अनुसार 'अभिप्रेरणा एक भावात्मक क्रियात्मक कारक है, जो कि चेतन तथा अचेतन लक्ष्य की ओर होने वाले व्यक्ति के व्यवहार की दिशा को निष्चित करने का कार्य करता है।'

डी.एन. श्रीवास्तव,(1976) के अनुसार 'अभिप्रेरणा एक आंतरिक कारक या स्थिति अथवा तत्परता है, जो किसी क्रिया या व्यवहार को आरंभ करने की प्रवृत्ति जाग्रत करती है एवं व्यवहार की दिशा तथा मात्रा भी निश्चित करती है।'

शक्ति अभिप्रेरणा – वीराक्फ (1976) के अनुसार, शक्ति अभिप्रेरक प्रवृत्ति है, जिससे अभिप्रेरित व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के व्यवहारों को प्रभावित करने वाले साधनों पर नियंत्रण स्थापित कर संतुष्ट होता है।

समाज के प्रत्येक व्यक्ति में किसी न किसी मात्रा में शक्ति अभिप्रेरणा पायी जाती हैं। इस अभिप्रेरणा से प्रेरित व्यक्ति में दूसरों को नियंत्रित करने में संतुष्टि मिलती है, दूसरों पर प्रयुक्त जमाकर जीत हांसिल करके या दूसरों के भाग्य का निर्माता समझकर वे संतुष्टि का अनुभव करते हैं।

फैल्डमैन (1986) के अनुसार 'दूसरों के व्यवहारों को नियंत्रित करने तथा उन्हें अपने ढंग से मोड़ने की क्षमता को शक्ति अभिप्रेरणा कहा जाता है।'

विन्टर (1973) के अनुसार शक्ति अभिप्रेरणा प्रत्येक व्यक्ति में भिन्न–भिन्न हुआ करती है। इसे मापने के लिए प्रक्षेपी प्रविधियां एवं मानकीकृत परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है। स्त्रियों की अपेक्षा पुरूषों में शक्ति अभिप्रेरणा की आवश्यकता अधिक पायी जाती है।

व्यक्तिगत सर्वे (2015–2016) से पता चलता है कि विशेष रूप से ऐसे युवा जिन्हें अपने कार्यक्षेत्र में शक्ति का प्रदर्शन करना होता है यथा– सैनिक, (फौजी), पुलिस कर्मी, खिलाड़ी, एन.एस.एस. एवं एन.सी.सी. केडेट्स एवं नकारात्मक व्यक्तित्व शीलगुण जैसे आपराधिक प्रवृत्ति वाले व्यक्तियों चोरी और सीनाजोरी प्रवृत्ति व्यक्तियों, निरंकुश और निर्दयी व्यक्तित्व शीलगुणों वाले व्यक्तियों में शक्ति अभिप्रेरणा की प्रधानता रहती है।

उपकल्पना – फौजी एवं गैर फौजी युवाओं की शक्ति अभिप्रेरणा में सार्थक अन्तर नहीं पाया जायेगा।

शोध अध्ययन विधि – न्यादर्श– प्रस्तुत शोध अध्ययन में उद्देश्य पूर्ण प्रतिचयन विधि से जबलपुर छावनी (4TTR) से 25 फौजी युवाओं एवं जबलपुर नगर से ही 25 गैर फौजी युवाओं का चयन न्यादर्श हेतु किया गया, जिसका विवरण न्यादर्श तालिका में प्रस्तुत है।

न्यादर्ष तालिका

क्रं.	परिवर्त्य	संख्या	लिंग	आयु	स्थान
1	फौजी	25	पुरूष	18 से 28 वर्ष	जबलपुर छावनी (4TTR)
2	गैर फौजी	25	पुरूष	18 से 28 वर्ष	जबलपुर नगर

प्रायोगिक अभिकल्प – प्रस्तुत शोध अध्ययन में फौजी एवं गैर फौजी युवाओं की शक्ति अभिप्रेरणा के अध्ययन हेतु द्धि समूह अभिकल्प का प्रयोग किया गया है।

सांख्यिकी – प्रस्तुत शोध अध्ययन में फौजी एवं गैर फौजी युवाओं की शक्ति अभिप्रेरणा में सार्थक अंतर की जांच हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–टेस्ट की गणना की गई है।

प्रयुक्त उपकरण – प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु धपोला एवं सिंह द्धारा निर्मित शक्ति अभिप्रेरणा प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है। परीक्षण की विष्वसनीयता 72 है। एवं वैद्यता का सहसम्बंध गुणांक 408 है।

आंकणों का संकलन – आंकणों के संकलन हेतु जबलपुर छावनी के 4TTR से 20 फौजी एवं जबलपुर शहर के विभिन्न क्षेत्रों से 20 गैर फौजी युवाओं से व्यक्तिगत रूप से मिलकर परीक्षण प्रपत्र भरवाकर आंकणों का संकलन किया गया।

परिणाम – प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्राप्त परिणाम, परिणाम तालिका में अंकित है–

* सहायक प्राध्यापक (मनोविज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

परिणाम तालिका

क्रं.	परिवर्त्य	मध्यमान (M)	मानक विचलन (SD)	t का मान	df(48)	विशेष विवरण
1	फौजी	176	6.01	2.88	0.05 पर t का मान- 2.01	सार्थक अंतर है।
2	गैर फौजी	171	6.45		0.01 पर t का मान- 2.68	

प्रस्तुत शोध अध्ययन में फौजी एवं गैर- फौजी युवाओं की शक्ति अभिप्रेरणा का मापन किया गया जिसमें फौजी युवाओं की शक्ति अभिप्रेरणा का मध्यमान 176 एवं मानक विचलन 6.01 प्राप्त हुआ, इसी तरह से गैर फौजी युवाओं की शक्ति अभिप्रेरणा का मध्यमान 171 एवं मानक विचलन 6.45 प्राप्त हुआ। मध्यमान एवं मानक विचलन के आधार पर दोनों ही समूहों अर्थात फौजी एवं गैर फौजी युवाओं की शक्ति अभिप्रेरणा में अंतर पाया गया। प्रस्तुत शोध अध्ययन में t का मान 2.88 प्राप्त हुआ है, जो कि 48 df पर 0.05 P पर प्राप्त t के मान 2.01 एवं 1.01 P पर प्राप्त t के मान 2.68 से अधिक है। अत: प्राप्त परिणामों के आधार पर कहा जा सकता है कि फौजी एवं गैर- फौजी युवाओं की शक्ति अभिप्रेरणा में सार्थक अन्तर पाया गया।

विवेचना एवं निष्कर्ष - प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्राप्त परिणामों के आधार पर कहा जा सकता है कि फौजी एवं गैर फौजी युवाओं की शक्ति अभिप्रेरणा में सार्थक अंतर पाया गया।

हल (1943) के अनुसार अभिप्रेरित व्यवहार ऊर्जित तथा जाग्रत होता है। अभिप्रेरित व्यवहार में व्यक्ति में सामान्य व्यवस्था की अपेक्षा अधिक ऊर्जा जाग्रतता दिखाई देती है। ब्राउन (1961) के अनुसार अभिप्रेरित व्यवहार की अवस्था में उत्पन्न ऊर्जा और जाग्रतता के कारण ही प्राणी सामान्य अवस्था की अपेक्षा अधिक कार्य करता है या उसका निष्पादन अधिक श्रेष्ठ होता है।

यंग (1961) के अनुसार अभिप्रेरणा में व्यवहार लक्ष्य निर्देशित होता है। अभिप्रेरणा से सम्बंधित प्रत्येक व्यवहार का कोई न कोई लक्ष्य या उद्देश्य होता है, इसी उद्देश्य को पूरा करने के लिए प्राणी प्रयासरत रहता है। प्राणी को जब तक इस उद्देश्य की प्राप्ति नहीं हो जाती है, तब तक प्राणी में अभिप्रेरणा से सम्बंधित आंतरिक तत्परता बनी रहती है। प्राणी का लक्ष्य किसी भी प्रकार का हो सकता है जैसे- विजय प्राप्त करना, सफलता हासिल करना, आक्रमण करना, किसी पर अधिकार जमाना, किसी वस्तु का संग्रह करना, सम्मान प्राप्त करना, किसी की रक्षा करना इत्यादि।

मानव विकास की अवस्थाओं में युवावस्था आती है, किशोरावस्था के बाद। युवावस्था आने तक व्यक्ति में समझदारी के साथ-साथ शक्ति, ऊर्जा, आत्मविश्वास, आत्मसम्मान आदि का विकास हो चुका होता है, और वही युवा यदि फौजी हो तो उसमें और अधिक शक्ति, ऊर्जा, साहस, सामर्थ्य और अनुशासन देखने को मिलता है, क्योंकि फौजी यूं ही नहीं बन जाते। फौजियों की भर्ती के लिये लिखित एवं शारीरिक परीक्षा के बाद उनका चयन होता है। तत्पश्चात 11 महीनों के कठोर प्रशिक्षण के बाद एक फौजी बनता है। दुश्मन पर टूट पड़ने वाल खूंखार फौजी को कडे और सैन्य प्रशिक्षण के साथ-साथ मानवीय मूल्यों, अपनी संस्कृति और सेवाभाव का प्रशिक्षण भी दिया जाता है। फिर वह अनुशासन, त्याग, कर्तव्य, अप्रतिम, योद्धा भाव की जीवंत मिसाल बन जाता है, उसमें वह बदलाव सिर्फ 11 महीनें में आ जाता है। कम समय के इस कठोर प्रशिक्षण से वह बन जाता है, दुनिया की सर्वश्रेष्ठ सेना का रणबांकुरा जवान। प्रशिक्षण समाप्त होने तक कई तरह की क्षमतायें एवं योग्यतायें हासिल कर चुका होता है, जैसे - आंख मूदकर अपनी इंसार रायफल के पुर्जो को अलगकर उसकी सफाई करके पुन: मिनटों में जोड़ना, हथियार एवं साजो सामान के साथ दुर्गम स्थानों की पैदल यात्रा, हर तरह के वाहन चलाना, नक्शे पढ़ना, संवेदनशील उपकरणों का इस्तेमाल, रात्रि दृश्यता उपकरणों का प्रयोग करने की योग्यता, दुश्मन की गोलाबारी का बहादुरी से सामना करना, घने जंगलों, बर्फीले पहाड़ों और तपते रेगिस्तान में लड़ना और जिंदा रहना सीख जाता है। जाहिर है एक आम इंसान की तुलना में इन फौजियो में शक्ति एवं सामर्थ्य अधिक होती है। निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि फौजी एवं गैर फौजी युवाओं की शक्ति अभिप्रेरणा में सार्थक अंतर पाया गया, अत: प्रस्तुत लघु शोध हेतु बनाई गई उपकल्पना को अस्वीकृत किया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्रीवास्तव डी.एन. एवं प्रीति वर्मा,(2010) बाल मनोविज्ञान बाल विकास। प्रकाशक: अग्रवाल पब्लिकेशन, आगर सत्रहवां संस्करण (2010) पेज- 83 -97
2. श्रीवास्तव डी.एन. एवं प्रीति वर्मा,(2012) मनोविज्ञान और शिक्षायें सांख्यिकी, प्रकाशक: अग्रवाल पब्लिकेशन, आगर उन्नीसवां संस्करण (2012) पेज- 135-239
3. सिंह अरूण कुमार (2002) समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा, प्रकाशक : मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, पांचवां संस्करण (2002) पेज- 87-95
4. वर्मा प्रीति एवं डी.एन. श्रीवास्तव (2001) आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान, प्रकाशक : विनोद पुस्तक मंदिर आगरा, बारहवां संस्करण (2001) पेज- 207-221
5. panchjanya.com/arch/2004/1/25/file 17.htm

****

Teaching English Language - A Challenge in Non-native Context

Dr. Manisha Dwivedi *

Abstract - This article attempts to convey in the topic linked to the Problems of **Teaching English Language - A challenge In Non-native Contexts.** The language strategy in school education emerged as a social problem and personal problem. The excellence of English language education in majority of Indian schools and college presents a very terrible picture. Teacher's language ability, experience to language and materials are major concerns for quality English language learning. In reality countryside students' situation is very hard. They don't have opportunities as city students had language lab, audio visual aids and what not. Usually rural students consider English as a subject not as a language. It is the main barrier of them. Majority of students read English only for the sake of examination. They are not known how to recite poems but they well known how to memory it. In reality rural students have fear on English. On the other hand many teachers don't have long vision about students' life. They highlight only on examination.
Keywords- Challenge, Non-native Contexts, social problem, strategy, excellence, barrier, highlight.

Introduction - The English language has had an outstanding history. When we first catch sight of it in historical records, it is the speech of some none-too-civilized tribes on the continent of Europe along the North Sea. Of course, it had a still earlier history, going back perhaps to somewhere in Eastern Europe or western Asia, and long before that to origins we can only wonder about. From those gloomy and ordinary beginnings, English has become the most prevalent language in the world, used by more peoples for more purposes than any other language on Earth.

Today English has become a world language and it is measured essential to learn English to follow higher studies. Thanks to Raja Rammohan Roy and Lord Bentick, that English was introduced in India in 1835 and it threw open to us the storehouse of knowledge and information, which is admitted by one and all.

In general, while teaching English literature in non-native context, the teachers and learners face certain difficulties and problems due to cultural, racial, and linguistic differences. British or English cultural references are not known or familiar to the learners and hence many times they do not understand the matter as is viewed by the author. This cultural aspect includes all such factors like geography, topography, climate, history, religion, social and personal relationships, habits of thoughts, social values, moral codes, arts, sports, and entertainments and so on. With all such reasons, problems arise and teaching of English literature can become a challenge in non-native contexts. For example, snow, frozen ponds, winter and craze for spring are common in the description of English literature that is not generally shared by Indians. Likewise, the Biblical references and Latinized words and allusions in Milton's poetry, social & royal occasions of 18th century England in Pope's poetry and bombastic language-use of classic writers may create aversions of English literature in an inexperienced foreign learner.

The traditional methods of teaching are lecture methods wherein we find one-sided discourse of the teacher and passive response or blind acceptance by the students. Much is left to the imagination of the teacher and the students, and, if possible, upon the interpretative ability of the students. In new methods, the teacher's skill in making the learner feel the experience of the writer contributes to effective learning. The teacher has to have ability to apply new techniques suitable to the learning of English literature in content-oriented and language-oriented aspects. The teacher has to train the minds of the learners to grasp the writer's vision, approaches and the beauty of languages as well as the use of new words; he requires such new skills. The teacher must have an ability to connect the non-native aspect in the content and language with real life solution.

In the new world of changing global necessities, the methods are to be customized by the teacher while educating the students. Teaching English literature in non-native contexts involves the linguistic skills Competence and the human value systems of the concerned society. Globalization now has altered the objectives of teaching English into skill-based, self-learning, professional and uncultured concerns.

There is close and firm relation between language and literature. Teacher must understand this relation and be ready to change the traditional methods. The modern technique, use of materials like audio-video, participations in seminars,

* **H.O.D. (English) Dr. C. V. Raman University, Bilaspur (C.G.) INDIA**

live interactions, preparing students for diverse source of information on their own, developing the skills of synthesis of knowledge among them, such methods are to be followed to remove the cultural and linguistic barriers and make the learning more fruitful.

Use of video aids can give visual information of unseen places and references to make them more familiar. The advanced information of the topic on internet enriches the teacher and learner to equip himself before dealing with the topic. For this, the teachers and institutions must have new perspective and vision, new approach and readiness to change. Teaching thus can become easy and interesting even in non-native contexts.

English language is, no more, the advantage of native users or writers only. Non-native groups, crossing the national, racial and cultural borders, have been generating a kind of sensibility and yet a separate identity in the use of English language and in creative writings .A sense of ownership of this language has grown. In such non-native perspective, English is not a monopoly of only the native speakers and writers. Although English literature by English native speakers is great, literature produced in English by non-natives is of no less value. It has global and universal quality and circumstantial significance.

Pessimistic approach toward learning and using English is still customary in the rural regions of India. A part of the reason is historical - earlier generations were subjects under the British rule, only some classes of people, a very small number, indeed, learned English with eagerness and established position of influence power in British India. We are now a free country for over 60 years, and yet English has not yet penetrated into our rural parts and the families of first generation learners.Their positively are some theatrical change in the last decade. English now enjoys a pre-eminent place in the Western world and those who seek who seek personal and social success have softened their attitude toward the English language which in the past was viewed with fear suspicion as a symbol of servitude. Unfortunately, this forceful change and transition have not yet led to change in teaching and learning strategies in the rural parts.

In the procedure of teaching-learning, first the educator should try to analyse the students. Then only, he can enable the students to understand him or his teaching. Theory with exercise on some of the teaching topics may facilitate the students to make out the idea without difficulty. Success of a instructor is his/her attempt in enabling the students to know what is the concept taught by the teacher, depends on the methods he/she applies.

However, teaching English as a second language is really pleasing if you do it in the accurate way. You have to make it enjoyable for your students too – that's the way they will learn better. English occupies a place of status in our country but at the same time we must confess that the standard of its teaching has deteriorated greatly and that is why it is necessary to know the problems of teaching English in non-native context. Then alone we can get rid of these troubles and tutor students successfully for superior outcome.

References :-

1. Jacob Tharu, 2006. "A second look at English as a window on the world that has changed," Communication Curriculum in Higher Communication: Challenges & Opportunities.
2. Retrieved from www.lapasserelle.com/1m/excercises/games.page.html
3. L .N. Kinnock.2006. The "English factors in globalization", Those Who Wish To Influence The Future Must Prepare For It. Page 7.

****

Arnold : An elegiac poet

Dr. Jalaj Dixit *

Abstract - An elegy is an expression of grief. It is a song of mourning. The present study is an attempt to depict that Mathew Arnold is an elegiac poet and his elegies are an expression of disappointments.

Introduction - Elegiac Elements in Mathew Arnold's Works - Hugh Walker remarks "Nothing is Arnold's verse is more arresting than its elegiac note. His works Rugby Chapel, Thyrsis, Dover Beach and the scholar Gipsy are some of his finest elegies.

An elegy may be of two kinds

1. Personal Elegy, in which the poet laments the death of some close friend or relative.
2. Impersonal elegy, in which the poet grieves over human destiny or over some aspect of contemporary life and literature. In this way we get his philosophy of life and death.

As a matter of fact, Mathew Arnold's elegies are an expression of his inherent pessimism and sense of loneliness. Disappointment in love, an unsuitable occupation, which put a severe strain on him and make him a frustrated individual. The conflict between his soul and his thoughts and lonely temperament made him to take a dark, gloomy view of man's journey on his planet; his elegies are an expression of inner gloom. But it is to be noted that his elegies are always characterized by the classical self control, dignity and decorum.

For example, **Rugby** is a personal elegy in which the poet mourns the death of his father. It shows Arnold's elegiac genius at its best. So energetic, so enthusiastic and so active a soul he was that the poet can't think of him as dead. In this world man is lonely, helpless and hopeless.

"Most men eddy about
Here and there – eat and drink
…….
And then they die, peresh."

Man is thus puppet in the hands of destiny. He has a fruitless striving against the buffets of misfortunes and mountains of difficulties.

Thyrsis is a pastoral elegy, in which Mathew Arnold deals with some vital questions of life. Here the poet does not lament only the death of his dear friend. He deals with the troubled lives of men, who are convectionist, groan and drifted away from the right path of life.

The scholar gypsy presents the tragedy and pathos of men, lost in the universe. The overpowering force of fate in human life is represented in "Sohrab and Rustum", where fate makes the father kill his son.

On the other hand in Thyrsis, Arnold visits Oxford and the countryside after the death of his friend clough. He notices that the changes have taken place. Men-made things all have changed but nature continues to be the same. Due to Oxford movement clough felt unhappy of oxford. Here the poet depicted his grief in beautiful manner; the cuckoo leaves England as soon as the spring is over; the Cuckoo, however, will return next year but thyrsis will never return again. Thyrsis will never come back to compose beautiful poems, which the world need. There is a delicate pathos in above lines and comparison of clough with cuckoo bird is most and most appropriate.

In the same manner, the Scholar Gipsy has been cast in the form of the conventional pastoral elegy, in which one shepherd mourns the death of some dear and near one; rather it is Arnold's sigh for a vanished age; his yearning for a golden age in the past and a bitter condemnation of own age, crazy for worldly power and pelf.

Arnold had a strong sense of loneliness of human soul.This sense of loneliness can be found in his creation "Buried Life".

Yes,in the sea of life enisl'd
…….
We mortal millions live alone.

The great power of Nature also suffer from the same loneliness:

The solemn peaks but to the stars are known
But to the stars, and the cold lunar beams :
Alone the sun rises , and alone
Spring the great streams.
Man is nothing but ……
"A wanderer is man from his birth "

And our minds are confused as the critics which we hear. The general decline of faith in the age and the bewilderment and sadness caused by it constitute the theme of Stanzas

* Principal, Savita Devi Jaiswal Memorial College, Shamgarh, Distt. Mandsaur (M.P.) INDIA

from Grand Chartreuse, and a number of other elegies. In no other poem of Arnold do we find a clearer or a more poignant expression of the poet as a solitary, forlorn wanderer. In the same way in Dover Beach Arnold feels that lovers must strengthen and console each other if they are to face life without disaster.

Conclusion - The above study is an attempt to conclude that it is the deep felt anguish of mans loneliness in the universe, which gives such poignancy to the most moving of Arnold's poems.

As a whole Arnold is the greatest of English elegiac poets. He must be awarded a place of honor among the English poets. His intellectual and philosophical elegiac reflections and his serious preoccupation with the problem of life, his clam and accurate descriptions of nature are sufficient to win for him a high and permanent place among poets.

However, the dominant mood of elegiac meditation, in which Arnold is indeed best is accompanied by another strain-a-strain of realism and thoughtness. We may conclude by recalling Carleton stanely's words:- "If Arnold had written nothing but thyrsis how great would be our debt to him."

References :-

1. J.D. Dump "Mathew Arnold"
2. Francis Bickley "Mathew Arnold and his poetry"
3. H.C. Dubbin "Mathew Arnold, the poet"

****

Use Of Epic Devices In Pope's The Rape Of The Lock

Dr. Manisha Dwivedi *

Abstract - It is necessary to study the age in which the text was written or the biography of the author of the text. Fortunately, I come to know, later, that there is a list of epic device which is essential to search out from the text. These epic devices are used to give epic stature to the poem. There are number of epic devices –Invocation to the Muse, communication of immortals with mortals, the arming of the Champion, the sacrifice to the Gods, Single Combat at Ombre , reference to the epic feast ,the journey to the Underworld, general Combat and use of Omens.
Key words - Invocation, Communication, immortals, mortals, combat, champion.

Introduction - The depth and the density of epic devices can be understood only through the analysis of the literary piece. Epic devices are used to enrich the text. That is why i am making a humble attempt to write an article on this feature in "The Rape of the Lock".

In "The Rape of the Lock" Pope applies his high style, and along with it a complete set of epic conventions and situations to the world of contemporary fashion .The poem originated from an incident that actually occurred in Pope's circle of acquaintances. Sometime during the summer of 1711Robert, 7thLord Petre (the Baron of the poem) cut a lock of hair from the pretty head of a famous beauty, Arabella Fermor (Belinda). The stealing of her hair caused an estrangement between Peter and Fermor families, and Pope was asked by a mutual friend of both the families (John Caryll) to toss off a jesting poem that would to the length of healing the breach between them. To decorate the real incident, Pope had imitated the epic devices from Illiad, Odyssey, Aeneid, The Faerie Queene and The Paradise Lost.

The parodies of epic conventions in "The Rape of the Lock" are too numerous to be itemised, but among them may be singled out:

"What dire offence from causes spring
What mighty contests rise from trivial things
I sing –this verse to Caryll, Muse! Is due
—— —— —— —— —— — —— —— —— ——
And in soft bosoms dwell such mighty rage?''(canto1, line-1-12)

The above lines show the proposition of the theme and the invocation to the Muse which are the first and foremost feature of epic poetry.

"A youth more glittering than a bright-night beau''

The above extract shows the dream –message from the Gods.

'The gnome Umbriel's visit to Cave of Spleen refers to the journey to the Underworld which is the feature of epic poetry.

Pope drew on his own classical background to depict this poem as epic-he had translated Homer's "Illiad" (c.750b.c.e; first translation, 1611; Pope's translation, 1715-1720) and "Odyssey"(c.725b.c.e.;first English translation, 1614;pope's translation, 1725-1726)- to combine epic literary conventions with his own keen , ironic sense of the values and societal structures shaping his age. The narrator of the poem "The Rape of the Lock" speaks like Homer, raising the epic question early in the poem:

"Say what strange motive '
goddess! Could compel
A bell lord to assault a gentle belle?"

Pope's elaborate description of Belinda's grooming rituals in Canto1furthers comparison with the epic; it parodies the traditional epic passage describing a warrior's shield:

"And now, unveiled, the toilet stands displayed,
Each silver vase in mystic order laid.
First, robed in white, the nymph intent adores,
With head uncovered, the cosmetic powers.
A heavenly image in the glass appears,
To that she bends, to that her eyes she rears;
The inferior priestess, at her alters side,
Trembling begins the sacred rites of pride.
Unnumbered treasures ope at once, and here
The various offerings of the world appear;"

Belinda's make-up routine is compared to the putting on of armour:

"From each she nicely culls with curious toil,
And decks the Goddess with the glittering spoil."

Here Pope introduces, in the revised version of "The Rape of the lock", the machinery of the Sylphs derived from the spirits

* H.O.D. (English) Dr. C. V. Raman University,Bilaspur (C.G.) INDIA

of Rosicrucian philosophy. The sylphs untie the bodily fluidity of Milton's angels with the muteness of Shakespeare's fairies. They "are a splendid recreation in social terms of the divine powers who watch over the fortunes of epic heroes" (Maynard Mack).

A good example of epic simile is provided by Canto3, 2, L-371-376 where the disorder of the combined army of hearts, diamonds and clubs is compared first to a routed army of Asian and African Soldiers and then to the confusion among battalions of different races and nations (L-373-376). Like an epic "The Rape of the Lock" embodies a moral, namely, the worth of womanhood lies in virtue, and there is no good trying to preserve one's beauty in the view of the evanescence of human beauty."The Rape of the Lock" is rich in anticlimaxes (bathos) which are a favourite and effective heroic device:

"Here though, great Anna! Whom three realms obey,
Dost sometimes counsel take –and sometimes
tea". (Canto 3, L-297-298).

Or

"Not louder shrieks 'to pitying heaven are cast,
When husbands, or when lap-dogs breathe their last''.
(Canto-3, L-447-448)

By juxtaposing the contemporary with the heroic, the small with the great, the poet can emphasize the epic proportion to which the beau monde has magnified its trifles (like the estrangement of families over a lock of hair) and their real triviality."Furthermore, by the contrast between the social ephemera that his verse licks up as it along – watches, sedan chairs, coaches, cosmetics, curling irons, men, monkeys,lapdogs, parrots, snuff-boxes, bodkins-and the quite different world of heroic activity invoked through the epic parodies and the style, he can remind us of the inexorable conditions of life, death, and self –giving that not even the most glittering civilasation can afford to ignore" (Maynard Mack)

"Now Jove suspends his golden scales in air,
Weighs the men's wits against the lady's hair;
The doubtful beam long nods from side to side;
At length the wits mount up, the hairs subside."(II,L-
715-718)

The above passage is a parody of the epic device, namely, weighing the fortunes of the combatants in a pair of scales. It describes the role of Jove in deciding the issue of the battle between men and women, the fierce glances from the eyes of Thalestris vanquish two men of the Baron's party who strive to oppose her – one by parading wit and the other singing a love-song . Sir Plume is about to conquer Thalestris by the display of foppish style , but as soon as she smiles to see the defeat of Sir Plume, her very smile makes him take heart again . Now Jove holds up a pair of golden scales in heaven to decide the issue of the combat. He weighs the wits of the men against the hair of the lady (Belinda) to find out which is heavier. The scale rod long sways this way and that. At last men's wits prove lighter and the women's hair heavier.

"But see how oft ambitious aims are crossed,
And chiefs contend till all the prize is lost!"

Through above quoted line Pope moralizes in the style of epic masters on the bafflement of ambitious aims and the folly of quarrelling over cherished treasures of life and ultimately losing them. The vanquished Baron prays to be allowed to live and burn forever in the flames of passion rather than die at her hands. Then Belinda fiercely demands her lock back from him .The fierceness of her demand outdoes othello's demand for his handkerchief from his wife Desdemona, in Shakespeare's tragedy "Othello".

To conclude, epic devices are used to increase the grandness of the poem. It is also used to make the poem elevated. Finally, it can be said that the poem is cast in the form of an epic but satirical in content and spirit.

References :-

1. Pope, Alexander, Literature Online biography (chadwyck-Healey: Cambridge, 2000)
2. Pope, Alexander, 2004, The Rape of the Lock, 9th Edition
3. The Oxford Dictionary of Quotations (5thed.). Oxford University Press, 1999
4. Varshney, R.L.1995. The Rape of the Lock .6th Edition Sahitya Bhandar.

****

Teaching of English Poetry in Indian Classes

Vinay Dubey *

Introduction - It is very well said that any literature is best enjoyed in its own native language. It is no exaggeration to say that literature is best enjoyed in a language and culture to which it belongs. Teaching of poetry in Indian classes often kills the very fabric of poetry in which it was originally composed. In Indian classrooms, poetry is being read, taught and enjoyed in translation. The translation cannot be done in its truest form, in letter and spirit. So, poetry to Indian students, comes to them as is received by the teacher in thoughts with Indian context.

Each culture has a distinct type of imagination that is unique to it. Reading or teaching foreign literature in the country would however enrich our own literature. There may be greater and long term object with which we would cease to be human. The aim of poetry is to promote humans or humanity by elevating them. All great poetry does it. Poetry requires a synthetic mind and refines our sense and sensibility with the passage of time with the advancing age. What a teacher can comprehend the meaning of poetry a student fails to do so because of the difference of age and experience.

A poet is analogous to the scientist in the sphere of human feelings. It gives an insight which may be inculcated amongst the minds of Indian students. Poetry has to be read and taught unlike the publisher, in whose eyes, critic is more important than the author himself. The author turns out to be the weakest part when literary criticism takes a wrong turn.

The chief object of poetry is pleasure and that too 'pleasure of the text'. The students must experience that pleasure while reading the text in their classrooms. How can the Indian students do that especially in a foreign language? What they can understand in their own language, they are unable to follow in the foreign one and there may be innumerable reasons for the same ranging from the limited linguistic capabilities to the limitations of the cultural perspectives that are expressed in the text. To comprehend a poetic piece in a foreign language, the Indian students need to have a sound vocabulary and a hold on the grammar of the language so that they may easily grab the structural as well as the literal components of the text.

The English poems ought not to be murdered in the Indian classrooms. A poem in Indian classes among the Hindi knowing students should be taught by making students understand the very essence of poetry in a foreign language. It would be in the fitness of things if poetry is taught keeping in view the basic characteristics to be elaborated:

1. Context - Poetry has power to rise above the time and immortalise;
2. Reading aloud of a poem(However optional): Perform the poem by reading it loudly;
3. A discussion on the title of the poem: Students are to be involved by asking questions. Feelings and meanings are aroused around the title;
4. Progress through the poem: Grammar and meaning must be explored. Chunk of meaning being brought line by line;
5. Linguistic form of the poem be explained;
6. Appreciation or valuation of the poem.

If the poems are taught in the above stages and way, the Indian students would be able to categorize the text of the poem systematically and boredom of English classes on Indian students would however be lessened to a considerable extent. Additionally, they may also be able to comprehend the thought and the cultural nuances of an alien language. This may furthermore lead to the expansion of the intellectual horizons of the students and they would be able to correlate the foreign thoughts with that of the native one that will enhance the quality and standard of their living.

References :-

1. Baruah, T.C. *The English Teacher's Handbook*. New Delhi: Sterling Publishing Pvt. Ltd. 1985. Print.
2. Jones. Leo. *Functions of English*. Cambridge: C.U.P. 1981. Print.
3. Nagaraj, Geetha. *English Language Teaching*. Calcutta: Orient Longman Ltd. 1996. Print.
4. Palmer, H.L. *The Principles of Language Study*. London: OUP. 1965. Print.

* Asst. Prof. (Sl.Gr.) Deptt. of English, Govt. Girls College, Bina (M.P.) INDIA

Supernaturalism in Shakespeare's Hamlet

Dr. Anamika Sharma *

Abstract - Belief in supernatural beings was widespread in Elizabethan era. Shakespeare introduced the supernatural marvelous in the number of his plays. The following study is an attempt to depict the supernatural elements in the novels of Shakespeare especially in context of 'Hamlet'.

Introduction - Supernatural elements in the novel Hamlet - In the Elizabethan era the people liked to see on the stage some supernatural beings likr ghosts, fairies, witches etc.It was to cater to the public taste that dramatists introduced some beings from the world of unseen in their plays. Shakespeare too introduced the marvelous in a number of his plays.In Hamlet the ghost has a great symbolic significance .It is a majestic phantom having its measured and solemn utterance. The ghost reminds us about the more things in heaven and earth that are dreamt of in our philosophy. It symbolizes the hidden ultimate power that rules over the earth and whole of the universe. It seems to be its "messenger of divine justice."

It is well known that the action of play is started by the appearance of ghost. The ghost of Hamlet's father, late king of Denmark, produces the supernatural elements in the play. It appears in the midst of night when it is dark and chilly, is the time popularly associated with the appearance of supernatural spirits from the other world. It comes dressed in armour in the very habit of late kings of Denmark. It has the same gait

"……..fair and warlike form

In which the majesty of buried Denmark wid sometimes March;"

The apparition doest not speak by itself. It vanishes out as soon Horation attempts to speak to it. During his second, it vanishes as soon as the cock crows. It is supposed to be a portent of great significance. As Horatio points out it's a restless spirit, that wants to do something for the peace of its soul or it had hoared treasured on the earth during his life, that is privy to the country's fate and he wants to avoid it by forewarning. It is invulnerable and cannot be struck by an earthly weapon. All these were popular beliefs regarding the ghosts and ghosts of Hamlet father late king of Denmark, invested by all these circumstances.

Thus, the opening scene, in what the first appearance of the ghost of Hemlet's father has a terrifying effect on readers. The critics are unanimous in praising the subble means, by which it has produced an atmosphere of supernatural mystery and fear. In scene II, Act I, Hamlet alongwith Horatio Marcellus and Barnardo sees the ghost and believes that the apparition signifies something evil.

"my father's spirit in arms!all

Is not well,I doubt some foulplay".

Simultaneously in scene IV, Act I he again meets the ghost and asks him to tell purpose.

"say why is this? Where fare?

What should we do?"

On the other hand in scene V , Act II, the ghost reveals the secret unknown to everyone so far. It reveals to prince the fact that his father was poisoned by his uncle. He also reveals about the adultery of his mother with the king of Denmark. Hence the entire action moves round these revelations. The ghost also lays stress upon Hamlet that he must take revenge to his uncle for his father's murder. He must not allow the royal bed of Denmark to be.

"a couch of luxury and demned incest"

Thus, we see that the supernatural appearance of the ghost is apart from producing the environment of supernatural mystery and fear. And it is a vital to the plot of the play. Actually the play is concerned with the theme of revenge but the motive for revenge is provided by the ghost. The ghost is therefore, indispensable from the point of view of the play.

On the other hand, the appearance of ghost is responsible for the another development in the play. Due to all learnings of ghost,Hamlet decides to put an entire disposition on. The antic disposition partly explains Hamlet's strange behaviour and his strange behaviour remarks when he subsequently speaks to Polonius,Ophelia,the king and the others ,even though his behavior has been attributed by some real critics to real madness. About the last appearance of ghost ,Dr. Flatter argues that the rest of the play is,in a sense, dominated by the ghost .

Conclusion - Shakespeare did not merely write down to the tastes of his audience ,he also elevated and refined it .It goes much to the credit of the world's immortal dramatist the working under such adverse circumstances, he could create beautiful works of an art which remain unsurpassed till now. To conclude, the measured apparition in Hamlet is a group of stairs, by which the parts of play climb gradually and at last the play reaches on the top. The above study is an attempt to conclude supernatural elements of the novel Hamlet.

References :-

1. Campbell "Shakespeare's Histories"
2. J.I.M Steward "Character and movie in the Shakespeare".
3. S.A. Brooke "Ten Plays of Shakespeare".

* 268/1, Desai Nagar, Ujjain (M.P.) INDIA

प्रयोगवाद, अज्ञेय और असाध्य वीणा

डॉ. रत्नेश विष्वक्सेन *

शोध सारांश – हिंदी कविता में 'प्रयोगवाद' के जनक अज्ञेय जिस व्यक्तित्व की तलाशी कर रहे थे, और 'राहों के अन्वेषी' होने का शपथ पत्र लिख रहे थें। एक तरह से वे हिंदी कविता की परंपरा में सार्थक बदलाव की बात भी कर रहें थें। प्रयोग जानने का साधन है, सत्य के संप्रेषण और उनको संप्रेषित करने वाले साधनों को भी जानने का साधन है। प्रयोग विज्ञान की प्रक्रिया है, जब हम साहित्य में प्रयोग की बात करते हैं तो उसका अर्थ यह होता है कि 'वस्तुनिष्ठता' साहित्य का लक्ष्य बनें।

साहित्य में प्रयोग कहाँ होगा? तो उसके संप्रेषण के साधन में, और संप्रेषण का साधन भाषा है। परंपरा से चले आ रहे रूपकों और पुराने उपमानों से पीछा छुड़ाकर नये प्रतिमानों की स्थापना प्रयोग का लक्ष्य है और यही अज्ञेय का अभिप्रेत है। अज्ञेय ने 1943 में प्रथम तार सप्तक के संपादन के मंच से 'प्रयोगवाद' की पूरी पृष्ठभूमि तैयार की। जड़ीभूत सौंदर्याभिरूचि के समानान्तर अगर मुक्तिबोध 'चाँद का मुँह टेढ़ा' हैं का नया रूपक रच रहे थें तो अज्ञेय कविता के प्रतिमान को बदलने की मुहिम चला रहे थें। इस तरह संयोगवश हिंदी कविता की भाषा रचनात्मक बदलाव के साथ अपनी यात्रा करने लगी। अज्ञेय की लंबी कविता 'असाध्य वीणा' इसी रचनात्मक फलक का अप्रतिम विस्तार थी। अहं से निष्कृति के प्रश्न को उठाकर वीणा, रचना और जीवन की प्रक्रिया का अद्भुत आख्यान 'असाध्य वीणा' है। कविता संग्रह 'आँगन के पार द्वार' की अंतिम रचना 'असाध्य वीणा' को लंबी कविता और रचना विधान की दृष्टि से हिंदी कविता के इतिहास के पड़ाव के रूप में देख सकते हैं।

शब्द कुंजी – प्रयोगवाद, राहों के अन्वेषी, प्रतिमान, जड़ीभूत, सौंदर्याभिरूचि, अहं से निष्कृति, तथता, रसप्लावन, स्वर संभार, पुराने लुगड़े, किरीटी तरू, आवर्जन, असाध्य वीणा।

प्रस्तावना – असाध्य वीणा लंबी कविता है। महाकाव्य की प्रबंधात्मकता के साथ-साथ उसमें कलाकार का संघर्ष, रचना प्रक्रिया, सृजन के क्षण का अद्भुत तादात्म्य है। ये कविता कथात्मकता या किस्सागोई की शैली में बढ़ती हुई विकसित होती है और रचना-विधान में निरंतर आकर्षण से भरी हुई है। कविता प्रारंभ होती है-

'आ गये प्रियवंद? केशकम्बली, गुफा-गेह
भरोसा है, अब मुझ को
साध आज मेरे जीवन की पूरी होगी।'[1]

प्रियंवद कलाकार है, गुफा में रहनेवाला साधक,केशम्बली है। राजा कहते हैं कि मुझे भरोसा है कि जीवन की साध आज पूरी होगी। क्या है राजा के जीवन की साध उसका पता आगे चलता है। राजा के संकेत के बाद उसके चर 'असाध्य वीणा' लेकर आते हैं। सभा में उपस्थित सभी लोग उस वीणा को देखते हैं, जो असाध्य हो गई है, वह वीणा कैसी है? कैसे बनी है? उसका सारा इतिहास तब राजा बताते हैं –

'यह वीणा उत्तराखंड के गिरि-प्रान्तर से
घने वनों में जहाँ तपस्या करते हैं, व्रतचारी-
बहुत समय पहले आयी थी।' [2]

और फिर वीणा बनने की प्रक्रिया की लंबी यात्रा की गाथा प्रारंभ होती है, जो रोचक, आकर्षक और जबरदस्त है। वज्रकीर्ति ने मंत्र से पवित्र करते हुए किरीट-तरू से इस वीणा को गढ़ा था। किरीट तरू जो इतना ऊँचा था कि हिमशिखर उसके कानों में रहस्य का रस और अर्थ घोला करते थे। शाखाएँ बादलों को आश्रय देती थी। उतना ही उसकी जड़े अंदर तक धँसी थी। एक तरफ तो यह वीणा 'व्रजकीर्ति' ने मंत्रपूत जिस
अति प्राचीन किरीटी-तरू से इसे गढ़ा था-
उसके कानों में हिम-शिखर रहस्य कहा करते थे अपने की इयत्ताा से परिपूर्ण थी तो दूसरी तरफ

'सुना है-जड़ उसकी जा पहुँची थी पाताल-लोक,
उसकी गंध-प्रवण शीतलता से फण टिका नाग वासुकि
सोता था'[3]

के व्यापक अस्तित्व से भरी थी। इस वीणा के निर्माण में साधक साधना की अशेष यात्रा तक पहुँच गया था क्योंकि

'उसी किरीटी-तरू से वज्रकीर्ति ने
सारा जीवन इसे गढ़ा
हठ-साधना यही थी उस साधक की-
वीणाा पूरी हुई, साथ साधना, साथ ही जीवन-लीला।'[4]

यह वीणा असाधारण साधक के असाधारण साधना की अनुपम परिणति थी। यह वीणा असाध्य थी। राजा पुन: आगे बोले कि सभी कलावंत, गुणी, ज्ञानी, विद्यावान इस वीणा को साध नहीं सके-

'सब की विद्या हो गयी अकारथ, दर्प चूर,
कोई ज्ञानी गुणी आज तक इसे न साध सका।
अब यह असाध्य वीणा ही ख्यात हो गयी।'[5]

पर राजा का विश्वास था कि यह वीणा एक दिन अवश्य बोलेगी पर कोई सच्चा और ईमानदार कलाकार निष्ठावान प्रयास करेगा तब

'पर मेरा अब भी है विश्वास
कृच्छ्र-तप वज्रकीर्ति का व्यर्थ नहीं था।
वीणा बोलेगी अवश्य, पर तभी
इसे जब सच्चा स्वरसिद्ध गोद लेगा।'[6]

इतना कहकर राजा प्रियंवद की ओर देखते हैं बड़ी उम्मीद से-

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) राँची कॉलेज, मोहराबादी, राँची (झारखण्ड) भारत

'तात! प्रियंवद
लो, यह सम्मुख रही तुम्हारे
व्रजकीर्ति की वीणा,
यह मैं, यह रानी, भरी सभा यह।'[7]

अब बारी प्रियंवद की थी। व्रजकीर्ति की तप:पूत वीणा के सामने बैठे प्रियंवद की परीक्षा की घड़ी थी। यहाँ उनका हाव-भाव का वर्णन कवि ने कुशलतापूर्वक किया है-

'केशकम्बली गुफा-गेह ने खोला कम्बल
धरती पर चुपचाप बिछाया।
वीणा उस पर रख, पलक मूँद कर, प्राण खींच,
कर के प्रणाम।
अस्पर्श छुअन से हुए तार।'[8]

यह है सकारात्मक हाव-भाव। अहं से धीरे-धीरे बाहर आने की प्रक्रिया। वीणा को प्रणाम करना वास्तव में कृतज्ञता ज्ञापन है, व्रजकीर्ति की असाधारण साधना एवं उसकी निष्ठा की। पूर्व में जो सब की विधा इसलिए अकारथ गयी कि वे दर्प में चूर थें, अहंकार के वशीभूत थें। दूसरे के अस्तित्व का नकारना ही अहंकार की खलता है। अहंकारी व्यक्ति अपने अलावा किसी और को न मानना-जानता है न मानना-जानना चाहता है। इसके विपरीत आँख मूंद कर प्रणाम करता प्रियंवद इतना विनम्र और विनयी है कि राम का धनुष प्रसंग स्मरण हो उठता है। राम भी धनुष को प्रणाम करते हैं उसके अस्तित्व पर अपने अस्तित्व का बोध डालते हुए आगे बढ़ते हैं। प्रियंवद का यह कथन -

'धीरे बोला-'राजन! पर मैं तो
कलावंत हूँ नहीं, शिष्य, साधक हूँ-
जीवन के अनकहे सत्य का साक्षी।'[9]

यह वह विगलनशीलता है जिसमें सत्ता का अहंकार डूब जाता है और समष्टि का शिवमय भाव पसरने लगता है। कुछ समय बाद सब ओर खामोशी छा जाती है। वीणा को उठा गोद में प्रियंवद उस पर मस्तक टेक देते हैं। सबको जहाँ यह लगता है कि वह पराभूत हो गया है। लोग जब यह सोचते हैं कि क्या वीणा सचमुच असाध्य है, ठीक उसी समय, कलाकार, साधना और उसकी प्रक्रिया आपस में घुलने लगती है। कैसे जरा देंखे -

'पर उस स्पंदित सन्नाटे में
मौन प्रियंवद साध रहा था वीणा-
नहीं, स्वयं अपने को शोध रहा था।
सघन निविड में वह अपने को
सौंप रहा था उस करीटी-तरू को।'[10]

और फिर वह वीणा के बनने वाले साधनों की यात्रा करने लगता है। रेशे रेशे को आत्मीय परिचय होने लगता है। किरीटी तरू की पूरी बनावट और इयत्ता में अपने आप को भूलने लगता है।

'भूल गया था केशकम्बली राज-सभा को
कंबल पर अभिमंत्रित एक अकेलेपन में डूब गया था।'

किरीटी तरू की विराटता से जुड़ते हुए वह स्वयं के अशेष करता हुआ लीन था-

'ओ विशाल तरू
ओ दीर्घकाय:
तात, सखा, गुरू, आश्रय
त्राता महच्छाय,
ओ व्याकुल मुखरित वन-ध्वनियों के
वृन्दगान के मूर्त्त रूप,
मैं तुझे सुनूँ,
देखूँ, ध्याऊँ
अनिमेष, स्तब्ध, संयत, संयुत, निर्वाक:-'

ऐसा करते हुए वह लीयमान की स्थिति तक पहुँच गया। विनयी इतना, विनम्रता ऐसी कि-

'नहीं, नहीं!
किंतु मैं ही तो
तेरी गोद बैठा मोद-भरा बालक हूँ,
ओ तरू-तात! सँभाल मुझे,
मेरी हर किलक
पुलक में डूब जाय:
मैं सुनूँ
गुनूँ।।'[11]

कला की साधना प्रक्रिया में ग्रंथियाँ टूटकर हल्की होती जाती है चेतना उदारता के चरम पर पहुँचती है जहाँ अहं का अट्टहास दूर-दूर तक नहीं है-

'गा तू!
यह वीणा रखी है : तेरा अंग-अपंग।
किंतु अंगी, तू अक्षत, आत्म-भरित
रस विद्
तू गा :
मेरे अँधियारे अन्तस् में आलोक जगा
स्मृति का
श्रुति का
तू गा, तू गा, तू गा, तू गा।'[12]

चरम पर तू गा का दुहराव नि:शब्दता की तरफ बढ़ने के कारण है और वीणा का स्वर हवाओं में गूंजने लगता है। स्मृतियों की पूरी श्रृंखला जुड़ने लगती है। आत्मा का विकास सब ओर फैलने लगता है।

'हाँ मुझे स्मरण है
बदली-कौंध-पत्तियों पर वर्षा-बूंदों की पटपट।
घनी रात में महुए का चुपचाप टपकना!
हाँ मुझे स्मरण है
घाटियों में भरती
गिरती चट्टानों की गूंज
काँपती मन्द्र गूँज-अनुगूँज-साँस खोयी-सी,
धीरे-धीरे नीरव।
मुझे स्मरण है
हरी तलहटी में, छोटे पेड़ों की ओट, ताल पर
बँधे समय वन-पशुओं की नानाविध आतुर-तृप्त पुकारें-
मुझे स्मरण है
किरण भोर की पहली
जब तकती है ओस-बूंद को
उस क्षण की सहसा-चौंकी-सी सिहरन-
मुझे स्मरण है
पर मुझ को मैं भूल गया हूँ।'[13]

स्मृतियों की सघन बारिश में पूरी प्रकृति का नाद, अस्तित्व की निथरी ध्वनियाँ आकंठ डूबने लगती है, इतनी कि स्वयं को भी प्रियंवद भूल गया है। साधना के चरम पर आत्म बोध का परिष्कार हो जाता है।, वह उदात्त हो जाता है और फिर सिर्फ वीणा का स्वर पूरे वातावरण को डूबा देता है–

'अपनी प्रज्ञा को वाणी दे!
'तू गा, तू गा–
तू सन्निधि पा–तू खो
तू आ – तू हो – तू गा! तू गा।'[14]

असाध्य वीणा साध्य हो गयी कलाकार, साधन, साधक, साध्य सब एक बिंदू पर मिलकर अनाविल हो गयें। वीणा बजने के बाद सभा पर क्या प्रभाव पड़ा वह भी अद्‌भुत रचाव के साथ अज्ञेय ने लिखा है–

'डूब गये सब साथ
सब अलग–अलग एकाकी पार तिरे।[15]

राजा के भीतर प्रजा–हित की भावना जागी तो रानी की भीतर प्यार और विश्वास की थपक जगी। उदारता से दोनों भर गयें। प्रजा जनों पर जो असर पड़ा वह इस तर्ज पर कि जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तिन तैसी।'–

'सब ने भी अलग–अलग संगीत सुना।
इस को
वह कृपा–वाक्य था प्रभुओं का
उस को
आतंक मुक्ति का आश्वासन
इस को
वह भरी तिजोरी में सोने की खनक–
उसे
बटुली में बहुत दिनों के बाद अन्न की सोंधी खुदबुद।'[16]

किसी को शिशु की किलकारी, नयी वधू की सहमी पायल ध्वनि, जाल–फँसी मछली की तड़पन, चहक मुक्त नभ में उड़ती चिड़िया की ध्वनि सुनायी दी। अपनी क्षमता, मेधा और भावना के अनुरूप सबने इसका अलग–अलग अर्थ ग्रहण किया।

'सब डूबे, तिरे, झिपे, जागे–
हो रहे वशंवद, स्तब्ध
इयत्ता सब की अलग–अलग जागी,
संघीत हुई
पा गयी विलय।'[17]

राजा के साथ सभा स्वरजित एवं धन्य–धन्य कह बधाईयाँ देने लगी। परंतु इन सबसे ऊपर प्रियंवद, विनयी प्रियंवद स्वयं को पूर्णता तक पहुँचाकर भी निर्विवाद निश्छल कहने लगा–

'श्रेय नहीं कुछ मेरा
मैं तो डूब गया था स्वयं शून्य में–
वीणा के माध्यम से अपने को मैंने
सब–कुछ को सौंप दिया था–
सुना आप ने जो वह मेरा नहीं,
न वीणा का था :
वह तो सब कुछ की तथता थी।'[18]

इस तरह असाध्य वीणा, कविता, जीवन और साधना की चलनेवाली अनवरत यात्रा है। लक्ष्य से ज्यादा महत्वपूर्ण प्रक्रिया और गंतव्य से ज्यादा मजबूत प्रक्रिया की ईमानदारी। रामस्वरूप चतुर्वेदी के शब्दों में 'आत्मदान के माध्यम से 'शक्तिपूजा' के राम शक्ति साधन करते हैं और आत्मदान के माध्यम से 'असाध्य वीणा' का कलावंत वीणा को साधता है। यही शक्ति और सृजन के रहस्य का साक्षात्कार है।'[19] रामस्वरूप चतुर्वेदी आधुनिक कविता और अज्ञेय साहित्य के मर्मज्ञ विद्धान रहे हैं। अज्ञेय को समझने की उनकी दृष्टि बहुत वास्तविक और उर्वर है। इस तरह हिंदी लंबी कविता में 'असाध्य वीणा' अपना महत्व स्थापित करती है, साथ ही वह एक नयी दृष्टि की सृष्टि करती है,जो भाव और भाषा दोनों ही तरह से अनुपम है। भाषा अज्ञेय की सर्जनात्मक है। प्रयोगवाद का लक्ष्य ही भाषिक नवीनता की सर्जनात्मक चुनौती है। अज्ञेय के लिए भाषा माध्यम से ज्यादा अनुभव की द्धन्द्धात्मक परते हैं जिसका कोई जोड़ नहीं। रामस्वरूप चतुर्वेदी के शब्दों में 'अज्ञेय ने मानवीय व्यक्तित्व की व्याख्या में भाषा को अनिवार्य तत्व माना है। भाषा उनके लिए माध्यम नहीं अनुभूति है। सर्जनात्मकता की समस्या से सतत् जूझने वाले रचनाकार के लिए यह उचित है कि वह भाषिक सर्जन की क्षमता को गहरे ढंग से समझे।[20]

यह टिप्पणी अज्ञेय की भाषिक वैचारिकी को हमारे सामने लाती है। यूँ प्रयोगवादी अज्ञेय कविता को विज्ञान की वस्तुनिष्ठता की तरफ ले जाने के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहे हैं। व्यक्तित्व उनके केंद्र में है, जिसमें कुंठा और वर्जना के अतिरेकों से बाहर निकलने की रचनात्मक छटपटाहट हमेशा नजर आती है।

निष्कर्षत : अज्ञेय ने प्रयोगवाद का जो काव्यांदोलन चलाया, वह हिंदी कविता को विवेकवान और प्रज्ञापरक बनाने के लिए था। असाध्य वीणा में हमने देखा कि एक कलाकार अंतत: साधक है और कला उसकी साधना। इन दोनों के बीच अहंकार एक बाधा है जो किसी भी तरह के बोध के लिए अवरोधक तत्त्व है। अहं से निष्कृति जिस दिन हो जाएगी, उस दिन यह अवरोध दूर हो जाएगा, बाधा हट जाएगी और कला एवं कलाकार की तथता स्वर और जीवन की संपूर्णता प्राप्त कर लेगी। लंबी कविता, प्रबंध कौशल और शिल्प विधान की दृष्टि से निश्चित तौर पर असाध्य वीणा की आयु लंबी है। प्रलय की छाया, राम की शक्तिपूजा, सरोजस्मृति, अँधेरे में के साथ मिलकर असाध्य वीणा हिंदी कविता के इतिहास में कालजयी कृति होने का पूरा अधिकार रखती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 से 18. आँगन के पार द्वारा–अज्ञेय, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2005, 13 वां सस्करण।
19. हिन्दी साहित्य एवं संवदेना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ0–197, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2002, 16 वां संस्करण।
20. वही, पृ0–197

****

भवानी प्रसाद के काव्य में राष्ट्रीय-बोध

डॉ. विजय कुमार पाण्डेय *

प्रस्तावना – विश्व के व्यापक फलक जहाँ मानवता एवं विश्वबन्धुत्व की चर्चा सम्पूर्ण राष्ट्र में हो रही है, वहीं राष्ट्रीयता एवं देश भक्ति के समानान्तर स्वर भी पहले की अपेक्षा अधिक संगठित सुनाई दे रहे हैं।

राष्ट्रीयता का अर्थ किसी देश की भौगोलिक सीमा के भीतर निवासित जन समूह की राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक चेतना के समन्वित स्वरूप से है। राष्ट्रीयता एक ऐसी भावना है, जो देश की जनता को संगठित करती है। गुलामी के दिनों में स्वतंत्रता की चेतना फूँकती है, मुक्ति-संग्राम में मर मिटने का आव्हान् करती है, और कवियों तथा रचनाकारों को राष्ट्र जाति और धर्म की रक्षा के लिये समर्पण की भावना को जागृत करती है।

हिन्दी के राष्ट्रीय काव्य से आशय उस काव्य प्रवाह से है जो इस सदी के उस काल में सामाजिक उत्थान, राजनीतिक जागरण एवं नव निर्माण की प्रबल चेतना से स्फूर्त हो, भारतेन्दु साहित्य में प्रस्फुटित होकर द्विवेदी युग में फैला। वैसे तो राष्ट्रीयता का प्रथम उन्मेष सन् 1857 के विद्रोह में हो चुका था, किन्तु 1885 में राष्ट्रीय कांग्रेस के जन्म एवं तिलक की 'स्वतंत्रता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है' की उद्घोषणा से और गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन से विध्वंसक ज्वाला मुखी फूट पड़ी थी। उस समय रचनाकारों में द्विवेदी युग के राष्ट्रीय कवि मैथिलीशरण गुप्त की 'भारत-भारती' में 'हम कौन थे क्या हो गये हैं और क्या होंगे अभी' के रूप में उसी भावना का प्रकाशन हुआ है-''राष्ट्रीयता ने हमारे समस्त सामाजिक जीवन को अनेक रूपों में आन्दोलित कर रखा था और हमारे कवि और लेखक भी इस दुर्दमनीय प्रभाव से बच नहीं सकते थे विशेषकर जिन्हें हम इस समय का प्रतिनिधि-लेखक और कवि मानते हैं, उन पर प्रत्यक्ष या परोक्ष प्रभाव तो पड़ता ही था। यह सोचना भी असंभव है कि जिस समय हमारे देश में राष्ट्रीय युक्ति का जीवन-मरण संग्राम चल रहा था उस समय हमारे कल्पनाशील कवि और लेखक उससे कुछ भी प्रेरणा न ग्रहण करें, उसके प्रति विमुख और अन्यमनस्क होकर रहे।'' [1]

राष्ट्र का आधार निश्चित भू-भाग होता है, जिसके परिणाम स्वरूप ही 'जननी जन्म भूमिश्चय स्वर्गादीप गरीयसी' की उद्याम और मनोहारी भावना का उदय होता है। भूमि जन और जन की संस्कृति तीनो एक रस हो जाने की प्रक्रिया का फल ही राष्ट्र के अलंकरण से अभिव्यक्त होता है। राष्ट्र एक ऐसा मानव समूह है, जिसकी सदस्यता 'परिवार' की भाँति अनिवार्य है, ताकि इसके सदस्य अनेक बन्धनों से एक दूसरे से बँधे रहें। कविता के राष्ट्रीय चेतना के निर्माण में भवानी प्रसाद मिश्र जी की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वे स्वार्थ, शोषण, असमानता और परम्परा विद्वेष की आंधियों मे राष्ट्रीय-बोध के बाहर क्राँतिकारी साहित्य सृष्टा है।

कवि ने स्वयं लिखा है - अपनी सबसे पहली रचना मुझे याद आती है, वह गाँधी के चलाए आन्दोलन के बीच ही लिखी गई थी। मैं होशंगाबाद के हाईस्कूल में पढ़ता था। यह रचना उन दिनों की प्रभात फेरियों में गाई जाने वाली नरसिंह दास अग्रवाल की रचना- 'रण भेरी बज चुकी, वीर वर पहनो केसरिया बाना' इन दो पंक्तियों में 'माता के सच्चे पूतों की आज परीक्षा होना है, देखें कौन निकलता माटी, कौन निकलता सोना है' के जबाव में तत्काल लौटकर छात्रावास के एक कमरे में लिखी गई है, 'मैं माता का पूत कसौटी का कोई पत्थर ले आए, मुझमें ऐसी रेख खिंचेगी सोना भी शरमाए।'[2]

विष्णु पुराण में भी भारत भूमि के प्रति महान भावना को व्यक्त किया गया है-

गायन्ति देवा: किल गीतकानि/धन्यास्तु ते भारत भूमि भागे
स्वर्गापवर्गास्पद मार्ग भूते/भवन्ति भूय: पुरूषा: सुरत्तवात्।

स्वतंत्रता के बाद गाँधी, नेहरू और शास्त्री जी के निधन पर उन राष्ट्रीय प्रतीक पुरूषों को श्रद्धाजंली अर्पित रचनाएँ की गई। इस संदर्भ में यह कहना प्रांसगिक होगा कि- 'नये साहित्य में राष्ट्रीय रचनाओं की प्रवृत्ति बौद्धिक और अन्तर्मुखी हो गई है। राष्ट्रीय-बोध, युग-बोध और अन्तरराष्ट्रीय-बोध को एक मिश्रित प्रक्रिया में देखा जाता है। राष्ट्र के अतीत गौरव के विषय में नये प्रश्न पूछे जाते हैं।'[3]

भवानी प्रसाद मिश्र का प्रारम्भिक राष्ट्र-बोध उनके सरल किशोर दिनों में भारतीय जन की करूण अवस्था से जुड़ा था। जबकि आर्थिक-सामाजिक हालत से आजादी के अपने स्वप्न को जोड़कर कवि अपनी भावनाओं को, अपने अनुभवों और आशंकाओं को, कविता में विन्यस्त करने की कोशिश करता था, लेकिन स्वतंत्रता के बाद से ही परिवेश के साथ उसके जुड़ाव में एक तरह की वैचारिकता सक्रिय दिखने लगती है। यह वैचारिकता किसी विचार सरणि के अन्ध अनुकरण पर आधारित नहीं है। इसमें शरीर की इह लौकिकता और आत्मा की लोकोत्तरता को पहचानती एक ऐसी भाषा है, जो देह, मन और आत्मा के बंटवारे को स्वीकार नहीं करती।

राष्ट्रीय भावना एक रूप में अतीत के गौरवगान एवं दूसरे रूप में युगीन जीवन को स्पर्श करती हुई दिखाई देती है। जन समाज में जागृति के उद्देश्य से ही प्राचीन ईश्वरीय अवतारों को भी मानवीय रूप दिया गया था। मध्यकालीन वीरों के शौर्य अंकन के अन्दर भी यही भावना थी। कवि के काव्य में स्वातंत्रय संस्कृति, युगीन चेतना और विश्व मानवता उनकी राष्ट्रीयता के प्रमुख तत्व हैं। प्रभात त्रिपाठी ने भवानी प्रसाद संचयिता में उल्लेख किया है- 'भवानी

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, बरही, जिला- कटनी (म.प्र.) भारत

प्रसाद मिश्र के संदर्भ में राष्ट्रीयता की चर्चा कुछ अतिरिक्त उत्साह के साथ की जाती रही है, और इस संदर्भ में उनकी जीवनी के प्रसंगों के अलावा माखनलाल चतुर्वेदी या बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' जैसे कवियों के प्रत्यक्ष प्रभाव का भी उल्लेख किया जाता रहा है, इसलिए शायद यह प्रांसगिक और सार्थक है कि राष्ट्र के उल्लेख के प्रति उनके लगाव को, थोड़े करीब से समझने की कोशिश की जाए।' भवानी प्रसाद मिश्र 'दूसरा सप्तक' के पहले कवि हैं इनके काव्य में ग्राम्य जीवन के ताजगी भरे अनेक दृश्य उपस्थित हैं। इनकी कविताओं में सादगी भरी रवानगी विशिष्ट महत्व लिए है। 'भारतीय कृषक-जीवन की कठोरताओं और अभावभरी परिस्थितियों का सजीव चित्रण कवि भवानी प्रसाद जी की निजता है।'[14] कवि का अपने देश और प्रकृति के प्रति अभिन्न लगाव राष्ट्रीय चेतना को अपने कर्म-जीवन और काव्य जीवन के मूल अर्थ के रूप में प्रतिष्ठित किया। उन्होनें प्रकृति में अपने अनुभव कल्पना, चिंतन और आस्तित्व को परिभाषित करने की निरन्तर चेष्टा की।

अपनी वैज्ञानिक खोजों और नित नवीन उपलब्धियों के मद में आज का मनुष्य दम्भी और अहंकारी हो गया है। आधुनिक और आधुनिकता-बोध के संक्रमण पर्यावरण में वर्तमान समाज की आन्तरिक अधोगित पर कवि को खिन्नता है। उसका दृढ़ विश्वास है कि प्रकृति की अवहेलना और उपेक्षा आधुनिक मानव सभ्यता के विध्वसं की तैयारी है। भौतिक सुख स्थायी नहीं है, परन्तु फिर भी आज का समाज इसे पाने की मृग मरीचिका में बावला हो समय के कठोर पंजे और शिकंजे की उपेक्षा करके स्वार्थी के ताज कब तक टिके रह सकते हैं? 'प्रलय' नामक कविता के द्वारा कवि चेतनावादी भाषा में कह रहा है-

आँख मीचे चल रहा है जग/कि छलता है समय भी/
एक दिन होगी प्रलय भी। [5]

प्रस्तुत कविता में निराशा का भाव न होकर सजगता का स्वर प्रमुखता लिए है, उपदेशात्मकता की क्षीण प्रतिध्वनि भी कुछ अंशो में मुखर जान पड़ती है, जो आधुनिकता के संदर्भ में राष्ट्रीय चेतना के लिए सटीक वाणी है-

इस दु:खी संसार में जितना/ बने हम सुख लुटा दें,
बन सके तो निष्कपट मृदु हास के/दो कन जुटा दें
दर्द के ज्वाला जगाये नेह/भीगे गीत गायें,
चाहते हैं गीत गाते ही रहें/फिर रीत जायें। [6]

असाधारण कविता के द्वारा कवि ने राष्ट्र के लिए आदर्श नागरिकों की कामना की है जो जीवन की वर्तमान विषम परिस्थितियों में अपने कार्यो के द्वारा असाधारण व्यक्तित्व की पहचान छोड़ सकें-

तपित को स्निग्ध करे,/प्यासे को चैन दे,/सूखे हुए अधरों को
फिर से जो वैन दे/ऐसा सभी पानी है। [7]

विरोधों का सामना करने की जिसमें शक्ति और सामर्थ्य हो और जो आदमियत बेचकर जिन्दा रहना पसन्द न करे, ऐसे राष्ट्रभक्तों की कवि को तलाश है-

लहरों के आने पर,/काई सा फटे नहीं/रोटी के लालच में
तोते-सा रटे नहीं/प्राणी वही प्राणी है। [8]

सच की रक्षा में जो तन-मन बार दे और झूठ के सम्मुख जो घुटने टेकनें से इंकार करें, कवि की इच्छा है कि ऐसे सच्चे इंसान आज अपने देश में होने चाहिए-

लंगड़े को पाँव और/लूले को हाथ दे,/सत की संभार में
मरने तक साथ दे/बोले तो हमेशा सच,/सच से हटे नहीं
झूठे के डराये से/हरगिज डरे नहीं/सचमुच वही सच्चा है। [9]

कवि की मान्यता है कि आज देश को त्यागी और बलिदानी मनुष्यों की नितान्त आवश्यकता है, जो राष्ट्र और मानवत- हित सर्वस्व समर्पण की साध लिये हो-

मांथे को फूल जैसा/अपने चढ़ा दे जो,/रूकती सी दुनिया को
आगे बढ़ा दे जो,/मरना वही अच्छा है। [10]

स्नेह और प्यार का अमर संदेश देते हुए भवानी प्रसाद जी ने अपनी कविता में विघटनकारी सामाजिक मानदण्डों के मध्य केवल परस्पर प्यार और स्नेह के आदान-प्रदान को ही सृजनात्मक मूल्यों की स्थापना महत्वपूर्ण माना है। समाज के पतित के पतित और पद दलित वर्ग को भी स्नेह के सम्बल से जीवन दान प्राप्त हो सकता है अत: कवि कहता है-

जो गिरे हुए को उठा सके/इससे प्यारा कुछ जतन नहीं। [11]

कवि की 'गीत-फरोश'कविता एक लम्बे अर्से तक हिन्दी प्रदेश के कवि सम्मेलनों की प्रतिध्वनि रही है। वर्तमान समाज की स्थिति और कवि की विवशता का हृदय हारी वृतान्त प्रस्तुत कविता 'गीत-फरोश' का प्राण है-

जी, लोगों ने तो बेच दिये इमान।/जी, आप न हो सुनकर ज्यादा हैरान।
मैं सोच-समझकर आखिर/अपने गीत बेचता हूँ।[12]

कवि ने देश की वर्तमान सामाजिक विषमताओं का उल्लेख यथार्थ रूप से किया है। मिश्र जी को राष्ट्र प्रेम है, इसीलिए वह कहते हैं कि जब से संसार में आधुनिकता आई है तभी से और अधिक हानि बढ़ती ही जा रही है। भारत देश ही ऐसा है जो अंहिसा के द्वारा विश्व में शांति और सद्भाव ला सकता है।

'कवि की राष्ट्रीयता अपने भूखंडीय अटूटता की सुरक्षा को बिसारती तो नहीं, लेकिन उसकी आधुनिक समझ और उसकी संस्कारवन्त संवेदना को यह अच्छे से पता है कि युद्ध के साधनों और उसके तौर-तरीके से शान्ति की स्थापना असंभव है, और उस शान्ति के बिना देश की जनता का विकास असम्भव है।' [13]

कवि को देश प्रेम है इसीलिए उसे देश के नागरिकों को भी चिन्ता है-

हाय रे देश/जिसमें कहीं घर नहीं है/और फिर भी
हम जहाँ रहते हैं/और सहते हैं/छै: छै: ऋतुओं का
घर के बिना/और तो और/डर के बिना
आशा के बिना/भाषा के बिना [14]

भारत देश में कुछ स्थानों पर देशवासियों के लिए घर ही नहीं है और वे बिना घर के सभी ऋतुओं में अपना गुजारा करते हैं। उनके जीवन में किसी प्रकार का भय नहीं है और न ही उन्हें किसी प्रकार की इच्छा है और न ही अपने देश की भाषा का ही ज्ञान है। ऐसे भारतीयों के प्रति कवि सहानुभूति व्यक्त करता है और अपने इस विशाल देश के नागरिकों के लिए अच्छा जीवन, तथा सुख सुविधाओं की कामना करता है।

राष्ट्रीय भावना प्रमुख रूप से सामाजिक विषमता तथा उससे उत्पन्न कारूणिक स्थितियों से सम्बद्ध है, इसी पार्श्व में उसमें एक आवेश है, व्यवस्था परिवर्तन की आकांक्षा है। इसीलिए कवि बार-बार अपने मन के अन्दर झाँकता है जिसका तात्पर्य है एक दम शुरूआती दौर में ही अपने आत्मचिंतन को आलोचना की व्यक्तिगत हिस्सेदारी की ऊष्मा से अभिसिंचित किया है। इसीलिए डॉ. देवराज पथिक ने कहा है- मिश्र जी की राष्ट्रीय कविता अन्तत: आध्यात्मिकता की ओर गति करती दिखाई पड़ती है तो यह भी सच है कि

प्रथमत: भी वह इस वृहत्तर आत्मशोध के कर्म के संदर्भ में ही राष्ट्रीयता की पहचान करना चाहती है।' [15]

अत: भवानी प्रसाद मिश्र जी के काव्य में राष्ट्र और देशवासियों के प्रति सच्चा प्रेम है, वे अपने राष्ट्र का उत्थान चाहते हैं, इसीलिए उन्हें विश्वास है कि आने वाले समय में देश में गरीबी, शोषण और दमन कारी नीतियों से मुक्त होगा। यह मानना कल्पना पर आश्रित नहीं है, बल्कि सामाजिक यर्थाथता के धरातल पर आधारित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समाज शास्त्रीय सिद्धान्तों की विवेचना, बुद्ध सेन चतुर्वेदी, पृष्ठ-98
2. भवानी प्रसाद संचयिता, प्रभात त्रिपाठी, पृष्ठ-157
3. छायावादोत्तर काव्य की सा0 व सां0 पृष्ठभूमि, डॉ0 कमला प्रसाद पाण्डेय, पृष्ठ-195
4. नयी कविता में राष्ट्रीय चेतना, डॉ0 देवराज पथिक, पृष्ठ-129
5. दूसरा सप्तक, अज्ञेय, पृष्ठ-33
6. दूसरा सप्तक, अज्ञेय, पृष्ठ-33
7. दूसरा सप्तक, अज्ञेय, पृष्ठ-33
8. दूसरा सप्तक, अज्ञेय, पृष्ठ-33
9. दूसरा सप्तक, अज्ञेय, पृष्ठ-33
10. दूसरा सप्तक, अज्ञेय, पृष्ठ-34
11. दूसरा सप्तक, अज्ञेय, पृष्ठ-35
12. दूसरा सप्तक, अज्ञेय, पृष्ठ-36
13. भवानी प्रसाद संचयिता, प्रभात त्रिपाठी, पृष्ठ-18
14. भवानी प्रसाद संचयिता, प्रभात त्रिपाठी, पृष्ठ-418
15. नयी कविता में राष्ट्रीय चेतना, डॉ0 देवराज पथिक, पृष्ठ-14

****

हिन्दी साहित्य में दलित चेतना का विकास

डॉ. प्रतिभा जोशी *

प्रस्तावना – इक्कीसवीं सदी में सामाजिक न्याय की अवधारणा को लेकर जो विमर्श चल रहे हैं, उनमें से स्त्री–विमर्श और दलित–विमर्श प्रमुख हैं। सामाजिक न्याय की अवधारणा के अंतर्गत स्त्री और दलित दोनों की ही स्थिति में परिवर्तन आया है। दलित–विमर्श के अंतर्गत दलित वर्ग के संघर्ष, उत्पीड़न, शोषण तथा विद्रोह को इक्कीसवीं सदी की हिंदी–कहानियों में अभिव्यक्ति मिली हैं। वर्तमान समय में दलितों ने अपनी कमजोरियों को पहचानकर अपने समाज के उत्थान तथा विकास की दिशा में कदम बढ़ाए हैं अर्थात् इक्कीसवी सदी में दलितों का सशक्तीकरण हुआ है। दलित शब्द का अर्थ 'टूटा हुआ', 'दबा व कुचला' हुआ माना गया है।

'दलित' शब्द की उत्पत्ति संस्कृत धातु 'दल' से हुई है, जिसका अर्थ फटना, खंडित होना, द्विधा होना है। संक्षिप्त में 'हिन्दी शब्द सागर' में डॉ. रामचंद्र वर्मा ने 'दलित' का अर्थ विनष्ट किया हुआ, मसला हुआ, मर्दित, दबाया, रौंदा दिया है। श्री प्रेमकुमार मणि ने दलित साहित्य की परिभाषा करते हुए लिखा है कि 'दलितों के लिए दलितों के द्वारा लिखा जा रहा दलित साहित्य है। यह विलास का नहीं, आवश्यकता का साहित्य है। संपूर्ण विज्ञान उसकी दृष्टि है और पीड़ित मानवता का उद्धार इसका इष्ट है। दलित साहित्य वह प्रकाश –पुंज है, जो अँधेरे में उतरा है।'

सर्वप्रथम मराठी में दलित साहित्य का आरंभ बीसवीं शताब्दी के छठे दशक से माना जाता है। हिंदी में इसका आरंभ 20वीं शताब्दी के आठवें दशक में माना जा सकता है। दलित साहित्य का स्वरूप आज विस्तृत हो रहा है, इसमें कविता, उपन्यास, कहानी, नाटक, दलित आत्मकथा, दलित–आलोचना, दलित–निबंध, दलित पत्र–पत्रिकाएँ आदि भी सम्मिलित की गई हैं। दलित साहित्य मुख्य रूप से वास्तववाद पर आधारित है। इसमें आदर्शवाद को कोई स्थान नहीं। दलित साहित्यकारों ने जो कुछ भुगता है, वही नाटक, कहानी, उपन्यास, कविता के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। दलित साहित्य की प्रेरणा डॉ. अंबेडकर की विचारधारा तो थी ही, महात्मा फुले का संघर्ष, मार्क्स की क्रांतिदृष्टि भी थी।

दलित वर्ग प्राचीन काल से ही शोषित व पीड़ित वर्ग रहा है। भारतीय समाज मुख्य रूप से चार वर्णों में विभाजित है– ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य एवं शूद्र। अंतिम वर्ण 'शुद्र' जो आज दलित शब्द के नाम से प्रचलित है। अरविंद कुमार, कुसुम कुमार ने दलित के कई संदर्भगत अर्थ दिए है। एक अर्थ है शोषित, एक अर्थ है पराजित, जिसमें दमित, विजित आदि अनेक भावार्थ शामिल हैं। एक अर्थ पद्दलित है, जिसमें दलित पदाक्रांत आदि अर्थ शामिल हैं। ज्ञानशब्दाकोश में दलित का अर्थ रौंदा, कुचला, दबाया हुआ पदाक्रांत के साथ हिन्दुओं में वे शूद्र, जिन्हें अन्य जातियों के समान अधिकार प्राप्त नहीं है, भी दिया है। माताप्रसाद ने अपनी पुस्तक हिंदी–काव्य में दलित काव्यधारा में दलित शब्द के अनेक प्रयोगात्मक अर्थों की चर्चा की है, जिसमें चांडाल, अस्पृश्य, अछूत आदि शामिल हैं। उपेक्षित, अपमानित, उत्पीड़ित, प्रताड़ित भी इसी कोटि में आने वाले शब्द हैं। शब्द के व्यापक सामाजिक अर्थों में गुलाम, भूमिहीन, बंधुआ भी शमिल हैं।

डॉ. अंबेडकर ने दलितों को एक नारा दिया था – शिक्षित बनों, संगठित रहो, संघर्ष करो। डॉ. भीमराव अंबेडकर के इस नारे से प्रेरणा पाकर दलित–वर्ग सशक्तीकरण की ओर अग्रसर है।

दलित कौन है – दलित का अर्थ है, जिसका दलन किया गया हो, अर्थात जो शोषित व उत्पीड़ित हुआ हो। सदियों से मानव समाज में, मनुष्य के द्वारा शोषित होता रहा है। समाज का एक वर्ग इसी शोषण का शिकार है यही वर्ग दलित कहलाता है। दलित शब्द में आक्रोश, पीड़ा, घुटन, चीख, वेदना और छटपटाहट छुपी है।दलित आंदोलन की शुरूआत महाराष्ट्र से हुई। यहीं से मराठी दलित लेखन का प्रारंभ होता है।अंबेडकर के अनुसार दलित साहित्य द्वारा दलितों के उत्थान के लिए लिखा गया साहित्य ही दलित साहित्य है लेकिन कुछ साहित्यकारों को छोड़कर बाकी सभी ने दलित साहित्य के नाम पर स्वयं के जीवन के यथार्थ का जीवंत रूप प्रस्तुत किया है या आत्मकथा के माध्यम से अपनी बात कही है।प्रेरणा स्त्रोत – ज्योतिबा फुले, डॉ. भीमराव अंबेडकर ने दलितों के स्वाभिमान को जगाया, आत्मविश्वास बढ़ाया।मराठी साहित्य से दलित साहित्य का प्रारंभ 1960 से माना जा सकता है। दलित साहित्य में दलित साहित्यकारों का भोगा हुआ यथार्थ साहित्य के रूप में सामने आया।दलित साहित्य की विद्या आत्मकथा है, जिसमें दलित साहित्यकार अपने भोगे हुए यथार्थ को शब्दों के रूप में प्रस्तुत करता है।दलित साहित्य में मराठी दलित साहित्य की शुरूआत दयापंवार की 'जूठन' से मानी जाती है।महाराष्ट्र में महार जाति की स्थिति अत्यंत दयनीय है, उन्हें आज भी मरे हुए जानवरों को ढोने के लिए बुलाया जाता है तथा उनके साथ आज भी अछूतों सा व्यवहार किया जाता है।प्राचीनकाल में 'दलित' जैसी कोई अवधारणा ही नहीं थी यदि होती तो मीराबाई जैसी ऊँचे कुल की महिला रैदास को अपना गुरू कभी स्वीकार नहीं करती।

हिन्दी साहित्य में दलित साहित्य का प्रारम्भ 1914 में सरस्वती पत्रिका में प्रकाशित 'हीराडोम' की 'अछूत की शिकायत' कविता से माना जाता है। कविता के माध्यम से कवि ने अपने अछूत होने की पीड़ा को व्यक्त किया है जिसकी एक बीमार बेटी है जिसे इलाज के लिए न तो वह वैद्य के पास ले जा पाता है और ना ही ईश्वर की अनुकम्पा पाने हेतु देवी मंदिर ले जा पाता है। इसी कशमकश में एक दिन वह जल्दी सुबह नहाकर देवी के मंदिर इस आशा से जाता है कि देवी के चरणों का फूल वह अपनी बेटी के तकिये के नीचे रख देगा तो वह जल्दी ठीक हो जाएगी लेकिन जैसे ही वह मंदिर से फूल लेकर लौटता है उसके अछूत होने का साया उसके पीछे पड़ जाता है पुजारी व गाँव वालों की नजरों में उसे दोषी करार दिया जाता है तथा इस अपराध की सजा

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) क्रिश्चयन एमिनेट कॉलेज, इन्दौर (म.प्र.) भारत

भी उसे भोगना पड़ती है।

अपने दलित सरोकारों के कारण प्रताड़ित किए गए डॉ. दयानंद बटोही ने हिंदी दलित कविता में अपनी अलग पहचान बनाई है। उनका काव्य-संग्रह 'यातना की आँखेय नवगीत विधा में सामाजिक विसंगतियों को अभिव्यक्त करता है, लेकिन पाठकों का ध्यान उनकी अन्य कविताओं ने खींचा है। उनकी एक प्रसिद्ध कविता है – 'द्रोणाचार्य सुने उनकी परंपराएँ'। इस कविता में उन्होंने विद्यालयों से लेकर विश्वविद्यालयों तक में दलित छात्रों के साथ हो रहे अन्याय को मारक अभिव्यक्ति दी है –

मैं सिर्फ/द्रोन तुम्हारे रास्तों पर चले गुरू से कहता हूँ
अब दान में अँगूठा माँगने का साहस कोई नहीं करता
प्रैक्टीकल में फेल करता है।
प्रथम अगर आता हूँ तो,
छठा या सातावाँ स्थान देता है
जाति गंध टाइटल में खोजता है
वह आत्मा और मन को बेमेल कतरा है।

जूठन में दयापंवार ने दलितों के जीवन की कटु सच्चाई को प्रस्तुत किया है कि किस तरह वे लोगों की जूठन के लिए तरसते हैं ताकि उनका अपना जीवन चला सके।इसी श्रृंखला में शरणकुमार लिम्बाले, सुशीला टाकबोरे आदि साहित्यकारों ने दलित साहित्य के रूप में अपने जीवन के कडुवे सच को उजागर किया है।दलित साहित्य 80 के पश्चात् अस्तित्व में आया जब ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपने दलित होने की वेदना कुछ इस तरह व्यक्त की –

कभी नहीं माँगी बालिश्त भर जगह, नहीं माँगा आधा राज भी, माँगा है
सिर्फ न्याय, जीने का हक, थोड़ा सा पीने का पानी।

ओम प्रकाश वाल्मीकि मूलत: कवि है उनके द्वारा कुछ नाटक भी लिखे गए हैं।

दलित साहित्यकारों द्वारा लिखे गए उपन्यासों में उन्होंने अपनी दयनीय स्थिति को वर्णित किया है। कविता में आक्रोश के स्वर मुखरित हुए है। जैसे मोहनदास नैमिशराय ने दलितों को बनाने वाले ईश्वर पर अपना आक्रोश व्यक्त किया है कि ईश्वर यदि एक है तो फिर यह ऊँच-नीच किसके द्वारा बनाया गया।

'ईश्वर की मौत उस पल होती है, जब मेरे भीतर उठता है जवाब कि ईष्वर का जन्म किस माँ की कोख से हुआ और ईश्वर का बाप कौन है?'

मोहनदास नैमिशराय ने अपने उपन्यास क्या मुझे खरीदोगे में नारी के देह शोषण से लेकर उसकी समस्याओं के साथ समाज में उसकी स्थिति को चित्रित किया है।

डॉ. जयप्रकाश कर्दम हिंदी दलित कविता के सशक्त हस्ताक्षर हैं। इनका काव्य-संग्रह 'गूँगा नहीं था मैं' हिंदी – क्षेत्रों में काफ़ी चर्चित रहा है। उनकी कविता की एक बानगी यहाँ प्रस्तुत है। वह अपनी 'दमन की दहलीज़ पर' कविता में लिखते हैं –

तमाम विरोधों और दबावों के बावजूद
जाति के जंगल का यह जीव
अपनी मुक्ति के लिए अड़ा है
अपनी अस्मिता और अस्तित्व के लिए लड़ा है। और आज
तमाम हौसलों के साथ
हाथों में खंजर लिए वह
दमन की दहलीज़ पर खड़ा है।
और ललकार रहा है चीख़कर
बाहर निकल हरामज़ादे/तेरी ऐसी की तैसी।

जयप्रकाश कर्दम के 1994 में प्रकाशित 'छप्पर' उपन्यास में उत्तर प्रदेश के मातापुर गाँव के चमार जाति का चित्रण किया गया है। इस उपन्यास में यथार्थवादी दृष्टिकोण के माध्यम से दलितों की समस्याओं का मार्मिक चित्रण हुआ है। अज्ञानता के कारण कुपरंपराएँ, संकुचितता, व्यसन, अंतर्विरोधों का होना स्वाभाविक हैं। चंदन नामक पात्र शहरी दलितों में व्याप्त व्यसन से उनकी बर्बादी रोकने और व्यसन-मुक्ति हेतु प्रयत्न करता है। पढ़ाई का महत्व भी समझाता है कि 'पढ़-लिखकर हमारे समाज में लोग ऊपर नहीं उठेंगे तो हमें कौन पूछेगा। हमें समाज से टक्कर लेनी है। सत्ता से लड़ाई लड़नी है, जुल्म और शोषण के विरूद्ध संघर्ष करना है। इन सबके लिए फौज़ तैयार करूँगा मैं।'

सत्यप्रकाश जी के 1998 में प्रकाशित 'तस, तस, भई सवेर' उपन्यास का महत्व दलित चेतना के उपन्यासों से उल्लेखनीय है। लेखक ने ग्रामीण दलितों की समस्याओं को चित्रित करके बताया है कि दलितों की रूढ़िवादिता और धर्मांधता दलितों के विकास के अवरोधक अंग हैं। इससे मुक्त होने पर बल दिया गया है। 'हंसा' का मानसिक, आर्थिक, शारीरिक शोषण ज़मींदार देवीपाल करते हैं। ग्रामीण अनपढ़ दलित धर्मांधता में फँसते ही जाते हैं, जिससे मुक्ति पाना मूल विचार है।

मोहनलाल ने 1999 में प्रकाशित अपने उपन्यास 'मुक्ति पर्व' में दलित-जीवन का यथार्थ चित्रण किया हैं। उपन्यास के प्रारंभ में लेखक ने लिखा है कि 'हम मुक्तिपर्व किसे कहें? जब देश आज़ाद हुआ उसे या जब किसी जाति या कुछ जातियों को आजादी मिले उसे?..... यही सवाल आज़ादी के बाद से लेकर अब तब दलितों के भीतर उठता रहा है, जो उनकी भावनाओं को समय-समय पर उद्वेलित करता है।

उपर्युक्त उपन्यासों में स्वानुभव पर आधारित यथार्थ दिखाई पड़ता है, जिसमें सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, शैक्षिक, राजनीतिक, साहित्यिक समस्याओं का चित्रण है, जिससे दलितों में नई चेतना, नई दिशा प्रस्थापित हो।जयप्रकाश कर्दम ने दलितों को आरक्षण मिलने पर लोगों द्वारा पूछे गए सवालों का कुछ इस तरह उत्तर दिया कि – तुम्हारा आरक्षण उचित है।आरक्षण में आय. पी. एस. बनने वाले कलेक्टर का ब्राह्मणों के प्रति विद्रोह जब सवर्णों को आरक्षण मिला हुआ था तब व्यक्त किया।

'अपने-अपने पिंजरे में लेखक को दलित होने के कारण जो जीवन जीना पड़ा, उसके जीवंत अनुभव हैं। वे लिखते हैं कि हिंदू होने के बाद भी मुझे मंदिर जाने से रोका जाता है।' मंदिर और सवर्णों के लिए हम शूद्र थे, अछूत थे, दलित थे, पर इंसान न थे। हमारी छाया भी उनके लिए अपवित्र थी। एक दिन मंदिर के बाहर प्रसाद लेते समय पुजारी की उँगलियाँ जब लेखक के हाथ से छू गई तो पुजारी ने गुस्से से और घृणा से कहा था – 'तू चमार है न, सब भ्रष्ट कर दिया। कितनी बार कहा तुम ढोरों से, प्रसाद दूर से लिया करो।

नैमिशराय को बचपन में शिक्षा जैसे पवित्र क्षेत्र में भी अपमान सहना पड़ा। वे कहते हैं – 'पहले चमारों का कुआँ, चमारों का नल, चमारों की गली, चमारों की पंचायत आदि कहा जाता था। हम स्कूल जाने लगे तो चमारों का स्कूल कहने लगे।' एक विशिष्टि जाति के कारण मंदिर, शिक्षा तथा पानी से दूर रखने की सवर्णों की साज़िश का दस्तावेज 'अपने-अपने पिंजरे' आत्मकथा है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा 'जूठन' रोटी की समस्या की ओर इशारा करती है। जाति से चुहडा होने के कारण वाल्मीकि को अपमान सहना पड़ता है। घर में घोर दरिद्रता थी। माँगे हुए किसी के कपड़े, पुस्तकों से इन्हें काम चलाना पड़ता था। किसी घर की अथवा बारात की 'जुठन' को सुखाकर

महीना-भर काम चलाना पड़ता था। एक प्रसंग लेखक के मन-मस्तिष्क पर आज भी क़ायम है। गाँव के किसी सुखदेव त्यागी के घर बारात थी। लेखक की माँ टोकरा लेकर जूठन की अपेक्षा में बैठी थी। वह मालिक से पत्तल माँगती है। मालिक उन्हें नकारता है। भड़कता है। स्कूल में उन्हें हैंडपंप को छूने नहीं दिया जाता अथवा जाति का पता लगने के बाद ब्राह्मण प्रेमिका भी नकार देती है। इस प्रकार जाति के कारण हर मोड़ पर संघर्ष करना पड़ता है।

'दोहरा अभिशाप' की लेखिका कौशल्या बैसंगी बचपन से जाति से नफ़रत करने लगती है। उन्हें भी स्कूली जीवन में जाति के ज़हर का अनुभव आने लगता है। स्कूल में अक्सर बात-बात पर चमार, भंगी, महार नाम से पुकार जाता है। आर्थिक दयनीयता के कारण लेखिका को ठीक पद्धति के कपड़े भी पहनने को नहीं मिलते थे, इन सभी के पीछे मुख्य समस्या है जातिवाद।

दलित साहित्य को पढ़ने के बाद स्पष्ट होता है कि 'दलित साहित्य' दलित समुदाय के विविध आयामों को अपने अंदर समेटकर शोषण के हर पहलू की समाजशास्त्रीय जाँच करता है। यह साहित्य धर्म के नाम पर दलितों के साथ सौतेला व्यवहार करने वाले सवर्ण समाज के दोगलेपन को खोल रहा है।

टॉलस्टाय ने एक जगह कहा है कि दु:ख के कारण भले ही एक हों, दु:ख के प्रकार अलग होते हैं। हिंदी के दलित लेखकों के दु:ख का कारण एक है, पर दु:ख के प्रकार अलग-अलग हैं। अपमान की आग में जूझते दलित लेखकों की ये रचनाएँ केवल एक व्यक्ति के अनुभव की अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि संपूर्ण समाज के अनुभवों की अभिव्यक्ति हैं, क्योंकि प्रत्येक दलित के जीवन में ऐसे अपमान से जूझने के प्रसंग आते हैं।

परंपरा से जिन लोगों को धर्म, वर्ण और जाति के नाम पर हाशिए पर रखा गया था, वही लोग आधुनिकता के दौर में सबकी चिंता और चिंतन के केंद्र बन गए थे। परंतु उत्तर आधुनिक दौर ने बाद में पुन: उन लोगों को न केवल हाशिए पर रखा बल्कि विकास का सपना दिखाकर अपने कर्म और भूमि से भी विस्थापित कर दिया है। परिणामस्वरूप आधुनिक दौर में शुरू हुए स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श और आदिवासी-विमर्श आदि विमर्शों का विमर्शमूलक आख्यान प्रस्तुत करने की परंपरा उत्तर-आधुनिक दौर के साहित्य में विकसित होती दिखाई दे रही है। हृषीकेश सुलभजी ने आने नाटक 'बटोही' में इसी परंपरा का बड़ी क्षमता के साथ निर्वाह किया।

वास्तव में दलितों की समस्या अत्यंत पुरानी समस्या रही है। उसका एक लंबा इतिहास रहा है। दलितों की समस्या के इतिहास पर प्रकाश डालते हुए श्री खगेंद्र ठाकुर एक पुस्तक की प्रस्तावना में लिखते हैं, 'दलित समस्या का एक लंबा इतिहास रहा है। यह बहुत ही प्राचीन समस्या है। इस समस्या का बहुत बड़ा काल धर्म से संबंधित था, जो कल का सवाल था। आज का सवाल उनकी राजनीति से जुड़ा है। दलितों के धर्म की समस्या चार युग की समस्या है, जिन्हें क्रमश: वैदिकधर्म का युग, पौराणिक धर्म का युग, संतमत का युग और वर्तमान हिंदूधर्म का युग कहा जा सकता है।; मध्ययुगीन काल से लेकर आधुनिक-उत्तर आधुनिक काल तक के साहित्य में कम-अधिक मात्रा में क्यों न हो, हम दलितों की पीड़ा एवं संघर्ष की कथाएँ पढ़ सकते हैं। इस कारण साहित्य में दलितों की पीड़ा एवं संघर्ष का चित्रण करने की परंपरा उतनी ही पुरानी मानी जा सकती है, जितनी कि उनकी समस्या पुरानी हैं।

वर्तमान समय में यह सवाल भी बार-बार उठाया जा रहा है कि क्या साहित्य में दलितों की पीड़ा एवं संघर्ष का यथार्थ वर्णन करने-मात्र से उनकी स्थिति में सुधार लाया जा सकता है? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए श्री बच्चन सिंह अपने 'हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास' में लिखते हैं, 'साहित्य में दलितों के वर्ण-संघर्ष से वर्ण-व्यवस्था नष्ट हो या न हो, लेकिन उनका आत्मगौरव बढ़ेगा, समता की बेहतर आर्थिक स्थिति लौटेगी। सत्ता की भागीदारी के लिए उन्हें राजनीति का आश्रय लेना होगा और सांस्कृतिक समरूपता के लिए साहित्य का। मेरा अपना मानना है कि साहित्य के माध्यम से दलितों की मुक्ति का यह संघर्ष निरंतर की जानेवाली साधना है। हृषीकेश सुलभ अपने नाटकों के माध्यम से यही साधना कर रहे है। उनका यह प्रयास आधुनिक राष्ट्र के निर्माण में विशेष महत्व रखता है। इस संदर्भ में अपना मंतव्य स्पष्ट करते हुए श्री जगदीश चतुर्वेदी लिखते हैं - 'दलितों की मुक्ति का संघर्ष वास्तविक संघर्ष है। यह संघर्ष जब-तब वैचारिक और सामाजिक धरातल पर साथ-साथ नहीं चलता, तब-तक विचार और संस्कृति के क्षेत्र में चल रहे जाति-व्यवस्था और जातिवाद विरोधी संघर्ष का व्यावहारिक जीवन में, राजनीति, अर्थ-व्यवस्था और संरचनाओं में प्रसार नहीं होगा और ना ही आधुनिक राष्ट्र का निर्माण संभव है।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रेमकुमार मणि, दलित साहित्य एक परिचय (लेख) दलित साहित्य : चिंतन के विविध आयाम, सं. डॉ. एन. सिंह, पृ. 57
2. डॉ. दयानंद बटोही, दर्द के दस्तावेज, पृ. 112
3. डॉ. जयप्रकाश कर्दम, गूँगा नहीं था मैं, पृ. 35
4. डॉ. श्योराज सिंह 'बेचैन', क्रौंच हूँ मैं, पृ. 53
5. डॉ. एन. सिंह, अंतिम दो दशकों का हिंदी दलित साहित्य, पृ. 115
6. डॉ. जयप्रकाश कर्दम, छप्पर, पृ. 43-44
7. मोहनदास नैमिशराय, मुक्तिपर्व, पृ. 5
8. डॉ. सुरेशकुमार जैन (सं.), उत्तरकाशी का हिंदी साहित्य, पृ. 97

****

नागार्जुन का जीवन संघर्ष और काव्य के स्वर

डॉ. पूनम त्रिपाठी *

प्रस्तावना – जनकवि नागार्जुन जी का जन्म मधुबनी जिला के समीप सतलखा गाँव (ननिहाल) में 30 जून 1911 ई0 में हुआ था। किन्तु पिता का गाँव तरौनी था। इनके पिता का नाम गोकुल प्रसाद तथा माता का नाम उमा देवी था। नागार्जुन कई नामों से सुशोभित हुए। बचपन का नाम ठक्कन विद्यार्थी जीवन में बैद्यनाथ तथा साहित्यिक जीवन में इनका नाम नागार्जुन पड़ा। इनके पिता गोकुल प्रसाद मिश्र खेती बारी से ही गुजर करते रहे है। माता के मृत्यु के बाद पिता के द्वारा कोई अच्छी साधन उपलब्ध नहीं करायी गई। इस तरह से सामान्य जीवन जीते हुए कवि नागार्जुन वयस्क हुए और सन् 1931 ई0 में उनका विवाह हरिपुर गाँव की लड़की अपराजिता देवी के साथ हो गया।

शिक्षा – तरौनी ग्राम में संस्कृत विद्यालय से लघुसिद्धांत लेकर प्रथमा उत्तीर्ण हुए। इस अध्ययन काल में नागार्जुन जी को बटुक पुरोहित के रूप में कार्य करने के कारण यदा-कदा अठारह आने मिल जाया करता था। जिसे वे सोलह आने पिता को और दो आने अपने खर्चे के लिए होता था। इस तरह से मध्यमा उत्तीर्ण करने के बाद बनारस चले गए और वहाँ चार वर्षो में शास्त्री उत्तीर्ण करने के बाद काव्य तीर्थ पढ़ने हेतु कलकता एक वर्ष के लिए चले गए। तदनन्तर एक दिन अध्ययन छोड़कर नागार्जुन जी ढाई-तीन वर्षो तक पंजाब, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश और गुजरात आदि स्थानों की यात्रा करते रहे। इस दौरान पंजाब में मासिक पत्रिका 'दीपक' का संपादन कार्य करने का इन्हें अवसर मिला। (परिचय, विवरण एवं सूचनाएँ: नागार्जुन संवाद-डॉ0 विजय बहादुर सिंह, सापेक्ष अंक-34 के आधार भूत)

सन् 1936 में नागार्जुन जी सिंहल द्वीप पहुँचे। वहाँ कोलंबो के समीपस्थ 'कैलानिया विद्यापीठ' जो बौद्ध जगत में प्रख्यात है वहाँ दीक्षा ग्रहण की। दीक्षित होने के बाद नागार्जुन अपने पुराने नाम 'वैद्यनाथ मिश्र' से हटकर नागार्जुन बन गए। वहाँ वे बौद्ध शिक्षुओं को व्याकरण और दर्शन पढ़ाते हुए पाली भाषा के माध्यम से बौद्ध दर्शन का वृहद अध्ययन किया। इस तरह अध्ययन-अध्यापन करते हुए दो वर्ष लंका में बिताने के बाद जैन मुनियों से सम्पर्क कर यायवरी जीवन में ही प्राकृत भाषा का ज्ञान प्राप्त कर लिया और एक बार पुन: अपने गृहस्थ आश्रम में लौट आए। नागार्जुन जी को बिहार में रहते हुए किसी प्रकार की नौकरी नही मिली। वे मैथिली की लोकप्रिय शैली में चार-चार पन्नों वाली पुस्तक स्वयं लिखकर बेचने लगें। उस समय वे पुस्तक छ: पैसे में बिक जाती थी। इसी क्रम में नागार्जुन जी लेखन जीवी बन गए। पहले वे कविताएँ लिखते थे, फिर उपन्यास भी लिखने लगे। इस तरह से वे धीर-धीरे यायावरी जीवन में साहित्य और राजनीति दोनों में परिपक्व होते गए किन्तु घर गृहस्थी के प्रति बेफिक्र और लापरवाह रहे। नागार्जुन जी के चार बेटे और दो बेटियाँ थी। पत्नी और बच्चे अन्न वस्त्र और आवस का कष्ट झेलते रहे पर वे एक घर तक नहीं बनवा सके। सन् 1982-83 में दस हजार और पंद्रह हजार के दो पुरस्कार भी इन्हें मिले किन्तु वे सब भी समाप्त हो गये। उनके जीविका का स्त्रोत लेखन ही था। वे स्वभाव से फक्कड़ निश्चिंत किन्तु सत्य के प्रति निष्ठवान, देश के प्रति आस्थावान और आम लोगों के प्रति हमदर्द थे। नागार्जुन हिन्दी साहित्य के काव्य जगत में दूरदर्शी तथा जनता के शुभ चिंतक रहे है। (बातों-बातों में मनोहर श्याम जोशी के लेख के आधार भूत)

इस तरह नागार्जुन का बचपन से लेकर शिक्षा-दीक्षा और 'यात्री' की जिद का भाव जो कि जीवन पर्यन्त रहा। चाहे कितनी बड़ी हस्ती क्यों न हो बेहिचक टक्करा जाते थे। वे बिना किसी लाग लपेट के अपनी बात कविता के माध्यम से कह देते थे। जनकवि नागार्जुन जी के जीवन का यही संक्षेपण है। इस प्रतिभा संपन्न व्यक्तित्व के यात्रा का 5 नवम्बर सन् 1998 में समापन हो गया। बाबा नागार्जुन इस दुनिया को छोड़कर स्वर्गवासी हो गये।

काव्य स्वर – नागार्जुन समाज तथा देश के प्रति कर्त्तव्यनिष्ठ एवं जागरूक कवि है। हिन्दी में सर्वहारा वर्ग के संघर्ष की आवाज बुलंद रखने वालों में नागार्जुन अग्रगण्य है। मजदूर वर्ग के संघर्ष को उन्होंने प्रेरणा दी। देश की असहाय अवस्था से उनका हृदय पीड़ित हो उठा। उनकी कविता में जनता का संघर्ष मूर्तिमान है। गाँधी जी की हत्या से भावाकुल कवि की छठपटाहट में युग का यर्थाथ रूप मुलक रहा है। नेताओं के बदले हुए स्वर से कवि को बड़ी चोट पहुँचती है। उन्होंने जन भाषा को अपनाया, उपमानों को चुनने में भी जनभावनाओं की प्रमुखता प्रदान की। 'महँगाई कैसे बढ़ी है जैसे द्रोपदी की साड़ी हो।'[1]

नागार्जुन की कविता सामाजिक जीवन की परिस्थितियों एवं धारणाओं पर पैनी नजर रखती है। जनकवि नागार्जुन को केवल साधारण जनता ही नहीं पशु-पंक्षी भी संवेदनशील कर देते है, जो 'अकाल और उसके बाद' कविता से द्रष्टव्य है-

कई दिनों तक चूल्हा रोया चक्की रही उदास।
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास।।
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त।
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।।[1]

इस कविता में कवि केवल दीन-हीन भूखे नंगे मनुष्यों से ही नहीं वरन् पशु-पक्षियों से भी संवेदनशील है। घर में दाना नहीं होने के कारण मनुष्य सहचर चूल्हा, चक्की, चूहे, कानी कुतिया आदि सब दु:खी है। यहाँ पर कवि ने 'कानी कुतिया' शब्द का प्रयोग कर दीनता की ओर अत्यधिक मार्मिक चित्र प्रस्तुत करते है क्योंकि भूखे दीन हीन व्यक्तियों के पास दीन-हीन जानवर ही हो सकते है। उसके पास अमीरों की तरह बुलडॉग या अन्य किस्म के विलायती कुत्ते नहीं हो सकते।

* 7/479, खुमाबाद, सिवान (बिहार) भारत

नागार्जुन कबीर दास के अगली कड़ी है जो 'आँखन देखी' में हामी है।

तू कहता कागद की लेखी, मैं कहता आंखिन की देखी।
मैं कहता सुरझावन हारी, तू राखा उरझोय रे।।

कबीर दास में अनुभूति की सच्चाई एवं अभिव्यक्ति का खरापन विद्यमान था, वे अनुभव परक सत्य पर विश्वास करते है। वे वेद शास्त्र कर्मकाण्ड को नहीं मानते ठीक उसी प्रकार नागार्जुन की काव्य भी अनुभूति परक है। वे तुलसीदास के अत्यधिक निकट है, जो जनता को शोषण मुक्त कराने के लिए अत्यधिक व्याकुल है। वे निराला जी के हुंकार और राहुलसांकृत्यायन के फूँफकार के वाहक है। वे प्रेमचंद के साहित्य के समर्थक है जो बुद्धिजीवियों की महफिल से होती हुई खेत-खलिहानों नुक्कड़-चौराहों की तरफ उन्मुख है। 'जनता के साहित्य को जनता के लिए' बनाने में अग्रगण्य कवियों के श्रेणी में जनकवि नागार्जुन का स्थान सर्वोपरी है।

जनकवि नागार्जुन का आगमन उस समय होता है जब समाज में नैतिकता का पतन हो चुका है। चारों तरफ अंधविश्वास, अशिक्षा, भूखमरी, शोषण का बोल बाला है। देश को दिशा देने वाले बुद्धिजीवी पूँजपतियों के हाथों बिक चुके है। हर वह व्यक्ति या संस्था जिनसे कुछ उम्मीद की जा सकती है। वह स्वार्थ में लिप्त है। जहाँ समाज का हर दिशा दिग्भ्रमित हो जीवन का कोना-कोना प्रदूषित होता जा रहा हो, वहाँ शोषण मुक्त समाज का स्वप्न और उस स्वप्न के लिए संघर्ष करने वाला साहित्यकार कितना आवश्यक हो सकता है। इसका अनुमान सहजता से लगाया जा सकता है।

जनकवि नागार्जुन के काव्य स्वर देश, समाज गाँव शहर कस्बे गली-कूचों एवं पगडंडियों से होते हुए जीवन में आस्था प्रेम, सौहार, राष्ट्रीयता और मानव प्रतिष्ठा का स्वर गुंजित किया है। इनके काव्य में समाजव्यापी कुरीतियों, विकृतियों और असंगतियों को यथार्थ की दृष्टि से देखा गया है। सम्पूर्ण भारत के दु:ख दर्द पीड़ा छटपटाहट, शंका, कुशंका ग्रामीण तथा नगरीय जीवन की विद्रुपताएँ निम्न मध्यमवर्गीय जनता के अभाव के सभी रूप उनके काव्य स्वर की रागनी बनी है। एक ओर सधारण जनता की ऐसी दशा है तो दूसरी और नगरीय जीवन में व्याप्त आपाधापी, स्वार्थपरता यांत्रिकता भौतिकवादी सुख एवं ऐश्वर्य की भाग-दौड़, शोषण पूंजीपतियों के द्वारा अत्याचार को काव्य में चित्रित किया गया है।

'अध भूखे अधनंगे डोले, हरिजन-गिरिजन वन में।
खुद तो चिकनी रेशम डारे, उड़ती फिरो गगन में।।
महँगाई के सूर्पनखा को, वैसे पाल रही हो।
शासन को गोबर जनता के, मत्थे डाल रही होय'।।

इस तरह से साधारण जनता के अहितकर चाहे जो भी हो जनकवि नागार्जुन बेहिचक उनकी बखिया उधेड़ते नजर आते है। जन आन्दोलन काव्य में प्रगतिवादी काव्य धारा के अनेक जनकवि उनके समर्थक और बलदाता रहे है और अनेक विरोधी भी रहे है। नागार्जुन किसी भी वाद आन्दोलन या फिर धारणाओं में बंधकर नही रहे चाहे वह मार्क्सवाद हो या समकालिन आंदोलन। वे किसी एक लिंक में बंध कर नहीं रहे। वे एक कुशल गृहणी की भाँति जो भोजन बनाने के लिए अन्न के दाना को अच्छी तरह सूपा में फटकार लगाती है जिससे बेकार कण बाहर हो जाते है और सकार कर्ण को ही भोजन बनाने के रूप में स्वीकार करती है जो उनके घरवालों के लिए अच्छा, होता है, ठीक उसी प्रकार जनकवि नागार्जुन भी अपने काव्य में जनहितकर स्वर को ही प्रमुखता देते है। जहाँ कही भी उनके जनविरोधी स्वर सामने आता है उनकी कवि हृदय व्याकुल हो उठता है। वे गाँधी जी, लोहिया, जवाहरलाल नेहरू, जयप्रकाश नारायण आदि महान व्यक्तियों से प्रभावित थे लेकिन जहाँ कही भी भ्रांतियाँ देखे बेहिचक आलोचना की है। शासक शोषक वर्ग के अंतर्विरोध और अत्याचार, निकम्मेपन को सिर्फ नागार्जुन के काव्य स्वर में स्पष्ट सुना गया और समझा गया है। नागार्जुन आम आदमी के पास उनकी भाषा में ही उनके करीब पहुँच जाते है। उनकी काव्य ठेठ हिन्दी का ठाठ है, जो दोरंगी नीति, दुहरी मानसिकता के खिलाफ अवाज बुलंद किया। जिससे भारतीय जनता ठगी जाती रही है। कोई भी सहज चिंतक ऐसी स्थिति में चुप नहीं रह सकता। जनकवि नागार्जुन नेहरू जी की नीतियों पर व्यंग्य किये है। वे उनसे लाभान्वित होने वाले नेताओं को भी नही छोडे है। उनका कहना है कि नेहरू दस वर्ष और रह जाते तो कांग्रेसी नेता खादी के ओट में गांजा बेचते नेहरू सभी का तेजहरण करवा देते

'होता सबका तेजहरण', जुगनू करलेती आत्मघात।
हँसते गुलाब खिलते गुलाब, कमलों का करता कौन बात।।
महलो की महँगी बिजली से, हस्ती संध्या डरता प्रभात।
जमती, अशोक के सिंहो पर, उल्लुओं की जमात।।

इस तरह से देश के नेता भी-

गरूआ पहनते जयप्रकाश, नर्मदा किनारे बस जाते।
डांगे हो जाते राज्यपाल, लोहिया जेल में बलखाते।।
गोपलन हो जाते नजर बंद, राजा की माथा घुखाते।
जनसंधी अटलबिहारी जी, मिश्रा जी की झोली फैलाते।। [1]

निष्कर्षत: नागार्जुन गाँधी लोहिया बिनोवा भावे जवाहरलाल तथा जयप्रकाश नारायण से प्रभावित रहे है किन्तु इन भारत के सपूतो के कर्त्तव्य परायणता में जहाँ कही कमी आयी इनके जनवादी काव्य का स्वर बेहिचक गुंज पड़ा है। राष्ट्र के प्रति तल्लीनता और जनजीवन के प्रति गहरी सोच तथा जनवादी मानसिकता के कारण नागार्जुन कालमार्क्स और लेनिन के प्रभावों को भी बहुत से जगहों पर नकारते हुए दिखाई देते है। [1]

नागार्जुन-'मेरे लिए साम्यवाद का मतलब स्थानीय और निकट के संघर्षो से जुड़ना है। बाहर-बाहर हम प्रगतिशील बने रहे और भीतर वही प्रतिक्रियावादी काम चलता रहे तो फिर कैसी राष्ट्रीयता और कैसी साम्यवादिता। मैं स्थानीय समस्याओं से निर्लिप्त होकर मार्क्सवादी नहीं कहलाना चाहता।' [2]

नागार्जुन के काव्य में जनशक्ति के स्वर अनुगूंजित हो रही है। जनकवि नागार्जुन सही अर्थो में भारतीय मिट्टी से बने आधुनिकतम कवि है जिनका काव्य जन-जन के चेतना में जागृति के लहर भरने में अहम भूमिका निभाती है। जन कवि नागार्जुन को जनशक्ति एवं जन संघर्ष में, अडिग आस्था, जनता से गहरा लगाव और एक न्याय पूर्वक समाज की सपना ये तीनों गुण उनके व्यक्तित्व में ही नहीं उनके काव्य के स्वर में भी रागनी बनी है। निराला के बाद नागार्जुन अकेले ऐसे कवि है जिनके काव्यों में अन्याय के प्रति बेहिचक आक्रोश दिखाई देता है। निराला जी अनीति अत्याचार के विरूद्ध क्रांति की भावना व्यक्त करते हुए नजर, आते है। वे जन शक्ति को संगठित करना चाहते है। वे जन साधारण के हित के लिए क्रांति चाहते है। उनका मानना है कि क्रांति से शोषक वर्ग का विनाश और शोषित वर्ग का नव निर्माण होगा। निराला जी 'बादल राग' कविता में बादल को जन संगठित शक्ति का क्रांति दूत मानते है। ठीक इसी तरह जनकवि नागार्जुन के काव्य में भी जन संगठन की शक्ति तथा उसे जागृत करने की प्रेरणा द्रष्टव्य है-

'आओ खेत मजदूर और भूमिदास नौवान।
आओ खदान श्रमिक और फैक्ट्री वर्कर नौजवान।।

आओ कैम्प के छात्र और फैक्ट्रियों की नवीन प्रवीण।

हाँ–हाँ तुम्हारे ही अंदर तैयार हो रहे है, आगामी युगों के लिवरेटर'। [3]

कवि जानता है कि इन साधारण जनों पर करूणा का मेध ऐसे नहीं बरसने वाले है इनके लिए क्रांति की आवश्यकता है जिससे पूँजीपतियों का हृदय परिवर्तन हो सके सभी को समानता का अधिकार मिले जिसे साम्यवाद की स्थापना हो सके। देश के चारो तरफ शांति और खुशियाली भर जाए मानव–में मानवता की स्थापना हो सके।

नागार्जुन के काव्य से जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में जनवादी स्वर का शंखनाद सुनायी देता है चाहे वह राजनीतिक हो, प्रशासनिक हो, बौद्धिक हो, राष्ट्रीय स्वाभिमान हो, सामाजिक जगत हो, धार्मिक जगत हो। नागार्जुन राजनीति को विकृति की अमरलता मानते है, जो दुष्प्रवृत्ति से फैलती जाती है। आजादी की लड़ाई लड़ते समय भारतीय जनता ने कुछ और सपने देखे थे, जो आजादी के बाद विफल नजर आते है। आजादी के दिवाने भारतीय जनता ने रामराज्य की स्थापना चाही थी कि स्वतंत्रता बाद भारत की सरकार रामराज्य के आदर्शो और मूल्यों की दिशा में प्रयास करेगी पर इन सपनों के साथ छल करने वाली व्यवस्था पर नागार्जुन अपनी व्यंग बाणो की बौछार 'रामराज्य' नामक कविता में कहते है–

'पूंछो जाकर बतलाएँगे, तेलंगाना के मजलूम।
रामराज से कुम्भकरन का रावण का क्या नाता है।।
रामराज में रावण अबकी नंगा होकर नाचा है।
सूरज–शकल वही है भैया,बदला केवल ढांचा है।
नेताओं की नीयत बदली फिर तो अपने ही हाथो।।
भारत माता के गालों पर कसकर पड़ा तमाचा है'। [4]

नागार्जुन ने प्रशासन तंत्र के संवेदनशील स्वार्थपरायण चरित्र को काव्य के माध्यम से बार–बार बेपर्दा किया है। भारत की स्वतंत्रता और सम्मान को ठेस पहुँचाने वाली विदेशी शक्तियों की नागार्जुन ने अपनी रचना के माध्यम से पुरजोर विरोध किया है। वे इंग्लैण्ड और अमेरिका की भारतीयों के साथ मित्रता पर संदेह करते है। वे इन साम्राज्यवादी पूँजीवादी देशों की आंतरिक आकांक्षा से वाकिफ है।

सामाजिक चिंताओं से परे किसी भी तर्क की आड़ लेकर मुँह छुपाने वाले, आध्यात्म की शाश्वत खोज में लीन योगी या दार्शनिक हो या रेशमी आवरण से ढका साहित्यकार हो या फिर चाँदी की चंद दुनिया में चमकता हुआ बुद्धिजीवी वर्ग हो नागार्जुन की जनवादी चेतना से बच नहीं पाया है। समाज मे फैली विषमताओं विद्रुपताओं अनाचारों के चक्की में पिसती हुई जनता से सहानुभूति रखने वाले नागार्जुन ने उनके दु:ख दर्दो को काव्य में यथार्थ चित्रित किया है। सामन्ती व्यवस्था के पतन के बाद भी समाज में सामंती विकृति दिखाई देती है। समाज को अनेक दारूण स्थितियों का सामना करना पड़ रहा है।

जातीय दम्भ, अस्पृश्यता, नारियों की गुलामी जैसी स्थिति नारियों के प्रति सामंती व्यवस्था जिसका शिकार हमारा समाज सदियों से भोगता आ रहा है। समाज में धर्म के नाम पर न जाने कितने आडम्बर फैलाएं जाते है जिसके चक्की में साधारण जनता पिसी जाती है। 'काली माई' कविता में नागार्जुन आधुनिक जीवन की विडम्वना को उद्घाटित करते है–

'कितना खुन पिया है, जाती नहीं खुमारी।
सुर्ख और लम्बी है मइया जीभ तुम्हार।
मुंडमाल के लिए गरीबों पर निगाह है।
धनपतियों के लिए दया की खुली राह है'।

इस तरह से जनवादी कवि नागार्जुन जनता के हित के लिए समग्र क्षेत्र संवेदनशील करता है। ये सभी क्षेत्रों में जनविरोधियों पर निर्भीक होकर अपनी बात कह देते है। इनके काव्य के द्वारा जिस पर चोट की गई, वह चोट से गहरे तिलमिला उठता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. 'अकाल और उसके बाद' कविता–नागार्जुन।
2. उद्भावना, अंक 5.1, 5.2 कुबेर दास–पृ0 25।
3. नागार्जुन–सत्यनारायण पृ0 115।
4. 'रामराज' कविता–नागार्जुन पृ0 133–34।
5. 'काली माई' कविता–नागार्जुन।
6. प्यासी पथराई आँखे : नागार्जुन, हिन्दी काव्य संग्रह–1962 ई0।
7. नागार्जुन संवाद : डॉ0 वियज बहादुर सिंह सापेक्ष अंक–34।
8. 'बातों–बातों में' : मनोहर श्याम जोशी–लेख।
9. 'कविता' अकाल और उसके बाद–नागार्जुन।
10. 'कविता' तुम रह जाते दस साल और पाण्डुलिपि–नागार्जुन।
11. उद्भावना, कुबेरदास अंक 5.1, 5.2।
12. नागार्जुन : सत्यनारायण पृ0 115।
13. 'रामराज्य' नागार्जुन कविता।

****

DSS Divya Shodh Samiksha (An International Refereed Research Journal) April to June 2016
ISSN 2394-3807, E-ISSN 2394-3513, Impact Factor - 1.7591 (2015)

किसानों की विश्वव्यापी समस्या और प्रेमचन्द का समाधान : कर्मभूमि का संदर्भ

डॉ. रंजना मिश्रा *

शोध सारांश – उपन्यास जीवन की व्याख्या करता है। लेखक का जीवन के प्रति अपना दृष्टिकोण होता है। समाज सुधार और राजनीतिक परिवर्तन को समझने की कोशिश प्रेमचंद का प्रमुख उद्देश्य था। मध्यवर्ग और निम्न वर्ग की भूमिका तथा उनके वास्तविक व्यवहार–मनोविज्ञान को उन्होंने अपने विवेक द्वारा जाँचा परखा। प्रेमचंद हृदय परिवर्तन को महत्व देते हैं। उनकी दृष्टि में व्यापारी का भी हृदय परिवर्तन हो सकता है और अफसर का भी। स्वाधीनता आन्दोलन के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक ढाँचे को जाँचते हुए प्रेमचंद अभीष्ट सामाजिक परिवर्तन का संकेत भी देते हैं। कर्मभूमि का रचनाकाल सन् 1929–32 का है। प्रेमचन्द की इस कृति में आधुनिक भारत की विभिन्न हलचलों की प्रतिध्वनि अपनी पूरी व्यापकता, गहराई और गरिमा के साथ सुनी जा सकती है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के आयामों का इन वर्षों में अभूतपूर्व विस्तार तथा विकास हुआ और उसने नई मंजिलें तय की। इस आन्दोलन की बागडोर मध्यवर्गीय और उच्चवर्गीय नेताओं के हाथ में होते हुए भी देश की कोटि–कोटि जनता ने एक नई आशा, नये उत्साह और विश्वास के साथ उसमें भाग लिया। प्रेमचन्द ने इस आन्दोलन को दूर खड़े होकर नहीं देखा था, स्वयं उसमें सक्रिय भाग लिया था। उन्होंने तत्कालीन युग में किसानों की विश्वव्यापी समस्या का यथार्थ चित्रण करते हुए उसका आदर्श समाधान भी प्रस्तुत किया।

प्रस्तावना – कर्मभूमि की रचना से कुछ ही समय पूर्व 1928 में बारदोली के किसानों का आन्दोलन सफलतापूर्वक सम्पन्न हो चुका था। 'कर्मभूमि' पर बारदोली के किसानों की इस विजय का भी अप्रत्यक्ष प्रभाव देखा जा सकता है। संयुक्त प्रान्त के किसानों के लगान–बन्दी आन्दोलन को ही प्रेमचन्द ने अपने आस–पास ही अपनी आँखों से देखा और अनुभव किया था। 'कर्मभूमि' में प्रेमचन्द ने प्रथम बार इतने व्यापक स्तर पर अछूतोद्धार की समस्या को उठाया है। इस उपन्यास में अछूतोद्धार आन्दोलन के दो केन्द्र हैं – शहर और गाँव। नगर में यद्यपि इस आन्दोलन का आरम्भ मन्दिर–प्रवेश के प्रश्न को लेकर होता है, पर शीघ्र ही वह शहर के म्यूनिसिपल बोर्ड के विरूद्ध एक व्यापक जन–आन्दोलन का रूप धारण कर लेता है।

कर्मभूमि के लगान–बन्दी आन्दोलन के मूल में सन् 1929–30 का यह विश्वव्यापी संकट था, जिसका सर्वाधिक दुष्प्रभाव किसानों पर पड़ा। किसानों को अधिकतर अपनी उपज से भी अधिक लगान देना पड़ता था, पर धन और धर्म के इस दोहरे शोषण के सम्मुख वे लाचार थे। भयंकर आर्थिक मन्दी के कारण किसान लगान, दस्तूरियाँ और कर्ज चुकाने में सर्वथा असमर्थ हो गया। किसानों ने अपनी कुल फसल का एक–एक दाना और एक–एक तिनका तक बेच डाला, किन्तु फिर भी चौथाई से अधिक लगान अदा नहीं कर सके। यह मन्दी केवल इसी इलाके में नहीं, बल्कि सारे प्रान्त, सारे देश और यहाँ तक कि सारे संसार में फैली हुई थी। प्रेमचंद ने समाज के प्राय: सभी वर्गो का प्रतिनिधित्व करने वाले ऐसे पात्रों की सृष्टि की, जो अपने वर्ग के गुणदोष, उसकी सबलता–निर्बलता और उसके जीवन–दर्शन को लेकर आये। उनके पात्रों में जमींदार, पूँजीपति, श्रमिक, कृषक, नगर के बुद्धिजीवी सुधारक, महाजन, साहूकार, पतित और समाजच्युत प्राणी, तेजवान् स्त्रियाँ और त्यागी पुरूष सभी आते हैं। अमरकान्त के चरित्र द्वारा लेखक को यह दिखाना अभीष्ट है कि बन्धन में आत्म–विकास नहीं होता और आत्म–शुद्धि के बिना त्याग कभी–कभी उत्तेजना की प्रतिक्रिया हुआ करता है। पति–पत्नी का जीवन सुखी तभी होगा, जब वे एक–दूसरे को समझने की चेष्टा करें, अन्यथा इसके विपरीत आचरण की प्रतिक्रिया अनिष्टकारी हो सकती है।

महाजनों और साहूकारों के क्रिया–कलाप भी समरकान्त के चरित्र द्वारा दिखाना उपन्यासकार का उद्देश्य है। शान्तिकुमार आधुनिक शिक्षित व्यक्ति है जो सामाजिक मान्यताओं में सुधार चाहता है। प्रेमचन्द ने अछूतों का मन्दिर प्रवेश, शिक्षा–प्रचार, आदर्श और यथार्थ पर अपने विचार रखे हैं। शान्तिकुमार आधुनिक बुद्धिवादी सुधारक हैं। सलीम के माध्यम से लेखक ने आधुनिक शिक्षा–प्रणाली की कमजोरियों को भी लक्षित किया है। मुन्नी के चरित्र द्वारा लेखक ने समाज की उस निष्ठुर मान्यता की ओर संकेत किया है, जिसमें अपनी इच्छा के विरूद्ध बल–प्रयोग से सम्मान भ्रष्ट स्त्री का समाज में मुँह दिखाना भी कलंक समझा जाता है। गूदड़ चौधरी ग्रामीणों के असंस्कृत और अशिक्षित वर्ग का प्रतिनिधि है। शिक्षा –संस्कार में वह पीछे है, किन्तु मानवता में आगे। गाँव के निवासियों की सरल और निष्कपट प्रकृति का गूदड़ प्रतिनिधि है।

प्रेमचन्द ने प्रमुख तीन प्रकार के पात्र चुने हैं –(1) शोषक (2) शोषित (3) सुधारक। शोषक वर्ग में प्रेमचन्द ने जमींदार, पूंजीपति, महाजन, पुलिस के अधिकारी है। शोषित वर्ग में किसान और मजदूर इत्यादि श्रमजीवी हैं। सुधारक वर्ग में नगर निवासी, जैसे – प्रोफेसर, सम्पादक आदि आते हैं। प्रेमचन्द को किसानों, श्रमिकों और दलितों के प्रति पूरी सहानुभूति है। पर उन्होंने चरित्र–चित्रण में पक्षपात नहीं किया है, जिस वर्ग के साथ उनकी सहानुभूति है उसकी दुर्बलताओं का भी उन्होंने उद्घाटन किया है। कृषक वर्ग से प्रेमचन्द की अपरिमित सहानुभूति थी, किन्तु उसकी कमजोरियों के चित्रांकन में वे नहीं हिचके। शोषित वर्ग में जागृति पैदा करने वाला वर्ग सुधारकों का है। ये सुधारक शिक्षित होते है और इनका उद्देश्य शोषित जनता को उसके अधिकारों के प्रति सजग करना और उन्हे दिलाने के लिए आन्दोलन

* हिन्दी विभाग, शासकीय कला वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)भारत

करना होता है। 'कर्मभूमि' के अमरकान्त और शान्तिकुमार मुख्य रूप से सुधार कार्य में योग देते हैं।

प्रेमचन्द का विचार है कि जिन कन्धों पर समाज का आधार है, उन्हें, समाज के अधिकार प्राप्त होने चाहिये। अछूतों की समस्या हमारे समाज की मुख्य समस्याओं में से है। मानवता की दृष्टि से भी दलित वर्ग का उद्धार आवश्यक है। अछूतों के मन्दिर प्रवेश का अधिकार-समर्थन करके प्रेमचन्द्र ने इस समस्या के हल की ओर संकेत किया है। समाज में समानाधिकार से इस समस्या का समाधान हो सकता है। 'कर्मभूमि' में प्रेमचन्द ने हमारे समाज की आर्थिक विषमता का सच्चा चित्र खींचा है। 'कर्मभूमि' का ग्राम चित्रण वहाँ की दुरावस्था और विपत्तिमय जीवन का भली-भांति बोध कराता है। देहातों की आर्थिक दशा देखकर अमर ने कहा था - मैंने कभी अनुमान न किया था कि हमारे कृषकों की दशा इतनी निराशाजनक है।' जमींदार के नित्य-नूतन अत्याचारों ने ग्राम-निवासियों की आर्थिक दशा को और भी खराब कर दिया है। 'कर्मभूमि' में प्रेमचन्द ने लिखा है - 'इस इलाका के जमींदार महन्त जी थे। कारकून और मुख्तार उन्हीं के चेले-चापड़ थे, इसलिए लगान बराबर वसूल होता जाता था। ठाकुरद्वारे में कोई न कोई उत्सव होता ही रहता था। कभी ठाकुर जी का जन्म है, कभी ब्याह है, कभी यज्ञोपवीत है, कभी झूला है, कभी जलबिहार है। आसामियों को इन अवसरों पर बेगार देनी पड़ती थी। जमींदार के अतिरिक्त अधिकारी वर्ग भी कृषकों की दुरावस्था वृद्धि में अपना प्रमुख हाथ रखता है। 'कर्मभूमि' में इस वर्ग के अत्याचारों का भी चित्रण हुआ है। इसकी दमन-नीति के फलस्वरूप गाँव के गाँव उजड़ जाते हैं।

विषम अर्थनीति के कारण समाज में भी साम्यभाव नहीं है। ऊंच-नीच, धनी-निर्धन का भेद है जो प्राणी श्रम करते हैं, उन्हें भोजन भी नसीब नहीं होता। इसके विपरीत लोगों के अन्ध-विश्वास से पूंजी संचय करने वाले जीवन का आनन्द और सुख भोग करते हैं। शिक्षा-संस्थाओं की कठोरता से प्रेमचन्द अत्यन्त क्षुब्ध हैं। वे 'कर्मभूमि' में लिखते हैं- 'हमारे शिक्षालयों में नरमी को घुसने नहीं दिया जाता। वहाँ स्थायी रूप से मार्शल लॉ का व्यवहार होता है। कचहरियों में पैसे का राज है, उससे कहीं कठोर, कहीं निर्गम। देर में आइए तो जुर्माना, न आइए तो जुर्माना, सबक न याद हो तो जुर्माना, किताबें न खरीद सके तो जुर्माना, कोई अपराध हो जाय तो जुर्माना। शिक्षालय क्या है जुर्मानालय, है यही हमारी पश्चिमी शिक्षा का आदर्श है, जिसकी तारीफों के पुल बाँधे जाते हैं।'

समाज में प्रचलित धर्म पाखण्डपूर्ण है। धर्म के तात्विक स्वरूप की अवहेलना की जाती है और उसका व्यावहारिक रूप पाखण्डियों को आश्रय देता है। भगवान के समक्ष सब समान है। वहाँ ऊँच-नीच, छूत-अछूत कोई नहीं पर समाज के सत्ताधारियों ने निर्धन और असमर्थ वर्ग से यह अधिकार छीन रखा है। प्रेमचन्द ने 'कर्मभूमि' में इस कपट धर्म और पाखण्ड का अच्छा चित्रण किया है।

'कर्मभूमि' में गाँधी युग की प्राय: सभी प्रवृत्तियों के दर्शन होते हैं। गाँधी-युग में जिन सुधारों की ओर विशेष आग्रह दिखाया जा रहा था, वह अल्पाधिक अनुपात में 'कर्मभूमि' में आये हैं। अन्त्यजों का मन्दिर-प्रवेश, मादक वस्तुओं का विरोध, शिक्षा प्रसार एवं गाँव में सुधार के निमित्ता शिक्षा इत्यादि का चित्रण प्रेमचन्द ने किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कर्मभूमि-प्रेमचन्द
2. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास- डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी
3. प्रेमचन्द-उनकी कृतियाँ और कला - प्रेमनारायण टंडन
4. साहित्य और समाज - राजेश शर्मा
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी

****

राजनैतिक परिदृश्य में विष्णु प्रभाकर

डॉ. अनीता चौबे *

प्रस्तावना – जिस समय उन का जन्म हुआ देश पराधीनता की जंजीरों में जकड़ा था। हर तरफ अन्याय, अत्याचार का बोलबाला था। हर तरफ हिंसा मारपीट दंगा फसाद सभी कुछ जैसे जीवन का अंग बना गया था। इन सबका प्रभाकर जी पर इतना प्रभाव पड़ा कि वह स्वयं स्वतंत्रता संग्राम में कूदना चाहते थे, लेकिन परिस्थितियों और दायित्वों की जंजीरों में जकड़े रहने के कारण मन छटपटाता रहा। वे उन दिनों देश–भक्ति की भावना से ओत–प्रोत रहते थे। उसी प्रेरणा से खद्दर पहनते थे। समाज सुधार की चर्चाओं में भाग लेते थे। स्वाधीनता आंदोलन के विषय में जानकारी लेते रहते थे। सन् 1926 में स्वामी श्रद्धानंदजी की शहादत ने उन्हें भीतर तक झकझोर दिया था। सन 1928 के साइमन कमीशन के लिए विरोध से उठे झंझावात से वे प्रभावित हुए। लाला लाजपतराय पर लाठी–प्रहार और उसी क्षण उनका निधन उन्हें विशेष उत्तेजित कर गया था। उनके मन में स्वाधीनता आन्दोलन में भाग लेने की इच्छा प्रबल हो उठी थी।

सरकारी कार्यालय में कार्य करते हुए भी देश में होने वाली राजनीतिक हलचलों में वे पर्याप्त रूचि लेते रहते थे। उनके कार्यभार ग्रहण करने के पहले ही 17 दिसम्बर 1928 में लाया लातपतराय की मृत्यु का बदला लेने के लिए सॉडर्स की हत्या कर दी गयी।

आठ अप्रैल 1929 को भगतसिंह केन्द्रीय असेम्बली में बम का धमाका भी कर चुके थे। उन्होंने उसके बाद आत्मसर्मपण भी कर दिया था। सरकार बहुत घबरा उठा थी और उसने मेरठ–षड़यत्रं केस के नाम पर देश के बत्तीस मजदूर नेताओं को जेल के बंद कर दिया था।

जेल में राजनीतिक कैदियों ने अपने प्रति सम्मानपूर्ण व्यवहार के लिए भूख हड़ताल भी कर दी थी। वरिष्ठ नेताओं के आग्रह पर भगतसिंह बटुकेश्वरदत्त, राजगुरू आदि ने तो भूख हड़ताल छोड़ दी थी–लेकिन यतीन्द्र नाथ दास डटे रहे। उन्होंने 66 दिनों की भूख हड़ताल के बाद अपने प्राणों को त्याग दिया। इन गतिविधियाँ का प्रभाव इनके मन पर पड़ा जिसका विश्लेषण उनकी कई रचनाओं में मिलता है। उस समय राजनीतिक घटनाक्रम बहुत तेजी से चल रहा था। दिसम्बर के अंत में लाहौर में रावी के तट पर नवयुवकों के हृदय–सम्राट पंडित जवाहर लाल नेहरू के सभापतित्व में राष्ट्रीय कांग्रेस की वह ऐतिहासिक अधिवेशन हुआ जिसमें अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार उसने स्वतंत्रता की घोषणा की। सारा परिवेश उत्साह में डूब गया हर तरफ बर इसी विषय की चर्चा होती। उस समय लोग समाचार पत्रों की बड़ी रूचि से पढ़ते किस वक्त घटना कौन सा मोड़ ले लें। ऐसा लगता कि कौन सी पत्रिका या कौन से समाचार पत्र में कौन सी खबर मिल जाये।

इसके बाद गाँधी जी का नमक सत्याग्रह हुआ था। उनके शहर में भी नमक बनाया जाता था। नमक बनाने वाले श्री जगन्नाथ व्यास लाठियाँ खाते रहे पर अपनी मुठ्ठी को खुलने नहीं दिया और जब पुलिस चली गयी तो मुठ्ठी खुली यह नमक प्रभाकर जी ने भी खाया। इन राजनीतिक परिस्थितियों ने प्रभाकर जी को बहुत बैचेन कर दिया। तभी उन्होंने निश्चय किया था कि अगर वे सीधे राजनीतिक आन्दोलन में भाग नहीं ले सकते तो परोक्ष रूप से जो कर सकते है, उसे करेंगे उसी समय उन्होंने चार प्रतिज्ञॉए की थी

1. खदद्र पहनूँगा
2. हिन्दू–मुस्लिम एकता के लिए प्रयत्न करूँगा
3. छुआछूत की लानत मिटाने के लिए यथा सम्भव प्रयत्न
4. हिन्दी के प्रचार–प्रसार के लिए प्रयत्न करूँगा।

इन बातों का एक परिणाम यह हुआ कि मै वे आर्य समाज के कामों के आगे बढ़कर भाग लेने लगे। इस माध्यम से कम से कम हिन्दी भाषा के प्रचार, अस्पृश्यता, निवारण और देशी वस्तुओं और वस्त्रों के उपयोग की बातें कहने का अवसर मिला। आर्य समाज में भी देश भक्ति की भावना निहित थी। और उसी समय भावाभिव्यक्ति के लिए नये मार्ग की तलाश की वह था रंगमंच जिसके द्वारा लोगों तक अपनी बातें पहुँचा सके जिसमें देशभक्ति की भावना निहित हो भले ही वह सामाजिक मान्यताओं से परे हो पर देश भक्ति भावना से भरपूर होते थे चाहें उनमें कला की दृष्टि से देखा जायेगा या नहीं पर अपनी भावनाओं के उद्गारों को प्रकट कर उन्हें मंचित करते रहते। इन सभी बातों ने उनके लेखक मन को और अधिक गति प्रदान की इन्हीं भावनाओं से निहित मन से कितनी ही रचनायें उभरी जो आज उत्कृष्ट साहित्यक कृतियों है। व्यक्ति जो भी भोगता है उसे अभिव्यक्त करने के लिए कोई न कोई मार्ग ढूढं ही लेता है जैसे प्रभाकर जी ने घटनाओं को साहित्यक स्वरूप दिया।

सन् 1938 में अनेक ऐसी घटनाएँ घटी जिन्होंने इन्हें झकझोर दिया, आतंकित किया और नहीं जीवन दृष्टि भी प्रदान की। गाँधीजी के प्रति आपके मन में अपार श्रृद्धा थी, लेकिन जब उन्होंने नवयुवकों के हृदय सम्राट श्री सुभाषचन्द्र बोस के कांग्रेस के अध्यक्ष पद के लिए निर्वाचित हो जाने पर डॉ.पट्टाभिसीतारमैया की हार को अपनी हार घोषित किया तो उनकी आस्था को बड़ी ठेस पहुँची फिर भी वे गाँधी जी के पक्षधर बने रहे।

सन्1939 को द्वितीय विश्व युद्ध का उनके व्यैक्तिक जीवन पर काफी असर पड़ा इस समय कुछ मानसिकताओं को ब्रह्मांड की भाँति विस्तृत कर देना पड़ा छोटी–छोटी बाते सोचने का काम बन्द कर दिया, भावनाओं को विस्तृत आयाम देने में जुट गये कुछ चलते कार्यों में व्यवधान आये लेकिन उन्होंने अपने आप को संतुलित बनायें रखा। सन् 1941 में महायुद्ध आरम्भ होने के बाद राजनीतिक गतिविधियाँ भी तेज हो गयी। गाँधी जी ने वायसराय को सलाह दी थी कि ब्रिटेन के लोगों को शस्त्र सन्यास ले लेना चाहिए। इस वक्तव्य को पढ़ कर प्रभाकर जी ने सोचा गाँधी जी को स्वाधीनता की अपेक्षा

* अतिथि विद्वान, अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

अपनी अहिंसा अधिक पंसद है।

1941 में सुभाष चन्द्र जी की प्रतिभा से अधिक श्रृद्धाविनीत हो गये क्योंकि इस समय उन्होंने जेल से निकलने के पश्चात विदेश जाने का निर्णय लिया था। 1943 में 09 अगस्त को गाँधी जी अपना 'भारत छोड़ो आन्दोलन' प्रारम्भ करना चाहते थे। पर इससे पूर्व ही कई वरिष्ठ नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया था। सम्पूर्ण देश में गाँधी तूफान जैसा आन्दोलन खड़ा हो गया।

सन्1943 अगस्त में सुभाषचन्द्र बोस ने आजाद हिन्द फौज का गठन किया। उसी वर्ष अक्टूबर में स्वतन्त्र भार की स्थाई सरकार की घोषणा की। और दिसम्बर 1973 में उन्होंने युद्ध की घोषणा कर दी। इस घटना का प्रभाकर जी पर इतना प्रभाव पड़ा कि वे सरकारी नौकरी छोड़ कर हिसार से दिल्ली आ बसे और आज भी वहीं है, जहाँ ये साहित्यिक सूर्य चमका वह जगह दिल्ली ही थी। आपने मई सन् 1929 से जून 1944 तक गवर्नमेंट कैटल फार्म में दफ्तरी, फिर क्लर्क के रूप में काम किया। लेकिन राजनीतिक गतिविधियों से जुड़े रहने के कारण पुलिस की निगरानी में रहना पड़ा। 06 जून 1940 को सौ पंजाब के छापे पड़े तलाशियाँ ली गई पर स्थानीय गुप्तचर विभाग द्वारा सम्पर्क कर दिये जाने के कारण कुछ भी आपत्तिजनक सामग्री पुलिस को नहीं मिलीं। पुलिस ने पंजाब छोड़ देने का मौखिक आदेश देकर तब तो छोड़ दिया लेकिन सन्1942 में हिन्दु विश्वविद्यालय बनारस में तोड़-फोड़ करने के संदेह में इनसे पूछताछ की गई तो वह निराधार साबित हुआ। जिन तारीखों में बनारस में होना पाया गया उन्हीं तारीखों में बी.ए. की परीक्षा दे रहे थे। अतं में जून 1944 में 15 वर्ष की नौकरी से त्यागपत्र देकर पंजाब छोड़ कर दिल्ली आ गये। तब तक ये लेखक के रूप में प्रसिद्ध हो चुके थे। स्थानीय कार्यकर्ताओं के साथ समाज-सुधार और हिन्दी प्रचार एवं प्रसार का कार्य किया। गुरूदारों और मस्जिदों में भाषण दिए। पारसी रंगमंच पर अभिनय भी किया। आर्य समाज की कार्यकारिणी के सक्रिय सदस्य भी रहे। कुछ बातों से क्षुब्ध होकर आर्यसमाज से त्यागपत्र दे दिया। सन 1942 के बाद किसी धार्मिक संगठन से नहीं जुड़े। इसी बीच हिन्दी साहित्य जगत के अनेक दिग्गजों सर्वश्री प्रेमचंद, चन्द्रगुप्त विद्धालंकार, जैनेन्द्रकुमार, सियारामशरण गुप्त, सच्चिदानंद हीरानन्द वात्सयायन ''अज्ञेय'', उपेन्द्रनाथ अश्क, गुलाबराय आदि से परिचय हुआ। सब कुछ छोड़ कर केवल साहित्य को अपना लिया और साहित्य ही अपना कर्म धर्म मानने लगे पीछे सब कुछ छोड़ आये लेकिन स्मृतियों ने कब किसको छोड़ा व्यक्ति स्वयं भी चाहे कि अतीत की सुखद-दुखद स्मृतियों को भुला दूं तो भी सम्भव नहीं है। क्योंकि कलाकार के भीतर कुछ तो अन्य से हटकर होता है, जो उन्हें कलाकार की श्रेणी में लाकर खड़ा कर देता है। फिर चाहे अभिव्यक्ति कैसे भी हो अपने क्षणों के प्रतिफल की स्मृतियों का ढेर जो अपने अन्दर समेटे है उसे किसी भी रूप में व्यक्त कर यह कलाकार की कला पर निर्भर है।

प्रभाकर जी और उनकी लेखनी दोनों ने मिलकर साहित्यक क्षेत्र को सजाकर रख दिया अपनी अभिव्यक्ति की अभिव्यंजना अलग प्रकार से की और साहित्य क्षेत्र में अग्रणी रहे और आज भी हैं और रहेंगे भी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. विश्वनाथ मिश्र - डॉ.कृष्णचंद्र गुप्त
2. संचेतना - महीप सिंह

****

छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य का संक्षिप्त परिचय

डॉ.सविता वर्मा *

प्रस्तावना – छत्तीसगढ़ अंचल अपने जिन खुबियों के लिए सुविख्यात है उनमें से एक यहाँ की इन्द्रधनुषी और नयनाभिराम लोककलायें और संस्कृति भी है।

हमारे देश के किसी भी प्रदेश के किसी भी अंचल की लोककथा, लोकगीत, लोकनृत्य, लोकनाट्य और लोक गाथाओं में भावात्मक एकता और समानता परिलक्षित होती है। हमारे यहाँ गीत हर मौके के लिए है। संगीत हमारे जीवन का अभिन्न अंग है। इसके बिना हमारा जीवन अधूरा है। हमारे ये लोकगीत ऐसे ही नहीं हैं बल्कि इसमें साहित्य ज्ञान और दर्शन के अथाह भण्डार है।

किसी भी क्षेत्र की लोकभाषा लोक साहित्य,लोककला और सांस्कृतिक परंपराएँ ही उस क्षेत्र का प्रथम परिचय होता है। हमारी भी अपनी लोकभाषा, लोककला, सांस्कृतिक परंपराएँ और गौरवपूर्ण इतिहास है जो हमें अन्य क्षेत्रों से अलग करती है। छत्तीसगढ़ के कण–कण में लोक साहित्य, लोककला और संस्कृति की अप्रतिम गंध है, जिनमें स्थानीय लोकजीवन की झांकी मिलती है, चाहे वह लोकगीत हो, लोककथा या लोकगाथा।

छत्तीसगढ़ी लोकसाहित्य अत्यंत विस्तृत होने के कारण इसका वर्गीकरण लोकगीत,लोकगाथा, लोककथा, लोकनृत्य और लोकसुभाषित के रूप में किया गया है। छत्तीसगढ़ भौगोलिक दृष्टि से जितना विशाल है, उससे भी विशाल यहाँ का लोकमानस है, जिसने अपनी संस्कृतियों को संरक्षित रखा है। यहाँ के लोकगीतों लोकनृत्यों और लोकगाथाओं की अलग पहचान है।

लोकगीत –साहित्य की अत्यंत सुक्ष्म,कमनीय एवं प्राण्वंत विधा है गीत। गीत–संगीत मानव जीवन का आधार है, इसके अभाव में जीवन अधूरा है। गीत संगीत एक तरह से मानव जीवन के सुख–दु:ख, हर्ष–विषाद, खुशी गम की अभिव्यक्ति का माध्यम है जो जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित करती है। मनुष्य ही नहीं अपितु पेड़–पौधे,पशु–पक्षी तक गीत संगीत से प्रभावित हुए बिना नहीं रहते। इस बात को विज्ञान ने भी सिद्ध कर दिया है।

गीत का जन्म किसी अज्ञात कवि के मुख से लोकजीवन में हुआ। यही कारण है कि लोकगीत लोकजीवन का श्रृंगार ही नहीं उसकी आत्मा भी है। लोकगीतों में वस्तुत: कवि की नहीं वरन समाज की वाणी मुखरित होती है। ये लोकगीत हमारे खेतिहर मजदूर किसान के समाज की जीवन पद्धति और संस्कृति के दर्पण है। सदियों से प्रचलित लोकगीत,वाचिक परंपरा का ऐसा प्रवाह है जिसमें उसके अंतर्मन की व्यथा कथा छलकती है। लोकजीवन के सुख–दु:ख,उल्लास, हर्ष,विषाद और संघर्ष को अभिव्यक्त करते हुए लोकगीत कोटि–कोटि हृदय का प्रतिनिधित्व करते हैं।

मानव अपने उत्थान – पतनकी कथा को गीत के रूप में गाते हुए अपने उल्लास और आक्रोश के साथ–साथ मन में दबी भावनाओं को सबके सामने अभिव्यक्त है। मन का भार हल्का करने के लिए उसने दु:ख में लंबी तान छेड़ी और सुख में हुलसकर गाया है, जिससे मन में संतोष पाया है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने भी लिखा है, मनुष्य लोकबद्ध प्राणी है। उसकी अपनी सत्ता का ज्ञान लोकबद्ध है। लोक के भीतर ही कविता क्या किसी कला का प्रयोजन और विकास होता है। सच तो यह है कि गीत जो कानों को मीठा लगे, हृदय को गुदगुदाये, कण–कण में रस बनकर मुस्कुराये, विशेष अंचल में वहाँ की बोली में जब गया जाय और जन–जन के कण्ठहार बने तो वह गीत लोकगीत कहलाता है। लोकगीत खदान से निकले हुए हीरे की तरह होते हैं। यह सर्वदा सत्य है कि किसी भी देश के अंचल की सभ्यता और संस्कृति की झलक वहाँ के लोकगीतों में मिलती है। असंख्य नारियों के हृदय की श्रृंगार रस में लिपटकर सुरीले कण्ठों में गूंजता है। सुआ,भोजली, ददरिया आदि गीतों में उनके प्राणों की वेदना दुखान्त में फूटती है। इन गीतों में भावना का वेग इतना अधिक रहता है कि हृदय द्रविभूत हो उठता है।

छत्तीसगढ़ी लोकगीतों के अन्तर्गत जन्म के गीत, विवाह के गीत,सुआ,भोजली और ददरिया,जंवारा, बांसगीतआदि अनेक प्रकार के गीत आते है। उक्त गीतों में स्त्रियों तथा पुरूषों दोनोंके गीत सम्मिलित है। लक्ष्मीनारायण सोनवानी कृत ददरिया की एक बानगी देखिए–

लड़का–कोइली कस तोर चहकत बोली,मारे करेजा ला बान.....हाय राम
लड़की–अखफुट्टा हे रे तोर आँखी मोरो कहना ल मान
येती झन आ रे गारी खाबे.....
लड़का–घर के दूआरी ले कुंवा तक, पाछू–पाछू मैं जाथंव उहां तक.....2
उठान–देखतस तैं मोल गुरेर के गोरी डर लागे भारी ये नयना तोर.....

त्यौहार गीत, माता सेवा जैसे देवी जसगीत के रूप में छत्तीसगढ़ की समूची सामाजिकता ही गीतात्मक हो उठी है। विवाह जैसे पुनीत संस्कार का तो कहना ही क्या, जिसमें बिना गीतों के कोई नेक नहीं हो पाता। तेलमाटी,चुलमाटी से लेकर बिदाई के बेला तक गीतों की बरसात होती रहती है। इसमें हंसी ठिठोली से लेकर आँखे नम हुए बिना नहीं रह पाती।

ठसी लोकगीतों के माध्यम से लोग अपनी भावनात्मक एवं रसात्मक अनुभूति को अधिक आसानी से अभिव्यक्त कर सकते हैं। लोकगीत सुनते और गाते हुए जब मनुष्य कठिन परिश्रम भी करते हैं तो लोग गीतों में तन्मय हो जाने के कारण उसे थकान का अनुभव ही नहीं होता है। इस गीतों में व्यक्ति इतने भाव विभोर हो जाते हैं कि वे अपने सारे दु:ख–दर्द को भूलकर गीतों की स्वर माधुरी से पुलकायमान हो उठते हैं।

* सहायक प्राध्यापक, मैट्स विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत

लोककथा –लोककथाएँ कब,कहां और कैसे उपजी कहना कठिन है। इसका कोई एक रचयिता भी नहीं है। इसीलिए तो ये लोक की है किसी एक की नहीं, और यही इनकी सबसे बड़ी सुंदरता और सबसे बड़ी शक्ति है क्योंकि ये एक की न होकर सबकी है। सदियों सदियों से चले आ रहे लोगों की।

लोकसाहित्य के विविध प्रकारों में से एक लोककथा भी है जिसका बड़ा महत्व है। ये कथाएँ अधिकांश कौतुहल वर्द्धक,नीतिपरक एवं रोचक हुआ करती है। इसकी शैली अपनापन लिये हुए होती है। कुछ लोककथाएँ छोटी होती है और कुछ लंबी होती है। लंबी होने के बाद भी ये कथाएँ इतने रसात्मक होते हैं कि श्रोताओं को नियमित रूप से बांधे रखने में सक्षम होती हैं। छत्तीसगढ़ी लोककथाओं में ढोला–मारू और चंदैनी अत्यंत प्रसिद्ध है। बांसगीत, देवारगीत में कोई न कोई कथा पर आश्रित होते हैं,जिसमें पारिवारिक, सामाजिक अथवा जातिमूलक समस्या का जीवन्त चित्रण होता है जिसमें मनोरंचनार्थ कुछ कल्पनाओं का भी समावेश किया जाता है।

लोककथाएँ लोकमानस की सहज अभिव्यक्ति है। अपनी सरसता और लोकप्रियता के कारण ही लोकसाहित्य में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। लोककथा सुनने की शुरूआत तो बालपन से ही हो जाती है। बच्चे अपने दादी–नानियों एवं माताओं से सुंदर कहानियाँ,सुनते–सुनते ही तो सोते हैं, बिना इसके इन्हें नींद कहां आती है। ये कथायें न केवल हिन्दी में बल्कि विभिन्न अंचलों में विभिन्न बोलियों में प्रचलित है।

इनमें कुछ कथाएँ उपदेशात्मक होती है,कुछ धार्मिक कथाएँ (व्रत कथाएँ)तों कुछ प्रेम–प्रधान,कुछ मनोरंजक,कुछ सामाजिक और कुछ पौराणिक कथाएँ होती है।

छत्तीसगढ़ी लोककथाओं की सीमा महासागर सी विस्तृत है हमारे छत्तीसगढ़ की लोककथाओं में तो छत्तीसगढ़ की संस्कृति स्पष्ट रूप से झलकती है ,जिसमें समकालीन घटनाओं के साथ ही भूत–प्रेत,जादू,टोना राजा–रानी, एवं देवी देवताओं के प्रति आस्था की झलक भी मिलती है। पशु–पक्षियों की कथाओं में बाल मनोवृत्तियों,जिज्ञासाओं की तुष्टी की चेष्टा के सहज ही दर्शन होते है।

लोकनृत्य –कहना ना होगा कि नृत्य, गीत और संगीत के बिना अधूरा है अर्थात् गीत,संगीत के अभाव में नुत्य नहीं किया जा सकता। जैसे ही हमारे कानों में संगीत की सुमधूर ध्वनि सुनाई देती है तो हमारे हाथ–पैर अपने आप थिरकना प्रारंभ कर देता है। और छत्तीसगढ़ी लोक संगीत तो तन ही नहीं अपितु मन की गहराई को छू जाती है।

लोकनृत्य में नृत्य तो है ही साथ ही इसमें गीत और संगीत भी होती है। अर्थात् इसमें गीत,नृत्य और संगीत की त्रिवेणी प्रवाहित होती है गीत के साथ संगीत का योजन हो तो आनंद दुगुना हो जाता है और यदि इसके साथ नृत्य और जोड़ दिया जाय तो आनंद की सीमा नहीं रहती।

लोकनृत्यों के अन्तर्गत पंथी नृत्य, राउत नाचा, सुआ नृत्य,करमा ददरिया आदि को शामिल कर सकते है।

करमा नृत्य की एक बानगी प्रस्तुत है–
मांदर बजादे झमके मंदरिया,
तकधिन ताताथई नचादे..........2
मांदर बजाहूं झूमके जवंरिहा
तकधिन ताताथई नचाहूं.........2
कइसे नचावंव गोई लागे ठेस मन मा या......2
अइसे नचाते जइसे नाचे मयूर बन मा या......2
टूटे झन ताल तैं सजादे न, ये मंदरिया.......

लोकनाट्य –लोकसाहित्य के अंतर्गत आने वाले विधाओं में एक और महत्वपूर्ण विधा है लोकनाट्य। लोकनाट्य अभिनय,कला,नृत्य ,गीत का मिश्रित रूप है। महाकवि कालिदास ने ठीक ही कहा है कि 'नाट्य जन–जन के अनुरंजन का सर्वोत्कृष्ट साधन है।' भरतमुनि ने तो अपने नाट्य शास्त्र में इस विषय का विशद वर्णन भी किया है। इसके अतिरिक्त धनंजयकृत 'दशरूपक' तथ विरतनाथ कविराज लिखित साहित्य दर्पण में इसके संबंध में बहुमूल्य सामग्री उपलब्ध होती है।

लोकनाट्य की प्रस्तुति भी इतनी सरल तथा सीधी सादी भाषा में की जाती है कि इसे पढ़े–लिखे ही नहीं बल्किकोई भी अनपढ़ व्यक्ति भी बड़ी आसानी से समझ सकता है। इन नाटकों का अभिनय जिस क्षेत्र या अंचलमें होता है उसकी प्रस्तुति प्राय: वहां की क्षेत्रीय या आंचलिक बोली में की जाती है।

पात्र की दृष्टि से देखा जाए तो इसमें पहले तो प्राय: पुरूष ही विभिन्न पात्रों अर्थात् स्त्री पात्रों का काम भी करते थे और ये पात्र अपने वेशभूषा की अपेक्षा अपने अभिनय द्वारा ही लोगों को आकृष्ट करने की चेष्टा करते थे। अब इसमें कहीं–कहीं कुछ स्त्री पात्र भी शामिल होने लगे हैं।

लोकनाट्य का अभिनय खुले हुए रंगमंच पर हुआ करते हैं। जनता मैदान में खुले आकाश के नीचे बैठकर देर रात तक नाटक का आनंद लेते हैं। छत्तीसगढ़ में कई लोकनाट्य जैसे–चंदैनी गोंदा, देवार डेरा,सोनहा बिहार,कारी आदि बहुत विख्यात हुए हैं। नाटकों के माध्यम से जीवन की यथार्थ और विसंगत स्थितियों का प्रदर्शन कर उन पर व्यंग्य प्रहार किया जाता है। इसका वास्तविक उद्देश्य सामाजिक विसंगतियों की आलोचना करना होता है। लोक संस्कृति की धरोहर है यह विधा। साथ ही सामाजिक जागरण का एक सशक्त माध्यम भी।

लोकजीवन में लोकनाटकों की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका होती है। ये ग्रामीणजनों के लिए काफी उपयोगी और महत्वपूर्ण सिद्ध होती है। ग्रामीण खेतिहर मजदूर किसान जब दिनभर अपने खेतों में कड़ी मेहनत कर थकान महसूस करते हैं तों यही लोकगीत,संगीत,लोककथा, लोकनाट्य एवं नोकनृत्य ही उसमें ऊर्जा का पुन: संचार करती है।

छत्तीसगढ़ अपने जन जातीय लोक संस्कृति, प्राकृतिक सम्पदाओं और सौंदर्य के लिए पहचाना जाता है। विकास और आधुनिकता के बावजूद भी यहाँ की कला और संस्कृति ने अपनी मिट्टी के खुशबू को नहीं छोड़ा है। इसे संभालकर, संजोकर रखने का दायित्व युवाओं और आने वाले पीढ़ी पर है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. छ.ग. की सांस्कृतिक मंजूषा– जमूना प्रसाद कसार।
2. तीन सौ वर्ष पूर्व के छ: राजस्थानी लोकगीत–अगरचंद नाहटा।
3. निमाड़ी लोकसाहित्य–रामनारायण उपाध्याय।
4. छत्तीसगढ़ी लोकगीतों के भूमिका–डॉ.नारायणलाल परमार।
5. लोककलाओं का भविष्य–श्यामाचरण दुबे।
6. छत्तीसगढ़ी लोकसाहित्य और नवजागरण–डॉ.सत्यभामा आडिल।

****

राजनैतिक क्षितिज पर विष्णु प्रभाकर

डॉ. अनीता चौबे *

प्रस्तावना – सन 1944 अप्रैल माह में जब वे दिल्ली आये तो देश के राजनीतिक क्षितिज पर बड़ी तेजी से परिवर्तन हो रहे थे। इस समय अनेक दिग्गज नेता कारागार में थे, किन्तु मुक्ति की लालसा में व्यक्ति उत्साहित थे सभी को स्वतंत्र होने की आशा थी, इससे और भी उल्लास भरा था तन मन में जन मानस के सभी पल-पल गिनते रहते जैसे मुक्ति संग्राम का अन्तिम समय आ गया है युद्ध समाप्ति की घोषणा के साथ ही मानों सब कुछ मिलने वाला हो।

21 मई 1944 को सुभाष चन्द्र बोस की 'आजाद हिन्द फौज' ने आगे बढ़कर मणिपुर की राजधानी इम्फाल पर घेरा डाल दिया था। सुभाष चन्द्र बोस का आव्हान था – 'दिल्ली चलो' और तिरंगे झण्डे के साथ उन्होंने देश के सभी धर्मों के लोग हिन्दु-मुस्लिम, सिख, ईसाई ने अपनी सेना बना ली। इस समय कोई जाति भेद न था। किसी का कोई धर्म न था सबका धर्म था केवल मानवता और कर्म था स्वतंत्रता प्राप्ति इन सबकी मिली जुली सेना का केवल एक ही नारा था। 'जयहिन्द' बहुत जोरों यह अभियान चला भले ही इस अभियान को सफलता नहीं मिली, लेकिन सोये हुये लोगों में जैसे चेतना जाग उठी, स्वतन्त्रता की राज में एक नई आस का दीपक जला दिया और सैनानियों में आत्मबल आ गया और इसी की प्रेरणा थी कि कुछ समय बाद नौसैनिक विद्रोह हुआ तथा जबलपुर, देहरादून आदि में थल सेना की टुकड़ियों ने भी बगावत कर दी।

सुभाषचन्द्र जी की 'आजाद हिन्द फौज'के कारनामों ने देश की जनता में शक्ति संचरित कर दी, जोश भर दिया संग्राम के सैनिकों में उत्साह भर कर जहाँ एक ओर ये सब चल रहा था। वहीं दूसरी ओर प्रभारक जी के विद्रोही मन ने जैसे इन घटनाओं को मानस पटल पर लिख लिया और उन्हें हृदयांगम कर एक-एक घटनाओं को अंतर में घटते देखते और उनके सैनिक हाथों ने कलम की तलवार से सबको प्रदर्शित कर दिया और उन्होंने इस सन्दर्भ में 10-15 कहानियाँ लिखी। कैसे बोस जी के सैनिकों ने बिना अपनी जान की परवाह किये हुये इस देश की स्वतंत्रता के लिए अपना सब कुछ बलिदान कर दिया। हिन्दु मुस्लिम, सिख-ईसाई, सभी जैसे एक ही परिवार के सदस्य हों। आपसी भेद-भाव भूल कर सभी का लक्ष्य केवल एक ही था केवल स्वतंत्रता और स्वतंत्रता। इन सभी को देखकर प्रभाकर जी ने जितनी भी कहॉनियाँ लिखी सब इन्हीं कारनामों से ओतप्रोत रही और सभी का धर्म स्वतंत्रता संग्राम को विशेष महत्व देता भले ही इस सैनानी ने संग्रामी तलवार नहीं थामी तो क्या अपनी कलम से उस संग्राम के भागीदार तो बने और स्वतंत्रता संग्राम सैनानी कहलाये।

जहाँ घर परिवार की छोटी-छोटी घटनाओं ने प्रभावित घर मुरव्वी, निशिकान्त जैसे कितनी ही रचनाओं को उद्धारित किया तो फिर इन घटनाओं से वे कैसे अछूते रह सकते थे। जब उनकी दृष्टि में पहले देश, फिर समाज और घर तीनों का अलग-अलग स्थान था। फिर देश भी उनका अपना वो भी परतंत्र। जहाँ ऊँच-नीच भेद-भाव से लेकर प्राणी पर होते अत्याचारों को देखा और कवि हृदय विचलित हो उठा कुछ कर गुजरते को। जैसा देखा, भोगा, और सहा सभी को मानों अपने इस मस्तक में समेटे हृदय में छुपाते गये और एक-एक घटनाओं को जैसे निकाल-निकाल कर कागज पर रखते गये। वे अपने दिनों की बुरी स्मृतियों को भी संजोकर रखना चाहते हैं। किसी से बाँटना भी नहीं चाहते। भला स्मृतियाँ कब बुरी होती हैं बुरा तो होता है समय जिनमें वे घटती हैं स्मृतियाँ ही रहती हैं जब वे घटती हैं तो घटनायें हैं और कुछ समय बाद जब शांत मन उन घटनाओं की और लौटता है, तो वे अतीत की स्मृतियाँ बन जाती हैं। सभी पर समय का प्रतिकूल प्रभाव पड़ता। वे तो अपनी उन स्मृतियों को भी आदरणीय मानते हैं जो उन्हें कुछ करने कील छटपटाहट में बाँधे रहीं। उन्हें उनसे कोई द्वेष नहीं वे मानते हैं, आज जो भी है, अपने मंतव्य पर स्थापित हैं। भले ही मन कुछ भी सोचना रहा हों। और सोचने पर किसका प्रतिबंध हैं। हो सकता है जो बनना चाहते थे आज यदि वह बन गये होते तो क्या आज हम उनको पहचान पाते ये बात और है कि व्यक्ति जिस क्षेत्र का होता है। उसी क्षेत्र की तथा उसमें रहने वाले व्यक्ति की अधिक पहचान होती है। सबका अपना अलग-अलग क्षेत्र, अलग-अलग पहचान और अलग-अलग मान्यता है।

उन दिनों देश की पूर्वोत्तर सीमा पर ही नहीं, विभिन्न प्रदेशों में भी हलचल थी। एक ओर 'आजाद हिन्द फौज' अपना कार्य कर रही थी और बर्मा में आजादी की तैयारी कर रही थी, तभी अंग्रेजों ने गाँधीजी को बिना शर्त रिहा कर दिया था।

वे वस्तुत: देश की स्वाधीनता के लिए प्रयत्नशील, अहिंसा के पथ पर चलने वाले और हिंसा का मार्ग अपनाने वालों के बीच संघर्ष उत्पन्न करना चाहते थे। अंग्रेजों ने 'फूट डालो और राज्य करो' की नीति को अपनाया और सोचा कि जब आपस में ही लड़ मरेंगे तो हमारी और इनका ध्यान नहीं रहेगा। लेकिन वे अपनी इस नीति में असफल ही रहे। उसी समय गाँधी जी जेल से रिहा होने के पश्चात मोहम्मद अली जिन्ना से मिलकर हिन्दु मुस्लिम एकता के सन्दर्भ में बात करना चाहते थे। गाँधी जी चाहते थे। कि हिन्दु-मुस्लिम सभी एक होकर आंदोलन में भाग लें, आपसी भेदभाव को मिटा कर देश में एक जुट होकर अपनी ताकत से देश को आजादी दिलाये।

जिस समय देश में सब कुछ घट रहा था कैसे लोग एक दूसरे के खून के प्यासे हो उठे बिना विश्वास के मरते-मारते रहे। अंग्रेजों और गाँधी जी के बीच का समय तथा गाँधीजी और जिन्ना के वार्तालाप का परिणाम अंग्रेजों की 'फूट डालो राज करो नीति' जहाँ ये सब हो रहा था वहीं विष्णु प्रभाकर

* अतिथि विद्वान, अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय , भोपाल (म.प्र.) भारत

का हृदय इन्हें देख रहा था, झेल रहा था, और भोग रहा था।

अपनी इस छटपटाहट को साहित्यिक रूप दे डाला और इन्ही घटनाओं में डूबती तैरती छवियों को लेकर उसी समय कई कहानियाँ लिखी जिनमें प्रमुख हैं 'विशाल भारत', 'विश्वमित्र', 'विश्ववाणी', 'हंस', 'अभ्युदय', आदि।

इतना ही नहीं जहाँ एक और राजनीतिक घटनाक्रम को लेकर प्रभाकर जी ने कहानियाँ लिखी वही सामाजिक घटनाक्रमों को देखकर भी उनका मन शांत न रहता प्रकृति हो या देश व्यापी कोई भी घटना ऐसा लगता कि अपने 'विष्णु' स्वरूप को सर्वत्र व्याप्त कर हर घटना को देखते रहते भले ही वह दिल्ली में घटे पंजाब में बर्मा में या फिर बंगाल में, सन् 1942 के बंगाल के अकाल के संदर्भ में बड़ी ही मार्मिक 'धरोहर' लिखी। इसका आकाशवाणी से प्रसारण किया गया तो उस कहानी के कथाक्रम से क्या अभिनेता, क्या श्रोता इतने भावुक हो गये और रो पड़े मानों स्वयं अकाल की विभीषिका से जूझता निरीह बालक है।

सन् 1945 की 07 मई की दूसरा विश्व युद्ध सहसा समाप्त हो गया और उसके बाद घटनाचक्र तेजी से घूमने लगा। इंग्लैंण्ड में नये चुनाव हुए और मजदूर दल की सरकार बनी। 15 अगस्त को सम्राट ने संसद में घोषणा की कि भारत में शीघ्र ही स्वशासन की स्थापना की जायेगी। 19 सितम्बर को एक मिशन इसी संदर्भ में बातचीत करने के लिए आया। 21 सितम्बर को कांग्रेस के नेताओं ने उसका प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया। तभी अंग्रेज सरकार ने आजाद हिंद सेना को लेकर मुकदमा आरम्भ कर दिया। यद्धपि जजों ने सैनिक अधिकारियों को फाँसी दी थी, लेकिन देश में बदले हुये जन आक्रोश को देखते हुए उन अधिकारियों को छोड़ दिया गया।

आपसे कोई विषय अछूता कैसे रह सकता है। उन्होंने 1950 में आकाशवाणी के लिए रूपक लिखे उनमें से एक रूपक में इस मुकदमें की कार्यवाही को भी दर्शाया था। सन् 1945 के बाद दो-तीन वर्षों तक राजनीतिक घटनाक्रम बड़ी तेजी से चलता रहा। अंग्रेज शासकों से अनेक बार बातचीत हुई थी और तब केन्द्र में राष्ट्रपति सरकार बनी। पं.जवाहरलाल नेहरू ने प्रधानमंत्री का पद ग्रहण किया।

एक ओर वे विभाजन के कारण उत्पन्न विषम परिस्थितियों से जूझ रहे थे, दूसरी और सांस्कृतिक जागरण के लिए प्रयत्नशील थे। उन्हीं की प्रेरणा से मार्च 1947 में दिल्ली में एशिया के अनेक देशों के सांस्कृतिक प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन हुआ था। इसमें उन्होंने सम्मिलित सभी प्रतिनिधियों को आकर्षित किया 15 अगस्त 1947 को देश आजाद हुआ था। संयोग से उस दिन पाण्डिचेरी में थे। उस दिन ही अरविंद के दर्शन किये और आर्शीवाद लिया। यह दिन प्रभाकर जी के लिए दोनों प्रकार से महत्वपूर्ण था। उनकी रचनाएँ केवल अपनी कला प्रदर्शन के लिए नहीं होती थी। उनकी अभिव्यक्ति वे स्वयं करते हैं।

विष्णु जी ने स्वंय कहा है 'देश में होनेवाले नाना रूपयुक्त आंदोलनों का योगदान मेरे नये जीवन को दिशा देने में कम नहीं रहा। 1945 से 15 अगस्त 1947 को देश के स्वतंत्र होने तक के सभी संघर्षो के सभी संघर्षो के और उसके बाद चलने वाले साम्प्रदायिक रक्तपात में जहाँ एक और चेतना को बूरी तरह झकझोरा वही मात्र मिसजीवी होकर जीवने में रथ की चुनौती को स्वीकार करके शक्ति भी दी व मेरे लेखन को नये आयाम दिये।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. विश्वनाथ मिश्र - डॉ.कृष्णचंद्र गुप्त
2. संचेतना - महीप सिंह

****

भारतीय कला के प्रतिबिम्ब – बंगाल शैली और बंगाली चित्रकार (मानवाकृति अंकन के परिपेक्ष्य में)

डॉ. यतीन्द्र महोबे *

प्रस्तावना – उन्नीसवीं सदी के अंतिम चरण में भारत के अधिकांश चित्रकार जब विदेशी शैली को अपनी कलाकृति में आत्मसात करते जा रहे थे। तब ऐसे समय में भारतीय संस्कृति एवं परम्परा को कला क्षेत्र में जिंदा रखने के लिए कलकत्ता स्कूल ऑफ आर्टस के प्रधानाचार्य के पद पर कार्य करते हुए अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ने भारतीय कला को विदेशी दास्ता से मुक्त कराने का भागीरथ प्रयास किया, और एक नवीनतम शैली को जन्म दिया, जिसे बंगाल शैली या पुर्नेरूत्थान शैली के नाम से पहचाना गया।

अवनीन्द्र नाथ ठाकुर ने अपने शिष्य तथा परिचय क्षेत्र के सभी कलाकार जो विदेशी शैली के पीछे भाग रहे थे, उनसे आग्रह किया कि वे हमारी परम्परागत भारतीय चित्र पद्धतियाँ जैसे अजंता, पहाड़ी, राजपूत आदि कला शैलियों तथा सिद्धांतों का अध्ययन करें, उनमें चित्रित मानवाकृतियों को ध्यानपूर्वक देखें, उन्हें समझे, उनमें व्याप्त भावनात्मक पक्ष एवं सौंदर्यात्मक पक्ष का अध्ययन कर अपने चित्रों में रचनात्मक शैली का प्रयोग करते हुए मानवाकृतियों को नया रूप प्रदान करें, जिससे वे कला क्षेत्र में पहचाने जा सके और साथ ही साथ भारतीयता की झलक भी उन मानवाकृतियों में दिखाई दे।

विदेशी कला के पीछे पागल चित्रकारों को अपनी कला, संस्कृति एवं परम्परा का पुन:बोध कराने का श्रेय अंग्रेजी कला समीक्षक ई.वी. हैवल को भी जाता है। इन्होंने अंग्रेज होने के बावजूद प्राचीन भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का कलात्मक अवलोकन किया। परिणामस्वरूप ई.वी.हैवल को अजंता, एलोरा, मुगल, राजस्थानी, पहाड़ी आदि भारतीय शैली में बनने वाली मानवाकृतियाँ उनका सरलीकरण, भाव अभिव्यंजना तथा सौंदर्यात्मकता जो भारतीय कला को जीवंत रूप प्रदान करती है अत्याधिक पसंद आई और वह प्राचीन भारतीय मानव आकृतियों के कायल हो गये। ई.वी. हैवल ने अवनीन्द्र बाबू के साथ इन विषयों पर गंभीरता से चर्चा कर भावी कलाकारों को यह संदेश पहुँचवाया कि वे विदेशी मानवाकृतियों का अंधानुकरण करना छोड़ अपनी संस्कृति एवं प्राचीन कला का अध्ययन करे एवं उनके सौंदर्यात्मक, भावनात्मक एवं सहजात्मकता को ग्रहण कर अपनी कलाकृतियों में ऐसी मानवाकृतियों को अंकित करें जिसमें भारतीय कला आईने जैसी प्रतिबिम्बित हो।

- स्वयं **अवनीन्द्र नाथ टैगोर** (1871 ई.) ने अपनी कलाकृतियों में भारतीय कला परम्परा को जीवित रखते हुए मानवाकृतियों की रचना की। अवनीन्द्र बाबू ने अनेक कला शैलियों में चित्रो की रचना की। उनके बहुत से चित्रों में जो मानवाकृतियाँ अंकित की गई हैं, उनमें मुगल एवं राजस्थानी शैली का प्रभाव दिखाई देता है। 'अवनीन्द्र बाबू द्वारा बनाई गई मानवाकृतियों में सदैव कल्पनाशीलता का मिश्रण रहा है। सौंदर्य तथा सत्य सादृश्य उनकी मानवाकृतियों में कभी लुप्त नहीं हुआ। ये यथार्थ से कभी भी बहुत दूर नहीं गये सूक्ष्म से सूक्ष्म (डिटेल्स) आकृतियों को चित्रित करने में इनकी कलम कमाल दिखाई थी। उनकी मानव आकृतियों की रेखायें स्वाभाविक घुमाव तथा रंगों में गति एवं ताजगी प्रदर्शित करती थी। वे दर्शक की आंखों को भाने वाले सुहाने तथा धुसर रंग तथा छाया–प्रकाश के माध्यम से आकृतियों को उभारते थे।'[1] इनका बनाया हुआ रेखाचित्र 'रवीन्द्र नाथ डोलती कुर्सी पर' श्रेष्ठ कृतियों में एक है। अवनीन्द्र बाबू ने जापानी कला एवं विदेशी शैली से समन्वय स्थापित कर एक नई शैली को जन्म दिया तथा जल रंग एवं वाश पद्धति के प्रयोग से मानवाकृतियों की सौंदर्यता में चार चाँद लगा दिये।

अवनीन्द्र नाथ टैगोर की मानव आकृतियों में जापानी प्रभाव भी दिखाई पड़ता हैं पेस्टल रंगों का प्रयोग भी बड़ी दक्षता के साथ किया है। मानव त्वचा पर पेस्टल रंगों का प्रभाव देखते ही बनता है। कलाकृतियों में जल रंगों के साथ–साथ पेस्टल रंगों का प्रयोग भी बड़ी सफलता से किया है। 'जमुना' नामक व्यक्ति चित्र भावाभिव्यक्ति से पूरिपूर्ण है।

'इनके द्वारा बनाई गई श्रेष्ठतम मानव आकृतियाँ बुद्ध चरित्र, कृष्ण चरित्र श्रृंखलाओं के अंतर्गत बुद्ध का जन्म, बुद्ध और सुजाता, कवि कंकण, कृष्ण मंगल श्रृंखला में दिखाई देती है।'[2]

इनके अन्य चित्र जैसे – भारत माता, माँ–शिशु, शाहजहाँ के अंतिम दिन, स्वप्न लोक में रवीन्द्र, मामा का अंत, अली बाबा, एक वृद्ध महिला, जमुना देवी, अरेबियन नाइट्स आदि हैं। साथ ही बंगाल की लोक प्रचलित कथाओं, रीति–रिवाजों पर बनाये गये चित्रों में भी मानव आकृतियों की परिकल्पना की झलक दिखती है।

- 'मेरे जीवन का प्रभात गीतों भरा था, अब शाम रंग भरी हो जाये' **महाकवि रविन्द्रनाथ टैगोर** (1861) का यह कथन उन्हें अपने जीवन के अंतिम पड़ाव पर अपनी स्वाभाविक शैली में चित्र रचना करने वाले चित्रकार के रूप में सामने लाता है। रविन्द्र बाबू अपनी आयु के 67 वे साल के पश्चात् कविता लिखते–लिखते हाशिये में अपनी कलम से आड़ी–तेड़ी रेखायें खींचते। इसके पश्चात् शब्दों या पंक्तियों को रेखाओं से मिटाने पर अकल्पित आकृतियाँ अंकित हो जाती और इन्हीं अकल्पित आकृतियों ने रविन्द्र बाबू का ध्यान आकृष्ट किया, फलस्वरूप उन्हें उसमें अनेक आकृतियाँ दिखाई देने लगीं। इसी को आधार मानकर रविन्द्रनाथ ने अनेक अजीबो–गरीब एवं भद्दी मानवाकृतियों की रचना की। फलस्वरूप इन्हें अति यथार्थवादी कलाकार के रूप में भी स्थापित किया गया। अपनी इस चित्र रचना के संबंधा में इन्होंने कहा–'चित्रकला के क्षेत्र में मात्र रंग और रेखायें ही कोई संदेश नहीं देती

* सहायक प्राध्यापक (चित्रकला) शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

अपितु उनमें ध्वनि होती है, लय होती है जिनका अंतिम उद्देश्य कलाकार की आंतरिक और बाह्य कल्पना का सम्प्रेषण एवं एक समानुपातिक समग्रता का विकास करना होता है।'[3]

रवीन्द्र बाबू ने अपनी कलाकृति में जिन मानव आकृतियों का अंकन किया है, वह मौलिक रूप में प्रदर्शित हैं। इन्होंने अपने आकृति अंकन में विदेशी कला की अनुकृति नहीं की, बल्कि ये आकृतियाँ इनकी अपनी आत्म अभिव्यक्ति है। 'उनकी आकृतियाँ चाहे ज्यामितीय हो अथवा किसी सर्प की भांति लयात्मक हो सभी में लय होता था। टैगोर ने जो व्यक्ति चित्र बनाये हैं, वे चित्रकला के सिंद्धांतों पर भले ही खरे न उतरे हों किन्तु भाव प्रदर्शन में वे समालोचना के योग्य हैं। उनका बनाया एक चित्र 'फूल के साथ युवती' भाव प्रदर्शन में श्रेष्ठ है। उनके द्वारा बनाया माँ और बच्चा चित्र में एक बालक को समेटे एक स्त्री में ममता के समस्त भाव प्रदर्शित होते हैं।'[4]

अपने चित्रों के माध्यम से रविन्द्र बाबू ने एक नई शैली को जन्म दिया। चित्रांकन करने के लिए इन्होंने ऐसे माध्यम का प्रयोग किया जो उन्हें सरलता से उपलब्ध थे। यह माध्यम वही होता जो (स्याही) उनकी कविता लिखने हेतु प्रयोग होता, और तुलिका के रूप में कपड़े के टुकड़े को कलम में बांधकर या स्याही में अंगुलियों को डुबोकर प्रयोग करते थे। इन्होंने मानवाकृति अंकन में विकर्षक शरीर, बदसूरत मुख, अस्वस्थ ओर गंदगी भरे दृश्यों को चित्रित किया है। रवीन्द्र नाथ टैगोर के अधिकतर चित्र ऐसे प्रतीत होते हैं जैसे बिना सोचे समझे बनाये गये हों। उनमें परिवर्तन तथा उद्देश्यपूर्ण प्रतिपादन के प्रयत्न नहीं दिखाई देते। लेकिन उनकी मानवाकृतियों की भंगिमा, रूप, व रेखा अनोखी है तथा उनकी सौंदर्य चेतना के पैमाने अलग हैं। उन्होंने आम चेतना से ऊपर उठकर इन भयावह मानवाकृतियों एवं बदसूरत व्यक्ति चित्रों में सौंदर्य को तलाशा। चित्र रचना करते समय तूलिका को अपने मन तथा इच्छानुसार चलाया। अपने चित्रों के माध्यम से जितने व्यक्ति चित्र एवं मानवाकृतियाँ रवीन्द्र बाबू ने चित्रित किये, उनमें जीवन के गहन अनुभव तथा प्रत्यक्ष ज्ञान की झलक स्पष्ट दिखाई पड़ती है। इन मानवाकृतियों में जहाँ हम यथार्थवादी प्रभाव देखते हैं, वहीं इन्हें 'चाइल्ड आर्ट' के समीप भी पाते हैं। आनंद कुमार स्वामी ने इनके चित्रों को 'नॉट चाइल्ड बट् चाइल्ड लाइक' कहा है।

मानवाकृति अंकन के अंतर्गत रवीन्द्र बाबू का प्रमुख विषय 'भारतीय नारी' था। उन्होंने चित्रों में बड़े ही सरल एवं सहज भाव से नारी को चित्रित किया है। चेहरों में भावों का निरूपण दिखाई देता है। 'नारी चित्रण में एक ओर वे काली घनी केश राशि के मध्य दर्शित हैं तो दूसरी ओर अंग विहीन दग्ध हृदय का अंकन भी किया गया है। उनके चित्रों में नारी के विभिन्न रूपों में बसंत और प्रेम की भावनाओं का एक गहन जगत देखा जा सकता है।'[5] थके हुए यात्री, माँ और बच्चा, सफेद धागे जैसे चित्रों में मानव जीवन का व्यापक दार्शनिक विचार है, तो वहीं अण्डाकृति मानव शीर्षों में (अधिकतर स्त्रियों) जीवन की गहरी अनुभूतियों से निर्मित अंतर्मुखवृत्ति का दर्शन है। 'इन्होंने मानवाकृतियों की अपेक्षा व्यक्ति चित्रों का अंकन अधिक मात्रा में किया है। ये व्यक्ति चित्र स्त्री एवं पुरूष दोनों के हैं। रवीन्द्र नाथ की नारियाँ अधिकतर भारतीय नारी की भांति सिर ढांके, खोये हुए नेत्रों वाली और गंभीर भाव वाली दिखाई देती हैं, इसी प्रकार पुरूषाकृति भी। किन्तु वे उनकी नारियों की भांति अपने नेत्रों में अवसाद लिये हुए प्रदर्शित नहीं होते। उनकी नारियों में उत्सुकता की अपेक्षा गंभीरता अधिक दिखाई देती है।'[6]

सन् 1933 ई. में रवीन्द्र नाथ टैगोर के चित्रों की प्रदर्शनी मुंबई में लगाई गई। इस प्रदर्शनी में लगे चित्रों में रवीन्द्र बाबू के द्वारा बनाई गई मानवाकृतियों का नया रूप देख भारतीय जनता चकित रह गई। इन मानव आकृतियों के विभास, कुरूप चेहरे देखकर दर्शकों ने इन्हें अस्वीकार किया, क्योंकि ये आकृतियाँ समझ से परे थीं, उनमें सौंदर्यात्मक अनुभूति भी नहीं थी। इस पर रवीन्द्रनाथ टैगोर ने लिखा है कि 'लोग मुझ से मेरे चित्रों का अर्थ पूछते हैं, उद्देश्य पूछते हैं, उनके उत्तर में चित्रों की भांति 'मौन' से ही दे देता हूँ।'[7]

- अवनीन्द्र बाबू के परम शिष्य **नंदलाल बसु** (1882 ई.) पूर्व भारतीय कला को नवीन पद्धतियों से विकसित करने में सफल हुए। इन्हें आकृति मूलक चित्र-रचना करने का बड़ा शौक था। इन्होंने मानवाकृतियों को अपने चित्रों में प्रमुखता से चित्रित किया है। इनके द्वारा बनाई गई मानव आकृतियाँ रवीन्द्रनाथ टैगोर की मानव आकृतियों से बिल्कुल भिन्न थी। नंदलाल बसु की आकृतियों में रस, सौंदर्य एवं भाव-अभिव्यंजना कूट-कूट कर भरी हुई थी। अर्थात सामाजिक तौर पर जन-सामान्य को ध्यान में रखते हुए चित्रित की गई थी।

चूंकि बंगाल शैली के कोई विशेष नियम नहीं थे, न ही अवनीन्द्र नाथ ने अपने शिष्यों को किसी खास पद्धति में चित्रण करने हेतु बाध्य किया था। फलस्वरूप नंदलाल बोस ने आकृति मूलक चित्रण कार्य से ही अपनी भावनाओं को उजागर किया। दरअसल बचपन से ही उन्हें मानवाकृतियाँ बनाने का शौक था। अपने कम उम्र में ही उनके द्वारा बनाया गया चित्र 'सती' (1907) में बहुत प्रसिद्ध हुआ। जिसमें नारी आकृति को अग्नि की भेंट चढ़ते प्रदर्शित किया है। भावना प्रधान यह चित्र दिल को छू जाता है।

नंदलाल बसु ने अपनी मानवाकृतियों को प्रखरता प्रदान करने के लिए विदेशी एवं भारतीय कलाकारों के चित्रों की प्रतिकृतियाँ तैयार की। राजा रवि वर्मा की मानवाकृतियों ने भी उन्हें आकर्षित किया। इन्होंने विभिन्न शैलियों में कलाकृति का निर्माण कर अपनी मानवाकृतियों को साकार किया है। महात्मा गाँधी एवं जवाहरलाल नेहरू जैसी महान हस्तियाँ इनसे काफी प्रभावित थी। 'नंद बाबू ने गांधीजी के आग्रह पर हरिपुरा ग्राम पर पोस्टर भी तैयार कराया जैसे ग्रामीणवासियों, मोची, दर्जी, डुगडुगी बजाने वाला, वीणावादन, भोजन बनाती स्त्री आदि ग्रामीण परिवेश संबंधी विषयों पर सुंदर मानवाकृतियों का अंकन किया।'[8]

नंदलाल बसु ने अपनी मानवाकृतियों को भित्ति (दीवारों) पर भी उकेरा। इनका एक विशाल भित्ति चित्र 'हल-कृष्ण-उत्सव' शांति निकेतन में सन् 1928 में चित्रित है। इस चित्र की मानवाकृतियों में श्रद्धा उत्साह और भारतीय ग्रामीण संस्कृति की छाप स्पष्ट रूप से झलकती है। इसके अलावा उमा-प्रायश्चिते, वीणा वादनी आदि भित्ति-चित्रों में भाव-प्रधाान मानवाकृतियाँ देखने मिलती है। इनके आकृति मूलक प्रख्यात चित्रों में शिव-शक्ति, अर्धानारिश्वर, सन्थाल कन्या आदि प्रमुख हैं। नंद बाबू ने हास्य प्रधान मानव आकृतियों की भी रचना की है, जैसे एक रेखा चित्र में दो लड़कियों को मुड़कर देखते छात्र पेड़ से टकरा गये। रेखाचित्रों के माधयम से भी मानवाकृतियों को उभारा है। इन सजीव रेखांकनों में 'किसान एवं मछली वाला' विशेष है।

आधुनिक कला के क्षेत्र में अपनी मानवाकृतियों को नवीन पद्धतियों से विकसित करने के लिए नंदलाल बसु सदा अविस्मरणीय रहेंगे। आपके चित्रों में जलरंग और वाश पद्धति का सुंदर संगम परिलक्षित होता है, जिसके माध्यम से आपकी मानवाकृतियों की भाव अभिव्यंजना को विशेष बल मिला।

मैंने ऐसे कलाकारों की कला शैलियों पर प्रभाव डाला है। जिन्होंने अपनी कलाकृतियों में मानवाकृति अंकन को जीवित रखा। इन कलाकारों ने मानव आकृति अंकन में भारतीय परम्परा एवं परिवेश का भी ध्यान रखा और अपनी कला को शैलीबद्ध किया। समकालीन कलाकारों ने चित्रों को मानव आकृतियों के माध्यम से अपने समय एवं समाज के अनुरूप चित्रित किया है। समकालीन कलाकारों ने अपनी मानव आकृतियों में बाह्य सौंदर्य को ही नहीं, बल्कि आंतरिक सौंदर्य को भी प्रदर्शित कर प्राचीन भारतीय कला की विशेषताओं को बनाये रखा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. प्रेमचन्द्र गोस्वामी - आधुनिक भारतीय चित्रकला के आधार स्तम्भ, पृ. 15
2. डॉ. रीता प्रताप - भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, पृ. 320
3. डॉ. प्रेमचन्द्र गोस्वामी - आधुनिक भारतीय चित्रकला के आधार स्तम्भ, पृ. 38
4. डॉ. संध्या पाण्डे/ डॉ.आर.पी. पाण्डे - भारतीय कला, पुनर्जागरण एवं चित्रकार, पृ. 10
5. डॉ. रीता प्रताप - भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, पृ. 339
6. डॉ. संध्या पाण्डे/ डॉ.आर.पी. पाण्डे - भारतीय कला, पुनर्जागरण एवं चित्रकार, पृ. 52
7. डॉ. रीता प्रताप - भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, पृ. 339
8. डॉ. संध्या पाण्डे/ डॉ.आर.पी. पाण्डे - भारतीय कला, पुनर्जागरण एवं चित्रकार, पृ. 26

****

भावों एवं विचारों में कल्पना के सूत्रों का योग : अवधेश मिश्र

डॉ. अन्नपूर्णा शुक्ला * सपना नीरज **

प्रस्तावना – समस्त संसार ही विचारों एवं भावों की नगरी है। इसलिए इन्हीं की तारतम्यता ही जीवन को साकार रूप प्रदान करती है, जिनसे कोई भी व्यक्ति अछूता नहीं रह सकता। भावों के उत्पन्न होने पर ही विचारों का उद्भव संभव है। क्योंकि भाव ही विचारों के जनक होते हैं। भावों का संवेग उत्पन्न होते ही विचारों की श्रृंखला स्वयं बनने लगती है। जिसको संयोजित करने का काम कल्पना द्वारा पूर्ण किया जाता है। जिसमें बिम्बों का पूर्ण सहयोग रहता है। बिना बिम्बों के कला सृजन संभव नहीं। इस कारण अवधेश जी ने अपने सृजन के संसार को लोक बिम्बों एवं आधुनिक बिम्बों को प्रतीकों के साथ चित्रित किया है, जो उनकी विशिष्ट पहचान है। भावों के अनुसार ही उनके चित्रों में रंगों का चयन किया गया है क्योंकि वे फैजाबाद के मठगोविन्द ग्राम में पले–बढ़े हैं। फलस्वरूप चित्रों में ग्राम्य परिवेश की प्रकृति जैसे ही रंगों की हरीतिमा, ताजगी एवं तीक्ष्णता इनके चित्रों में सर्वत्र ही व्याप्त है। अधिकतर शुद्ध रंगों का तो कहीं एक ही रंग की विभिन्न तानों का प्रयोग किया गया है।

'भाव एक सरल एवं प्रारम्भिक भावात्मक प्रक्रिया है जो सुख एवं दुख दो प्रकार के होते हैं। यह एक आत्मगत प्रक्रिया है, जिसका अनुभव व्यक्ति खुद ही कर सकता है। इसकी जानकारी तभी होगी, जब वह खुद कहे उसे सुख या दुख का भाव हुआ है। वैसे तो यह एक चंचल प्रक्रिया है क्योंकि एक भाव अधिक समय तक नहीं टिकता।'[1]

परन्तु कभी–कभी यह भाव बहुत अधिक समय तक व्यक्ति का साथ नहीं छोड़ता क्योंकि सुख या दु:ख जिस भाव को गहनता के साथ अनुभूत कर लिया जाता है, वह भाव व्यक्ति के चेतन मन से अचेतन मन की ओर विस्थापित हो जाता है, जहाँ भाव स्मृति में बदल जाते हैं, इस प्रकार भाव अचेतन मन में जाकर दीर्घकालिक स्मृति में सम्मिलित हो जाते हैं जिस कारण किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व का आकलन किया जा सकता है। भावों की इसी बगिया में अवधेश मिश्र जी ने अपने व्यक्तित्व को उच्च शिखर तक पहुँचाया है। यही भाव अवधेश जी के अन्तस में कहीं गहन ही जा बसे जिसमें वे अपने ग्राम्य परिवेश की वही हरियाली, उन्मुक्तता, सुकून की तलाश करते हैं। अचेतन मन में ही हमारे गहन भाव छिपे होते हैं। इस कारण प्रत्येक व्यक्ति अपना अधिकांश कार्य अचेतन मन में वशीभूत होकर ही करता है।

जिन भावों को वर्तमान में पाना संभव नहीं होता, उन्हीं भावों का आकार अचेतन मन पर साकार होता है ,यहीं से विचारों के अंकुर का प्रस्फुटन होता है। यही अवधेश मिश्र की सृजनशैली का आयाम है, जिनमें वे परम्परा एवं आधुनिकता का समन्वय कर अपने अतीत को जीवन प्रदान करते हैं। इसी कारण से कहा जाता है, भावों के अभाव में तो सम्पूर्ण संसार नीरस एवं निरर्थक प्रतीत होता है, जो पूर्णतया सत्य है, भाव न होने पर व्यक्ति विक्षिप्त हो जाता है क्योंकि उसकी संवेदनाएँ समाप्त हो चुकी होती हैं। भाव ही विचारों की भूमि है। अवधेश मिश्र जी ने अपनी स्मृति में व्याप्त संघर्षो को वर्तमान के साथ जोड़ा है, जो एक सुकून का आभास देते है। कहीं मधुर स्मृतियाँ हैं, तो कहीं दर्द भरी स्मृतियों की छवि है। प्रत्येक मनुष्य पर दुख से अधिक सुख की छाप रहती है। फलस्वरूप वह उन मधुर स्मृतियों से विलग नहीं होना चाहता है। कभी वह उन्हें याद करके हर्षित होता है, तो कभी विषाद से ग्रस्त हो जाता है। यही जीवन का चक्र है, सुख–दुख तो धूप छाँव की तरह जीवन में सदा आते ही रहते है, आवश्यकता है, तो इन भावों को उचित आयाम देने की। अवधेश मिश्र भी अभावों एवं संघर्षो का जीवन देख चुके हैं, परन्तु उन्होंने परिस्थितियों से जूझना आरम्भ किया। कला सृजन में निरन्तर लीन रहे एवं कला की पूर्ण साधना की तभी विविध श्रृंखलाओं का निर्माण संभव हो सका है। मात्र भावों एवं विचारों से कला सृजन संभव नहीं है।

इस कारण उसमें कल्पना का योग आवश्यक है क्योंकि कल्पना प्रकृति के ऊपर मानसिक जगत का प्रक्षेपण है। इसी के द्वारा प्रतीकों, बिम्बों को आकार प्रदान किया जाता है। कल्पना ही वह पंख है ,जिसकी उड़ान अतीत को वर्तमान से जोड़ते हुए भविष्य के लिए मार्ग तय करती है। इस बात को समझने के लिए अवधेश जी की चित्र श्रृंखला 'बचपन की स्मृतियाँ' पूर्णतया उचित है। (चित्र संख्या 1,2)

(चित्र संख्या 1,2)

इसमें उन्होंने उन दिनों को चित्रित किया है जब बाल्यकाल में अपनी दादी माँ से कहानियाँ सुना करते थे, जिसमें चाँद, तारों, सूर्य एवं अन्य विषयों

* सहायक प्राध्यापक, वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत
** शोध छात्रा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

से सम्बन्धित ही कहानियों के विषय हुआ करते थे। बच्चों के मनोरंजन के लिए ही नहीं बल्कि उन्हें नवीन ज्ञान प्रदान करने का मनोवैज्ञानिक तरीका कहानियाँ सुनाना है, जिससे बच्चे नये शब्दों एवं आकारों को सरल माध्यम से सीख सके। इसी कारण से अवधेश मिश्र के बचपन के दिन श्रृंखला में चाँद सूरज विविध रंगों एवं आकारों में देखे जा सकते हैं। 'इनके रंग शारीरिक एवं मनोवैज्ञानिक प्रभाव के उदाहरण हैं जो एक कलाकार के वास्तविक व्यक्तित्व का महत्वपूर्ण अर्थ लिये होते हैं , जो दर्शकों पर सीधा प्रभाव डालते हैं।'[2] सभी दर्शक अपने व्यक्तिगत अनुभव के अनुसार चित्रों में भाव तलाश कर अभिभूत होते हैं।

परन्तु इस श्रृंखला के प्रत्येक चित्र व्यक्ति को सहज अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं क्योंकि इसके आकार ज्यामितीय आकारों में स्वयं ही आत्म कथा की वार्तालाप करते प्रतीत होते हैं। अवधेश जी स्वयं ही कहते हैं, 'अपने जीवन के प्रथम दिन से ही मैंने प्रकृति के रंगों में साँस लेनी आरम्भ कर दी थी और उसके सूर्य एवं बादल के ज्यामितीय आकार मेरे कैनवास पर भावुक और अधिक दार्शनिक और काल्पनिक से अधिक वास्तविक हैं।'[3] इस प्रकार इन्होंने ज्यामितीय चित्रों द्वारा कला की नवीन भाषा का सृजन किया है, जिनमें इनके स्वभाव की पारदर्शिता स्पष्ट देखी जा सकती है, चित्रों में वृत्त, अर्धवृत्त, त्रिभुज होते हैं जैसे स्मृतियों को संजोने का गहन प्रयास हो जो दोनों हाथों में मधुर अतीत को समेटने की अभिलाषा है। इस प्रकार अवधेश जी ने 'ऐन्द्रिय अनुभव, बुद्धि तथा स्मृति के संदर्भ में कल्पना का विचार किया है और सिद्ध किया कि कल्पना वह शक्ति है, जो विचारों को एक सामंजस्य रूप देती है। अरिस्टोट्ल के अनुसार– बिना कल्पना के कोई धारणा नहीं हो सकती।'[4]

अत: 'कल्पना जितना तर्क का अंग है, उतना ही स्मृति का भी और उतना ही विवेक का भी। चूंकि वह रचनात्मक शक्ति में इन तीनों से बहुत आगे है, अत: वह इन तीनों से भी ऊँची और अधिक उज्जवल कोई वस्तु मानी गई है।'[5] इस प्रकार कल्पना द्वारा आत्म प्रसार की भावना को सशक्त बल प्राप्त होता है, जो कला सृजन में आधार स्तम्भ के समान है। अवधेश जी का यह सृजन मनुष्य को इस व्यस्त दिनचर्या में कुछ पल सुकून के देने में सक्षम है क्योंकि बचपन ही एक ऐसा समय है, जब व्यक्ति को किसी भी प्रकार की चिन्ता नहीं होती थी तथा मस्ती से भरा हर पल था। इस प्रकार दर्शक उन मधुर स्मृतियों में पुन: लौटकर रोमांचित हुए बिना कैसे रह सकता है। इस प्रकार अवधेश जी ने 'देश और काल के प्रभाव और दबाव में निरन्तर बदलता मनुष्य और लोक जीवन के क्रियाशील ऐन्द्रिक बिम्बों की रचना की जो अनायास ही हमें गहरी आन्तरिकता में अभिभूत करता है। काल के संकेतों और जटिलताओं को उनका व्यक्तित्व भेदने में सक्षम है। इन्होंने इस समय की संश्लिष्टता को उसकी गतिशीलता में पकड़ने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। समय के यर्थाथ और जिजीविषा का एकदम नया साक्षात्कार'[6] (चित्र संख्या 3,4)

(चित्र संख्या 3,4)

इनके बचपन की स्मृतियाँ, चित्र श्रृंखला में लोक जीवन की प्रकाश एवं ऊष्मा की विद्युतधारा प्रवाहित है। जो समय के व्योम में समय सीमा का अतिक्रमण करके सुकून का नवीन संसार रचती है, जो जीवन की पीड़ा को सरस बना देती है। जीवन के संघर्षो एवं पीड़ा ने उन्हें उसी प्रकार निखार दिया है, जिस प्रकार स्वर्ण अग्नि में तपकर निरन्तर निखरता जाता है। इस प्रकार अवधेश जी के चित्रों में भावों, विचारों एवं कल्पना के सूत्रों का योग है, जो चित्रों को संवेदनायुक्त एवं भावप्रधान बनाते हैं। भावों की इसी रागिनी में अवधेश जी का संवेदनशील हृदय स्वयं ही संसार की भावनाओं को अधिक गहराई से समझने लगा, जो उनके अचेतन मन के असीम क्रन्दन का भावविह्वल स्वरूप है। यहीं पर कलाकार मन का कल्पनाशील हृदय विचारों का मंथन करने लगता है, जहाँ प्रस्फुटित होता है, अपूर्ण जीवन का पूर्ण राग। 'वेदना एवं करूणा भी जीवन को स्वार्थ से ऊपर उठाती हैं, मानव, हृदय को उदार एवं संवेदनशील बनाती हैं। इसी पीड़ा को विश्व पीड़ा में मिलाकर सम्पूर्ण विश्व से तादात्म्य स्थापित कर अपूर्व प्रेम प्राप्त करने का प्रयास किया गया है।'[7]

अत: मिश्र जी के चित्रों की सजल वाणी की भावाभिव्यक्ति एक सम्मोहक संसार का सृजन रचती है। जहाँ क्षण प्रतिक्षण अपनी माता की ममता उन्हें दृढ़ सम्बल प्रदान करती है। तभी उनके भावात्मक लगाव के कारण ही 'बाल्यकाल की स्मृतियाँ' में प्रत्येक स्थान पर तथा अन्य चित्रों में भी अन्य विविध स्मृति चिन्ह परिलक्षित हैं। यही प्रतीक वाणी विस्थापन श्रृंखला, प्रकृति चित्र एवं बिजूका श्रृंखला आदि में गुंजायमान है। जिसकी सजल अभिव्यक्ति प्रस्तुत पंक्तियों में भावपूर्ण दृष्टि से अभिव्यक्त है–

मन के निर्जन कोने को देखूँ
या देखूँ जीवन की जगमग दीवाली
बीते लम्हों की किताब में.....
अजस्र हँसी का वैभव देखूँ
या जीवन का क्रन्दन मैं देखूँ
संसार के अभावों को
जी लूँ मैं खुद में
या हँसकर जीवन पुष्प
सजा लूँ मैं राहों में अपनी. . .
और पूरी कर लूँ मैं अधूरी
ये जिन्दगानी . . . . –स्वरचित

इस तरह भाव, विचार में कल्पना कहीं न कहीं अपनी उपस्थिति प्रस्तुत करती है। तभी मनोवैज्ञानिकों की मान्यता भी यही रही है कि . . ..

मनुष्य मस्तिष्क के संवेदनात्मक तत्व सृजन में क्रियान्वित होते है। कलाकार अपनी अंत:प्रज्ञा की अनुभूति द्वारा समाज से सम्पर्क साधता है, जो अनुभूति मानसिक प्रज्ञान शक्तियों पर निर्भर रहती है ,जिनमें प्रत्यक्षीकरण की प्रक्रिया द्वारा बिम्ब, प्रतीक सहज भाव से उत्पन्न होते हैं। तभी कला कर्म क्रियाशील होता है। इस प्रकार कहा जा सकता है, जब तक कलाकार के अंतर्जगत में भावों के उद्धार नहीं होंगे सृजनात्मकता सम्भव नहीं। कलाकार की स्मृति में कुछ भाव बिम्ब सदैव रहते हैं, जो मानसिक आत्मकेन्द्रित शक्तियों एवं वस्तुजगत के सम्पर्क द्वारा पुन: वर्तमान में आकार लेने लगते हैं। अपनी इन्हीं दिव्य अनुभूतियों को कलाकार प्रतीकों द्वारा सरल बनाकर सृजित करते हैं जो समाज के लिए प्रेरणास्पद बन सके। इस तेरह कलाकार कल्पना का उपयोग स्वत: ही करने लगता है। अपने मानसिक जगत का प्रक्षेपण

वर्तमान जगत से करना ही कल्पना कहा जाता है। अवधेश जी का बचपन ग्रामीण परिवेश रहा है, तभी उनके सभी चित्रों में परम्परा एवं प्रकृति का प्रतीकात्मक स्वरूप परिलक्षित है ।(चित्र संख्या 5,6)

(चित्र संख्या 5,6)

इस प्रकार कहा जा सकता है कि अवधेश जी की सृजनात्मकता में भावों, विचारों एवं कल्पना सूत्रों का दिव्य प्रयोग है।

अवधेश जी स्वयं भी यही कहते हैं कि मेरी कला में सभी तत्व वही हैं, जिन्हें मैंने स्वयं जिया है। मनुष्य बाह्य स्वभाव एवं व्यक्तित्व में जो भी है, वह उसका वास्तविक स्वरूप है ही नहीं क्योंकि मनुष्य के 'आन्तरिक जीवन के वैचारिक संघर्ष एवं भावात्मक अस्थिरता से अशान्त रहने के कारण वह आजीवन विखण्डित व्यक्तित्व को ढोता रहता है।'[18] यही वक्तव्य अवधेश जी का भी रहा है क्योंकि उनका भी कथन रहा है कि इंसान अब बिजूका बन गया है। उसकी वास्तविकता वह है ही नहीं जो वह दिख रहा है, उसने तो मुखावरण पहना हुआ है। यह सभी भावों का ही खेल है, जो मनुष्य को सांसारिक मायाजाल में उलझाए रखता है क्योंकि मानव की प्रकृति ही अब बहुरूप अपनाने की बनती जा रही है। अपनी वास्तविकता का आवरण समाज से छिपाया तो जा सकता है परन्तु स्वयं के आगे तो मनुष्य को नतमस्तक होना ही पडता है। आखिर कब तक? कहाँ तक? यह बिजूका साम्राज्य अटल रह सकेगा। इस प्रकार अवधेश जी ने बिजूका द्वारा मानव के व्यक्तित्व को वास्तविकता से परिचित कराया है।

निष्कर्ष – भावों की मनोभूमि सौम्य वातावरण प्राप्त करके के स्वयं ही प्रफुल्लित हो उठती है। तभी कलाकार भावों के अनुसार ही रंगो का चयन करता है। अवधेश जी के चित्रों में गहरे चटकीले रंगों का उचित परिवेश सृजित है कहीं प्रकृति तो कहीं मानव को अमूर्त भावों के साथ प्रयुक्त किया गया है। भावों की गहनता में ही अवधेश जी मूर्त से अमूर्त चित्रण की ओर अग्रसर हुए। क्योंकि असीम भावों की सम्पन्नता अमूर्त चित्रण में ही संभव है। जब मानव के गूढ़ भावों की अभिव्यक्ति सृजनात्मक ढंग से होती है, तो मानव मन प्रफुल्ल हो उठता है, जो उत्तम स्वास्थ्य की पराकाष्ठा की प्राप्ति का अद्भुत मार्ग है। इस प्रकार यह सत्यापित है कि मिश्र जी के सृजन संसार में भावों की उत्पत्ति के पश्चात् विचारों का मंथन प्रारम्भ हुआ। जिन्हें मिश्र जी ने अपनी कल्पना शक्ति से आदर्श रूप प्रदान किया है, जो उनके सहज एवं सरल व्यक्तित्व के परिचायक हैं। अत: हम कह सकते हैं कि अवधेश जी संवेदनशील, भावपूर्ण एवं प्रतिभा सम्पन्न कलाकार हैं। जिनके सृजन में भावों के साथ कल्पना के सूत्रों का योग भी समाहित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सुलैमान डॉ. मुहम्मद, सामान्य मनोविज्ञान : मूल प्रकियाएँ एवं संज्ञानात्मक प्रक्रियाएँ, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली संस्करण– 2006 पृ सं. 405
2. Hindustan Times, Jaipur Live, Thursday, April, 2007
3. वही
4. सिंह, केदारनाथ, कल्पना और छायावाद, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली– 110002, द्वितीय संस्करण– 1996, पृ.सं 12
5. वही पृ, सं. 14
6. शर्मा, रमाकान्त, कविता का स्वभाव, पंचशील प्रकाशन, फिल्म कॉलोनी, जयपुर–3020003, प्रथम संस्करण– 2000 पृ,स.26
7. सिंह, राधिका, महादेवी वर्मा के काव्य में लालित्य योजना, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दरियागंज, नयी दिल्ली– 110002, प्रथम संस्करण– 1979, पृ.स.175
8. सारवलकर रवि., कला के अन्तर्दर्शन, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, झालाना सांस्थानिक क्षेत्र, जयपुर–302004, द्वितीय संस्करण– 2008, पृ,सं. 66

****

कत्थक नृत्य के घराने उनकी व शैलीगत विशेषतायें

डॉ. भावना ग्रोवर दुआ *

प्रस्तावना – कथक नृत्य के विद्धानों द्धारा कुछ मौलिक प्रयोग कर नये तत्त्व समाहित किये गये तथा एक पृथक् शैली को विकसित किया गया तो वह प्रतिष्ठित होकर घराना कहलाया। डॉ.प्रेम दवे लिखती है कि 'जब कोई प्रतिभाशाली कलाकार किसी नवीन कला शैली की उद्भावना करता है और वह शैली उसके शिष्यों प्रशिष्यों द्धारा कम से कम तीन पीढ़ियों तक गतिमान रहती है, तो उसे 'घराना' नाम से सम्बन्धित किया जाने लगता है।[1] कथक नृत्य में घरानों के नाम किसी व्यक्ति विशेष के नाम पर न रखकर उस स्थान के नाम पर रखा गया जहाँ पर मूल रूप से उस शैली का जन्म हुआ एवं वह विकसित हुई। इस सन्दर्भ में पं.कार्तिक राम लिखते है कि 'उन्नीसवीं शताब्दी के नये दशक के पूर्व व्यक्ति विशेष के नाम से कथक घराने कायम किये जाते थे किंतु सन् 1895 ई.में माधोसिंह ने जयपुर में विद्धानों की एक सभा बुलाई और चले आ रहे मतभेदों को समाप्त करने के लिए यह निर्णय लिया गया कि व्यक्ति विशेष के नाम के बजाय स्थान के आधार पर घराने कायम किये जाएँ।'[2]

कथक नृत्य में मुख्य रूप से तीन घराने प्रसिद्ध हैं–

(1) लखनऊ घराना। (2) जयपुर घराना (3) बनारस घराना।

लखनऊ घराना – लखनऊ घराने का उद्भव नवाब आसफउद्दौला के समय से माना जाता है। नवाब आसफउद्दौला के बाद अवध नवाब वाजिद अली शाह ने अनेक नर्तकों को संरक्षण दिया तथा कथक नृत्य का अत्यधिक विकास किया। लखनऊ घराने का प्रवर्तक श्री ईश्वरी प्रसाद जी हैं। भगवान् कृष्ण ने इन्हें स्वप्न में आकर कथक नृत्य का पुनरुद्धार करने की प्रेरणा दी। ईश्वरी प्रसाद जी के तीन पुत्र हुए– अडगू जी, खडगू जी व तुलाराम जी। ईश्वरी प्रसाद जी ने नृत्य की शिक्षा अपने तीनों पुत्रों को दी। 105 वर्ष की आयु में इनकी मृत्यु हो गयी। पिता की मृत्यु से प्रभावित होकर तुलाराम जी ने संन्यास ले लिया तथा खडगू जी ने नृत्य करना छोड़ दिया। अडगू जी के तीन पुत्र हुए – प्रकाश जी, दयाल जी व हरिलाल जी। प्रकाश जी अपने दोनों भाईयों के साथ लखनऊ नवाब आफउद्दौला के यहाँ आ गये तथा यहाँ पर दरबारी नर्तक नियुक्त हुए। प्रकाश जी के भी तीन पुत्र हुए – दुर्गा प्रसाद, ठाकुर प्रसाद व मान जी। ठाकुर प्रसाद जी को नवाब वाजिद आली शाह ने अपना गुरु बनाया। मान जी को नवाब द्धारा 'सिंह' की उपाधि दी गई थी। प्रकाश जी के तीनों पुत्र उच्च कोटि के नर्तक थे। दुर्गा प्रसाद जी के तीन पुत्र हुए – बिन्दादीन जी, कालका प्रसाद व भैरों प्रसाद। बिन्दादीन महाराज भगवान कृष्ण के अनन्य भक्त थे। इन्होंने लगभग 1500 ठुमरियों की रचना कर कथक अभिनय पक्ष को अमूल्य समृद्धि दी। कथक नृत्य प्रदर्शन में बिन्दादीन महाराज व कालका प्रसाद की जोड़ी बहुत प्रसिद्ध थी। इन्हें राम–लक्ष्मण कहकर भी पुकारा जाता था कालका प्रसाद जी के भी तीन पुत्र हुए – जगन्नाथप्रसाद (अच्छन महाराज), बैजनाथ प्रसाद (लच्छू महाराज) तथा शम्भू महाराज। बिन्दादीन महाराज के कोई पुत्र न था। कालका प्रसाद जी की मृत्यु के पश्चात् बिन्दादीन महाराज ने ही अपने पुत्रवत भतीजों को नृत्य की शिक्षा दी। अच्छन महाराज के एक ही पुत्र बृजनारायण मिश्र (बिरजू महाराज) हुए। जो वर्तमान कथक नृत्य के क्षेत्र में युग पुरुष माने जाते हैं। बिरजू महाराज केवल नौ वर्ष के थे जब उसके पिता की मृत्यु हो गई। शम्भू महाराज ने इन्हें अपना पुत्र मानकर नृत्य की उच्च शिक्षा दी। बिरजू महाराज ने कथक केन्द्र नई दिल्ली में कथक गुरु के पद पर रहकर कथक नृत्य की सेवा कर नये आयाम स्थापित किये हैं। असंख्य प्रयोग कर अनेक शिष्यों को नृत्य की शिक्षा दी है। महाराज जी कथक केन्द्र से सेवानिवृत होकर वर्तमान में अपनी संस्था 'कलाश्रम' में नृत्य प्रशिक्षण दे रहे हैं। लच्छू महाराज के भी एक पुत्र है किन्तु उन्होंने कथक को नहीं अपनाया। शम्भू महाराज के दो पुत्र राम मोहन मिश्र व कृष्ण मोहन मिश्र हुए। जो वर्तमान में सुप्रसिद्ध कलाकार हैं तथा कथक केन्द्र नई दिल्ली में कथक नृत्य की शिक्षा प्रदान कर रहे हैं। पं.बिरजू महाराज के दो पुत्र जयकिशन महाराज व दीपक महाराज तथा एक पुत्री ममता हुई। जयकिशन महाराज कथक केन्द्र नई दिल्ली में कथक नृत्य गुरु हैं तथा दीपक महाराज कथक नृत्य क्षेत्र में कार्यरत हैं।

लखनऊ घराने की नृत्य शैली की विशेषताऐं –

1. लखनऊ घराना नज़ाकत व कोमलता पूर्ण है। लखनऊ घराने में पैरों की निकासी पर अधिक ध्यान न देकर, अंगों की खूबसूरत बनावट पर विशेष ध्यान दिया जाता है।
2. विशुद्ध नृत्य के बोलों के अतिरिक्त, पखावज–तबले के बोलों व प्रिमलू नाचने की परम्परा है।
3. लखनऊ घराने का ठाट बनाने का अपना विशेष ढंग है। छोटे–छोटे ठाट बाँधकर नर्तक सम पर विभिन्न प्रकार से मुद्रा बनाकर खड़ा होता है। ठाट बाँधने के ढंग पर लखनऊ के नवाबी संरक्षण का प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है।
4. गत निकास का प्रचलन अधिक है तथा गतभाव का कम। विभिन्न प्रकार के गत निकास जो नवाब वाजिद अली शाह द्धारा 'बनी' में दिये गएं है, नाचे जाते हैं दोनों ओर से गत बनाने का प्रचलन है।
5. ठुमरी गाकर भाव बताना इस घराने की प्रमुख विशेषता है। बिन्दादीन महाराज द्धारा रचित ठुमरियों पर शम्भू महाराज गाकर ही भाव बताते थे।
6. ततकार के टुकड़ों में 'ताऽ थेई तत थेई' के विभिन्न प्रकार इस घराने में नाचे जाते हैं। धाताकथूंगा व किटतकथुंथुं के बोलों का इस घराने में

* विभागाध्यक्ष, एसोसिएट प्रोफेसर, परफारमिंग आर्टस विभाग स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.) भारत

अत्यधिक प्रचलन है।

7. इस घराने के नर्तक पढ़न्त भी बोल के वजन अनुसार कोमलतापूर्ण व भावपूर्ण अभिव्यक्ति के साथ करते हैं।
8. इस घराने के कलाकार नवाबों के संरक्षण में रहने के कारण वेषभूषा भी अन्य घरानों से भिन्न पहनते हैं। पुरुष नर्तक चूड़ीदार पायजामा व बगलबंदी पहनते हैं तथा नृत्यांगानायें चूड़ीदार पायजामा, लम्बा फ्रॉक, दुपट्टा व कामदार टोपी पहनती है।

लखनऊ घराने के नृत्याचार्यो ने समय-समय पर अनेक प्रयोग कर नृत्य के तीनों पक्षों को समृद्ध किया है। यह अत्यधिक प्रचलित व पूर्ण घराना है।

जयुपर घराना – वर्तमान समय में जयपुर घराना एक समृद्ध परम्परा के रूप में आज हमारे सामने है। अनेक विद्धानों का मत है कि कथक नृत्य शैली का जयपुर घराना सबसे प्राचीन है। जयपुर घराना अन्य घरानों की भांति केवल एक वंश परम्परा से पल्लवित न होकर, राजस्थान में फैले सैंकड़ों गाँवों में रहने वाले कथकों से विकसित हुआ है। अत: हम यहाँ उसी परम्परा का वर्णन कर रहे है जिसे जयपुर घराने की मान्यता प्राप्त है।

प्राय: सभी विद्धानों का मत है कि भानू जी ही जयपुर घराने के प्रवर्तक हैं। कहा जाता है कि भानू जी भगवान शिव के अनन्य भक्त थे। किसी संत द्धारा इन्हें तांडव नृत्य की शिक्षा प्राप्त हुई। भानू जी ने अपने पुत्र मालू जी को भी इसकी शिक्षा दी। मालू जी के दो पुत्र हुए – लालू जी व कान्हू जी। दोनों पुत्रों ने नृत्य की शिक्षा अपने पिता से प्राप्त की। कान्हू जी ने वृन्दावन जाकर लास्य नृत्य की शिक्षा प्राप्त की। कान्हूजी के दो पुत्र हुए – गीधा जी व शेखा जी। गीधा जी ने तांडव नृत्य में दक्षता प्राप्त की तथा शेखा जी ने लास्य नृत्य में। गीधा जी के पाँच पुत्र हुए। उनमें से दूल्हा जी जयपुर आ गये। इन्होंने जयपुर ही अपना कार्यक्षेत्र बनाया। तथा यहाँ 'गिरधारी जी' नाम से विख्यात हुए। गिरधारी जी के दो पुत्र हुए – हरिप्रसाद व हनुमान प्रसाद। गिरधारी जी ने दोनों पुत्रों को तांडव व लास्य दोनों अंग की शिक्षा दी। ये दोनों भाई 'देवपरी का जोड़ा' नाम से प्रसिद्ध हुए। जिस समय लखनऊ में कालका-बिन्दादीन महाराज की जोड़ी मशहूर थी। उसी समय जयपुर में हरिप्रसाद व हनुमानप्रसाद जी की जोड़ी मशहूर थी। हनुमान प्रसाद जी के तीन पुत्र हुए – श्री मोहनलाल, चिरंजीलाल व नारायण प्रसाद। इन तीनों में से पं.नारायण प्रसाद जी ने विशेष ख्याति प्राप्ति की। इनके दो पुत्र हुए – श्री चरण गिरधर 'चांद,' तेज प्रकाश 'तुलसी'। चरण गिरधर 'चांद' वर्तमान में नृत्य क्षेत्र में ही लीन हैं। परन्तु तेज प्रकाश 'तुलसी' जो नृत्यकार होने के साथ-साथ उत्कृष्ट कोटि के पखावजी भी थे। अभी कुछ वर्ष पूर्व उनकी मृत्यु हो गई है।

पं.सुन्दर प्रसाद जी की शिष्य परम्परा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इनमें उनके चचेरे भाई पं.गौरीशंकर व अन्य शिष्यों में स्व.देवीलाल जी, सुश्री उमा शर्मा, मोहनराव कल्याणपुरकर, दुर्गालाल, ओमप्रकाश, उर्मिला नागर व रानी कर्णा विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन सभी नर्तकों ने कथक नृत्य क्षेत्र में विशेष ख्याति अर्जित की है। कथक नृत्य में जयपुर घराना अत्यधिक विस्तृत है। छोटी-छोटी अनेक शाखाएँ-प्रशाखाएँ भी हैं।

जयपुर घराने की नृत्य शैली – जयपुर घराने के नर्तक हिन्दी राज दरबारों से संबंधित रहे हैं। अत: इस घराने में कथक नृत्य की मूल परम्परा अब भी सुरक्षित है। यद्यपि यहाँ के राजा वीर व जोशीले होते थे। यही प्रभाव इस घराने के नृत्य पर भी पड़ा है। जयपुर घराने की नृत्य शैली की विशेषताएँ निम्नलिखित है :-

1. यह नृत्य शैली ओजपूर्ण व जोशीली है। राजस्थान के वीर राजा ओजपूर्ण नृत्य देखना ही पसन्द करते थे। अत: इस शैली में ताँडव को अधिक महत्त्व दिया गया, परन्तु बाद में लास्य अंग जुड़ जाने से इस नृत्य में परिवर्तन हुआ। वर्तमान में जयपुर घराने के नृत्य में लास्य के ललित अंगहार भी हैं तथा ताँडव की उद्धत चारियाँ भी।
2. इस नृत्य शैली में क्लिष्ट तालों में जैसे – धमार, चौताल, रुद्र, बसंत, अष्टमंगल, लक्ष्मी, गणेश आदि तालों में नृत्य करने का प्रचलन है।
3. पैरों की विशेष तैयारी पर इस घराने के नर्तक विशेष ध्यान देते है, हस्तकों पर कम। ततकार द्धारा कठिन लयकारियाँ प्रस्तुत करना इस घराने की खास विशेषता है।
4. भ्रमरी का भिन्न-भिन्न प्रकार से व अधिक प्रयोग इस घराने की विशेषता है। एक पाँव का चक्कर जयपुर घराने की ही देन है। एक पाँव पर दो, तीन, चार चक्कर लेना, सब दिशाओं के क्रमश: चक्कर लेना, आकाश भ्रमरी इस घराने के नर्तक सहज ही लेते हैं।
5. **जयपुर घराने में पखावज के बोल अर्थात् लम्बी-लम्बी व क्लिष्ट परने नाचने का प्रचलन है।**
6. गत निकास के स्थान पर गतभाव का अधिक प्रयोग किया जाता है। गतभाव भी धार्मिक कथानकों पर आधारित होते हैं जैसे – गोवर्धन पूजा, कालिया मर्दन आदि।
7. इस घराने में कवित्तों का नर्तन निजी विशेषता है। अनेक नर्तकों द्धारा असंख्य कवित्तों की रचना की गई है जो प्रचलन में है।
8. अभिनय पक्ष में ठुमरी की अपेक्षा भजन अथवा पद पर भाव प्रस्तुत करते हैं। भावाभिव्यक्ति सात्विक रहती है।
9. नृत्य के बोलों के अतिरिक्त तबला, पखावज के बोल पक्षीपरन, जाति परन, प्रिमलू आदि विभिन्न प्रकार के बोलों को नाचने का प्रचलन है।
10. जयपुर घराने के नर्तक चमत्कारिक नृत्य भी करते हैं जो अन्य किसी घराने में नहीं है जैसे – ताल की एक आवर्तन में फर्श पर बिछे गुलाल से हाथी बनाना, तलवार की धार पर नृत्य करना, एक भी बताशा बिना फोड़े, उन पर नृत्य करना आदि। उपरोक्त सभी विशेषताएँ देखने से स्पष्ट है कि जयपुर घराने का परम्परा समृद्ध एवं सुदीर्घ है।

बनारस घराना – कथक नृत्य की तीसरा घराना बनारस घराना है। इस घराने का उद्भव पं.जानकी प्रसाद जी (जानकी सहाय) से माना जाता है। ये प्रसिद्ध तबला वादक पं.रामसहाय (बनारस घराना) के भाई थे। कथक का यह घराना जानकी प्रसाद घराने के नाम से भी जाना जाता है। बनारस घराने की वंश परम्परा जानकी प्रसाद जी के शिष्य श्री हुकमराम जी के सुपुत्र चुन्नी लाल जी से शुरु होती है जो जयपुर से बनारस आये थे। चुन्नी लाल जी लड़की बनकर लोकनृत्य किया करते थे। पं.जानकी प्रसाद जी ने इन्हें पन्द्रह वर्षों तक अपने पास रखकर नृत्य की शिक्षा दी। इसके उपरान्त ये बीकानेर चले गये और वहाँ दरबारी नर्तक नियुक्त हुए। चुन्नीलाल जी ने अपने भाई-दूल्हा राम को व दूल्हाराम जी ने गणेशीलाल जी को नृत्य की शिक्षा दी। ये दोनों बनारस में ही रहे। दूल्हाराम जी के तीन पुत्र हुए – बिहारी लाल, पूरन लाल और हीरालाल। बिहारी लाल जी ने नृत्य के क्षेत्र में ख्याति प्राप्त की। बाद में वे इंदौर जाकर दरबारी नर्तक रहे। इनके तीन पुत्र हुए – किशनलाल, मोहनलाल व सोहनलाल। ये तीनों ही नृत्य अध्यापक रहे। दूल्हाराम जी के दूसरे पुत्र पूरनलाल जी के दो पुत्र हुए – मदनलाल व रामगोपाल। ये दोनों भी अध्यापक रहे।

दूल्हाराम जी के शिष्य गणेशीलाल जी के भी तीन पुत्र हुए – हनुमान प्रसाद, शिवलाल व गोपालदास। हनुमानप्रसाद जी कुशल रचनाकार थे। ये जम्मू, पटियाला, बीकानेर व नेपाल आदि रियासतों में दरबारी नर्तक बन कर

रहे। गणेशीलाल जी के दूसरे पुत्र शिवलाल जी के तीन पुत्र हुए – सुखदेव, दुर्गाप्रसाद व कुंदनलाल। इनमें से सुखदेव व दुर्गाप्रसाद राजस्थान में चले गये व कुंदनलालजी दिल्ली में नृत्य शिक्षक रहे। कुंदनलाल गंगानी जी के एक पुत्र राजेन्द्र गंगानी; जो कथक नृत्य क्षेत्र में ख्याति प्राप्त कलाकार है; दिल्ली कथक केन्द्र में शिक्षारत हैं। गणेशीलाल जी के तीसरे पुत्र पं.गोपाल जी पटियाला दरबार में दरबारी नर्तक रहे। इनके एक पुत्र श्री कृष्णकुमार थेकृष्णकुमार जी ने ही बनारस घराने की परम्परा को सृदृढ़ किया। ये भी नृत्य जगत् में ख्याति प्राप्त कलाकार हैं।

बनारस घराने की नृत्य शैली –बनारस घराना अन्य दोनों घरानों से बिल्कुल निम्न है। इस घराने की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

1. बनारस घराने की सबसे प्रमुख विशेषता नृत्य के शुद्ध बोलों पर नृत्य करना है। इन घराने में केवल शुद्ध नटवरी के बोलों पर नृत्य किया जाता है। तबला–पखावज आदि के बोल–नृत्य में प्रयुक्त नहीं होते है।
2. इस घराने में ही नृत्य की सही चक्रदार गतें सुनने को मिलती हैं। जहाँ एक ओर अन्य घरानों में तिग्दा दिग दिग पर चार पैर लगाते हैं वहीं इस घराने में छ: पैर लगाये जाते हैं। इस घराने की नृत्यशैली अत्यन्त कठिन व श्रम साध्य है।
3. बोलो के वजन के अनुसार ही अंग संचालन किया जाता है। शास्त्रोक्त अंग जैसे – उरप तिरप, त्रिभंग, लाग–डाट आदि का प्रयोग किया जाता है।
4. इस घराने में भ्रमरी का प्रयोग अधिक नहीं किया जाता। इस घराने का मुख्य लक्ष्य अंगों की स्पष्ट बनावट व पैरों की स्पष्ट निकासी है। तेजी व तैयारी नहीं।
5. बनारस घराने में ठुमरी पर भाव बताना उनकी विशेषता है। ठुमरी का केन्द्र बनारस माना गया, यहाँ के नर्तक बड़ी कुशलता से भाव प्रस्तुत करते हैं। महाराज श्री कृष्णकुमार इस पक्ष में दक्ष थे।
6. यह एक शुद्ध व सात्विक नृत्यशैली है। नृत्य करते समय, ठुमका, कमर चलाना, हल्के हाव–भाव वर्जनीय है। इस घराने का नृत्य केवल मनोरंजन का साधन न होकर भक्ति–भावना रूपी व ईश्वर की ओर ले जाने वाला है।

सन्दर्भ ग्रंन्थ सूची :–

1. दवे, डॉ.प्रेम : कत्थक नृत्य परम्परा, पृष्ठ 31
2. राम, पं.कार्तिक : रायगढ़ में कथक, पृष्ठ–38
3. ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में कथक नृत्य रू डॉ.माया टाक।
4. कथक नृत्य परंपरा : डॉ.प्रेम दवे।
5. कत्थक नृत्य शिक्षा भाग–1 : डॉ.पुरू दाधीच।
6. कथक नर्तन भाग–2 : डॉ.विधि नागर।
7. कथक दर्पण : पं.तीरथराम 'आजाद'।
8. कथक नृत्य : पं.तीरथराम 'आजाद'।

****

पूर्व प्राथमिक शिक्षा का प्राथमिक शिक्षा पर होने वाले प्रभावों का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ.जयदीप महार * प्रियंका मित्तल **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में शिक्षकों से जानकारी प्राप्त करने हेतु प्रश्नावली का प्रयोग किया गया प्रश्नावली में कुल 20 प्रश्नों का समावेश किया गया, जिसमें पूर्व प्राथमिक शिक्षा से संबन्धित शिक्षकों के प्रति दृष्टिकोण जानने का प्रयास किया गया है। प्रश्नों में विद्यालय में पूर्व प्राथमिक शाला संचालित, शाला के नामांकन में वृद्धि, विद्यार्थियों उपलब्धि स्तर, प्राथमिक शालाओं से सम्बद्धता, प्रशिक्षित अध्यापकों का होना आदि प्रकार के प्रश्नों का समावेश किया गया है।

शब्द कुंजी – प्राथमिक विद्यालय, शिक्षक ।

प्रस्तावना – बाल्यावस्था में मस्तिष्क की ग्रहणशीलता अति तीव्र होती है। शिशु गीली मिट्टी के समान होता है, शिक्षा एवं शिक्षक उसे जैसा आकार देना चाहे दे सकता है।

पूर्व प्राथमिक शिक्षा , शिक्षा के अगले स्तरों के लिये नींव का कार्य करती है, नर्सरी या पूर्व प्राथमिक शिक्षा एक प्रकार से 'बच्चे का संसार है' जहां वह अपनी रचनात्मक आवश्यकताओं की अभिव्यक्ति के लिये विशेष रूप से बनाया गया वातावरण प्राप्त करता है।शिशु मनुष्य जीवन की नींव है।शैशवावस्था में बालक का सम्पूर्ण व्यवहार प्राय: मूल प्रवृतियों के आधार पर ही होता हैं, किन्तु जैसे–जैसे वह बड़ा होता जाता है। उस पर बालक को शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है, जिसका माध्यम पूर्व प्राथमिक शिक्षा है।

उद्देश्य – कोठारी आयोग (1964–66) ने पूर्व प्राथमिक शिक्षा आवश्यकता पर बल देते हुएं बताया कि 'पूर्व प्राथमिक शिक्षा विशेषकर ऐसे बच्चों के शारीरिक , मानसिक एवं भावात्मक विकास के लिये बहुत महत्वपूर्ण है जिनके घर का वातावरण संतोषजनक नहीं है।'

पूर्व प्राथमिक शिक्षा के कई महत्वपूर्ण उद्देश्य है, जिनमें कुछ प्रमुख उद्देश्यों की ओर इंगित करते हुए शिक्षा आयोग (1964–66) ने बताया कि –

1. बालकों में अच्छी स्वास्थ्य आदतें ,विकसित करना ।
2. आवश्यक सामाजिक व्यवहार ,भावात्मक परिपक्वता का विकास करना।
3. वातावरण के संबंध में बच्चों की बौद्धिक जिज्ञासा को उत्तेजिक करना।
4. बालकों में आवश्यक बुनियादी बातों का विकास करना।
5. बालकों में अपनें विचारों और भावनाओं को प्रकट करने की योग्यता का विकास करना।

पूर्व प्राथमिक शिक्षण संस्थाऐं – हमारे देश में पूर्व प्राथमिक शिक्षा हेतु अनेक संस्थाएं विभिन्न नामों से संचालित होती है–

1. किंडरगार्डन (K.G.) स्कूल
2. माण्टेसरी स्कूल
3. नर्सरी स्कूल
4. प्री–बेसिक स्कूल

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध में शोधकर्ता ने प्रदत्तों के संकलन के लिये सर्वेक्षण विधि का चयन किया है। सर्वेक्षण विधि वर्तमान व प्रयत्नों से संबंधित है,जो अनुसंधानन के अन्तर्गत घटना एवंत तथ्य की स्थिति निर्धारित करती है।

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध कार्य मन्दसौर जिले के 10 अशासकीय प्राथमिक शालाओं का सर्वेक्षण कर न्यादर्श के रूप में प्रतिचयन किया गया है।

उपकरण – प्रस्तुत शोध कार्य सर्वेक्षणात्मक प्रकृति का है। शोधार्थी द्वारा स्वनिर्मित प्रश्नावली के माध्यम से आकड़ों को एकत्रित किया गया है।

शोध उपकरण – स्वनिर्मित प्रश्नावली – अशासकीय प्राथमिक शाला के शिक्षकों के लिए

प्रदत्तों का विश्लेषण :

क्रं.	कथन	प्रतिशत
1	प्राथमिक विद्यालयों में पूर्व प्राथमिक शाला संचालित में पालकों का अभिमत	70
2	आपके विद्यालय में पूर्व प्राथमिक शाला संचालित है।	65
3	आपके विद्यालय के आस–पास पूर्व प्राथमिक शाला संचालित है।	80
4	आपके विद्यालय में कक्षा 1 में दर्ज विद्यार्थी पूर्व प्राथमिक शाला से आएं है।	75
5	पूर्व प्राथमिक शाला से प्राथमिक शाला के नामांकन में वृद्धि हुई है।	80
6	पूर्व प्राथमिक शाला में कक्षा 1 मे बालिकाओं के नामांकन पर प्रभाव पडा ।	85
7	पूर्व प्राथमिक शाला से विद्यार्थियों की उपस्थिति में प्रभाव पडा।	90
8	प्रवेशित पूर्व प्राथमिक शाला आये विद्यार्थी पूरे समय विद्यालय उपस्थित रहते है।	85
9	प्राथमिक शाला आये विद्यार्थी विद्यालय में उपस्थित रहते है।	80
10	पूर्व प्राथमिक शाला से प्राथमिक शाला के विद्यार्थियों उपब्धि स्तर पर किस प्रकार का प्रभाव पडा।	80

* सहायक प्राध्यापक, सरस्वती शिक्षा महाविद्यालय विद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापिका, सरस्वती शिक्षा महाविद्यालय विद्यालय, मन्दसौर (म.प्र) भारत

11	पूर्व प्राथमिक शाला से आये विद्यार्थियों के सीखने का किस प्रकार का प्रभाव पडा।	70
12	पूर्व प्राथमिक शाला से आएं कक्षा 1 के विद्यार्थियों का अध्ययन के प्रति दृष्टिकोण किस प्रकार का रहता है।	90
13	पूर्व प्राथमिक शाला से आएं विद्यार्थियों में परिलक्षित होता है।	60
14	पूर्व प्राथमिक शाला से आएं विद्यार्थियों एवं प्राथमिक शाला से आएं विद्यार्थियों की समझ मे अंतर होता है।	90
15	आंगन वाड़ी से कक्षा 1 मे दर्ज विद्यार्थियों का अधिगम स्तर होता है।	85
16	आपके दृष्टिकोण से आँगनवाडी केन्द्र पूर्व प्राथमिक शालाओं के विकल्प हो सकते हैं।	70
17	पूर्व प्राथमिक शालाओं की प्राथमिक शालाओं से सम्बद्धता कैसी होनी चाहिएं ।	90
18	पूर्व प्राथमिक शाला संचालन हेतु प्रशिक्षित अध्यापकों का होना आवश्यक है।	65
19	पूर्व प्राथमिक शाला संचालित की जाना अनिवार्य है।	85
20	शासकिय प्राथमिक शालाओं में पूर्व प्राथमिक शाला संचालित की जाना अनिवार्य है।	80

सारणी संख्या – का विश्लेषण :

1. प्राथमिक विद्यालयों में पूर्व प्राथमिक शाला संचालित में पालकों का अभिमत – उपरोक्त तालिका का विश्लेषण करने पर हम पाते है कि. 70 प्रतिशत पालकों के अनुसार प्राथमिक विद्यालयों में पूर्व प्राथमिक शालाएँ संचालित होना चाहिये है।

2. विद्यालय में पूर्व प्राथमिक शाला संचालित है – उपरोक्त तालिका का विश्लेषण करने पर हम पाते है कि. 65 प्रतिशत शिक्षकों के अनुसार प्राथमिक विद्यालयों में पूर्व प्राथमिक शालाएँ संचालित हो रही है।

3. प्राथमिक विद्यालय के आस–पास पूर्व प्राथमिक शाला की उपलब्धता – उपरोक्त तालिका का विश्लेषण करने पर हम पाते है कि 80 शासकीय प्राथमिक विद्यालय के आस–पास पूर्व प्राथमिक शालाएँ उपलब्ध नहीं है। जबकि 20 प्रतिशत के आस–पास पूर्व प्राथमिक शालाएँ संचालित हो रही है।

4. पूर्व प्राथमिक शाला /केन्द्रों से आएं विद्यार्थी – इनका विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि शासकीय प्राथमिक विद्यालयों में कक्षा 1 में दर्ज विद्यार्थियों में से 75 प्रतिशत ऑगनवाड़ी केन्द्र से शिक्षा ग्रहण करके आएं है।

5. नामांकन की स्थिति – ऑकडों से दृष्टिगोचर होता है कि शासकीय स्तर पर 80 प्रतिशत शिक्षक नामांकन पर सकारात्मक प्रभाव पाते है, वही 20 प्रतिशत शिक्षक ऐसे है, जिनके अनुसार पूर्व प्राथमिक शिक्षा का प्राथमिक स्तर पर नामांकन की स्थिति में कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

6. पूर्व प्राथमिक शिक्षा कक्षा 01 बालिकाओं के नामांकन में वृद्धि पर प्रभाव –

तलिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि 85 प्रतिशत शिक्षकों का सकारात्मक प्रभाव पाते है, वही 15 प्रतिशत शिक्षक ऐसे है, जिनके अनुसार पूर्व प्राथमिक शिक्षा का प्राथमिक स्तर पर नामांकन की स्थिति में कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

7. नियमित उपस्थिति पर प्रभाव – विद्यालयों के 90 प्रतिशत शिक्षक नियमित उपस्थिति पर सकारात्मक प्रभाव देखते है, वही 10 प्रतिशत शिक्षकों के अनुसार इससे नियमित उपस्थिति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

8. विद्यार्थियों की शाला समय तक उपस्थिति – शिक्षकों के अभिमत के अनुसार कक्षा 1 व 2 प्रवेशित पूर्व प्राथमिक शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों की शाला समय तक उपस्थिति 85 प्रतिशत रहती है।

9. बिना पूर्व प्राथमिक शिक्षा प्राप्त छात्रों की उपस्थिति – तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि 80 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि बिना पूर्व प्राथमिक शिक्षा प्राप्त छात्रों की उपस्थित न्यून रहती है।

10. उपलब्धि स्तर पर प्रभाव का अध्ययन – शिक्षक का अभिमत प्राथमिक शिक्षा में उपलब्धि स्तर पर पूर्व प्राथमिक शिक्षा का प्रभाव जानने हेतु एकत्रित ऑकड़ों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि 80 प्रतिशत शिक्षकों के अनुसार पूर्व प्राथमिक शिक्षा से प्राथमिक शिक्षा में उपलब्धि स्तर पर सकारात्मक प्रभाव है।

11. छात्रों के सीखने की गति पर प्रभाव – इस तथ्य के संबंध में अभिमत एकत्रित करने पर ज्ञात हुआ कि विद्यालय के 70 प्रतिशत शिक्षक मानते हैं कि छात्र तीव्र गति से सीखते है। जबकि 30 प्रतिशत शिक्षक छात्रों के सीखने की गति सामान्य पाते है।

12. विद्यार्थियों का अध्ययन के प्रति दृष्टिकोण – 90 प्रतिशत शिक्षकों के अभिमत के अनुसार पूर्व प्राथमिक शिक्षा से कक्षा 1 में अध्ययनरत छात्रों का अध्ययन प्रति दृष्टिकोण रूचि पूर्वक रहता है।

13. छात्रों का परिलक्षित व्यवहार – सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि विद्यालयों में अध्ययनरत पूर्व प्राथमिक शिक्षा प्राप्त सभी छात्रों में समस्त अच्छी आदतें विकसित है।

14. छात्रों की समझ एवं व्यवहार में अन्तर – 90 प्रतिशत शिक्षकों के अनुसार विद्यार्थियों की समझ एवं व्यवहार में बहुत अधिक अन्तर पाते है। जबकि 10 प्रतिशत विद्यालयों के शिक्षकों के अनुसार कम अन्तर पाया है।

15. विद्यार्थियों का अधिगम स्तर – 85 प्रतिशत शिक्षकों ने बताया की ऐसे विद्यार्थियों का न्यूनतम अधिगम स्तर निम्न होता है, जबकि 15 प्रतिशत शिक्षकों के अनुसार इन्हें सामान्य अधिगम स्तर का पाते हैं।

16. आँगनवाडी केन्द्र पूर्व प्राथमिक शालाओं के विकल्प – आँगनवाडी केन्द्र पूर्व प्राथमिक शालाओं के विकल्प हो सकते हैं, तब सर्वेषण से प्राप्त आंकड़ों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि 85 प्रतिशत शिक्षक इस तथ्य से असहमत है, जबकि 15 प्रतिशत शिक्षक पूर्व प्राथमिक शालाओं का विकल्प मानते हैं।

17. पूर्व प्राथमिक शालाओं की प्राथमिक शालाओं से सम्बद्धता – 90 प्रतिशत शिक्षकों के अभिमत के अनुसार पूर्व प्राथमिक शालाऐं प्राथमिक शालाओं से अवश्य ही सम्बद्धता होना चाहिएं, जबकि 10 प्रतिशत शिक्षकों के अभिमत के अनुसार इन्हें पृथक रूप से संचालित किया जाना चाहिएं।

18. शाला संचालन हेतु प्रशिक्षित अध्यापकों का होना – तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि 65 प्रतिशत शिक्षकों का अभिमत है कि पूर्व प्राथमिक शाला संचालन हेतु प्रशिक्षित अध्यापकों का होना आवश्यक है। जबकि 35 प्रतिशत शिक्षकों के अभिमत के अनुसार प्रशिक्षित अध्यापकों का होना आवश्यक नहीं मानते हैं।

19. पूर्व प्राथमिक शाला संचालित की जाना अनिवार्य है – 85 प्रतिशत शिक्षकों के अभिमत के अनुसार पूर्व प्राथमिक शालाऐं संचालित की

जाना अनिवार्य है, जबकि 15 प्रतिशत शिक्षकों के अभिमत के अनुसार पूर्व प्राथमिक शालाऐं संचालित की जाना अनिवार्य नहीं हैं।

20. शालाओं में पूर्व प्राथमिक शाला संचालित की जाना अनिवार्य है – 80 प्रतिशत शिक्षकों के अभिमत के अनुसार शासकीय प्राथमिक शालाओं में पूर्व प्राथमिक शाला संचालित की जाना अनिवार्य है।

निष्कर्ष – सर्वेक्षित शासकीय प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के दृष्टिकोण में पूर्व प्राथमिक शिक्षा का प्राथमिक शिक्षा पर सकारात्मक प्रभाव होता है, जिससे विद्यार्थियों की शाला में उपस्थिति नियमित रहती हैं। पूर्व प्राथमिक शिक्षा प्राप्त विद्यार्थी प्राथमिक स्तर पर तीव्र गती से सीखते हैं। बिना पूर्व प्राथमिक शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों की तुलना में पूर्व प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर कक्षा 1 में दर्ज विद्यार्थियों में कक्षानुगत समस्त अच्छी आदतों का विकास होता है। पूर्व प्राथमिक शिक्षा संचालन प्रशिक्षित अध्यापिकाओं की आवश्यकता है। प्राथमिक विद्यालयों के साथ पूर्व प्राथमिक विद्यालयों को संचालित करना अति आवश्यक है। शत-प्रतिशत कार्यकर्ता, आँगनवाडी केन्द्रों को पूर्व प्राथमिक विद्यालयों का विकल्प मानती है, तथा वे पूर्व प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने हेतु प्रशिक्षण लेने के लिये सहमत है।

समीक्षा – प्रस्तुत शोधकार्य के पश्चात् यह जाना गया कि पूर्व प्राथमिक शिक्षा ग्रहण करके प्राथमिक विद्यार्थियों की नामांकन स्थिति, ठहराव, नियमित उपस्थिति में धनात्मक दिशा में वृद्धि होती है। प्राथमिक स्तर के शिक्षक पूर्व प्राथमिक शिक्षा से प्राथमिक स्तर पर सकारात्मक प्रभाव पाते हैं। अत: पूर्व प्राथमिक शिक्षा, प्राथमिक शिक्षा की समृद्धि हेतु आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल, जे.सी. (1997) : पूर्व प्राथमिक शिक्षा का इतिहास एंव दर्शन , दोआब- हाउस, नई दिल्ली।
2. माथुर, एस. एस. (1989) : शिक्षा मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
3. पाठक,पि.डी. (1988) : भारतीय शिक्षा एवं उसकी समस्याएं, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
4. वर्मा, प्रीति (1996) : आधुनिक प्रयोगात्मक मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।

****

पत्रकारिता के वातायन से आतंकवाद

मेघा दुबे *

प्रस्तावना – वर्तमान में पत्रकारिता आधुनिक युगबोध है, पत्रकारिता सूर्य के समान है, जो नित्य समय पर उदय होकर हम सभी को अपनी किरणों से प्रकाशित करती है। ठीक उसी प्रकार हमारे हाथों में सुबह का अखबार होता है, और हमारी आँखे सम्पूर्ण समाज में व्याप्त स्थितियों को एक साथ देख लेती है। आज समाज में पत्रकारिता का सर्वोच्च स्थान हैं, पत्रकारिता सत्य का शोध एवं मूल्य का सतत् संघर्ष है। गीता में जगह–जगह शुभ दृष्टि का जो प्रयोग है, और यह शुभ दृष्टि ही पत्रकारिता है, जिसमें गुणों का परखना और मंगलकारी तत्वों को प्रकाश में लाना सम्मिलित हैं, पत्रकारिता विश्व का सर्वश्रेष्ठ यज्ञ है, जिसमें आदमी को केवल देना है। जब हम लोकहित के संकल्प के साथ पत्रकारिता करेंगे, और देश, समाज में व्याप्त बुराईयों के विरूद्ध अभिव्यक्ति देगें, तभी अच्छे परिणाम मिलेंगे। 'पत्रकारिता के वातायन से आतंकवाद' एक ऐसा ही विषय है, जिसमें आज एक आम नागरिक कि नहीं अपितु आतंक का दंश झेल रहे हर देश की पीड़ा को दिखाने का प्रयास किया गया है। आतंकवाद क्या है? और कैसे यह आज ईश्वर की तरह सर्वव्यापी हो गया है। आतंकवाद जिसके कारण आज समूची दुनिया बारूद के ढेर पर बैठी है, जिसके कारण विकास की प्रक्रिया थम सी गई है। जिसने हमारी राष्ट्रीय एकता हो खतरे में डाल दिया है। आज हम ही नहीं विश्व के समस्त शक्तिशाली राष्ट्रों के लिए बाधक बनने वाला खतरनाक खौफनाक तत्व 'आतंक' है। पत्रकारिता के माध्यम से उसके स्वरूप और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उसके मँडराते हुए खतरे को दिखाना ही हमारा उद्देश्य है, आतंकवाद के इस दानव ने किस तरह हमारी साम्प्रदायिकता को खण्डित कर दिया है, कि एक बार फिर हम हिन्दू मुस्लिम जैसे विवादों से घिरते चले जा रहें है। वैश्विक स्तर पर व्याप्त इस ज्वलंत समस्या का शिकार अधिकांशत: आमजन ही होते हैं आखिर यह आतंकवाद क्या है?

आतंकवाद – महज हिंसा या फिर आजादी का परिणाम, जो अपने पीछे कई कटु–सवालों को छोड़ गया। आखिर क्यों जेहाद के नाम पर इन्सान को आतंकवादी बनाया जा रहा हैं। क्यो आतंकवाद किसी धर्म विशेष की पसंद है फिर क्यों इसे धर्म के नाम से जोड़ा गया है? आज आतंकवाद के कारण किस तरह एक आम मुस्लिम अपनी पहचान खो रहा है। क्यों कट्टरपंथी धर्मी दो देशों के मध्य नफरत का जहर घोल रहे है। भारत में आये दिन हो रही इन आतंकी घटनाओं का कोई भी असर हमारी सरकार पर क्यों नही होता, कठोर कानून के बाद भी हमारा नेतृत्व 'आतंक' के समक्ष कमजोर दिखायी देता है। आतंकवाद के इस दानव से लड़ने के लिए आज अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की आवश्यकता है। आतंकवाद एक युद्ध है, जिसमें सरकार, जनता, पत्रकार, मीडिया और देश के सुरक्षाकर्मियों को एकजूट होकर लड़ना है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर यह सन्देश देना चाहते है कि आतंकवाद कोई स्वार्थ प्रेरित कर्म नहीं है। यह हमारी अपनी जंग है, भारत कमजोर नहीं है क्योंकि उसके साथ एक अरब से भी ज्यादा लागों का विश्वास है। जो इस 'आतंकवाद' से लड़ने के लिए तैयार है। भारत 'आतंक मुक्त' विश्व की कल्पना करता है और इसे साकार करने हेतु वह हर सम्भव प्रयास कर रहा है।

पत्रकारिता के माध्यम से किस तरह हम आतंक को खत्म करने में अपनी भूमिका का निर्वाह कर रहे है, कहीं रफ्तार के प्रति दीवानगी के इस दौर में हम अपनी विश्वसनीयता तो नहीं खो रहे, जब हम पत्रकारिता के मूल्यों के साथ समझौता करते जब अटकले तथ्यों को प्रतिस्थापित करते है, तो हमारी समझ पर सनसनी छा जाती है कि 'हम श्रेष्ठ' है यह भावना कहीं आज पत्रकारिता और मीड़िया के क्षेत्र में घर तो नहीं कर गई। मीड़िया किस तरह आज अपने उद्देश्य से भटक गया है। किस तरह वह संवेदनशील हो गया कि अपने स्वार्थ के आगे उसे आतंक पीड़ित आमजन की पीड़ा नहीं दिखाई देती। आतंकी घटनाओं के लाइव कवरेज पर रोक आज जरूरी है, ताकि आतंकवादियों को हमारी गतिविधियों का पता न चले। मिड़िया के सकारात्मक एवं नकारात्मक परिणामों को यहाँ बताना जरूरी है ताकि जनमाध्यमों का दुरूपयोग आतंकी अपनी पहचान बनाने में न करे। रूपहले परदे पर आतंकवाद विषयक फिल्में जनमानस में भाईचारे और शांति का संदेश देती है। किस तरह आज कोई हमारी ऐतिहासिक धरोहर को क्षति पहुँचा रहा है, हमारी संस्कृति और सभ्यता को मजहब के नाम पर तोडने का प्रयास किया जा रहा है, आर्थिक दृष्टि से भारत को कमजोर बनाने में हमारे शत्रु देशों का सहयोग अमेरिका क्यों कर रहा है, इन सारे सवालों के जवाब हमने इस विषय के माध्यम से खोजने का प्रयास किया है।

अत: पत्रकारिता का उद्देश्य देश के अभ्युतथान के लिए निर्धनता, भुखमरी और विसमता से संघर्ष है। अपनी इस कसौटी पर खरा उतरना उसका परम् कर्तव्य है। असत्य अशिव और असुन्दर पर 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' की शंखध्वनि ही पत्रकारिता है, पत्रकारिता के न्यायधर्म के कारण ही लेखक मील के पत्थर साबित होंगे और निश्चित ही पाठकों और विचारकों के मन में 'आतंकवाद' जैसी समस्याओं पर सोचने हेतु बैचेनी पैदा करेगें। क्योंकि उसमें कोई शक नहीं कि आज आतंक शहर कि सीमा लांघकर हमारे घर तक आ गया है। और इसके इन खौफनाक बढ़ते कदमों को नहीं रोका गया तो चारों

* लेक्चरर, स्वामी विवेकानंद शिक्षा महाविद्यालय, सेंघवा (म.प्र.) भारत

तरफ सिर्फ मौत का तांडव होगा। जो अपने पीछे आतंक के दर्द की कहानी और कभी न भरने वाले जख्म छोड़ जायेगा। और हम नहीं चाहते कि हमारे देश की हवायें आतंक के धुएँ से दुषित हो।

पत्रकारिता और आतंकवाद – समाचार पत्र यदि संसार की सबसे बडी ताकत है, तो उन पर देश की बड़ी जिम्मेदारी भी है। बिना जवाबदारी के बड़प्पन का क्या मोल? हम किसी भी दल के समर्थक नहीं, बल्कि कभी न झुकने वाले राष्ट्रीयता के समर्थक है।

'सूली पथ ही सीखा हूँ।
सुविधा सदा बचाता आया
मै बलि पथ का अंगारा हूँ
जीवन ज्वाला जलाता आया'

पत्रकारिता सत्य का शोध एवं मूल्य का सतत् संघर्ष है। 'आतंकवाद' के इस संघर्ष में पत्रकारिता की अहम् भूमिका है। आतंकरूपी इस युद्ध में जनमानस और देश का साथ देना पत्रकारिता का परम् कर्तव्य है।

साहित्य समाज का दर्पण या प्रतिबिम्ब होता है। जैसा जिसका स्वरूप होगा, दर्पण वैसा ही दिखाई देगा। दर्पण का कार्य यथार्थ दर्शन है, न कि उसकी कुरूपता में परिवर्तन करके उसे सुन्दर और भव्य बनाना। इसी प्रकार जब देश परतन्त्र था, भारतीय लोग अंग्रेजों की पराधीनता की चक्की में पिस रहे थे, उस समय की पत्रकारिता युगानुरूप अपना कर्तव्य निर्वहन कर रही थी। किन्तु आज स्वतंत्र भारत में जहाँ अनेक सामाजिक विसंगतियाँ आई है, राजनीतिक और नैतिक मूल्यों का ह्यस हुआ है, अर्थ प्रधानता ही प्रत्येक व्यक्ति का लक्ष्य बना हुआ है। ऐसे वातावरण में भला पत्रकारिता किस प्रकार अपना दामन बचा सकती थी। पत्रकार और पत्रकारिता से जुडे सब व्यक्ति भी इसी समाज की इकाई है, सामाजिक परिवेश और परिस्थितियों से उनका जीवन भी प्रभावित होता है, अर्थ प्रधान समाज में अर्थ का अभाव उन्हें भी विचलित करता है। अतएव यदि आज की पत्रकारिता एक व्यवसाय का रूप धारण कर लें, और वर्तमान शासन व्यवस्था के अनुरूप उसे अपने नैतिक मूल्यों में परिवर्तन करना पड़ जाए, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। क्योंकि किसी भी युग का यथार्थ यही रहा है कि 'यद्यपि शुद्ध लोक विरूद्ध न करणीयम न चरणीयम्'। इसके साथ वह भी सत्य है कि प्रत्येक युग में ऐसे भी व्यक्ति रहे हैं, जिन्होंने अनेक यातनाएँ सहकर भी सत्य का पक्ष नहीं छोड़ा। भारतीय पत्रकारिता ने बदलती परिस्थितियों के अनुकूल खुद को काफी बदला है और व्यवसायिक प्रतिस्पर्धा के युग में आकर इसमें बदलाव होने की प्रक्रिया और तेजी से हो रहीं है।

आतंकवाद का अर्थ हिंसा के द्वारा लोगों को आतंकित करना है, अपनी जायज नाजायज मांग मनवाने के लिये चुनी हुई सरकार के खिलाफ हिंसा का प्रयोग करना। आतंकवाद के कारण आज समूची दुनिया बारूद के ढ़ेर पर बैठी है। और इसके अस्तित्व को कभी भी खतरा पैदा हो सकता है। आज दुनिया भुखमरी, बेरोजगारी लगातार बढ़ती आबादी और प्रदूषण जैसी कई खतरनाक समस्याओं से जूझ रही है लेकिन उसको सबसे ज्यादा खतरा आतंकवाद से हैं, कुछ समय पूर्व आतंकवाद से दुनिया के कुछ हिस्से ही प्रभावित थे, लेकिन आज दुनिया के अधिकतर हिस्से आतंकवाद की चपेट में हैं। बात चाहें अमेरिका कि करे या एशिया की चाहे यूरोप हो या अफ्रीका की या फिर भारत हो या इंग्लैड आतंकवाद के दानव ने पूरे विश्व को अपनी गिरफ्त मे ले लिया है। आज विश्व के कई देशों में आतंकवाद सक्रिय है। विश्व के कई देशों में आतंकवाद ने तबाही मचा रखी है। विश्व शांति के मार्ग में आतंकवाद एक बाधा की तरह है। आतंकवाद को निश्चित रूप से गंभीरता से लेना अतिआवश्यक है। आतंकवाद के मंजर को देखकर लगता है शायद इंसानियत नाम की कोई वस्तु नहीं। हर आतंकी एक इन्सानी भेड़िया बना है, जिसका मकसद सिर्फ तबाही है। क्या ऐसा कोई मजहब नहीं जहा सिर्फ इंसान, इंसान ही बनकर रहे, एक आतंकवादी नहीं। इस संदर्भ में निदा फाजली की उक्त पंक्तिया एक संदेश है, हम सभी के लिए।

'अब तो मजहब कोई
ऐसा चलाया जाये
जिसमें इंसान को इंसान बनाया जाये
मेरा मकसद है, ये महफिल रहे
रोशन यूंही
खून चाहे मेरा दीयों में जलाया जाये।'

भारत में पिछले बीस वर्षो में पचास हजार लोग आतंकवाद के शिकार हो चुके है। अरबो रूपये की संपत्ति नष्ट हुई है, वह यदि विकास कार्यो में लगती तो पूरे देश का नक्शा बदल सकता था। यह हमारा दुर्भाग्य है कि एशिया के अधिकतर राष्ट्रो में आतकंवाद अपने चरम पर है, उसके कारण रोजाना सैकड़ो मासुम लोगों का कत्ल किया जा रहा है। आज आम जनता के लिए आतंकवाद एक खबर हो गई है, अगर इस संबंध में कहा जाये कि –

समय की इस धारा में
देख रहे हैं हम
अपना भविष्य, अतीत और
खोया हुआ वर्तमान
इन दिनों आतंक तो, हमारे लिए
खबर की तरह आता है
और सुबह शाम की तरह
बीता हुआ कल बन जाता है।

एशिया महाद्वीप प्राकृति संसाधनों से बेहद समृद्ध है। यदि इसे आतंकवाद से मुक्त कर दिया जाये, जो फिर धरती पर उससे अच्छा क्षेत्र दूसरा कोई हो ही नहीं सकता।

उपसंहार – आज हम जिस दौर से गुजर रहे वहां एक ही उद्देश्य है वह उद्देश्य है अर्थ प्राप्ति। कलम से अभिव्यक्ति, कलम से जन–जागरण का संकल्प, कलम से जन–शिक्षा का अभियान, अब इतिहास की बातें हो गई। कभी–कभी हम अहंकार की तूष्टि कलम से करते है या ग्लैमर से जोड़कर भी देखते है। कई तरह के परिवर्तन, उतार–चढाव और स्वरूप हमारे सामने आए है। सबसे बड़ा परिवर्तन जिस पर मुझे चिंता हुई वह थी, जहाँ प्रदेश और राष्ट्र स्तर की नीतियाँ बनाने के लिए पत्रकारों से सलाह ली जाती है। पत्रकारिता को विश्व का सर्वश्रेष्ठ यज्ञ कहा जाता है। क्या उस यज्ञ में अपने शब्दों, विचारों को एक पत्रकार निष्पक्ष होकर व्यक्त करने की हिम्मत रखता है। विश्व शांति के मार्ग में आतंकवाद सबसे बढ़ी समस्या है। पत्रकारिता ही राष्ट्र हेतु प्रेरणा स्त्रोत है, जो समाज में नवचेतना उत्पन्न करने में पूर्णत: सक्षम है। देश के सोये हुए नेताओं को जगाना और अपने विशद ज्ञान से आतंकवाद जैसे ज्वलंत मुद्दो पर निष्पक्ष टिप्पणी देकर जनमानस को जागरूक बनाने में हम आज की पत्रकारिता और मीड़िया से उम्मीद रखते है।

आतंकवाद के कारण विकास की प्रक्रिया धीमी पड़ती है, उसके कारण राष्ट्रीय एकता को खतरा पैदा हुआ है। कई बार तो अतंकवाद देश की एकता, अखण्डता और लोकतंत्र के लिए भी खतरा बन जाता है। आतंकवाद के दानव

से मुक्ति पाना आज वक्त की जरूरत है, इसे खत्म करने के लिए हमें मदभेद भूलकर संगठित होना होगा। आतंकवाद को निश्चित रूप से गंभीरता से लेना अति आवश्यक है।

अत: राष्ट्रीय क्षोम को सकारात्मक उर्जा में बदलने की सबसे ज्यादा जिम्मेदारी जनमानस और जनमाध्यमों के कंधो पर है। यह वक्त की जरूरत है कि हम आतंकवाद और धर्म में फर्क करना सीखें। और यह तभी संभव होगा तब हम जागरूक होंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राष्ट्रीय एकता और आतंकवाद - प्रो. मधुसुदन त्रिपाठी
2. पत्रकारिता और समाज - संतोष कुमार
3. आतंकवाद और प्रेस - अर्जून तिवारी
4. दैनिक भास्कर आतंकवाद विषयक लेख - सम्पादन, राजकीय सरदेसाई, चेतन भगत, मंजूल
5. न्यूज टुडे - रामशिरोमणी शुक्ला
6. इण्डिया टूडे - अरूण पुरी, प्रभुचावला आतंकवाद विषयक आवरण कथा और मुद्दे
7. विश्व मीड़िया बाजार - डॉ. कृष्ण कुमार रत्तू
8. प्राबलम्स ऑफ मीडिया कवरेज
9. टेरारिज्म एंड दि मीड़िया - एम.सी. वासीउनी
10. स्वयं - श्रीमती मेघा दुबे

****

गर्भवती महिलाऐं व स्वास्थ

प्रमिला वास्केल *

शोध सारांश – आज विश्व के सभी देशों में विकास का आंकलन मानव संसाधन के विकास विभिन्न आयामों में हुई प्रगति के आंकड़ों के आधार पर किया जाता है। यह माना जा रहा है कि किसी भी देश की प्रगति का असली मूल्यांकन वहां की महिलाओं की स्थिति के आधार पर हो सकता है, जो लगभग कुल जनसंख्या की आधी है।गर्भावस्था का समय विशेष महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि इस समय शरीर पर पड़ने वाला सकारात्मक तथा नकारात्मक प्रभाव बच्चे पर भी पड़ता है। गर्भवस्था में होने वाले परिवर्तन में मुख्य भूमिका संतुलित आहार की है, जो माँ व गर्भ में पल रहे शिशु के स्वास्थ्य का आधार होता है। प्रस्तुत शोध पत्र में गर्भवती महिलाऐं व स्वास्थ प्रभाव का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

कुंजी शब्द – गर्भवती महिलाओं के स्वास्थ, सुरक्षा, प्रभावित करने वाले कारक, आहार।

प्रस्तावना – 'मातृत्व' शब्द बहुत ही विस्तृत और व्यापक अर्थ रखता है। यह एक नारी को पूर्णता प्रदान करता है। मातृत्व के अभाव में नारी का जीवन अधूरा है। भारतीय नारी को समाज तथा परिवार में सम्मान दिलाने में मातृत्व का पूर्ण योगदान है। जो स्त्री मातृत्व को नहीं प्राप्त कर पाती है, उसे परिवार तथा समाज में हेय दृष्टि से देखा जाता है। मातृत्व की अपूर्णता के कारण उसका जीवन मंगलमय नहीं माना जाता है। भारतीय नारी के लिये परिवार व समाज में सामाजिक मान और प्रतिष्ठान पाने के लिये मातृत्व जरूरी है। मातृत्व को सृष्टि का आधार माना जाता है क्योंकि इससे प्रजाति में निरंतरता बनी रहती है और समाज का अस्तित्व कायम रहता है।

प्रकृति में विद्यमान सभी जीव अपनी जाति रक्षा के लिए अपने ही समान जीवों को जन्म देते है, इस प्रकिया को प्रजनन कहा जाता है। इस तरह प्रजनन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा जीव अपने समान जीव को जन्म देकर अपनी वंश परम्परा को कायम रखता है। प्रकृति के महत्वपूर्ण कार्यो में से प्रजनन भी एक महत्वपूर्ण कार्य है। प्रजनन के लिए प्रकृति ने हर विकसित योनि में नर एवं मादा जातियां उत्पन्न की है तथा उनमें ऐसे अंग बनाए है, जिनकी सहायता से माता – पिता के समान ही भ्रूण उत्पन्ना हों।[1]

मातृत्व की योग्यताऐं – संतानोत्पत्ति धार्मिक एवं वैज्ञानिक दृष्टि से पति–पत्नी का परमावश्यक कार्य है। धर्म–शास्त्रों में विवाह का प्रमुख उद्देश्य संतानोत्पत्ति ही होती है। आधुनिक काल में भी विवाह के मुख्य दो उद्देश्य माने जाते है– 1.जीवन साथी को प्राप्त करना, 2.संतानोत्पत्ति करना। स्त्री और पुरूष के लैंगिक संयोग से ही संतानोत्पत्ति होती है ।

संतानोत्पत्ति के लिए आवश्यक उपयुक्ताओं को निम्न वर्गो में विभाजित किया गया है:–

1. जैविक योग्यता ।
2. मनोवैज्ञानिक योग्यता ।
3. आर्थिक योग्यता ।

गर्भकालीन विकास को प्रभावित करने वाले कारक :

माँ का आहार – गर्भकालीन अवस्था में बालक अपना आहार माँ से placenta के द्वारा प्राप्त करता है। अत: आवश्यक है कि माँ का आहार संतुलित हो और माँ के आहार में सभी आवश्यक पोषक तत्व विद्यमान हों। हैपनर (1958) ने अपने अध्ययन में देखा कि गर्भवती स्त्रियों का यदि आहार सन्तुलित नहीं होता है, तो गर्भस्थ शिशु में कई प्रकार के दोष उत्पन्न हो सकते है। इन दोषों के कारण जन्म के बाद कई विकृतियां देखी गई है; जैसे – मानसिक दुर्बलता, शारीरिक असामान्यता, सामान्य शारीरिक कमजोरी, स्नायुविक अस्थिरता तथा मिर्गी आदि रोग। इस अवस्था में माँ द्वारा लिए गये आहार में यदि विटामिन 'ए' की कमी होती है, तो नवजात शिशु की आँख में विकृतियाँ उत्पन्न हो सकती है। इसी प्रकार विटामिन 'डी' की कमी के कारण दाँत और हड्डियों में विकृतियाँ उत्पन्न हो सकती है। कुछ अध्ययनों में देखा गया है कि माँ के आहार में यदि निरन्तर विटामिन 'बी' की कमी होती है तो नवजात शिशु की प्रारंभ के कुछ वर्षो तक बुद्धि कम रहती है। ऐसे बच्चों को स्कूल में सीखने में भी असुविधा होती है। प्राय: इन स्त्रियों में आहार की अधिक गड़बड़ी होती है जो पतले रहने के लिए भोजन कम करती है कि उनका पेट अधिक न निकल आए। इस प्रकार की स्त्रियों में आहार से संबंधित दोष गर्भस्थ शिशु के विकास को बहुत अधिक प्रभावित करते है।

माँ की बीमारी – अध्ययनों में देखा गया है कि गर्भवती स्त्रियों की बीमारियाँ भी गर्भस्थ शिशु के शारीरिक विकास को महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करती है। कुछ गम्भीर संक्रमक रोग; जैसे– सिफलिस या गॉनोरिया यदि गर्भवती स्त्री को है, तो इसके गर्भस्थ शिशु पर प्रभाव पड़ते है; उदाहरण के लिए, इन बीमारियों के कारण गर्भस्थ शिशु गर्भ से गिर सकता है; यदि गर्भ से नहीं गिरता है, तो जन्म के उपरांत इस प्रकार का बालकों जन्म से अंधा, जन्म से बहरा, मानसिक दुर्बल या कोई और गत्यात्मक विकार हो सकता है। इसी प्रकार यदि गर्भवती स्त्री को पहले या दूसरे महिने में मीजिल्स निकल आये, तो गर्भस्थ शिशु के ह्रदय और कानों पर प्रभाव पड़ सकता है।

गर्भवती स्त्री यदि गर्भ के दिनों में कुनेन औषधि का प्रयोग अधिक करती है, तो निश्चय ही बालक के श्रवण पर इसका प्रभाव पड़ता है, बालक बहरा हो सकता है। इसी प्रकार से सिर–दर्द और शरीर –दर्द की गोलियां यदि

* शोधार्थी, बानीस, डॉ. आम्बेडकर नगर, महू (म.प्र.) भारत

गर्भवती स्त्री अक्सर लेती रहती है; तो इस प्रकार की औषधियां गर्भस्थ शिशु के मस्तिष्क की ऑक्सीजन –सप्लाई को प्रभावित करती है। जिससे गर्भस्थ शिशु के मस्तिष्क को क्षति पहुँच सकती है। इसी प्रकार यह भी देखा गया है कि गर्भवती स्त्री का यदि एक्स–रे ट्रीटमेण्ट गर्भावस्था के अंतिम चरण में अधिक दिनों तक चलता है, तो निश्चय ही इस प्रकार ट्रीटमेण्ट से गर्भस्थ शिशु के मस्तिष्क को हानि पहुँच सकती है। गर्भस्थ शिशु में विकासात्मक विकृतियाँ उस समय भी उत्पन्न हो जाती है जब गर्भवती स्त्री की अन्त: स्त्रावी ग्रन्थियों में कोई विकार उत्पन्न हो जाता है।

शराब और तम्बाकू – गर्भवती स्त्री यदि लगातार शराब और तम्बाकू का प्रयोग गर्भकालीन अवस्था में करती रहती है, तो इसका भी गर्भस्थ शिशु के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है; उदाहरण के लिए अधिक मदिरापान के प्रभाव में देखा गया है कि गर्भस्थ शिशु में बेचैनी और ह्रदय की धड़कनें संक्रमिक हो जाती है। तम्बाकू का अधिक सेवन भी अधिक हानिकारक होता है। तम्बाकू में निकोटीन होती है, जो एक शक्तिशाली Narcotic Poison है। एक अध्ययन (Sontag,1938) में यह भी देखा गया है गर्भकालीन अवस्था के अंतिम छह महिनों में यदि गर्भवती स्त्री तम्बाकू का अधिक उपयोग करती है, तो गर्भस्थ शिशु के ह्रदय की धड़कनें बढ़ जाती है। इन कारणों से गर्भस्थ शिशु पूर्णरूप से परिपक्व होने से पहले ही जन्म ले लेता है।

माता–पिता की आयु – लोगों में यह धारणा है कि अधिक आयु के माता–पिता की संताने अधिक बुद्धिमान होती है, परंतु यह धारणा है बहुत ठीक नहीं है। **हरलॉक (1974)** का विचार है कि, स्त्री की आयु 21 वर्ष उपयुक्त है। इस आयु से पूर्व स्त्रियों के जनन अंग पूर्णत: परिपक्व नहीं होता है। यद्यपि बालक का जन्म तो 15 साल की लड़कियों में भी होता देखा जाता है। इसी प्रकार स्त्री की आयु 28 वर्ष से अधिक नहीं होना चाहिए। इस आयु के बाद गर्भस्थ शिशु के शारीरिक विकास में अनेक अनियमितताएं आ सकती है।

माँ की संवेगात्मक अनुभूतियाँ – गर्भवती स्त्री की संवेगात्मक अनुभूतियों का गर्भस्थ शिशु के विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। एक अध्ययन P.H.Gebhard,et.al. (1958) में यह देखा कि यदि गर्भकाल की प्रारंभिक अवस्था में गर्भवती स्त्री में संवेगात्मक तनाव अधिक रहता है और अधिक दिनों तक रहता है, तो इसके भी शिशु के विकास पर गंभीर प्रभाव हो सकता है। जिसके फलस्वरूप बालक में शारीरिक और मानसिक दोष उत्पन्न हो सकते है। अन्य अध्ययनों में यह भी देखा गया है कि इस अवस्था में उत्पन्न बालकों को जन्मोपरांत समायोजन संबंधी कठिनाईयाँ होती है। एक अन्य अध्ययन L. W. Sontag, et.al., (1955) में यह देखा कि गर्भवती स्त्री यदि गर्भकालीन अवस्था में अधिक चिर्तित रहती है, तो ऐसी स्त्रियों से उत्पन्न बालक अपेक्षाकृत कम बुद्धि वाले होते है।[3]

गर्भवती की देखभाल के प्रमुख पहलु – 1901 ई. में बैल्टीन नामक चिकित्सक ने प्रसवपूर्व देखभाल के महत्व के संदर्भ में एक लेख प्रकाशित किया, उसके उपरांत प्रसवपूर्व देखभाल आरंभ हुआ। इससे संसार भर में इसके उपचारात्मक तथा निरोधक पहलुओं पर सजगता पैदा हुई। इसके अन्तर्गत चिकित्सा संबंधी परामर्श के अतिरिक्त लड़कियों तथा स्त्रियों की इस विषय में शिक्षा, उनकी सामाजिक–आर्थिक स्थिति तथा मनोवैज्ञानिक हित के अनुसार सुझाव भी दिए जाते है। भारत में प्रसवपूर्व सेवा केन्द्रों की स्थापना से गर्भवती स्त्रियों और शिशुओं की मृत्यु दर में कुछ सीमा तक कमी हुई है। इससे पहले गभर्वती स्त्रियों की उचित देखभाल और भरण पोषण के अभाव में हमारे देश में इनकी मृत्यु दर आज की तुलना में अधिक थी।

एक गर्भवती स्त्री को गर्भवस्था में स्वस्थ रहने और तदन्नतर स्वस्थ शिशु को जन्म देने के लिए अपने आहार, पोशाक, सफाई, स्नान, व्यायाम, आराम, निद्रा, मलनिकास, दांत एवं स्तनों की देखभाल आदि पर विशेष ध्यान देना चाहिए। कुछ महत्वपूर्ण जानकारी निम्न है :–

1. **आहार –** सामान्य स्त्रियों की पोषण की मांग दो बातों पर निर्भर करती है – आधारी उपापचयन की दर तथा उसके श्रम पर। सामान्य रूप से आधारीय उपापचयन की दर 1500 कैलोरी प्रतिदिन होती है तथा परिश्रम के लिए 1800 कैलोरी प्रतिदिन की आवश्यकता होती है। गर्भावस्था में आधारीय उपापचयन की दर 10 प्रतिशत तक बढ़ जाती है। क्योंकि भ्रण की गतिविधियों के बढ़ने से ऑक्सीजन का उपयोग भी बढ़ जाता है।इससे गर्भवती स्त्री को कुल मिलाकर प्रतिदिन 2500 कैलोरी की आवश्यकता नहीं होती है, परिश्रम के लिए सामान्य से अधिक कैलोरी बढ़ाने की आवश्यकता नहीं होती है। बढ़ते हुए शिशु, अपरा, गर्भाशय एवं स्तनों के लिए इसके विपरीत अधिक ऊर्जा की माँग होती है।1 इसी के साथ गर्भावस्था में विशेष आहार की आवश्यकता जैसे :–कैल्सियम व फॉस्फोरस, जल तथा रेशीय पदार्थ, प्रोटीन, आयोडीन तथा जिंक, विटामिन, ऊर्जा, लौह तत्व।[4]

1. **कैल्शियम व फॉस्फोरस –** इसकी जरूरत भ्रूण की हड्डियों और दाँतों के निर्माण के लिए बहुत बढ़ जाती है। शरीर में कैल्शियम का अवशोषण भी बढ़ जाता है जो शरीर की बढ़ती हुई मांग की पूर्ति हेतु होता है। स्तन्यकाल में कैल्शियम और फास्फोरस की आवश्यकता काफी बढ़ जाती हैं। अत: आहार में इसकी मात्रा बढ़ा देनी चाहिए ताकि ये खनिज दूध में पर्याप्त मात्रा में स्त्रावित हो सकें। स्तन्यकाल में दूध की उत्पत्ति के लिए माता के शरीर में कैल्शियम का भंडार गर्भावस्था में ही संग्रहित हो जाना चाहिए नहीं तो बाद में परेशानी हो सकती है। आहार में इसके अतिरिक्त आवश्यकता की पूर्ति के लिए दूध और दूध से बने पदार्थो का होना अति आवश्यक है।

2. **जल तथा रेशीय पदार्थ –** यह मानव शरीर को व्यवस्थित रखने में सहायता करते है। छिलके युक्त अनाज, दाले, हरी पत्तेदार सब्जियों से शरीर को रेशे की मात्रा काफी मिलती है जिससे मल निष्कासन में आसानी रहती है व गर्भवती महिलाओं को कब्ज की समस्या नहीं होती है।

3. **प्रोटीन :–** भारतीय चिकित्सा अनुसंधान समिति द्वारा दी गई आहार प्रोटीन आवश्यकता के अनुसार गर्भवती महिला को प्रतिदिन 15 ग्राम अतिरिक्त प्रोटीन की आवश्यकता होती है।

4. **आयोडीन तथा जिंक –** गर्भवस्था में इसका बहुत अधिक महत्व होता है। जिंक की आवश्यकता वृद्धि तथा प्रोटीन के संश्लेषण के लिए और आयोडीन की आवश्यकता भ्रूण की शारीरिक और मानसिक वृद्धि को नियंत्रित करने के लिए होती है। आयोडीन की कमी होने से नवजात शिशु मानसिक रूप से अपंग या शारीरिक रूप से दुर्बल हो जाते है।

5. **विटामिन –** बी समूह के विटामिन थायमिन, राइबोफ्लेविन तथा नियासीन की जरूरत गर्भावस्था में बढ़ जाती है। इनकी प्रचुरता से गर्भवती स्त्री में जी मिचलाना, उल्टी होना या कब्ज आदि की शिकायतें नहीं होती। गर्भावस्था के समय फोलिक एसिड की मात्रा 400 माइक्रोग्राम होनी चाहिए।

6. **ऊर्जा –** गर्भवती स्त्रियों की कैलोरी आवश्यकता सामान्य से 300 कैलोरी अधिक होती है जो सामान्य महिला की आवश्यकता से 13 प्रतिशत अधिक होती है। किंतु कैलोरी की आवश्यकता आयु, कद, वजन, क्रियाशीलता व गर्भ की स्थिति के अनुरूप बदलती भी है। प्रारंभिक तीन महीनों में कैलोरी की आवश्यकता आमतौर पर नहीं बढ़ती, परंतु दूसरी

तिमाही में ऊर्जा की आवश्यकता बढ़ जाती है तथा तीसरी तिमाही में क्रियाशीलता कम होने के परिणामस्वरूप कम हो जाती है।

7. लौह तत्व – गर्भवस्था में पर्याप्त मात्रा में लौह तत्व जरूरी है। इसकी पूर्ति के लिए आहार में हरी पत्तेदार सब्जियाँ, अंडे व चकोर सहित आटे का प्रयोग करना चाहिए।[5]

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर में महिलाओं की दशा सुदृढ़ीकरण एवं सशक्तिकरण के लिए अनेक सराहनीय प्रयास किए गए है। लिंग परिक्षण का दुरूपयोग – एमनियोसेटेसिस की उच्च तकनीक का दुरूपयोग सेक्स निर्धारण परीक्षणों के रूप में हो तो जन्म से पूर्व ही भेदभाव शुरू हो जाता है। जिसके परिणामस्वरूप एक नए प्रकार की कन्या–भ्रूण हत्या की शुरूआत हो गई है। पश्चिमी देशों में यह लिंग परिक्षण लगभग 25 साल से हो रहा है। लेकिन वहाँ इनका उद्देश्य भ्रूण हत्या न होकर गर्भस्थ शिशु की विकृतियों का पता लगाना ही है। असामान्य शिशु होने पर गर्भपात कराया जाता है, जबकि भारत में लिंग परीक्षण की इस सुविधा का दुरूपयोग हो रहा है, आज स्थिति यह है कि बच्ची के जन्म होते ही अधिकांश परिवारों में शोक छा जाता है।[6]

गर्भावस्था में गर्भवती माता की देख–रेख अत्यंत आवश्यक है ताकि वह गर्भावस्था में स्वस्थ रहे, प्रसव निरापद और नवजात शिशु भी स्वस्थ हो। खेद का विषय है कि आज भी हमारे देश की हर माता के लिए उचित प्रसवपूर्व देख–रेख की व्यवस्था नहीं है और पढ़े–लिखे लोग भी इस देख–रेख को आवश्यक नहीं समझते। antenatal clinics न केवल बडे शहरों के अस्पतालों, छोटे कस्बों तथा गाँवों के प्राथमिक स्वास्थ केन्द्रों में भी होने चाहिए। इसके अतिरिक्त सरकार की ओर से शिक्षित प्रसूति सहायकों द्वारा गाँवों में माताओं के घरों पर जाकर समय–समय पर उनके देख–रेख की तथा प्रसव की व्यवस्था होनी चाहिए।[7]

प्रसव पूर्व देख–रेख की महत्ता :–

1. गर्भवस्था में रोगों का उचित समय पर निदान तथा उचित चिकित्सा जैसे :– anaemia, toxaemia, heart desease, hypertension, diabetes जिनका समय पर निदान और चिकित्सा न होने पर माता तथा शिशु दोनों का जीवन संकटपूर्ण हो सकता है।
2. syphilis तथा R. H. factor की असंगति के गर्भवस्था में ही निदान तथा उचित चिकित्सा से शिशु मृत्युदर बहुत घटायी जा सकती है।
3. breech तथा स्कंध आदि कुप्रस्तुतियों को सुधारा जा सकता है और इस प्रकार obstructed labour का निवारण किया जा सकता है।
4. माताओं, विशेषत: प्रथमगर्भाओं के भय तथा चिंता को भली प्रकार समझा कर दूर किया जा सकता है, जिससे प्रसव समय पर वे प्रसव कष्ट को साहसपूर्वक झोल सकें और मानसिक तनाव का प्रसव वेदना पर बुरा प्रभाव न पडे। इस प्रकार मातृ तथा शिशु मृत्यु तथा मातृ एवं शिशु अस्वस्थता दर भी कम की जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अनुपम रानी (2010), **'मातृकला एवं बाल विकास'** विश्व भारती पब्लिकेशन्स नई दिल्ली पेज 3 व 11।
2. शैरी, डॉ. (श्रीमति) जी. पी. (1976), **'मातृत्व एवं शिशु कल्याण'** प्रकाशन विनय पुस्तक मन्दिर, आगरा पेज 9।
3. श्रीवास्तव डी. एन., वर्मा प्रीति (1979), **'बाल मनोविज्ञान : बाल विकास'** प्रकाशन विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2 पेज 142।
4. सिंह, सुजाता (2015), **'आहार व्यवस्था'** अमेजिंग पब्लिकेशन्स पेज 60।
5. लाल, वंदना (2012), **'आहारीय'** यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली पेज 188।
6. वरे, एस. एल. (2009), **'भारतीय इतीहास में नारी'** प्रकाशन कैलाश पुस्तक सदन हमीदिया मार्ग, भोपाल पेज 193।
7. मुकर्जी, मृण्मयी (1973), **'प्रसूति विज्ञान'** प्रकाशन उत्तर प्रदेश हिंदी गंथ अकादमी लखनऊ पेज 78।

****

भारतीय महिला एवं अपराध

आकांक्षा सहगल *

शोध सारांश – भारतीय समाज में पुरूषो की तुलना में नारी अधिक पीड़ित, उपेक्षित असहाय व हीन स्थिति में रही है। कहने को तो दुनिया भर में नारी को समानता का अधिकार दिया गया है, लेकिन प्रस्तुत शोध में मेरे द्वारा भारतीय महिलाओं द्वारा किये जा रहे अपराधो के बारे में बारे में भारतीय समाज में महिलाओं की जीवनशैली का मुल्यांकन किया गया है, तथा भारत में तेजी से आर्थिक सामाजिक समस्याओं में वृद्धि हो रही है, उतनी ही तेजी से भारतीय समाज की महिलाओं का विघटन हो रहा है तथा अधिकांश महिलाऐं अपराध की ओर अग्रसर हो रही है।

भारतीय समाज में महिलाओं की जीवनशैली का मूल्यांकन इनकी परिवारिक संरचना से ही संभव है। परिवार में महिलाओं की भूमिका मां एवं पत्नी के रूप मे महत्वपूर्ण होती है। पुरूष एवं स्त्री को प्राप्त आर्थिक एवं नैतिक अधिकार के व्यवहारिक स्वरूप परिवार के व्यवस्थापक क्रियाकलापो में प्रकट होते है। महिलाओं को पारिवारिक संरक्षण में लैंगिक असमानता के व्यवाहारिक स्वरूप से अन्तर्क्रिया करनी पड़ती है। आधारभूत आवश्यकताओं जैसे भोजन और स्वास्थ्य देखरेख मे पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं को मिलने वाला कम भाग, संसाधन संग्रह में सहभागिता, इसके पुर्नवितरण में असमानता, बच्चों के लिए पौष्टिक आहार की जिम्मेदारी और मुख्यत: निर्धन परिवारिक दशाओ में।

प्रस्तावना – भारत में तेजी से आर्थिक सामाजिक समस्याओ में वृद्धि हो रही है, उतनी ही तेजी से भारतीय समाज का विघटन हो रहा है और अपराध की दर मे उतनी ही तीव्रता से वृद्धि हो रही है। इसमें कोई दो राय नहीं है कि पुरूष स्त्री की अपेक्षा कही अधिक अपराध करता है। इसका मुख्य कारण यह है कि पुरूष कठोर साहसी स्वभाव के होते है साथ ही वह आक्रमणकारी प्रवृत्ति के होते है, जबकि स्त्री का स्वभाव एवं शरीर दोनों कोमल होते है, वह अधिक भावुक व सुकुमार होती है और उसका बाह्य जगत से संपर्क भी कम रहता है।

नगर और औद्योगिक समाज में प्रगति के साथ-साथ स्त्रियों में अपराध करने की संख्या में काफी वृद्धि हुई है। इसका मुख्य कारण है कि पति अथवा पिता का शराबी होना, आर्थिक तंगी, गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगार पति, पारिवारिक व घरेलू हिंसा, दहेज प्रताड़ना, छेड़छाड़ व आत्मरक्षा इत्यादि है। विशेषज्ञों का मानना है कि कोई बड़ी समस्या या पति-पत्नी में आपसी कलह पर संयुक्त परिवार के अन्य सदस्यों के सुझाव देने पर तनाव घट जाता है। एकल किन्तु एकल परिवार में मानसिक संबल नहीं मिलता, जिससे महिलाएं अपना आपा खो बैठती है और अपराध कर बैठती है। एकल परिवार मे अचानक उत्पन्न होने वाली परिस्थितियों से लड़ने के मौके नहीं मिलते संयुक्त परिवारो मे एक दूसरे का सहारा होता है। एकल परिवार की संकोची महिलाए कई चीजें जमा करती जाती है, जो एकदम से बाहर आती है और अपराध कर बैठती है। आज स्त्री समाज मे गंभीर अपराध से लेकर सामान्य अपराध को खारिज करते हुए देखा व सुना जा सकता है। आधुनिक स्त्री चलती ट्रेन में डकैती भी डाल सकती है। धोखा देकर सामान भी गायब कर सकती है और तस्करी का व्यापार भी कर सकती है। जल्दी से जल्दी पैसा कमाने के लिए वह देहव्यापार जैसे गंभीर अपराध करने से गुरेज नहीं कर रही है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही स्त्रियों की स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन आया है। अब उनकी स्थिति मे काफी सुधार हुआ है। हमारे देश को स्वतंत्र हुए 68 वर्ष हो गये है, लेकिन महिलाओं की स्वतंत्रता की छटपटाहट आज तक बरकरार है बल्कि कहा जा सकता है कि यह अधिक बढ़ गयी है। अपने ही लोगों से सम्मान और समानता का हक पाने की जंग आज भी जारी है। महिलाओं का मार्ग इतना बाधित है कि इनकी आगे बढ़ने की रफ्तार धीमी हो जाती है। सरकार ने 2001 को महिला सशक्तिकरण वर्ष घोषित किया है। लेकिन इस नारे में कितना खोखलापन है, यह किसी से छिपा नहीं है। इसमें कोई संशय नही है कि आज देश की ही, नहीं बल्कि पूरे विश्व की महिलाएं अपने को उत्पीड़ित महसूस करती है। वे अपना यौवन बच्चो को पैदा करने एवं पालने मे लगा देती है। अपनी दूसरी इच्छाओं का वे दमन कर देती है परन्तु मातृत्व के महत्वपूर्ण धर्म को निभाने के बाद भी वे पुरूष की सनक से बंधी रहती है। वे अपने को हर तरफ से दबा महसूस करती है। जैसे उनके हाथ मे कुछ है ही नही। हमारे दार्शनिकों ने महिलाओ को यही सीख दी है कि उनका प्रमुख धर्म बच्चों को पैदा करना एवं उन्हे अच्छा जीवन देना है। गाँधी, बिनोबा एवं विवेकानंद ने भारतीय महिला के त्याग की बड़ी प्रशंसा की है, परन्तु इस त्याग के बाद भी वह असहाय ही रहती है। वह खामोशी से पुरूष की दादागिरी को बर्दाश्त करती रहती है। महिलाओं की इस असहायता का समाधान न तो हमारे दार्शनिकों के पास है न ही पश्चिमी समीकरण लॉबी के पास। लेकिन हमारे धर्मशास्त्रों के पास इसका हल है, वे कहते है कि महिला के दो रूप है एक दुर्गा एवं दूसरा अबला। हर महिला हर क्षण दुर्गा भी है और अबला भी है। यदि उसे सबल बनना है, तो अपने दुर्गात्व का विकास करना होगा और अपने ऊपर होने वाले अत्याचार का सामना डटकर करना होगा। परिणामस्वरूप महिलाएँ अब अपने ऊपर होने वाली उत्पीड़न को सहन न करके अब वह जवाब देने लगी है। जिसका दुष्परिणाम यह है कि वह अब अपराध की ओर धीरे-धीरे बढ़ती जा रही है। मसलन दहेज हत्या, चोरी, तस्करी, देह व्यापार, डकैती, लूट, धोखाधड़ी, ठगी इत्यादि जैसे अपराधो में संलिप्त होती देखी जा सकती है। जिससे दिन पर दिन जेलो में महिला अपराधियो की संख्या में वृद्धि होते जा रही है।

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

नेशनल क्राइम रिकार्ड ब्यूरो के प्रिजन स्टेस्टिक्स इंडिया 2012 के अनुसार देश में कुल महिला जेलो की संख्या 20 है। जिनकी क्षमता 4817 (1.4 प्रतिशत) है। जिसमें महिला कैदियों की संख्या 16951 (4.4 प्रतिशत) है। कुल दोषी महिला अपराधियों की संख्या 2013 (3.9 प्रतिशत) है तथा विचाराधीन महिला अपराधियों की संख्या 11802 लगभग 4.6 प्रतिशत है।

इस प्रकार इस रिपोर्ट से देखा जा सकता है कि महिलाओं की अपराध में सांलिप्तता बढ़ती ही जा रही है। इन महिला अपराधियों के साथ पाँच वर्ष तक के बच्चे भी अपनी माँ के साथ जेल में निवास करते है। इन नौनिहालो को ये पता नही है कि वे अपनी माँ के साथ अपने घर मे नहीं जेल में रह रहे है,जहाँ पल बढ़ रहे है। जेल प्रशासन के पास इसका भी समाधान कल्याणकारी योजना के साथ है, ताकि उन नौनिहालो का बचपन जेल की चारदिवार तक सीमित न होकर फूलो की बगियाँ की तरह इनकी खुशबु चारों तरफ फैला सकें। जेल प्रशासन ने इन नौनिहालो को पढ़ने के लिए एक महिला शिक्षक होती है जो कि इन्हे अक्षर ज्ञान स्थिती है। उतना ही नहीं खेल खेल में अंको को समझना, पढ़ना, जोड़ना–घटाना और हिंदी– अंग्रेजी के अक्षरो को जोड़कर शब्द बनाने की बुनियादी शिक्षा के अलावा बच्चे जेल के अंदर व्यवहारिक शिक्षा भी लेते है। महिला कैदियों द्वारा जेल में जन्मे बच्चे की पाँच साल तक परवरिश की जाती है। इस दौरान उनके खान–पान, देख–रेख और शिक्षा, पहनावे की व्यवस्था जेल विभाग करता है। बच्चे के पांच साल का होने पर उसे परिजन या किसी ऐसी संस्था को सौपा दिया जाता है, जो बच्चों की देखरेख करती है।

महिला जब अपने अपराध की सजा काटकर जेल से मुक्त होकर समाज में जाने के लिए उत्सुक होती है, तब प्रशासन उस महिला को पुनर्वासित करने के लिए विभिन्न योजनाओं का संचालन, करती है ताकि वे समाज में उचित पूर्वक सामंजस्य स्थापित कर सकें। उसके लिए महिला व्यवसायिक प्रशिक्षण प्राप्त करती है। जिससे वे अपनी रोजी–रोटी कमा सके। मुक्ति के 2 वर्ष तक संस्था इन कारावासियों से संपर्क बनाये रखती है। इस संपर्क का एकमात्र उद्देश्य यह है कि अपराधियों का समाज के साथ पूरी तरह से सामंजस्य हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हंसराज भाटिया – समाज मनोविज्ञान, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड फैज बाजार, दिल्ली।
2. आभा सक्सेना – मलिन बस्ती की महिलाएँ :– अपराध और पुलिस (2009) क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली 110015 ISBN : 978 – 81 – 7054 – 520 - 0
3. महिला और पुलिस :– अनिता जोशी पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय ब्लॉक 11, 13/4 मंजिल केन्द्रिय कर्यालय परिसर, लोदी रोड़, नई दिल्ली 110003
4. भारतीय नारी :– डॉ. राजकुमार ISBN – 81-88775 – 37 – 1 अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, दरियागंज, नई दिल्ली
5. डॉ. डी.एस.बघेल (1990) अपराधशास्त्र, दिल्ली
6. Prison statistics India 2012 National Criminal Records Bureau, New Delhi.

****

राजस्थान की हिन्दी-कहानी : विकास यात्रा भाग - 4

डॉ. राजकुमार चौधरी *

प्रस्तावना - कथा-लेखन परम्परा

पंचम चरण - सातवें एवं आठवें दशक की कहानियाँ - राजस्थान की हिन्दी-कहानी के पंचम-चरण में सातवें एवं आठवें दशक के कहानिकारों की कहानियों को स्थान दिया गया है। इसमें सर्व श्री विजयदान देथा, स्वयं प्रकाश भटनागर, हेतु भारद्धाज, योगेन्द्र किसलय, मालचन्द तिवाड़ी, हबीब कैफी, मोहरसिंह यादव हरदर्शन सहगल, नफीस आफरीदी प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त राम जैसवाल, मनोहर वर्मा, प्रफुल्ल प्रभाकर, श्री गोपाल काबरा, भगवान चौरसिया, मदन केवलिया, राम गोपाल गोयल आदि कहानीकारों की कहानियाँ भी प्रकाशित हुई हैं।

विजयदान देथा का नाम सातवें दशक के कहानीकारों में प्रमुख स्थान है। देथा का नाम 'चन्द्र' की समकालीन पीढ़ी के कथाकारों में लिया जाना चाहिए था, किन्तु हिन्दी में इनके कहानी-संग्रह का प्रकाशन सन् 1979 में 'दुविधा और अन्य कहानियाँ' तथा सन् 1982 में 'उलझन' हुआ था। इसके बाद इन्हें हिन्दी कहानीकार, लोक-कथाओं के संग्राहक, विश्लेषक, अन्वेषक के रूप में प्रतिष्ठित हो चुके थे। इनकी 'वाताँ री फुलवाड़ी' चौदह भाग में प्रकाशित हो चुकी है जिनमें लोक-कथाओं का संकलन राजस्थानी भाषा में किया गया था। इन्हें 'वाताँ री फुलवाड़ी' के दसवें भाग पर सन् 1974 में केन्द्रीय साहित्य अकादमी द्वारा 'अकादमी पुरस्कार' भी प्राप्त हो चुका है। इसके अतिरिक्त राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर ने भी सम्मानित किया गया।

इनके दोनों कथा-संग्रहों में लगभग उनतालीस (39) कहानियाँ ही है किन्तु इनसे ही श्री देथा का हिन्दी के शीर्षस्थ कथाकारों में स्थान बन गया है। इससे पूर्व इनकी हिन्दी-कहानियाँ यदा-कदा अवश्य निकलती रही थी, लेकिन उनकी ख्याति मूलत: राजस्थानी कथा-लेखक के रूप में ही थी। अब तक इनकी एक हजार कहानियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं, जो अपने आप में एक नया कीर्तिमान है।

देथा द्वारा 'रूँख' नामक वृहद्काय रचनावली का प्रकाशन सन् 1987 में हुआ। इसमें रवीन्द्र वर्मा ने देथा का हिन्दी कहानी के विकास पथ पर स्थान निर्धारित करते हुए लिखा है- 'यह एक दिलचस्प संयोग है कि जिस तरह मुक्तिबोध अपनी कहानियों में प्रेमचन्दीय आधार पर वह कड़ी रचते रहे जों आगे अमरकान्त ज्ञानरंजन की सफलतम कहानियों का उत्सव बनी, उसी तरह विजयदान देथा हिन्दी-कहानी के गतिरोध में बरबस ऐसी कहानियाँ लिखते रहे, जिनमें हिन्दी-कहानी की मूल परम्परा का विस्तार हुआ और जिस तरह कथाकार मुक्तिबोध 'नयी कहानी' की चकाचौंध में खो गये थे, उसी प्रकार श्री देथा अभी हिन्दी-कहानी के दरवाजे पर खड़े हैं। उन्हें भीतर लाने पर हिन्दी-कहानी के गतिरोध का अंधेरा भाग जाता है और आंगन के उजाले में बहुत-सी चालू छायाएँ नजर आने लगती हैं ..... कहना न होगा कि सत्तर के दशक में हिन्दी-कहानी का चेहरा सतही और इकहरे जनवाद तथा व्यावसायिकता के पाटों के बीच खो गया। हिन्दी-कहानी सहसा इतनी सरल और आसान हो गयी जितनी शायद पहले कभी नहीं हुई थी, जबकि होना बिल्कुल उलटा चाहिए था। इस नये जटिल ऐतिहासिक बिन्दु से अपनी सम्पूर्ण सभ्यता को परखना था और अपनी निर्यात का प्रयास करना था। विजयदान देथा राजस्थानी में बिलकुल यही कर रहे थे।'[1]

देथा राजस्थान के प्रतिशील विचारधारा के अग्रणी कथाकार हैं। इनके दोनों कथा-संग्रहों में प्रकाशित कहानियाँ राजस्थान के पारम्परिक समाज के समग्र रूप को प्रस्तुत करती हैं। गाँवों का परिवेश, जाति-वर्ण की समाज संरचना और सामन्ती व्यवस्था व संस्कार के विविध पक्षों से इनका ताना-बाना बुना गया है। सवर्णता, सामन्ती-सत्ता और पुरूष-प्रभुत्ता से जुड़े हुए अहम, स्वार्थ, असमानता, शोषण और पाखण्ड तथा अन्य मानवीय गुण-दोषों या विकृतियों को इन कहानियों में उजागर किया है। सभी तरह की स्थितियों व पात्रों का समावेश इनमें है और जिजीविषा व द्वन्द्व की सहज, सटीक व संघर्षपूर्ण प्रस्तुति इनमें हुई हैं। इसीलिए ये कहानियाँ साहित्यिक होने के साथ-साथ ही सामाजिकी भी हैं और इस रूप में इनकी ऐतिहासिक एवं समाज-वैज्ञानिक अर्थवत्ता व महत्ता भी किसी तरह कम नहीं हैं।

देथा के पश्चात् युवा कहानीकार एवं समीक्षक **स्वयंप्रकाश भटनागर** प्रगतिशील विचारधारा के वाहक हैं। इनकी कहानियाँ 'सारिक', 'धर्मयुग', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 'नई कहानियाँ', 'युग परिबोध', 'और', 'लहर' 'कथन', 'उत्तर गाथा', 'प्रतिमान', आदि अनेक प्रतिष्ठित जनवादी पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। इनके कथा संग्रह- 'मात्रा और भार', 'सूरज कब निकलेगा', 'आसमां कैसे-कैसे', 'आदमीजात का आदमी' प्रकाशित हुए हैं।

'मात्रा और भार' संग्रह की कहानियाँ निम्न-मध्यवर्गीय परिवारों के अन्तर्विरोधों- तनावों की कहानियाँ हैं। यथा- 'मात्रा और भार', 'नदीदेय', 'समय सत्य', 'यार बाज' आदि। 'नगर नर भक्षी', 'उसके हिस्से का दु:ख', 'नहीं अब नहीं', आदि कहानियों में महानगरीय जीवन में मनुष्यता के निरन्तर अवमूल्यित होते जाने को रेखांकित करती हैं।

आलोचक यदुनाथसिंह के शब्दों में- 'स्वयंप्रकाश की कहानियाँ चरित्रहीन के बीच से उभरते हुए चरित्र सम्पन्न भविष्य के दरवाजों को खोलती हैं।'[2] इसी तथ्य को रेखांकित करते हुए समीक्षक नन्द भारद्धाज ने कहा है- 'इन

* एसोसिएट प्रोफेसर, राजकीय महाविद्यालय, राजसमंद (राज.) भारत

कहानियों के माध्यम से स्वयंप्रकाश ने निम्न मध्यवर्गीय घर-परिवार की यथार्थ स्थितियों को जिस अंतरंगता से खोलकर रखा है, वह बेमिसाल है।'[3]

स्वयंप्रकाश ने अपनी कहानियों में प्रान्त के अपने लोक-जीवन का जीवन्त चित्रण किया है। स्वयंप्रकाश इधर के सर्वाधिक महत्तवपूर्ण कहानीकारों में से हैं। 'सूरज कब निकलेगा' और 'नैनसी का धूड़ा' कहानियाँ प्रान्त के ग्राम्य जीवन से उनकी गहरी पहचान की दस्तावेज हैं। उनकी कहानियों का विश्लेषण करते हुए डॉ. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय ने एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कथ्य को रेखांकित किया है कि- 'स्वयंप्रकाश की दृष्टि वहीं केन्द्रित होती है जहाँ शोषण होता है, और यह भी कि वे इस शोषण, अज्ञान और अवसाद से, निम्न वर्ग के अमानवीकृत संसार को, प्रवंचित पात्रों को दिखाते हैं।'[4] डॉ. नामवरसिंह ने सुरेश पाण्डेय से अपनी बातचीत (पहल पुस्तिका-7) में स्वयंप्रकाश को इस दौर के महत्तवपूर्ण कथाकारों में से एक बताते हुए हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्ध जैसे नाजुक विषय पर उनकी कहानियों 'पार्टीशन', 'चौथा हादसा' की विशेष रूप से सराहना की है। उन्होंने कहा है कि स्वयंप्रकाश के पास प्रखर वर्ग दृष्टि, आलोचनात्मक दृष्टि है।

वस्तुत: स्वयंप्रकाश भटनागर राजस्थान के उन कहानीकारों में से हैं जो अपने जनवादी रूझान के लिए परिचित रहे हैं और आलोचनात्मक यथार्थवाद से सामाजिक यथार्थवाद की और संतरण कर रहे हैं।

राजस्थान के प्रमुख कहानीकार **होतीलाल भारद्वाज** के नाम से रचनारत रहने वाले बाद में **हेतु भारद्वाज** के नाम से जाने जाते हैं। इनके कथा-संग्रह- 'तीन कमरों का मकान', चीफ़ साब आ रहे हैं', 'जमीन से हटकर', 'सुबह-सुबह', 'तीर्थ यात्रा', 'बनती बिगड़ी लकीरें', 'पटाक्षेप नहीं होगा' आदि प्रकाशित हो चुके हैं।

गाँव से टूटकर शहर में आ बसने वाले आदमी के सामाजिक-पारिवारिक तनावों का चित्रण हेतु भारद्वाज ने बहुत अन्तरंगता और विश्वसनीयता से किया है। कस्बाई जिन्दगी का टुच्चापन भी यहाँ उजागर हुआ है और एक औसत आम जिन्दगी जीना चाहने वाले व्यक्ति के जीवन में व्यवस्था का हस्तक्षेप भी। हेतु भारद्वाज की विशेषता यह है कि एक से दूसरे क्रमश: कहानी-संग्रह में निरन्तर विकास करते नजर आते हैं। शहरी जीवन के परिचित तनावों और अन्तर्विरोधों से चलकर उनकी कहानी शहर के निम्न मध्यवर्गीय तटस्थता और निष्क्रियता पर जमकर प्रहार करती हैं। इनकी भाषा में एक सुखद क्षिप्रता और वस्तुनिष्ठता है।

कवि एवं कथाकार **योगेन्द्र किसलय** ने भी अपनी खासी पहचान बना रखी है। उनकी 'बरना' (मधुमती : जुलाई-अगस्त 1973) एक बहुत अच्छी कहानी प्रकाशित हुई जिसमें गाँव के एक भोले-भोले आदमी का सरल और मोहक चित्रण है। योगेन्द्र किसलय की 'घूरा' ('सारिका'- अप्रेल 1980) उनकी एक और अच्छी कहानी प्रकाशित हुई। कवि होने के कारण इन्होंने कहानियाँ बहुत कम लिखी हैं- परन्तु विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ निरन्तर प्रकाशित होती रही हैं। इनकी कहानियों में मानव मनोविज्ञान की गहरी समझ और विषय की अच्छी पकड़ परिलक्षित होती है।

उर्दू से हिन्दी में आगे **हबीब कैफी** की कहानियाँ विगत एक दशक से लगातार 'सारिका', 'कहानी', 'लहर', 'कल्पना' आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित एवं प्रशंसित होती रही हैं। इनकी 'ये तीन', 'चाभी', 'बत्तीसवीं तारीख', 'काला पहाड़', 'भाई', 'शराबघर' आदि अच्छी कहानियाँ हैं। इनकी अधिकतर कहानियों के पात्र मजदूरी में झोंक दिए अनाथ बेसहारा लड़के और उनकी उघड़ी-उघड़ी जिन्दगी हैं। दाम्पत्य के बारे में उनकी दृष्टि निहायत यथार्थवादी और बेबाक हैं। इनकी भाषा सरल, साफ एवं मंजी हुई है। इनकी कई कहानियों का मराठी, पंजाबी, मलयालम, अंग्रेजी आदि भाषाओं में अनुवाद हो चुका है।

मोहरसिंह यादव ने 'कुछ भी नहीं' (धर्मयुग-975) कहानी के प्रकाशन के साथ ही पाठकों का ध्यान खींच लिया। राजस्थान के उत्तार-पूर्वी देहातों को उन्होंने अपनी रचना का केन्द्र बनाया है। इनकी कहानियों को पढ़ने पर ऐसा लगता है कि- कहानीकार जिस जगह और जिन लोगों के बारे में बोल रहा है उसकी उसे पूरी-गहरी और अन्तरंग जानकारी है, जहाँ शोषण अत्याचार, विषमता, जाति भेद के शब्द नहीं अनुभूतियाँ हैं जिन्हें भोगने-झेलने के अनुभव के ताप से अर्जित किया गया है। इनकी 'कहर आषाढ़ का' 'दो बीघा ज़मीन', 'मिलावट', 'लीलावती' आदि उल्लेखनीय कहानियाँ प्रकाशित हुई हैं। इस प्रकार कथाकार मोहरसिंह यादव हिन्दी-कहानी के दृार पर संभावनाओं की मजबूत दस्तक देते हैं। यादव ने राजस्थान के रेगिस्तान को अपनी कहानियों में पूरे रूखेपन के साथ उभारा है।

हरदर्शन सहगल ने अपने पहले कहानी संग्रह 'मौसम' में एक औसत साधारण शहरी लोगों की औसत-आम-रूटीन जिन्दगी की झलकियाँ पेश की हैं। कस्बाई जीवन की छोटी-छोटी वीरताएँ- क्षुद्रताएँ-ईर्ष्या, लंगड़ी लगाना आदि इन कहानियों में चित्रित हुआ है। पूरे कथा-संग्रह में 'मोहल्ले वालेय', 'दौड़', 'तिनके', 'मौसम' आदि उल्लेखनीय कहानियाँ हैं। इनका दूसरा कथा-संग्रह 'मर्यादित' भी प्रकाशित हो चुका है। मध्यमवर्ग पर ही हरदर्शन सहगल ने अपनी दृष्टि केन्द्रित की है।

नफीस आफ़रीदी ने अपनी चुस्त भाषा एवं आधुनिक सोच के कारण प्रसिद्धि प्राप्त की है। इनका 'अग्निकुण्ड' नामक कथा-संग्रह प्रकाशित हो चुका है। इनकी कहानियाँ 'धर्मयुग', 'ज्ञानोदय', 'सारिका', 'माध्यम', 'कहानी' 'नई कहानियाँ' आदि प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। इन्होंने गाँव और शहरों में रहने वाले निम्न-मध्यम वर्गीय, निम्न वर्गीय, मुस्लिम परिवारों उनके आस्था-विश्वास-रूढ़ियों, उनकी टूटती आर्थिक स्थितियों और बदलती मानसिकता को अपनी कहानियों का विषय बनाया है। इनकी 'रात के दो पहलू' कहानी में दारू-चिलम में लिप्त एक गरीब पिता की असहायता का सुन्दर चित्रण है, जो अपनी जवान बेटी की शादी की चिन्ता में घुल रहा है और शादी में नाक रखने की खातिर अपना खेत भी बेच देता हैं। 'आधे रास्ते के बाद', 'बिखरे चेहरों वाला घर', 'भूख और मोहब्बत, 'अकेला गुल मोहर' इनकी प्रमुख कहानियाँ हैं।

कवि, चित्रकार और कहानीकार **राम जैसवाल** की कहानियों के दो संकलन- 'असुरक्षित' और 'उग्रह' प्रकाशित हो चुके हैं। राम जैसवाल मूल रूप से दो प्रवृतियाँ अपनी कहानियों में दर्शाते हैं। पहली तो शहरी निम्न-मध्यम वर्ग की आर्थिक दुश्चिन्ताओं का वर्णन और दूसरी एक खोई हुई लड़कपन की रूमानियत का नास्टेलिजमा। उनकी भाषा चित्रात्मक है और थोड़े-से शब्दों में घटनाओं-स्थितियों के दृश्य खींच देना उनकी कहानियों की आम-प्रवृत्ति है। सामान्य मानव के अभाव-अभियोगों को राम जैसवाल ने अनुभूतिशील चेतना के साथ अंकित किया हैं। परिवेश के प्रत्यंकन में उन्हें कमाल हासिल है। 'दिन', 'असुरक्षित', 'सामाजिक मृत्यु', 'बदलता हुआ कस्बा' आदि अच्छी कहानियाँ हैं।

मनोहर वर्मा के तीन कथा–संग्रह– 'साली साहिबा की शादी', 'फूलों से घिरा केक्टस' और 'उनके आने पर' प्रकाशित हो चुके हैं। 'कीड़ा', 'विराज', 'जिन्दगी और जोंक' तथा 'ताई' आदि उल्लेखनीय कहानियाँ हैं।

प्रफुल्ल प्रभाकर राजस्थान के उभरते हुए कहानीकार हैं। इनकी सत्रह कहानियों का संग्रह– 'समुद्र पर सांझ' प्रकाशित हुआ है। इनकी कहानियाँ रूमानी भावुकता से प्रेरित हैं। कथाकार अपने समाज से ओर उसकी संश्लिष्ट संरचना से कहीं भी सम्बद्ध, प्रतिबद्ध या परिचित नहीं दिखाई देता।

कवि, उपन्यासकार एवं कहानीकार **डॉ. रामगोपाल गोयल** का कथा–संग्रह 'सुनहरी मछलियाँ' प्रकाशित हुआ है। इस संग्रह की ग्यारह कहानियाँ नर–नारी में चलने वाला मानसिक द्वन्द्व, शहरी जीवन में सेक्स की समस्या, हारे–थके लोगों का जीवन–संघर्ष और भावुक प्रेम का व्यंग्यात्मक विवरण है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. 'रुँख' – सं. विजयदान देथा – पृष्ठ 579
2. 'रुँख' – 'पहला' सं. 5 पृष्ठ 46 – आलेखकार – यदुनाथसिंह
3. 'ललकार' – अक्टूबर 1975 – पृष्ठ 5
4. 'मधुमती' – नवम्बर–दिसम्बर 1987 – पृष्ठ 184

****